

*All Rights with  
Tirumala - Tirupati Devasthanams  
Tirupati.*

हरिः ॐ

‘प्रवः पान्तमन्धसो धियायते ।

महेशूराय विष्णवे चार्चत ॥’

— ऋक्संहिता - मण्डलम् २. सू. १५५ मन्त्रः १.

भरायि काणे विकटे गिरिं गच्छ सदाऽन्वे ।

शिरिबिटस्य सत्त्वभिः तेभिष्ट्वा चातयामसि ॥

— ऋक्संहिता - मण्डलम् १०. सू. १५५ मन्त्रः १.

रयिः ककुद्भान् विदधद्विनष्टं रयिमद्विधानम् ।

तस्मैककुत्से विकटाय पित्रे स्वाहा ॥

— (श्रीवैखानसमन्त्रसंहिता प्रश्नम् ७ - अनु - ७ मं ३)

---

विना वेङ्कटेशं न नाथो न नाथः

सदा वेङ्कटेशं स्मरामि स्मरामि ।

हरे वेङ्कटेश ! प्रसीद प्रसीद

प्रियं वेङ्कटेश ! प्रयच्छ प्रयच्छ ॥

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन ।

वेङ्कटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति ॥

— श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्.



## पुराणानुक्रमणिका.

माहात्म्यम्	अध्यायसङ्ख्या	पुटसङ्ख्या
१. वाराहपुराण प्रथम- भागान्तर्गतम्	३३ प्रभृति ६२ अध्याय- पर्यन्तम् ३० अध्यायाः	{ १ - १३१
२. श्रीवाराहपुराण द्वितीय- भागान्तर्गतम्	१ प्रभृति १० अध्यायपर्य- न्तं १० अध्यायाः	{ १३२-२०२
३. श्रीपाद्मपुराणान्त- र्गतम्	२४ प्रभृति ३४ अध्याय- पर्यन्तं ११ अध्यायाः	{ २०३-२८९.
४. श्रीगारुडपुराणान्त- र्गतम्	६३ तमोऽध्यायः १ अध्यायः	{ २९०-२९६
५. श्रीहरिवंशगत शेष- धर्मान्तर्गतम्	४८ तमोऽध्यायः १ अध्यायः	{ २९७-३०२
६. श्रीब्रह्मपुराण क्षेत्र- खण्डान्तर्गतम्	१ प्रभृति ११ अध्याय- पर्यन्तं ११ अध्यायाः	{ ३०३-३७०
७. श्रीमार्कण्डेयपुरा- णान्तर्गतम्	१ प्रभृति ५ अध्याय- पर्यन्तं ५ अध्यायाः	{ ३७१-४००
८. श्रीवामनपुराण क्षेत्र- खण्डान्तर्गतम्	२० प्रभृति ४४ पर्यन्तं २५ अध्यायाः	{ ४०१-५६०

आहत्य :— पुराणानि ८ — अध्यायाः ९४ — पुटानि ५६०



श्रीरस्तु

# श्रीवेङ्कटाचलमाहान्त्य प्रथमभागस्य विषयाणां सूचिका

श्री वराहपुराण प्रथमभागे विषयाः

~~~~~ॐ~~~~~

| विषयाः                                                   | पुटम्. |
|----------------------------------------------------------|--------|
| श्वेतवराहकल्पवृत्तान्तकथनम् .....                        | १      |
| श्रीवैकुण्ठात् भगवत्क्रीडाचलानयनम् .....                 | ६      |
| देवादिकृत श्वेतवराहप्रार्थना .....                       | ८      |
| सूतकृतं स्वामिगुप्करिणीमाहात्म्यवर्णनम् .....            | ९      |
| क्रीडादिप्रविष्ट श्रीवराहदिव्यवैभववर्णनम् .....          | ११     |
| क्रीडाद्रेः भगवत्सान्निध्येन महिमाधिक्यवर्णनम् .....     | १३     |
| क्रीडाद्रेः कारणभेदेन अनेकनामानुवर्णनम् .....            | १५     |
| महर्षियज्ञवाटं प्रति भगवदागमनम् .....                    | १८     |
| वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारप्राप्तिः .....           | २०     |
| अष्टराज्यस्य शङ्खगन्तृपस्य राज्यप्राप्तिक्रमः .....      | २५     |
| आत्मारामाख्यविप्रस्य सम्पत्प्राप्तिक्रमः .....           | २७     |
| सनत्कुमारकथितन्यूङ्गलक्ष्मीमन्त्रोद्धारक्रमः .....       | २९     |
| कपिलादिसप्तदशनीर्थमाहात्म्यम् .....                      | ३१     |
| पाण्डवनीर्थमाहात्म्यम् .....                             | ३२     |
| जराहरादितीर्थमाहात्म्यम् .....                           | ३३     |
| श्रीवेङ्कटाद्रिं प्रति श्रीरामगमनम् .....                | ३७     |
| वैकुण्ठाख्यगुहाप्रविष्टवानरवृत्तान्तः .....              | ४०     |
| वैकुण्ठगुहाप्रभाववर्णनम् .....                           | ४१     |
| रावणादिपीडितदेवर्षीणां क्षीरार्णवब्रह्मलोकादिगमनम् ..... | ४५     |
| ब्रह्मादीनां श्रीवेङ्कटाचलागमनम् .....                   | ५२     |
| दशरथेन श्रीवेङ्कटाचलवासि महर्षिचरित्रदर्शनम् .....       |        |



|                                               |       |    |
|-----------------------------------------------|-------|----|
| श्रीभगवदाविर्भावः                             | ..... | ५४ |
| ब्रह्मादीनां भगवन्मन्दिरप्रवेशादिवर्णनम्      | ..... | ५८ |
| अगस्त्यादिकृत भगवत्स्तुतिः                    | ..... | ६१ |
| इन्द्रादिकृत                                  | ..... | ६३ |
| सनकादिकृत                                     | ..... | ६४ |
| दशरथकृत                                       | ..... | ॥  |
| ब्रह्मकृत                                     | ..... | ६५ |
| ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृत कुशल्यनुयोगादयः    | ..... | ६६ |
| भगवते ब्रह्मादिभिः रावणोपद्रवनिवेदनम्         | ..... | ६७ |
| शङ्करस्य शेषाचलाग्नेयदिगवस्थानप्राप्तिः       | ..... | ७० |
| भगवन्तमुद्दिश्य दशरथकृतप्रार्थना              | ..... | ॥  |
| भगवन्तं प्रति चतुर्मुखकृतप्रार्थनादिः         | ..... | ७२ |
| श्रीवेङ्कटाद्रिनिकटस्थसुरवधार्थं चक्रप्रेषणम् | ..... | ७४ |
| श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सवघट्टः                   | ..... | ७५ |
| श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सववैभववर्णनम्             | ..... | ७७ |
| महोत्सवसेवाफलदानफलप्रशंसादिकम्                | ..... | ७९ |
| वेङ्कटाद्रौ पुण्योद्याननिर्माणादिप्रशंसा      | ..... | ८१ |
| महोत्सवावभृथस्नानप्रशंसा                      | ..... | ८४ |
| ब्रह्मादीनां स्वावासगमनार्थं भगवद्भ्यनुज्ञा   | ..... | ८५ |
| श्रीवेङ्कटाद्रीशवैभवप्रशंसा                   | ..... | ८६ |
| ब्रह्मादीनां स्वावासगमनम्                     | ..... | ॥  |
| फल्गुनीतीर्थमाहात्म्यम्                       | ..... | ८७ |
| जाबालितीर्थमाहात्म्यम्                        | ..... | ८८ |
| पूर्वस्यां दिशि सुदर्शनकृतासुरवधप्रकारः       | ..... | ८९ |
| सुदर्शनसैन्यासुरसैन्ययोः युद्धप्रशंसा         | ..... | ९० |
| आग्नेयदिशि सुदर्शनकृतासुरवधप्रकारः            | ..... | ९२ |
| सुदर्शनस्यासुरवधार्थं दक्षिणदिग्गमनम्         | ..... | ९५ |

|                                                   |       |     |
|---------------------------------------------------|-------|-----|
| सुदर्शनासुरसेनयोः युद्धप्रकारः                    | ..... | ९६  |
| वरुणदिशि अमुरसुदर्शनसेनायुद्धप्रशंसा              | ..... | ९९  |
| सुदर्शनस्यासुरवधार्थमुत्तरदिग्गमनम्               | ..... | १०४ |
| भैरुण्डासुरसुदर्शनसेनयोः युद्धप्रशंसा             | ..... | १०५ |
| श्रीवेङ्कटेशस्य कलिदोषोपहतेषु कृपाधिक्यवर्णनम्    | ..... | १०९ |
| चेतनस्य आचार्याश्रयणात् पुरुषार्थप्राप्तिनिरूपणम् | ..... | ११३ |
| अष्टाङ्गयोगस्वरूपनिरूपणम्                         | ..... | ११७ |
| सनकसनन्दनतीर्थमाहात्म्यम्                         | ..... | १२० |
| कायरसायनतीर्थ                                     | ..... | ११  |
| श्रीवेङ्कटेश्वराष्टोत्तरशतनामावलिः                | ..... | १२२ |
| महर्षीणां श्रीवेङ्कटेशसेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलगमनम् | ..... | १२६ |
| महर्षिकृतभगवत्स्तुतिः                             | ..... | १२९ |
| सूतं प्रति शौनकादिस्तुतिः                         | ..... | १३१ |

श्रीवराहपुराण द्वितीयभागे विषयाः

|                                               |       |     |
|-----------------------------------------------|-------|-----|
| नारदस्य सुमेरुशिखरस्थयज्ञवराहदर्शनम्          | ..... | १३२ |
| वराहसन्निधिं प्रति धरण्यागमनम्                | ..... | १३४ |
| धरणीवराहसंवादः                                | ..... | १३५ |
| शेषाचलस्य सर्वपर्वतातिशायित्ववर्णनम्          | ..... | १३  |
| स्वामिपुष्करिण्याः सर्वतीर्थातिशायित्ववर्णनम् | ..... | १३७ |
| कुमारधारामाहात्म्यम्                          | ..... | १३८ |
| तुम्बुरुतीर्थमाहात्म्यम्                      | ..... | १३९ |
| आकाशगङ्गामाहात्म्यम्                          | ..... | १४  |
| पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम्                        | ..... | १४  |
| पापनाशनतीर्थमाहात्म्यम्                       | ..... | १४  |
| देवतीर्थमाहात्म्यम्                           | ..... | १४० |
| धरणीकृतवराहस्तुतिः                            | ..... | १४  |
| वराहस्य भगवतो धरण्या साकं शेषाचलगमनम्         | ..... | १४१ |

|                                                     |       |       |     |
|-----------------------------------------------------|-------|-------|-----|
| अध्यायफलश्रुतिः                                     | ..... | ..... | १४२ |
| श्रीवराहमन्त्राराधनविधिः                            | ...   | ..... | १४३ |
| श्रीवराहमन्त्रेण धर्मादीनां स्वाभीष्टसिद्धिवर्णनम्  | ..... | ..... | १४३ |
| अगस्त्यप्रार्थनया भगवतः सर्वजनहृगोचरत्ववर्णनम्      | ..... | ..... | १४५ |
| मित्रवर्मणः आकाशराजाख्यसुतोत्पत्तिवर्णनम्           | ..... | ..... | १४७ |
| धरणीतलात् पद्मावत्युत्पत्तिक्रमः                    | ..... | ..... | ”   |
| आकाशराजस्य धरण्याख्यपत्न्यां वसुदानाख्यसुतोत्पत्तिः |       |       | १४८ |
| उद्यानवासिन्याः पद्मावत्याः समीपे नारदागमनम्        | ..... | ..... | १४९ |
| नारदोदितपद्मावतीशरीरलक्षणानि                        | ..... | ..... | १५० |
| पद्मावत्याः स्वसखीभिः साकं पुष्पवाटीगमनम्           | ..... | ..... | १५१ |
| मृगयार्थं पुष्पवाटीं प्रति श्रीनिवासागमनम्          | ..... | ..... | १५२ |
| भगवतः कन्यकानाञ्च अन्योन्यसंवादः                    | ..... | ..... | १५३ |
| पद्मावतीदर्शनेन श्रीनिवासस्य मोहप्राप्तिः           | ..... | ..... | १५५ |
| मुह्यमानं श्रीनिवासं प्रति वकुलमालिकोक्तिः          | ..... | ..... | ”   |
| श्रीनिवासोक्त पद्मावतीपरिणयकारणानि                  | ..... | ..... | १५७ |
| वियद्राजपुरं प्रति वकुलमालिकागमनम्                  | ..... | ..... | १५८ |
| दिव्योद्यानस्थपद्मावतीसखीः प्रति वकुलमालिकोक्तिः    | ..... | ..... | १५९ |
| वकुलमालिकां प्रति सखीविनिवेदित पद्मावत्युदन्तः      | ..... | ..... | ”   |
| दैवज्ञोक्त्या अगस्त्यलिङ्गार्चनाय विप्रादिप्रेषणम्  | ..... | ..... | १६३ |
| धरणीकृतप्रश्नस्य पुलिन्दिनीप्रतिवचनम्               | ..... | ..... | १६४ |
| पद्मावतीनिवेदितभगवद्भागवतलक्षणानि                   | ..... | ..... | १६५ |
| वकुलमालिकया सार्धं सखीनां धरणीसमीपे आगमनम्          | ..... | ..... | १६८ |
| धरणीदेव्यै वकुलमालिकानिवेदित श्रीनिवासोदन्तः        | ..... | ..... | ”   |
| श्रीनिवासोक्त्या शङ्खनृपस्य स्वामितीर्थे तपःकरणम्   | ..... | ..... | १६९ |
| वकुलमालिकोक्त्या धरण्यादिकृत विवाहनिश्चयः           | ..... | ..... | १७२ |
| बृहस्पत्युक्त्या विवाहलग्नस्थिरीकरणम्               | ..... | ..... | ”   |
| विश्वकर्मादिकृतपुरालङ्कारादिक्रमः                   | ..... | ..... | १७३ |

|                                                              |     |
|--------------------------------------------------------------|-----|
| शुकेन सह वकुलमालिकायाः श्रीनिवाससमीपे गमनम्.....             | १७४ |
| श्रीनिवासाय शुकावेदित पद्मावतीपरिणयवृत्तान्तः ....           | ”   |
| पद्मावत्या शुकदत्त श्रीनिवासमालाधारणम् ....                  | ”   |
| श्रीनिवासस्य लक्ष्म्यादिकृत विवाहालङ्कारः ....               | १७६ |
| ब्रह्मादिभिः साकं श्रीनिवासस्य वियद्राजपुरगमनम् ....         | १७७ |
| पद्मावतीपरिणयघट्टः ....                                      | ”   |
| श्रीनिवासकृपया वियद्राजस्य भक्तिप्राप्तिरूपवरप्राप्तिः ....  | १७९ |
| विवाहार्थमागतानां ब्रह्मादीनां स्वावासगमनम् ....             | ”   |
| वसुनामकनिषादवृत्तान्तः ....                                  | १८० |
| रङ्गदासस्य श्रीनिवाससेवार्थं श्रीशेषाचलगमनम् ....            | १८१ |
| श्रीनिवासार्थं रङ्गदासकृतदिव्योद्यानमण्डपनिर्माणानि ....     | १८२ |
| रङ्गदासस्य गन्धर्वक्रीडादर्शनेन भगवत्कैङ्कर्यविस्मृतिः.....  | १८३ |
| स्वरूपानुसन्धानेन लज्जितं रङ्गदासं प्रति श्रीनिवासवचनम् १८४  |     |
| तोण्डमान्नामक नृपवृत्तान्तः ....                             | १८५ |
| तोण्डमान्नृपस्य मृगयार्थं श्रीशेषाचलगमनम् ....               | ”   |
| श्रीनिवाससमीपस्थपञ्चवर्णशुकवृत्तान्तः ....                   | १८६ |
| तोण्डमान्नृपस्य निषादेन सह श्रीनिवाससेवागमनम् ....           | १८७ |
| तोण्डमान्नृप प्रति रेणुकोक्तिः ....                          | १८८ |
| शुकवर्णित पद्मसरोवरमाहात्यम् ....                            | ”   |
| देवादिकृत श्रीलक्ष्मीस्तुतिः ....                            | १८९ |
| इन्द्रादीन् प्रति स्तुतिपसन्न श्रीलक्ष्मीवचनम् ....          | १९० |
| तोण्डमान्नृपस्य स्वपितुः सकाशाद्राज्यप्राप्तिः ....          | १९१ |
| तोण्डमान्नृपस्य वसुनिवेदितवराहोदन्तः ....                    | १९२ |
| नृपस्य निषादवाक्यस्वप्नाभ्यां बिलमार्गेण शेषाचलगमनम् १९४     |     |
| भगवद्भक्त्या तोण्डमान्नृपकृतक्षीराभिषेकवर्णननिर्माणदिकम् १९५ |     |
| गङ्गास्नानगत वीरशर्माख्य विप्रचरितम् ....                    | १९६ |
| अस्थिसरोवरमाहात्यम् ....                                     | १९८ |

|                                                          |      |     |
|----------------------------------------------------------|------|-----|
| कुर्वग्रामस्थ कुलालवंशज भीमाख्यभक्तोदन्तः                | .... | १९९ |
| कुर्वग्रामस्थ भीमाख्यभक्तस्य पत्न्या सह वैकुण्ठप्राप्तिः | .... | १०० |
| श्रीनिवासकृपया तोण्डमाननृपस्य सारूप्यप्राप्तिः           | .... | २०१ |
| एतन्माहात्म्यश्रवणपठनफलश्रुतिः                           | .... | २०२ |

## श्रीपाद्मपुराणे विषयाः

|                                                               |      |     |
|---------------------------------------------------------------|------|-----|
| मेरुशिखरात् शुक्रब्रह्मर्षेः वेङ्कटाचलागमनम्                  | .... | २०३ |
| श्रीवेङ्कटाचलवर्णनम्                                          | .... | २०५ |
| स्कन्दस्य कुमारधारास्नानेन शक्त्यायुधप्राप्तिः                | .... | २०७ |
| इन्द्राय पापनाशनस्नानेन वृत्रवधजनितपापनिर्मुक्तिः             | .... | २०८ |
| आकाशगङ्गामाहात्म्यम्                                          | .... | "   |
| व्रततीवर्तनीतीर्थस्नानकाले शुक्रब्रह्मर्षिं प्रति अशरीरोक्तिः | .... | "   |
| अशरीरोक्त्या शुक्रस्य पद्मसरोवरगमनम्                          | .... | २०९ |
| पद्मसरोवरवर्णनम्                                              | .... | "   |
| शुक्रस्य पद्मसरसि श्रीनिवासध्यानपूर्वकस्नानादिकम्             | ..   | २१० |
| पद्मसरोवरतीरस्थ दिव्यारामवर्णनम्                              | ..   | २११ |
| दिव्यारामे शुक्रब्रह्मर्षेः महानियमपूर्वकतपोऽनुष्ठानम्        | .... | २१२ |
| शुक्रमुनितपोऽग्निज्वालाभिः लोकोपद्रवं त्यजतिः                 | .... | २१३ |
| शुक्रतपोभङ्गाय महेन्द्रोत्तरम्भादिसन्त्ववचनानि                | .... | २१४ |
| महेन्द्रनिकटे रम्भादकृतप्रतिज्ञा                              | .... | "   |
| शुक्रतपे वनं प्रति आगतानां रम्भादीनां शृङ्गारलीलाः            | .... | २१५ |
| श्रीनिवासध्यानेन जितकामं शुक्रं प्रति रम्भादिहासोक्तिः        | .... | २१६ |
| रम्भादिदुर्व्यापारान् विलोक्य शुक्रब्रह्मर्ष्यनुतापः          | .... | २१७ |
| तत्र तत्कृत दशावतारस्तोत्रम्                                  | .... | "   |
| श्रीनिवासमुद्दिश्य रम्भाद्यप्सरस्सङ्घभीतशुक्रस्तुतिः          | .... | २१९ |
| श्रीनिवासमुद्दिश्य शुक्रब्रह्मर्षिप्रार्थना                   | .... | २२१ |
| रम्भादीनां स्वलावप्यनिन्दापूर्वकं यथागतं गमनम्                | .... | २२२ |
| भगवत्कृपया शुक्रकृत दृढतरभक्तिपूर्वकभगवदुपासनम्               | .... | "   |

|                                                               |      |     |
|---------------------------------------------------------------|------|-----|
| शुकमुनिं प्रति तपस्तुष्ट श्रीनिवासागमनम्                      | .... | २२३ |
| भगवन्तं विलोक्य शुकमुनिकृतनटनादिकम्                           | .... | "   |
| श्रीनिवासकृपया शुकब्रह्मैव मुक्तिः....                        | .... | २२५ |
| शुकमुनिकृत शुकपुराष्टोत्तरशतविप्रगृहनिर्माणानि                | .... | २२७ |
| शुकपुरे बलभद्रसहकृतकृष्णप्रतिष्ठा ....                        | .... | "   |
| शुकस्य स्वपुरात् शेषाचलागमनम् ....                            | .... | २२८ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरवर्णनम् ....                                | .... | २२९ |
| स्वामिपुष्करिणीवर्णनम् ....                                   | .... | "   |
| श्रीनिवासाविर्भावः ....                                       | .... | २३० |
| शुकब्रह्मर्षिकृत श्रीनिवासस्तुतिः ....                        | .... | २३२ |
| श्रीवराहाविर्भाववृत्तान्तः ....                               | .... | २३३ |
| पातालगत भूम्युद्धरणे द्युक्तवराहवर्णनम्                       | .... | "   |
| पातालगतधरणीवराहयोः नर्मव्यापारादिः                            | .... | २३५ |
| वराहं प्रति धरण्युक्तिः ....                                  | .... | २३६ |
| धरण्या साकं पातालात् वराहस्य शेषाचलागमनम्                     | .... | "   |
| दुर्वाससः शापात् किन्नरदम्पत्योः कैरातरूपप्राप्तिः            | .... | २३७ |
| कैरातदम्पत्योः शेषाचले पुत्रप्राप्तिप्रियङ्गुकृषीकरणादीनि.... | .... | २३८ |
| प्रियङ्गुगोप्तृकिरातसमीपं प्रति वराहागमनम्                    | .... | २३९ |
| श्रीवराहदर्शनार्थं शेषाचलं प्रति नृपागमनम्                    | .... | २४० |
| नृपस्य वल्मीकविवरागत वराहदर्शनम्                              | .... | "   |
| नृपं प्रत्यशरीर्युक्तिः ....                                  | .... | २४१ |
| क्षीराभिषेकात् वराहस्य वल्मीकादाविर्भावः                      | ...  | २४२ |
| राजानं प्रति भगवदुक्तिः ....                                  | .... | २४४ |
| श्रीवराहकृता किन्नरमिथुनस्य किरातत्वनिर्मुक्तिः               | .... | "   |
| नृपस्य श्रीवराहप्रतिष्ठापूर्वकं स्वपुरगमनम्                   | .... | "   |
| श्रीनिवासस्य स्वामितीर्थदक्षिणतीरवासवर्णनम्                   | .... | २४५ |
| श्रीनृसिंहाचलस्य नीलकण्ठतपःक्षेत्रवर्णनम्                     | .... | २४६ |

|                                                             |      |     |
|-------------------------------------------------------------|------|-----|
| नीलकण्ठश्रमस्थ पुण्यपुष्करिणीवर्णनम्                        | .... | २४८ |
| अश्मन्यग्रोधमूलस्थ नीलकण्ठाश्रमवर्णनम्                      | .... | २४९ |
| नीलकण्ठकृत नृसिंहाराधनसङ्कल्पः ....                         | .... | २५० |
| नीलकण्ठकृत नृसिंहाराधनविधिः ....                            | .... | २५२ |
| नीलकण्ठप्रतिष्ठित श्रीनृसिंहवर्णनम्.....                    | .... | २५३ |
| श्रीनृसिंहसान्निध्येन नीलकण्ठाश्रमस्याधिक्यवर्णनम्          | .... | २५५ |
| पाण्डवतीर्थ माहात्म्यम्                                     | .... | "   |
| नारायणगिरिप्रभाववर्णनम्                                     | .... | २५६ |
| नारायणाद्रिस्थ भैरवाख्य क्षेत्रपालोदन्तः                    | .... | २५७ |
| गौर्या नारायणाद्रितपकरणेन दुर्गात्वशिवाधशरीरत्वप्राप्तिः    | .... | "   |
| अज्यादि पञ्चाशन्नमहर्षिप्रशंसितस्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम्   | .... | २५८ |
| दैत्योपद्रवज्ञापनार्थं ब्रह्मादीनां क्षीरसागरगमनम्          | .... | २६५ |
| ब्रह्मादिकृत क्षीराब्धिशायिस्तुतिः ....                     | .... | "   |
| ब्रह्मादीनां पुरतः क्षीरार्णवात् लक्ष्मीसखीप्रादुर्भावः     | .... | २६७ |
| लक्ष्मीसखीकथित भगवदावासज्ञापनपूर्वकामयोक्तिः                | .... | "   |
| ब्रह्मादीनां क्षीरार्णवात् श्रीनारायणाचलगमनम्               | .... | २६८ |
| श्रीस्वामिपुष्करिणीतीरवर्णनम्                               | .... | २६९ |
| कमलाल्युत्तया ब्रह्मादिकृत श्रीनिवाससाक्षात्कारोद्योगः..... | .... | २७० |
| शेषाद्रौ श्रीनिवाससाक्षात्काराय ब्रह्मादिकृतस्तुतिः         | .... | २७१ |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे स्तुतिप्रसन्नभगवद्विमानाविर्भावः        | .... | "   |
| ब्रह्मादिकृत विमानमध्यगत श्रं.निवासस्तुतिः                  | .... | २७२ |
| श्री श्रीनिवासाविर्भावः                                     | .... | "   |
| ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृत कुशलप्रश्नः                      | .... | २७३ |
| भगवते ब्रह्मकृत लोकोपद्रवकार्यसुरोदन्तविज्ञापनम्            | .... | "   |
| ब्रह्मादि प्रार्थनया भगवदुक्तामयोक्तिः                      | .... | २७५ |
| रक्षोगणसंहाराय भगवत्कृतकुमुदाक्षनियोजनम्                    | .... | "   |
| भगवतो ब्रह्मादिप्रेषणपूर्वकमन्तर्धानम्                      | .... | २७६ |

|                                                             |      |     |
|-------------------------------------------------------------|------|-----|
| श्री श्रीनिवासावतार देशकालनिर्णयः                           | .... | २७६ |
| पद्मसरोवरमाहात्म्यम्                                        | .... | २७७ |
| भृगुपादाहतिकुपितायाः लक्ष्म्याः कपिलालयगमनम्                | .... | २७८ |
| लक्ष्म्यन्वेषणार्थं धरातलं प्रति भगवदागमनम्                 | .... | ”   |
| श्रीकोल्हापुरवासि लक्ष्मीमर्चयन्तं भगवन्तं प्रत्यशरीरोक्तिः | .... | ”   |
| शेषाचलाध्वना राजरूपस्य भगवतः सुवर्णमुखरीतीरगमनम्            | .... | २७९ |
| भगवत्कृतपद्मसरोवरनिर्माणप्रकारः                             | .... | २८० |
| पद्मविकासनैरन्तर्यार्थं भगवत्कृतसूर्यनारायणप्रतिष्ठा        | .... | ”   |
| लक्ष्मीमन्त्रोपासनपूर्वकभगवत्कृततपोविधिः                    | .... | २८१ |
| नृपशङ्कया भगवत्तपोभङ्गाय इन्द्रादिकृतरम्भादिप्रेषणम्        | .... | ”   |
| राजवेषभृद्भगवत्तपोवनं प्रति इन्द्रप्रेषितरम्भाद्यागमनम्     | .... | २८२ |
| स्वाश्रमागताप्सरोवञ्चनार्थं भगवत्कृतमायानिर्माणम्           | .... | ”   |
| पद्मसरोवरात् लक्ष्मीप्रादुर्भावः                            | .... | २८३ |
| लक्ष्म्यवतारदर्शनार्थं पद्मसरोवरं प्रति ब्रह्माद्यागमनम्    | .... | २८४ |
| लक्ष्मीकृत मालार्पणपूर्वकभगवद्वरणम्                         | .... | २८५ |
| भगवतः पद्मसरोवरवरदानपूर्वकं शेषाचलगमनम्                     | .... | ”   |
| नारदाद्यष्टमहर्षिप्रशंसित पद्मसरोवरमाहात्म्यम्              | .... | ”   |
| शुकचरित्रवर्णनम्                                            | .... | २८७ |
| छायाशुकोत्पत्तिः                                            | .... | ”   |

## श्रीगरुडपुराणगता विषयाः

|                                                                 |      |     |
|-----------------------------------------------------------------|------|-----|
| वसिष्ठं प्रति श्रीवेङ्कटाद्रिमाहात्म्यश्रवणेच्छ्वरुन्धतीप्रश्नः | .... | २९० |
| वसिष्ठवर्णित श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्                           | .... | २९१ |
| श्रीवेङ्कटाचलस्थ आकाशगङ्गा पापनाशन तुम्बुरुतीर्थप्रशंसा         | .... | २९२ |
| वसिष्ठोक्त्या अरुन्धत्याः तुम्बुरुतीर्थे तपःकरणाय शेषाचलगमनम्   | .... | २९३ |
| अरुन्धतीसमीपे भगवदाविर्भावः                                     | .... | २९४ |
| अरुन्धती कृत भगवत्स्तुतिः                                       | .... | ”   |
| भगवद्वर्णित वेङ्कटाचल तुम्बुरुतीर्थ माहात्म्यानि                | .... | २९५ |



## श्रीहरिवंशान्तर्गतशेषधर्मे विषयाः

पुटम्.

|                                                 |      |      |
|-------------------------------------------------|------|------|
| नारदादीनां भगवत्सेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलगमनम्     | .... | २९६  |
| श्रीवेङ्कटाचलवासि महाजनचरित्रवर्णनम्            | .... | २९९. |
| श्रीनिवाससेवार्थं श्रीभीष्मकृत युधिष्ठिरप्ररणम् | .... | ३०२  |

## ब्रह्माण्डपुराणे विषयाः

|                                                            |      |     |
|------------------------------------------------------------|------|-----|
| भृगुनारदसंवादात्मकसूतोक्त श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्         | .... | ३०३ |
| वेङ्कटाचलस्य अनेकनामानुवर्णनपूर्वकं माहात्म्यवर्णनम्       |      | ३०५ |
| नारदकृतक्षीराब्धिवासि भगवद्वर्णनम्                         | .... | ३०६ |
| नारदं प्रति धरातलं प्रति विजिहीर्षुभगवदुक्तिः              | .... | ३०८ |
| नारदकृत भगवत्क्रीडाहर्देशप्रकाशनम्                         | .... | ,,  |
| अनन्तस्य भगवत्क्रीडाद्वित्वप्राप्तिः                       | .... | ३०९ |
| भगवतो लक्ष्म्यादिमहिषीपरिजनैः सह क्रीडाचलगमनम्             | .... | ३१० |
| अद्विरूपधार्यनन्तस्य शिरःपुच्छप्रदेशवर्णनम्                | .... | ३११ |
| व्याघ्रपादवृत्तान्तः                                       | .... | ,,  |
| अद्विरूपधार्यनन्तस्य पक्षप्रदेशवर्णनम्                     | .... | ३१३ |
| भगवत्क्रीडाचलवर्णनम्                                       | .... | ३१४ |
| नारयणाख्यविप्रवृत्तान्तः                                   | .... | ३१५ |
| ,, विप्रतुष्टस्य भगवतः आविर्भावः                           | .... | ३१६ |
| ,, विप्रकृता भगवत्स्तुतिः                                  | .... | ३१७ |
| भगवन्तमुद्दिश्य विप्रकृत सर्वजनदृश्यत्वादिप्रार्थना        | .... | ३१८ |
| भगवत्कृत नारायणप्रार्थनाभ्युपगमप्रकारः                     | .... | ३१९ |
| भगवतः क्रीडादौ लीलार्थं मृगयाविहारः                        | .... | ३२० |
| वृषभाख्यासुरवृत्तान्तः                                     | .... | ३२१ |
| वृषभासुरशबरवेषधारिभगवतोः युद्धप्रकारः                      | .... | ,,  |
| भगवन्तं प्रति संहारभ्युपगन्तु वृषभासुरप्रार्थना            | .... | ३२३ |
| असुरप्रार्थनया क्रीडाद्रेः भगवद्वत्तवृषभनामधेयत्वप्राप्तिः |      | ३२४ |
| वृषभासुरवधप्रकारः                                          | .... | ३२५ |

|                                                           |      |      |     |
|-----------------------------------------------------------|------|------|-----|
| अञ्जनादेव्युत्पत्तिक्रमः                                  | .... | .... | ३२५ |
| अञ्जनायाः श्रीवेङ्कटाद्रौ तपःकरणेनाञ्जनेयाख्यसुतोत्पत्तिः |      |      | ३२७ |
| आञ्जनेयस्य फलबुद्ध्या रविमण्डलं प्रत्युत्पतनम्            | .... |      | ३३१ |
| आञ्जनेयस्य ब्रह्मादिदत्त सर्वावध्यत्ववरप्राप्तिः          | .... |      | ३३२ |
| क्रीडाद्रेः अञ्जनाचलनामधेयत्वप्राप्तिः                    | .... |      | ३३३ |
| क्रीडाद्रेः श्रीवेङ्कटाभिधानोपोद्धातः ...                 | .... |      | ३३४ |
| श्रीवेङ्कटेशाराधक चोलराजसुतोत्पत्तिक्रमः                  | .... |      | ३३८ |
| चोलराजस्य मृगयाविहारकाले नागकन्यादर्शनादिः                | .... |      | ३३९ |
| चोलराजस्य नागकन्यायां सार्वभौमलक्षणोपेतसुतोत्पत्तिः ...   |      |      | ३४३ |
| चोलराजस्य पातालात् स्वपित्रन्तिके आगमनम्                  | .... |      | ३४४ |
| चोलराजस्य अशरीर्युक्त्या पितृकृतराज्याभिषेकक्रमः          | .... |      | ३४५ |
| चक्रवर्तिनं प्रति गोपालनिवेदित वेङ्कटाचलवल्मीकोदन्तः      |      |      | ३४८ |
| नृपनिकटं प्रति शेषाचलोदन्तज्ञापनाय शबरगमनम्               | .... |      | ३४९ |
| चक्रवर्तिनः शबरेण सह वराहदर्शनार्थं शेषाचलगमनम्           | .... |      | ३५० |
| चक्रवर्तिकृतक्षीराभिषेकेण वल्मीकात् श्रीनिवासाविर्भावः    |      |      | ३५० |
| चक्रवर्तिकृत श्रीनिवासस्तुतिः                             | .... | .... | ३५२ |
| श्रीनिवासस्य चक्रवर्तिप्रार्थनया सर्वजनदृश्यत्वाभ्युपगमः  |      |      | ३५४ |
| श्री श्रीनिवासमहोत्सवसेवार्थं ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्       | .... |      | ३५५ |
| श्री श्रीनिवासस्य रथोत्सवावभृथोत्सवप्रकारः                | .... |      | ३५६ |
| चक्रवर्तिसमीपागत कृष्णशर्माख्य विप्रोदन्तः                | .... |      | ३५८ |
| अस्थिकूटाभिध सरोवरमाहात्म्यम्                             | .... |      | ३६० |
| सिंहादाख्यासुरवृत्तान्तः                                  | .... |      | ३६१ |
| सिंहादभीतदेवानां श्रीनिवाससमीपागमनम्                      | .... |      | ३६२ |
| अभयागतदेवानां चक्रवर्तिनिकटगमनाय भगवदाज्ञा                | .... |      | ३६३ |
| भगवदाज्ञया देवानां द्विजवेषेण चक्रवर्तिनिकटगमनम्          | .... |      | ३६४ |
| सिंहादवधाय चक्रवर्तिनं प्रति देवकृतचे दना                 | .... |      | ३६४ |
| सिंहादवधोपायवेदनाय भगवत्सन्निधिं प्रति चक्रवर्तिगमनम्     |      |      | ३६४ |

|                                                    |      |     |
|----------------------------------------------------|------|-----|
| चक्रवर्तिकृत असुरवधार्थं भगवद्दत्तपञ्चायुधधारणम्   | .... | ३६४ |
| सिंहादेन सह युद्धाय किरातरूपेण चक्रवर्तिगमनम्      | .... | ३६५ |
| पापनाशतीर्थसमीपप्रवृत्तचक्रवर्तिं सिंहादयुद्धक्रमः | .... | ३६६ |
| समरसमये चक्रवर्तिने वायुकृत सुदर्शनमन्त्रोपदेशः    | .    | ३६७ |
| चक्रायुधेन चक्रवर्तिकृतं सिंहादवधप्रकारः           | .... | ”   |
| भगवत्कृत पञ्चायुधकृत्यनिर्णयः                      | .... | ३६८ |

## मार्कण्डेयपुराणे विषयाः

|                                                                |      |     |
|----------------------------------------------------------------|------|-----|
| तीर्थयात्रेच्छया पितृनिकटे मार्कण्डेय विज्ञप्तिः               | .... | ३७१ |
| पितृनुज्ञया मार्कण्डेयकृत पुण्यदेशतीर्थयात्राक्रमः             | .... | ३७३ |
| मार्कण्डेयं प्रति गरुडोपदिष्ट श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्         | .... | ३७४ |
| मार्कण्डेयस्य शुद्धाख्यागस्त्यशिष्येण सह श्रीवेङ्कटाचलगमनम्    | ३७५  |     |
| मार्कण्डेयस्य श्रीस्वामितीर्थस्नानपूर्वक श्रीवराहसेवाप्राप्तिः | ३७६  |     |
| मार्कण्डेयकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः                            | .... | ३७७ |
| मार्कण्डेयस्य भगवद्दत्त भक्तिनैरन्तर्यवरप्राप्तिः              | .... | ३७८ |
| शुद्धाख्यागस्त्यशिष्यस्य भगवदनुग्रहेण निष्पापत्वप्राप्तिः      | ”    |     |
| मार्कण्डेयं प्रति शुद्धकृतस्वोदन्तज्ञापनम्                     | .... | ”   |
| मार्कण्डेयस्य शुद्धेन सह सुवर्णमुखरीतीरस्थागस्त्याश्रमगमनम्    | ३८१  |     |
| अगस्त्यवर्णित श्रीवेङ्कटाचलवैभवम्                              | .... | ”   |
| श्रीनिवाससेवार्थं ब्रह्मरुद्रादीनां श्रीवेङ्कटाचलगमनवर्णनम्    | ३८२  |     |
| श्रीभगवत्प्रादुर्भाववर्णनम्                                    | .... | ३८३ |
| ब्रह्मरुद्रादिकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः                        | .... | ”   |
| अगस्त्यकृतं श्रीस्वामितीर्थमाहात्म्यभगवद्विव्योत्सवयोर्वर्णनम् | ३८४  |     |
| कुमारधारामाहात्म्यम्                                           | .... | ३८५ |
| दारिद्र्यदुःखासहमानवृद्धद्विजकृत भृगुपतनयनः                    | .... | ३८६ |
| भृगुपतनोद्युक्तं वृद्धं प्रति भगवदुक्तिः                       | .... | ”   |
| वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारसम्प्राप्तिः                    | .... | ३८७ |
| कुमारधारास्नानप्राप्तयौवनवृद्धं प्रति अन्तर्हितभगवदुक्तिः      | ”    |     |

स्कन्दस्य कुमारधारातीर्थे तपःकरणेन

|                                                          |      |     |
|----------------------------------------------------------|------|-----|
| तारकवधोत्थब्रह्महत्याविमुक्तिः                           | .... | ३८९ |
| कुमारधारातीरे स्कन्दतपस्तुष्टभगवदाविर्भावः               | .... | ३९१ |
| भगवत्सेवार्थं कुमारधारां प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्     | .... | ३९२ |
| स्कन्दकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः                          | .... | ३९३ |
| भगवद्वर्णित कुमारधारास्नानमालादिनिर्णयः                  | .... | ”   |
| अगस्त्यदीनां कुमारधारातीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलगमनम् | .... | ३९६ |

श्रीवामनपुराणे विषयाः

|                                                        |      |     |
|--------------------------------------------------------|------|-----|
| प्रयागमाहात्म्यम्                                      | .... | ४०० |
| सीतादिस्वसुताविवाहाद्यर्थं जनकनृपकृतानुतापक्रम         | .... | ”   |
| जनकनृपनापापनोदनार्थं शतानन्दोक्तपुरातनेतिहासः          | .... | ४०३ |
| स्कन्दं प्रति शङ्करोक्त ब्रह्महत्याविमुक्तिहेतूपन्यासः | .... | ४०५ |
| प्रयागक्षेत्रस्य भगवद्वर्णित प्रयागाभिधाननिरुक्तिः     | .... | ४०७ |
| शङ्करहस्तात् कपालविनिर्मुक्तिप्रकारः                   | .... | ”   |
| स्कन्दं प्रति शङ्करकृतं तपस्समुचितवेङ्कटाद्रिवर्णनम्   | .... | ४०८ |
| तपःकरणाय स्कन्दस्य श्रीवेङ्कटाचलगमनम्                  | .... | ४१३ |
| बृहस्पत्युक्तस्कन्दोत्पत्तिक्रमः                       | .... | ”   |
| बृहस्पतिकृत स्कन्दस्तुतिः                              | .... | ४१६ |
| स्कन्दस्य तपःकरणप्रकारः                                | .... | ४१८ |
| शङ्करकथित श्रीनिवासाविर्भावहेतूपोद्धातः                | .... | ”   |
| सुदर्शनस्य शङ्करसमीपप्राप्तिक्रमः                      | .... | ४१९ |
| इन्द्रस्य सहस्राक्षत्वप्राप्तिप्रकारः                  | .... | ४२२ |
| सुवर्चलायां श्रीविष्वक्सेनोत्पत्तिक्रमः                | .... | ४२९ |
| चक्रादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यम्                          | .... | ”   |
| कपिलख्यचक्रतीर्थस्नानकालनिर्णयादिः                     | .... | ४३१ |
| भगवन्तमुद्दिश्य वाग्वादिकृत तपःप्रकारः                 | .... | ४३२ |
| प्रादुर्भूतभगवन्तमुद्दिश्य वायुकृतविश्वरूपस्तुतिः      | .... | ४३३ |

|                                                                    |     |
|--------------------------------------------------------------------|-----|
| वायुं प्रति भगवत्कृत अनवरतस्वसान्निध्यवरप्रदानम् ....              | ४४० |
| देव्या सह आगतस्य शम्भोः शेषाचलाग्नेयदिगवस्थानम् ....               | ४४२ |
| चक्रतीर्थे तपस्यन्तं प्रति शङ्करवचनम् ....                         | ४४३ |
| जनकं प्रति शतानन्दोक्तभगवदाविर्भावकथोपोद्धातः ....                 | ४४६ |
| अगस्त्यस्य शेषाचलवायव्यदिशि महाभूतविलोकनम् ....                    | ४४७ |
| शेषाचलोत्तरदिशि अगस्त्यादिकृत भगवदन्वेषणप्रकारः ....               | ४५१ |
| अगस्त्यादीनां सनत्कुमारविलोकनपूर्वकं पूर्वदिग्गमनम् ....           | ४५३ |
| शेषाचलपूर्वदिशि अगस्त्यादीनां अद्भुतवस्तुदर्शनम् ....              | ४५७ |
| भगवतः साक्षात्काराय तपःकुर्वन्तमिन्द्रं प्रति अगस्त्योक्तिः ....   | ४५९ |
| इन्द्रोक्त्या अगस्त्यस्य शङ्करदर्शनाय आग्नेयदिग्गमनम् ....         | ४६० |
| अगस्त्यकृत शेषाचलदक्षिणभागस्थ शङ्करसेवाक्रमः ....                  | ४६२ |
| सेवाकाङ्क्षिणमगस्त्यं प्रति शङ्करोक्तिः ....                       | ४६४ |
| शेषाचलनैर्ऋतदिशि अगस्त्यादीनां विष्वक्सेनदर्शनम् ....              | ४६६ |
| अगस्त्यादीन् प्रति विष्वक्सेनोक्तभगवद्दर्शनोपायः ....              | ४६८ |
| अगस्त्यादीनां शेषाचलस्थ विष्वक्सेनानुचरावलोकनम् ....               | ४६९ |
| अगस्त्यादीन् प्रति विष्वक्सेनपरिजनकृतस्त्रोदन्तज्ञापनम् ....       | ४७० |
| अगस्त्यादिकृत शेषाचलस्थ अनेकपुण्यतीर्थावलोकनम् ....                | ४७१ |
| अगस्त्यादीनां कुमारधारास्नानम् ....                                | ४७३ |
| श्रीवेङ्कटाचलस्थ पुण्यतीर्थवर्णनम् ....                            | ४७५ |
| कपिलतीर्थपश्चिमभागस्थ पञ्चतीर्थमाहात्म्यम् ....                    | ४७६ |
| स्वामिपुष्करिण्यादि सर्वतीर्थमाहात्म्यवर्णनम् ....                 | ४७७ |
| शङ्खाख्यनृपवृत्तान्तः ....                                         | ४८० |
| स्वामिपुष्करिण्याः भगवदुक्तगङ्गाद्यशेषपुण्यतीर्थसाम्यम् ....       | ४८१ |
| भगवद्भक्त्या शङ्खनृपकृतस्वामितीर्थतपःप्रकारः ....                  | ४८२ |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थे भगवन्तमुद्दिश्य अगस्त्यादिकृततपश्चिन्ता .... | ४८३ |
| भगवत्सेवार्थं वेङ्कटाचलं प्रति गुरुशुक्राद्यागमनम् ....            | ४८५ |
| उपरिचरवसु वृत्तान्तः ....                                          | ४८६ |

|                                                           |      |     |
|-----------------------------------------------------------|------|-----|
| उपरिचरवसुं प्रति महर्षिकृतप्रश्नप्रकारः                   | .... | ४८६ |
| महर्षिशापेन उपरिचरवसोः पातालकुहरप्राप्तिः                 | .... | ४८७ |
| भगवत्प्रेरित चक्रकृत वसुहननोद्युक्त असुरवधप्रकारः         | .... | ४८९ |
| वस्वानयनाय पातालबिलं प्रति भगवत्कृत गरुडप्रेषणम्          | .... | ॥   |
| शङ्खादीनां भगवद्विष्यमङ्गलविग्रहसेवा                      | .... | ४९३ |
| आविर्भूतभगवद्विष्यमङ्गलविग्रहवर्णनम्                      | .... | ४९९ |
| आविर्भूतं भगवन्तं प्रति महर्षिकृतप्रणामादिक्रमः           | .... | ५०४ |
| भगवदाविर्भावकाले देवताद्यापूरित शङ्खादिमङ्गलवाद्यक्रमः    | .... | ५०५ |
| भगवत्सेवायै वेङ्कटाद्रिं प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्      | .... | ॥   |
| ब्रह्मकृत भगवत्स्तुतिः                                    | .... | ५०७ |
| शम्भुकृत भगवत्स्तुतिः                                     | .... | ५०८ |
| महर्षिकृत                                                 | ॥    | ५१० |
| सप्तर्ष्यादिकृत                                           | ॥    | ५११ |
| सनकादिपरमयोगिकृत भगवत्स्तुतिः                             | .... | ५१२ |
| इन्द्रादि दिक्पालकृत                                      | ॥    | ५१३ |
| श्वेतद्वीपवासिसिद्धकृत                                    | ॥    | ५१४ |
| ब्रह्मादीनां भगवद्विश्वरूपदर्शनम्                         | .... | ५१७ |
| महर्षीन् प्रति भगवदुक्तिः                                 | .... | ५१८ |
| मुनीनाश्वासयन्तं भगवन्तं प्रति ब्रह्मकृतविज्ञप्तिः        | .... | ५१९ |
| भगवत्कृत ब्रह्माद्यभेष्टवरप्रदानम्                        | .... | ५२० |
| महर्षीणां भगवद्विष्यविमानदर्शनम्                          | .... | ५२३ |
| शङ्खनृपस्य वरं प्रदाय भगवत्तिरोधानम्                      | .... | ५२४ |
| भगवदन्तर्धानानन्तरं देवाद्यनुभूतानुतापवर्णनम्             | ...  | ५२५ |
| भगवद्विमानादि दृष्ट्वा ब्रह्मादिनिर्गमनम्                 | .... | ५२७ |
| श्रीवेङ्कटाचलात् कैलासं प्रति शङ्खरगमनम्                  | .... | ५२८ |
| भगवद्विमानान्तर्धानहेतुनिरूपणम्                           | .... | ५३३ |
| स्वामिपुष्करिण्यां अगस्त्यादिकृत भगवन्मन्त्रोपासनाप्रकारः | .... | ५३४ |

|                                                             |     |
|-------------------------------------------------------------|-----|
| अगस्त्यादिकृतो भगवत्सेवापूर्वकः स्वावासगमनोद्योगः....       | ५३५ |
| भगवद्विमानमन्तार्हितं दृष्ट्वा अगस्त्यादिकृता चिन्ता ....   | ५३५ |
| शेषाद्विवायव्यभागस्थित म.ाभूतस्य नारायणाद्रित्ववर्णनम्      | ५३६ |
| वसोः भगवन्मन्त्रोपासनापूर्वकं स्वामितीर्थस्थितिवर्णनम्....  | ,,  |
| श्वेतद्वीपवासि सिद्धादीनां श्रीवेङ्कटाचलात् स्वावासगमनम्    | ५३७ |
| अगस्त्यकृत भाविविमानाविर्भावहेतुनिरूपणम् ....               | ५३८ |
| देवजिदाद्यसुरकृतलोकोपद्रववर्णनम्.....                       | ५३९ |
| देवजिदाद्यसुरवधार्थं सपरिकरस्य विष्वक्सेनस्य गमनम्'....     | ५४० |
| विष्वक्सेनासुरसैन्ययोः युद्धक्रमः ....                      | ५४१ |
| विष्वक्सेनकृत नारायणास्त्रप्रयोगपूर्वकासुरवधप्रकारः ....    | ५४४ |
| देवादिकृतविजयोपचारस्तुत्यादिः ....                          | ५४५ |
| भविष्यच्छ्रीभगवद्विव्यविमानवर्णनम्.....                     | ५४८ |
| स्वामिपुष्करिणीकृतान्नदानादिप्रशंसा                         | ५५० |
| वामदेवं प्रति ब्रह्मोपदिष्ट स्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम् .... | ५५१ |
| ब्रह्मकारित श्रीवेङ्कटाचलाधीशोत्सवप्रशंसा                   | ५५३ |
| महोत्सवसेवार्थमागतजनाराधकपुण्यफलवर्णनम्                     | ,,  |
| स्वामिपुष्करिणीं प्रति सार्धत्रिकोटितीर्थागमनकालनिर्णयः     | ५५५ |
| स्वामिपुष्करिणीतीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलं प्रति         |     |
| जनकनृपागमनम् ....                                           | ५५८ |

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्य - प्रथमभागस्य

विषय सूचिका

सम्पूर्णा



श्रीरस्तु  
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः  
श्रियै पद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् (श्रीवाराहपुराणप्रथमभागान्तर्गतम्)

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥  
श्रीवेङ्कटाचलाधीशं श्रियाऽध्यासितवक्षसम् ।  
श्रितचेतनमन्दारं श्रीनिवासमहं भजे ॥

हरिः ॐ  
अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

### श्वेतवराहकल्पवृत्तान्तकथनम्

श्रीमते भूवराहाय नमः कृत्स्ना वसुन्धरा ।  
उद्धृता येन पातालाद्वासार्थं सर्वदेहिनाम् ॥ १  
नमो यज्ञवराहाय कृष्णाय शतबाहवे ।  
नमस्ते वेदवेदान्तवपुषे विश्वरूपिणे ॥ २

मुनयः—

भगवन् सूत! धर्मज्ञ वेदव्यासकृपानिधे ।  
विष्णुस्थानेषु सर्वेषु स्वयंन्यक्तस्थलेषु च ॥ ३  
यत्र विष्णोःरतिप्रीतिर्यत्र सिद्ध्यन्ति सिद्धयः ।  
अत्यद्भुतं च चारित्रं यत्र विष्णोः प्रवर्तते ॥ ४



|                                                     |   |
|-----------------------------------------------------|---|
| मनुष्याणां च वसतां यत्र दृश्यो भवेद्धरिः ।          |   |
| श्रवणानन्दजनको वृत्तान्तो यस्य वा भवेत् ॥           | ५ |
| तादृशं वैष्णवं क्षेत्रमद्भुतं प्रियदर्शनम् ।        |   |
| अस्माकं ब्रूहि यच्छ्रुत्वा श्रोतव्यांशो न विद्यते ॥ | ६ |
| इति पृष्टस्तदा सूतस्तपोध्यानसमाधिमान् ।             |   |
| ध्यात्वा मुञ्जर्तमात्रन्तु प्रोव च मुनिसत्तमान् ॥   | ७ |

श्रीसूत —

|                                                           |    |
|-----------------------------------------------------------|----|
| अहो पृष्टमपूर्वं च कौतुकं भवतामहो ।                       |    |
| ममापि वाञ्छा महती वक्तुं तत्तु वदामि वः ॥                 | ८  |
| शृणुध्वं मुनयो यूयं सावधानतया त्विमम् ।                   |    |
| क्रीड रसेषु सक्तस्य हरेः क्रीडासमन्वितम् ॥                | ९  |
| विविधैस्तस्य चारित्रैरुपेतं सर्वसिद्धिदम् ।               |    |
| सर्वैश्वर्यकरं नृणां सर्वाश्चर्यप्रदं शुभम् ॥             | १० |
| पुण्यं पवित्रमायुष्यं सर्वमङ्गलकारकम् ।                   |    |
| वाराहकल्पवृत्तान्तं शेषाचलसमाश्रयम् ॥                     | ११ |
| पुरा हि सागरैः सर्वैरेकीभूते महीजले ।                     |    |
| कल्पादौ भगवान् विष्णुर्वटपत्रसमाश्रयः ॥                   | १२ |
| महर्लोकं समाश्रित्य स्थितञ्च जलसम्प्लवम् ।                |    |
| विचिन्त्य युगसाहस्रं जलावस्थानमद्भुतम् ।                  |    |
| यथापूर्वं जगत्सष्टुमुद्युक्तः सर्वशक्तिमान् ॥             | १३ |
| सर्वस्य धाना प्रवरो महात्मा सर्वात्मगः सर्वजगत्स्वरूपः ।  |    |
| सर्वेश्वरः सर्वविधानयज्ञं चकार बुद्ध्या तरुणाम्बुजाक्षः ॥ | १४ |
| इतीरितास्ते मुनयस्तदानीं सविस्मयोत्फुल्लहृदबुजाश्च ।      |    |
| सूतं महान्तं मुनिसङ्घसेव्यं तमद्भुवन् वेदविदां वरिष्ठम् ॥ | १५ |

मुनय —

अतीतानागतज्ञानप्रकाशितहृदम्बुज ! ।  
 उद्योगानन्तरं विष्णुः कृतवान् किं रमापतिः ? ॥ १६  
 कीदृशः प्रलयः कल्पः सर्गो वा कीदृशः पुनः ? ।  
 एतावद्वा जलं कस्मादागतं वद सुव्रत ! ॥ १७  
 कुत्र वा धरणी याता गिरयो वा महोन्नताः ? ।  
 तत्सर्वं शंस भगवन् ! श्रोतुं कौतूहलं हि नः ।  
 इति पृष्टः पुनः प्राह सूतस्तान्मुनिपुङ्गवान् ॥ १८

श्रीसूतः —

मुनयः श्रूयतां पूर्वं सङ्गृहेण जलागमः ।  
 चतुर्युगसहस्राणि प्रमाणं दिवसस्य च ॥ १९  
 निशाया'स्तावदेवास्य निर्दिष्टस्समयो विधेः ।  
 दिनावसानसमये ब्रह्मणो भगवान् रविः ॥ २०  
 सहस्ररश्मिस्तपति त्रिमूर्त्यात्मा त्रिलोचनः ।  
 वमत्यग्निं महाघोरं घर्मदीधितिं शुभिः ॥ २१  
 कतिचिद्वत्सरानेवं वृष्टिर्नैव भवेत्तदा ।  
 भूलोकवासिनः सर्वे मुनयश्च तपोधनाः ॥ २२  
 वसेयुर्जनलोके हि यावद्ब्रह्मनिशा तदा ।  
 वनानि पर्वताश्चापि दग्धाः कालाग्निना तदा ॥ २३  
 भस्मीभूता भवन्त्येव वायुस्सर्वात्मको महान् ।  
 हायनान् कतिचिद्वाति पश्चान्मेघा महाबलाः ॥ २४  
 स्थूणाकाराः सृजन्त्येव तोयधाराः समन्ततः ।  
 सन्ततं वत्सरानेवं कतिचित्तु निशामुखे ॥ २५

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| द्रवीभूता महाभूमिः पातालतलगामिनी ।              |    |
| सागराः सप्त चान्योन्यं भवेयुस्संयुतास्तदा ॥     | २६ |
| महर्लोकं समाक्रम्य तिष्ठन्त्येकोदकस्तदा ।       |    |
| तथैव युगसाहस्रं ब्रह्मणः शर्वरी भवेत् ॥         | २७ |
| निशावसाने गोविन्दः सृष्टिस्थित्यन्तकारकः ।      |    |
| चतुर्मुखशिवाशक्त्यं भूमेरुद्धरणं हरिः ॥         | २८ |
| कर्तुकामस्तदा विष्णुर्वटपत्रतले स्थितः ।        |    |
| श्वेतं वराहदेहं च सर्वयज्ञमयं शिवम् ॥           | २९ |
| अतिभं मं महारौद्रमासाद्य तरसा तदा ।             |    |
| प्रविश्य जलमध्यं तु क्षोभयामास वै तदा ॥         | ३० |
| संवर्तमेघनिर्घातवृंहितं च बहन्मुहुः ।           |    |
| प्रविवेश महापोत्री पातालं जलयूरितम् ॥           | ३१ |
| अन्वेषयामास तदा रसातलमशेषतः ।                   |    |
| तत्र युद्धं महाघोरं हिरण्याक्षसमाश्रयम् ॥       | ३२ |
| अभूद्भूतपूर्वं च तुमुलं रोमहर्षणम् ।            |    |
| चिरकालं च बाहुभ्यां मल्लयुद्धमवर्तत ॥           | ३३ |
| ततः क्रुद्धो महापोत्री दंष्ट्राग्रेण महासुरम् । |    |
| द्विधा तं पाटयामास मेस्तुल्यमहोन्नतिम् ॥        | ३४ |
| तद्रक्तसंघवेनैव तज्जलं रक्तमाबभौ ।              |    |
| तद्दृष्ट्वा मुनयः सर्वे जनलोका निवासिनः ॥       | ३५ |
| महज्जलमिदं रक्तमद्भुतं किमिदं भवेत् ? ।         |    |
| इत्याश्चर्यविलेखलाक्षाः समाविध्यानयोगतः ॥       | ३६ |
| ज्ञात्वा श्वेतवराहस्य प्रभावं मुनयोऽस्तुवन् ।   |    |
| ततः श्वेतवराहश्च पातालतलगामिनीम् ॥              | ३७ |

|                                                   |     |
|---------------------------------------------------|-----|
| दंष्ट्राग्रेणैव तां भूमिं सर्वसत्त्वसमाश्रयाम् ।  |     |
| उद्धृत्य तरसा पोत्री विक्षोभ्य च महज्जलम् ॥       | ३८  |
| निधाय पादं शेषस्य भोगोपरि महाप्रभुः ।             |     |
| जनलोकं समाश्रित्य तस्थौ पर्वतसन्निभः ॥            | ३९. |
| ब्रह्मादयो देवगणाः सिद्धाश्च परमर्षयः ।           |     |
| अस्तुवन् वेदमन्त्रैश्च स्तोत्रैश्च विविधैः पदैः ॥ | ४०  |
| ववर्षुः पुष्पवर्षाणि ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।         |     |
| देवदुन्दुभ्यो नेदुर्वीणामुरजमर्दलाः ॥             | ४१  |

देवाः—

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| ‘जय देव महापोत्रिन् ! जय भूमिधसञ्ज्युत ! ।    |    |
| हिरण्याक्षमहारक्षोविदारणविचक्ष्म ! ॥          | ४२ |
| त्वमनादिरनन्तश्च त्वत्तः परतरो न हि ।         |    |
| त्वमेव सृष्टिकालेऽपि विधिर्भूत्वा चतुर्मुखः ॥ | ४३ |
| सृजस्येतज्जगत्सर्वं पासि विष्णुः समन्ततः ।    |    |
| कालाग्निरुद्ररूपी च कल्पान्ते सर्वजन्तुषु ॥   | ४४ |
| अन्तर्यामी भवान् देवः सर्वकर्ता त्वमेव हि ।   |    |
| निष्कृष्टं ब्रह्मणो रूपं न जानन्ति सुरास्तव ॥ | ४५ |
| प्रसीद भगवन् विष्णो ! भूमिं स्थापय पूर्ववत् । |    |
| सर्वप्राणिनिवासार्थं मस्तुवन् विबुधव्रजाः ॥   | ४६ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्वेतवराहकल्पकथने नाम

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

श्रीवैकुण्ठात् भगवत्क्रीडाचलानयनम्

श्रीसतः—

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| ततः श्वेतवराहश्च स्थापयित्वा धरां तदा ।              |    |
| विभज्य सागरान् सप्त लोकान् सप्त च पूर्ववत् ॥         | १  |
| चतुर्मुखं समाहूय 'सृज पूर्वं यथा जगत्' ।             |    |
| इत्युवाच महाक्रोडः सर्वयज्ञमयो हरिः ॥                | २  |
| सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।              |    |
| धरावराहदेवोऽपि लोकानुग्रहकाम्यया ॥                   | ३  |
| भूमौ स्थातुं स्थलं दिव्यं बुद्ध्या निश्चित्य माधवः । |    |
| गरुडं प्रेषयामास गिरिमानेतुमद्भुतम् ॥                | ४  |
| 'वैनतेय! महासत्त्व गच्छ त्वमतिवेगतः ।                |    |
| गत्वा तु परमं धाम क्रीडाचलमिहानय ॥                   | ५  |
| सर्वान् पारिषदांश्चापि विष्वक्सेनमुखान् सुरान्' ।    |    |
| इत्युक्तो गरुडः साक्षादुत्पपात विहायसम् ॥            | ६  |
| गते तु गरुडे तस्मिन्नेतुं पर्वतोत्तमम् ।             |    |
| पोत्रिरूपी हरिर्भूमिं स्थापयित्वा च पूर्ववत् ॥       | ७  |
| पद्भ्यां भूमिं समाक्रम्य गोमतीतीरमागतः ।             |    |
| तस्यास्तु दक्षिणे भागे षष्ठिये जनदूरतः ॥             | ८  |
| पूर्वाब्धेः पश्चिमे भागे पञ्चगिर्ये जनैर्युते ।      |    |
| देशे पुण्यजनाकीर्णे रुक्मनद्यास्तथोत्तरे ॥           | ९  |
| आगत्य तस्थौ देवोऽपि गरुडागमनोन्मुखः ।                |    |
| वैनतेयोऽपि परमं धाम गत्वा ददर्श ह ॥                  | १० |

|                                                |    |
|------------------------------------------------|----|
| अप्राकृतमेयञ्च सर्वरत्नमयं गिरिम् ।            |    |
| हिरण्मयं महाशृङ्गं पञ्चोपनिषदात्मकम् ॥         | ११ |
| पुन्नागचम्पकाशोक्तालहिन्तालशोभितम् ।           |    |
| सुरद्रुममुखैर्वृक्षैरन्यैः काञ्चनरूपकैः ॥      | १२ |
| शोभितं पक्षिसङ्घैश्च शुक्रकोकिलहंसकैः ।        |    |
| श्रवणानन्दजनकमधुरालापसम्भ्रमैः ॥               | १३ |
| मल्लिकामालतीभिश्च नन्द्यावर्तादिभिस्तथा ।      |    |
| लताभिः पुष्पिताग्रान्निर्दिव्यसौरभशालिनिः ॥    | १४ |
| सिंहशार्ङ्गलमातङ्गशरभक्रोडवानरैः ।             |    |
| शोभितं किन्नरीभिश्च गायत्किन्नरपङ्क्तिनिः ॥    | १५ |
| अनेकनिर्हराकीर्णं मानसाह्लादकारकम् ।           |    |
| मुक्तैर्नित्यैः कामरूपैर्नानारूपैश्च सेवितम् ॥ | १६ |
| नारायणगिरिं नाम्ना क्रीडाद्रिं परमेष्ठिनः ।    |    |
| योजनत्रयविस्तरं त्रिंशद्योजनमायतम् ॥           | १७ |
| शेषाकारं हरेः शेषं शेपिणं सर्वदेहिनाम् ।       |    |
| दिव्याकारं महापुण्यं पश्यतां मोक्षदायकम् ॥     | १८ |
| एवंरूपं गिरिश्रेष्ठं स्कन्धदेशे निधाय तम् ।    |    |
| परिवारैरुपेतञ्च भगवत्परिचारकैः ॥               | १९ |
| आजगाम महावेगात् गरुडः काञ्चनप्रभः ।            |    |
| ततः ससम्भ्रमो वायुरुदभूच्च विहायसि ॥           | २० |
| धुन्वन् वृक्षांस्ततो भूमौ सूर्यकोटिरिवावभौ ।   |    |
| तेजोरूपस्ततः श्रीमानागतो विष्णुवाहनः ॥         | २१ |
| आगतं गरुडं वीक्ष्य 'स्थापयेह खगेश्वर !' ।      |    |
| इत्युवाच हरिः सोऽपि स्थापयामास तं तथा ॥        | २२ |

|                                              |    |
|----------------------------------------------|----|
| ततो गिरिं समारुह्य श्वेतपोत्ती हरिः स्थितः । |    |
| स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्चिमे पुण्यकानने ॥     | २३ |
| विमाने विमले दिव्ये कोटिसूर्यसमप्रभे ।       |    |
| अनेकरत्नखचितगोपुरायुतशोभिते ॥                | २४ |
| रत्नस्तम्भसमोपेतश्रीमहामणिमण्डपे ।           |    |
| वाचामगोचरे सर्वनयनानन्दकारके ॥               | २५ |
| ततो जातु तटे स्वामिपुष्करिण्यास्तु दक्षिणे । |    |
| मध्येविमानं पद्माक्षः श्रीनिवासः परात्परः ।  |    |
| अतिष्ठदेवदेवोऽपि शङ्खचक्रगदाधरः ॥            | २६ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वैकुण्ठात् क्रीडाचलनयनकथनं नाम  
चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

देवादिकृतश्वेतवराहप्रार्थना

|                                               |   |
|-----------------------------------------------|---|
| तत्र देवाः सगन्धर्वा ब्रह्माद्या मुनयोऽपि च । |   |
| आजगमुर्लोकपालाश्च शङ्करः पार्वतीप्रभुः ॥      | १ |
| ऋषयः सप्त वसवो रुद्रादित्या मरुद्गणाः ।       |   |
| तुष्टुवुश्च हृषीकेशं वासुदेवं जगत्प्रभुम् ॥   | २ |
| ‘जय लक्ष्मीश ! लोकेश जय भूमिधराच्युत ! ।      |   |
| जय विष्णो हिरण्याक्षविध्वंसनविचक्षण ! ॥       | ३ |
| दंष्ट्राकरालवदन भ्रुकुटीकुटिलेक्षण ! ।        |   |
| भयङ्करमिदं रूपमत्युग्रं घोरदर्शनम् ॥          | ४ |
| ज्वलदस्त्रभुजानेकपाशैर्द्वयविराजितम् ।        |   |
| दृष्ट्वा तद्व्यथिताः सर्वे सुराश्च परमर्षयः ॥ | ५ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३५ तमोऽध्यायः ९

- अनुग्रहीतुं लोकान् वै त्वयाऽत्र स्थीयतां गिरौ ।  
भयङ्करं त्वदीयं वै रूपमद्भुतदर्शनम् ॥ ६
- तद्दृष्ट्वोद्विग्नहृदया भवेयुरदृढा नराः ।  
देवतानां मनुष्याणां वासार्थं चोद्धृता धरा ॥ ७
- तस्मान्मनुजरक्षार्थं सौम्यरूपं हि धारय ।  
ध्यानयोगेष्वशक्तानामशक्तानां च कर्मसु ॥ ८
- अस्माकं मनुजानां च स्त्रीशूद्राणां तथैव च ।  
दृश्यस्त्वं वरदो भूत्वा वस नित्यमिहैव भोः ! ' ॥ ९
- इत्युक्तस्तैः प्रसन्नात्मा सौम्यरूपी चतुर्भुजः ।  
श्रीभूमिसहितस्तस्यै पुण्डरीकनिभेक्षणः ॥ १०
- शरत्पूर्णेन्दुवदनः सर्वाभरणभूषितः ।  
श्रीनिवासः सुरान्तसर्वान् समाहूयेदमब्रवीत् ॥ ११
- ‘वैकुण्ठात्परमो ह्येष वेङ्कटाख्यो नगोत्तमः ।  
अत्रैव निवसाम्येव श्रीभूमिसहितो ब्रह्म ॥ १२
- ददामि प्रार्थितानर्थान् मनुजेभ्यः सदा सुराः ! ’ ।  
इत्युक्त्वा त्रिदशान्तसर्वान् ब्रह्मेन्द्रप्रमुखानपि ॥ १३
- यथार्हं समनुज्ञाप्य तत्तैवान्तरधीयत ।  
देवाश्च मुनयः सर्वे प्रतिजम्मुः स्वकाल्यान् ॥ १४

सूतकृतं स्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यवर्णनम्

मुनयः—

- ‘सूत ! पूर्वं गिरौ तस्मिन् ‘स्वामिपुष्करि’णीति वै ।  
प्रसङ्गात् कथिता सा तु कीदृशी मुनिसत्तम ! ।  
गिरौ तस्याश्च माहात्म्यं वक्तव्यं भवतानघ ! ’ ॥ १५



|         |                                                    |    |
|---------|----------------------------------------------------|----|
| धीसूतः— | मुनयः श्रयतां किञ्चिदुत्तरं सावधानतः ।             |    |
|         | स्वामिपुष्करिणी पुण्या सर्वपापप्रणाशिनी ॥          | १६ |
|         | वैकुण्ठात् भगवत्कीडावापी श्रीभूमिलालिता ।          |    |
|         | अप्राकृतजलौघा च सुगन्धा सुमनोहरा ॥                 | १७ |
|         | गङ्गादिसर्वतीर्थानां जन्मभूमिः शुभोदका ।           |    |
|         | आनीता वैनतेयेन क्रीडार्थं तत्र तिष्ठति ॥           | १८ |
|         | विरजावद्रजोदोषप्रमुखाघविनाशिनी ।                   |    |
|         | स्वर्णस्तेयसुरापानदोषप्रमुखनाशिनी ॥                | १९ |
|         | ऐहिकार्थप्रदा नित्यं स्नानमात्रेण सर्वदा ।         |    |
|         | दर्शनात्स्पर्शनात्पानात् स्मरणात्सर्वसिद्धिदा ॥    | २० |
|         | स्नानादिष्टप्रदा चेति किमु वक्तव्यमञ्जसा ।         |    |
|         | ततस्तस्यास्तु माहात्म्यं वक्तुं देवोऽपि न प्रभुः ॥ | २१ |
|         | देवेभ्यस्तत्समीपस्था मनुजा भाग्यशालिनः ।           |    |
|         | किन्तु जानन्ति तस्यास्तु वैभवं नैव मानुषाः ॥       | २२ |
|         | प्राकृताचलवद्भाति मानुषाणामयं गिरिः ।              |    |
|         | तथाऽपि तेषां भक्तिस्तु शुद्धा भवति तद्गिरौ ॥       | २३ |
|         | यस्य यस्य यथा भक्तिस्तस्य सिद्धिश्च तादृशी ।       |    |
|         | स्वामिपुष्करिणीस्नानं सद्गुरोः पादसेवनम् ॥         | २४ |
|         | एकादशीव्रतञ्चापि त्रयमत्यन्तदुर्लभम् ।             |    |
|         | दुर्लभं मानुषं जन्म दुर्लभं तत्र जीवनम् ॥          | २५ |
|         | स्वामिपुष्करिणीस्नानं त्रयमत्यन्तदुर्लभम् ।        |    |
|         | अतस्तस्यास्तु माहात्म्यं वक्तुं शेषोऽपि न प्रभुः ॥ | २६ |
|         | यत्तु स्वामिसरःस्नानं महापातकनाशनम् ।              |    |
|         | तच्चापि दृष्टं बहुधा तारकासुरसूदने ॥               | २७ |

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३६ तमोऽध्यायः ११

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| प्रायश्चित्तप्रवृत्तानां नराणां सुलभा त्वियम् ।     |    |
| स्वामिपुष्करिणी पुण्या तथा काम्यप्रदायिनी ॥         | २८ |
| वेङ्कटाद्रेर्विशेषेण दर्शनं यच्च वर्तते ।           |    |
| नित्यं नैमित्तिकं काम्यं प्रायश्चित्तं च तद्ववेत् ॥ | २९ |
| ‘विष्णोः कर्माणि प’ इयेति श्रुतिरेषा सनातनी ।       |    |
| नैमित्तिकं तत्कुर्वीत स्वामिपुष्करिणीतटे ॥          | ३० |
| अङ्गवैकल्यदोषाश्च न स्युः स्वामिसरस्तटे ।           |    |
| वासवादिष्वमोघञ्च दृष्टं कर्माऽत्र दृश्यते ॥         | ३१ |
| बहुनेह विमुक्तेन धर्मार्थादिफलेषु च ।               |    |
| वाञ्छावतां मनुष्याणां स्त्रीशूद्राणां च पापिनाम् ॥  | ३२ |
| साङ्गकर्मक्रियाऽशक्तनराणां च विशेषतः ।              |    |
| नान्या गतिर्वेङ्कटाद्रेः सत्यं सत्यं न संशयः ॥      | ३३ |

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवादिकृतश्चेतवराह-  
प्रार्थनादिकथनं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः

~~~~~

क्रीडाद्रिप्रविष्टश्रीवराहदिव्यवैभववर्णनम्

मुनयः—

‘परावरज्ञ सर्वज्ञ ! सर्वभूतहिते रत ।	
मुने सूत ! महामाग किञ्चित्पृच्छाम तद्वद ॥	१
वराहरूपी भगवान् धरामुद्धृत्य किं पुनः ।	
तदैव शेषशैलेन्द्रे न्यवसत्करुणालयः ॥	२

कालान्तरे वा तत्रैत्य स्थितवान् सर्वदा नु किम् ? ।  
अकरोद्वाऽथ किं तत्र किं दत्तं कस्य वा ' त्विति ॥ ३

श्रीसूतः — ब्रवीमि तदशेषं च शृणुध्वं मुनिसत्तमाः ।  
आस्थाय श्वेतपोतित्वमुज्जहार धरां यदा ॥ ४

तदैवानाय्य वैकुण्ठादचलं गरुडेन वै ।  
कल्यादावेव भगवान् लीलारसमहोदधिः ॥ ५

विहरन् रमया सार्द्धं दरीनिर्झरसानुषु ।  
प्रकाशश्चाप्रकाशश्च तिष्ठत्येव सदा गिरौ ॥ ६

यावत्कल्पं वसत्येव प्रोक्तञ्च परमेष्ठिना ।  
कदाचित्पुण्यशीलेभ्यो दर्शनं वितरत्यसौ ॥ ७

कल्पे कल्पे च धरणीमुद्धरत्येवमेव ह ।  
श्वेतवाराहरूपेण धरणीं चोद्धृता यतः ॥ ८

श्वेतवाराहकल्पः स्यादाख्यया मुनयो ह्ययम् ।  
साधूनां च यदा बाधा धर्मश्चाय्यवसीदति ॥ ९

यदा त्वधर्मो ह्यधिको दुष्टाश्च बलिनो यदा ।  
तदा कालनुरूपेण नरदेवादिरूपतः ॥ १०

सृष्ट्वाऽऽत्मानं महाविष्णुः संहरत्यहितांस्तदा ।  
अधर्मं सर्वमुत्सार्य सुधर्मं पालयत्यसौ ॥ ११

रक्षत्येव च साधूंश्च वेदविद्याश्च वर्धयन् ।  
स्वयं च सर्वभूतानां दृश्यस्तिष्ठति कुत्रचित् ॥ १२

सर्वदा शेषशैलेन्द्रे विहरन् रमया सह ।  
नित्यैर्मुक्तैश्च देवैश्च कामरूपैश्च संयुतः ॥ १३

तिष्ठत्येव सदा तस्मिन् वेङ्कटाख्ये नगोत्तमे ।  
वैकुण्ठस्वर्गसूर्येभ्यः स्वर्गेहेभ्योऽधिकप्रियः ॥ १४

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३६ तमोऽध्यायः १३

अयं भगवतो हृद्यः पर्वतः पुण्यकाननः ।  
मन्त्रसिद्धिस्तपस्सिद्धिर्यज्ञसिद्धिस्तथैव हि ॥ १५

**क्रीडाद्रेः भगवत्सान्निध्येन महिमाधिक्यवर्णनम्**

काम्यस्य कर्मणः सिद्धिरेवमन्याश्च सिद्धयः ।  
भवन्त्यत्र नराणां च न हि विघ्नादिकं क्वचित् ॥ १६  
अल्पेन तपसाऽभीष्टं सिद्धयत्यस्मिन् गिरौ वरे ।  
सर्वतीर्थानि सततं पुण्यान्यत्रैव सन्ति हि ॥ १७  
य एनं सेवते नित्यं श्रद्धा नक्तिसमन्वितः ।  
ज्ञानार्थी ज्ञानमाप्नोति द्रव्यार्थी कनकं बहु ॥ १८  
पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति नृपो राज्यञ्च विन्दति ।  
व्यङ्गश्च साङ्गसद्रूपं पशून् धान्यानि विन्दति ॥ १९  
यं यं कामयते मर्त्यस्तं तमाप्नोति सर्वथा ।

**क्रीडाद्रेः कारणभेदेनानेकनामानुवर्णनम्**

चिन्तितस्य च सिद्ध्या तु चिन्तामणिमिमं विदुः ॥ २०  
केचिज्ज्ञानप्रदत्वाच्च ज्ञानाद्रिरिति तं विदुः ।  
सर्वतीर्थमयत्वाच्च तीर्थाद्रिं प्राहुरुत्तमाः ॥ २१  
पुष्कराणां च बाहुल्याद्विरावस्मिन्त्सरस्सु वै ।  
पुष्कराद्रिं प्रशंसन्ति मुनयस्तत्त्वदर्शिनः ॥ २२  
गिरावस्मिन्स्तपस्तेपे धर्मोऽपि स्वाभिवृद्धये ।  
तस्मादाहुर्वृषाद्रिं तं मुनयो वेदपारगाः ॥ २३  
शातकुम्भस्वरूपत्वात् कनकाद्रिं च तं विदुः ।  
द्विजो नारायणः कश्चित्तपः कृत्वा महत्पुरा ॥ २४

ऐच्छदस्य स्वानाम्ना च व्यपदेशं मुरारितः ।	
तस्मान्नारायणाद्रिं तं विदुरुत्तमपूरुषाः ॥	२५
वैकुण्ठादागतत्वेन वैकुण्ठाद्रिरिति स्मृतः ।	
हिरण्याख्यविनाशाय प्रह्लादानुग्रहाय च ॥	२६
नारसिंहाकृतिर्जज्ञे यस्मादस्मात्स्वयं हरिः ।	
सिंहाचल इति प्राहुस्तस्मादेनं मुनीश्वराः ॥	२७
अञ्जना च तपः कृत्वा हनूमन्तमजीजनत् ।	
तदा देवाः समागत्य देवसाहाय्यकारकम् ॥	२८
यस्मात्पुत्रमसूतासौ जगुस्तस्मादिमं गिरिम् ।	
अञ्जनाद्रिं, वराहाद्रिं वराहक्षेत्रलक्ष्मतः ॥	२९
नीलस्य वानरेन्द्रस्य यस्मान्नित्यमवस्थितिः ।	
तस्मान्नीलगिरिं नाम्ना वदन्त्येनं महर्षयः ॥	३०
वेङ्कारोऽमृतबीजन्तु कटमैश्वर्यमुच्यते ।	
अमृतैश्वर्यसङ्घत्वात् वेङ्कटाद्रिरिति स्मृतः ॥	३१
यतः कदाचिद्देवानां श्रीनिवास १ इहाबभौ ।	
श्रीनिवासागिरिं प्राहुस्तस्मादेनं दिवौकसः ॥	३२
आनन्दाद्रिमिमं प्राहुर्वैकुण्ठपुरवासिनः ।	
प्राहुर्भगवतः क्रीडाप्राचुर्यात् तथा २ सुराः ॥	३३
श्रीप्रदत्वाच्छिष्यो वासाच्छब्दशक्त्या च योगतः ।	
रूढ्या श्रीशैल इत्येवं नाम चास्य गिरिरभूत् ॥	३४
बहूनि चान्यनामानि कल्पभेदाद्भवन्ति हि ।	
यावदुक्ता भगवतः कल्याणगुणराशयः ॥	३५

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३७ तमोऽध्यायः १५

तावन्तोऽस्य गिरेः सन्ति गुणाः परमपावनाः ।

अस्य वेङ्कटशैलस्य माहात्म्यं यावदस्ति हि ॥ ३६

तावद्वक्तुं च कात्स्न्येन न समर्थश्चतुर्मुखः ।

षण्मुखश्च सहस्रास्यः फणी देवाः परे किम् ? ॥ ३७

श्रुत्वा सूतमुखाच्चैवं मुनयो हृष्टमानसाः ।

न तृप्तिमाययुस्ते हि भूयः श्रवणकौतुकात् ॥ ३८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये क्रीडादिप्रदिष्ट - श्रीवाराहदिव्य-

वैभवादिवर्णनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः



अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः



महर्षियज्ञवाटं प्रति भगवदागमनम्

श्रीसूतः—

‘तद्गिरौ किं कृतं तेन वेङ्कटेशेन तद्वद’ ।

इत्युक्तं यच्च युष्माभिस्तत्र किञ्चिद्वदाम्यहम् ॥ १

मायिना सर्वशक्तेन लीलापरवशेन च ।

कृतं तु वक्तुं कात्स्न्येन केन शक्यं तपोधनाः ! ॥ २

स कदाचिन्महामायी विटवेषं वहन्मुदा ।

गिरावुत्तरदिग्भागे चचार रमया सह ॥ ३

तत्र केचिन्महाभागा मुनयस्तत्त्वदर्शिनः ।

गिरिरस्य तु माहात्म्यं श्रुतवन्तस्तपोधनाः ॥ ४

अयं गिरिर्महापुण्यः सर्वसत्त्वसमाश्रयः ।

निर्बाधः फलमूलख्यः सर्ववृक्षसमावृतः ॥ ५

नानाप्रसवणोपेतो याज्ञियैश्च महीरुहैः ।

अन्यैस्तापसयोगैश्च पादपैरपि सङ्कुलः ॥ ६

नयनानन्दजनको हृदयाहादकारकः ।	
अस्माभिः सर्वदा वासः कर्तव्योऽत्र महागिरौ ॥	७
इति निश्चित्य मनसा तत्राऽऽगत्य तपोधना ।	
चक्रुर्यज्ञं यथाशस्त्रं विष्णुमुद्दिश्य कौतुकात् ॥	८
सोऽपि मायी स्त्रिया सार्वं यज्ञवाटमुपागमत् ।	
सुवर्णचित्रितं वस्त्रं वसानः शुभदर्शनः ॥	९
सोष्णीषश्च करेणैव वामेन छुरिकां दधत् ।	
ताम्बूलेन शुचिस्निग्धमन्दस्मितमुखाम्बुज ॥	१०
मृगोत्थमदगन्धेन सुरनीकृतदिङ्मुखः ।	
पुण्डरीकविशालाक्षः कम्बुप्रीवो महाभुजः ॥	११
जगन्मोहनसौन्दर्यः साक्षात्कन्दर्पसन्निभः ।	
हेमयज्ञोपवीताङ्गः कोमलङ्गो मनोहरः ॥	१२
प्रविवेश सभां यार्जुनं मध्येवृन्दं महात्मनाम् ।	
दृष्ट्वा च मुनयः सर्वे पुण्डरीकनिभेक्षणम् ॥	१३
वेद्यावेगं धारयन्तीं लीलाम्बुजकराम्बुजाम् ।	
तप्तहाटकसङ्काशां पङ्कजोदरसप्रभाम् ॥	१४
हरिद्रान्तरतुल्याभां दीव्यन्तीं कुटिलालङ्कारम् ।	
शरत्पूर्णेन्दुवदनां ताम्बूलेन मनोहराम् ॥	१५
कर्णान्तनेत्रयुगलां विडम्बितरविप्रभाम् ।	
अभूतपूर्वसौन्दर्या साक्षालक्ष्मीमिव स्थिताम् ॥	१६
दृष्ट्वा च मुनयः सर्वे विस्मयोत्फुल्लमानसाः ।	
कोऽसौ राजपुतस्त्वेष पृथिवीं भोक्तुमर्हति ॥	१७
द्वात्रिंशलक्षणेपेतः साक्षाद्राम इवापरः ।	
‘किमर्थमागतस्त्वं’ तु पृच्छाम इति चाब्रुवन् ॥	१८

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३७ तमोऽध्यायः १७

‘आवासः कुल ते माता का वा ते जनकः कुतः ।  
नामत्रेयं च किं वा ते ब्रूहि राजन्नशेषतः ’ ॥ १९

श्रीभगवान्—

‘नाहं राजा न वा विप्रः काचिज्जातिश्च नैव मे ।  
न च माता न च पिता नैवाऽवासश्च कुत्रचित् ॥ २०

सर्वाऽवासः सर्वभक्षः सर्वगः सर्वरूपधृक् ।  
निर्नामा निर्गुणश्चाहं युष्मान्द्रष्टुमिहागतः ॥ २१

भवन्तस्तपसा श्रेष्ठा वेदवेदान्तपारगाः ।  
वदन्त्वौदुम्बरी सर्वा वेष्टिता व्याघ्रवाससा ॥ २२

स्पृष्ट्वोद्भानं कथं त्वत्र सम्भवेन्मुनयोऽमलाः ’ ।  
एवमादिक्रियालोपं पृष्टवान् यज्ञसंसदि ॥ २३

मुनयस्तेऽथ सम्भूय ‘वपाकालस्तु गच्छति ’ ।  
इति ते त्वरिताः सर्वे सर्भिर्द्वे जातवेदसि ॥ २४

पुण्यगन्धं वपाहोमं चक्रुः शास्त्रोक्तमार्गतः ।  
सोऽपि वेगात्तत्र गत्वा शङ्खचक्रगदाधरः ॥ २५

श्रीवत्सवक्षा नित्यश्रीः सर्वाभरणभूषितः ।  
वपां जग्राह पाणिभ्यां कोटिसूर्यसमप्रभः ॥ २६

तदा तु मुनयः सर्वे प्रभया स्तिमितेक्षणाः ।  
तस्थुस्तपोधनास्तत्र क्षणं चित्तार्पिता इव ॥ २७

‘प्रीतोऽहं’ मिति तान्त्सर्वानुक्त्वाऽदृश्यो बभूव ह ।  
मुनयश्च तदा प्रीताः साक्षाद्विष्णुः समागतः ॥ २८

अस्माकं भाग्यमतुलं जीवितं च सुजीवितम् ’ ।  
इति यागक्रियाशेषं चक्रुः कौतुकसम्भ्रमात् ॥ २९



एतत्सर्वं समाख्यातं जाबालिमुनिना पुरा ।

अन्यच्च कथितं तेन तच्चाहं कथयामि वः ॥

३०

**वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारप्राप्तिः**

पुरा तु वेङ्कटाभीशश्चचार गिरिर्द्धनि ।

कुमारः सन् विशालाक्षः केमलाङ्गो मनेहर ॥

३१

वृद्धः कश्चिद् द्विजो दृष्टस्तेन जर्जरिताऽकृतिः ।

भ्रमदृष्टिर्भजानुः क्षुत्तृष्णापरिपीडितः ।

३२

मार्गभ्रष्टो वने तत्र कुतश्चिच्छैलमाश्रितः ।

‘क वा गतोऽसि कौण्डिन्य! शतवर्षं विहाय माम्’ ॥

३३

इति जल्पन्मुहुः शुष्ककण्ठेष्ठपुटतालुक ।

तत्रस्थेन कुमारेण ‘किमर्थमिह जल्पसि?’ ॥

३४

न कश्चिदत्र मनुजः कौण्डिन्यः कुत निष्ठति?’ ।

इत्युक्तः प्राह वृद्धश्च ‘नितरां मृतवानहम् ॥

३५

कथं गच्छान्यहं तावदाश्रमं दूरतः स्थितम् ।

शौचाचारक्रियाऽशक्तं रिक्तं बन्धुविवर्जितम् ॥

३६

विमर्शं स्थापयत्यस्मिन् लोके मां दुर्बलं विधिः ।

एवं ब्रुवति तस्मिंस्तु निर्होतुकदयानिविः ॥

३७

कुमारः प्राह तं वृद्धं सोपहासमिदं वचः ।

‘तव विप्र शरीरञ्च जरितं पलितं तथा ॥

३८

लम्बेते पक्ष्मणी त्वक् च न च पश्यसि किञ्चन ।

अतः परं च विप्रेन्द्र! जीवनेच्छा तवास्ति किम्? ॥

३९

न वा पूर्वोक्तवाक्यन्तु सत्यं वा वद सुव्रत ।

इत्युक्तः प्राह विप्रोऽपि ‘नास्तीच्छा जीवने मम ॥

४०

किन्तु नित्यानि कर्माणि ज्योतिष्टोममुखानि च ।

नानुष्ठितानि देवानामृणी कथमहं पुनः ॥

४१

त्यक्ष्यामि देहं भो राजन्! सत्यमेव ब्रवीमि ते ।

इत्युक्तः प्राह तं विप्रं 'गृहाणेमं करं' त्विति ॥

४२

सोऽपि तत्करमालम्ब्य शनैस्तेन जगाम च ।

कचित्प्रसवणं पुण्यं दर्शयित्वा शुनोदकम् ॥

४३

'स्नानं कुर्वत्र गच्छावस्तवाश्रमपदं ततः' ।

इत्युक्तस्तेन विप्रेन्द्रः स्नात्वा तत्रैतितः पुनः ॥

४४

अभूदभूतपूर्वश्च कुमारः षोडशाब्दकः ।

कुमारोऽपि सहस्राक्षः सहस्रवदनोऽभवत् ॥

४५

सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्रभुजमण्डितः ।

तत्र देवाः समाजम्पुराकाशे विस्मिताः पुनः ॥

४६

पुष्पवृष्टिर्महत्यासीत् देवदुन्दुभ्यस्तदा ।

नेदुः सर्वेऽपि तं देवाः तुष्टुवुः स्तोत्रसत्तमैः ॥

४७

देवः प्राह द्विजं वृद्धं 'कुरु कर्माणि सर्वतः ।

कर्मानुष्ठानसिद्धयर्थं धनं दत्तञ्च ते बहु' ॥

४८

इत्युक्त्वा तं द्विजश्रेष्ठं तत्तैवान्तरधीयत ।

सम्भूय देवाः सर्वेऽपि प्रोचुर्वाक्यमिदं तदा ॥

४९

'अयं वृद्धः कुमारोऽभूद्यस्मात्तस्मादियं नदी ।

'कुमारधा' रेति सदा लोके ख्यातिं गमिष्यति ॥

५०

लिकालमत्र यः स्नाति लिमासं विजितेन्द्रियः ।

बली पलितनिर्मुक्तो वज्रकायो भवेन्नरः ॥

५१

सर्वपापविनिर्मुक्तो याति विष्णोः परं पदम् ।

इत्युक्त्वा त्रिदशाः सर्वे जग्मुर्विस्मितमानसाः ॥

५२

इति जाबालिकथितं तदुक्तं भवतां मया ।

य इदं शृणुयान्मर्त्यो लभते स्नानजं फलम् ॥ ५३

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये महर्षिदक्षवाटं प्रति रूपान्तरेण  
भगवदागमनजलधारादिवर्णनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः



अथ अष्टविंशोऽध्यायः

श्रीसूतः —

भ्रष्टराज्यस्य शङ्खणनृपस्य राज्यप्राप्तिक्रमः

वाल्मीकिना मुनीन्द्रेण किञ्चिदुक्तं श्रुतं मया ।

तदुच्यते मया यूयं शृणुस्व मुनिसत्तमाः ! ॥ १

साङ्काश्ये सोमवंशीयः शङ्खणः पृथिवीपतिः ।

अनेकदेशसहितं बहुविस्तारसंयुतम् ॥ २

परम्परागतं राज्यं चक्रेऽखण्डपराक्रमः ।

स कदाचिन्महाराजः कृतपुण्यविपर्ययात् ॥ ३

सामन्तराजभिः सैर्हृत्तराज्यो महीपतिः ।

तस्मात्समर्थः सामात्यो देशान्निर्गत्य दुःखितः ॥ ४

दक्षिणां दिशमासाद्य रामसेतुं ददर्श ह ।

तत्र स्नात्वा शनैः पश्चादाजगाम नदीं ततः ॥ ५

सुवर्णमुखरीं तत्र स्नात्वा चोत्तरतीरतः ।

पादं सरः समागम्य तत्र स्नानं चकार सः ॥ ६

नित्यं च विधिवत्कृत्वा न्यवसद् दुःखपीडितः ।

‘राज्याङ्गंशो वने वासः स्वामित्वञ्च हृतं परै ॥ ७

पारतन्त्र्यं महद्दुःखं मरणादतिरिच्यते ।

भविता जीवनं कस्मात् क्व वा गच्छामि का गतिः ? ॥ ८

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ३८ तमोऽध्यायः २१

- इति शोकसमादिष्टस्तथौ निद्रामुपागतः ।  
 अशरीरा जगादैर्न तदानीं शोकपीडितम् ॥ ९
- ‘ मा शुचस्त्वं महाबाहो धैर्यमालम्ब्य बुद्धिमान् ।  
 इत उत्तरदिग्भागे क्रेशमात्रे महागिरिः ॥ १०
- वेङ्कटाचल इत्येव प्रथितः पृथिवीतले ।  
 आपन्नकामधेनुर्यः शोकार्तानां सुरद्रुमः ॥ ११
- चिन्तामणिरिवार्तानां तत्राऽस्ते कमलपतिः ।  
 निर्हेतुकदयापूर्णः श्रितानामिष्टदः सदा ॥ १२
- तत्राऽस्ते पद्मिनी काचित्कुलपङ्कजशोभिता ।  
 स्वामिपुष्करिणीत्येव नामतः प्रथिता शुभा ॥ १३
- तत्पश्चिमे तटे श्रीमान् महावाल्मीकभूधरः ।  
 उत्तिष्ठ तत्र गच्छ त्वं तत्तीरे कुटिकां कुरु ॥ १४
- तत्र स्थित्वा तिसन्ध्यं वै तत्रैव खानमाचरन् ।  
 तत्र स्थित्वा वेङ्कटेशं भावयित्वा च बुद्धितः ॥ १५
- चतुर्भुजं शङ्खचक्रे दद्यानं वरदं हरिम् ।  
 अभ्यर्चयन्मासषट्कं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥ १६
- निवस त्वं महाबाहो स्वामित्वं प्राप्स्यसि ध्रुवम् ।  
 तच्छ्रुत्वा वचनं तस्या गतशोकः प्रसन्नवीः ॥ १७
- आरुरोह गिरिः शृङ्गं पुण्यं परमपावनम् ।  
 चम्पकाशोकपुन्नागचूतधात्रीसमन्वितम् ॥ १८
- चन्दनागरुहिन्तालरक्तचन्दनभास्वरम् ।  
 चमरीमृगसाहस्रं कस्तूरीमृगसेवितम् ॥ १९
- शुककोकिलसन्नादमयूरस्वनशोभितम् ।  
 एवं मनोहरं शृङ्गमारुह्य कनकोपमम् ॥ २०

मृगयामास तत्तीर्थं चिह्नतस्तत्र तत्र वै ।	
ददर्श सरसीं तत्र निर्मलस्फटिकोपमाम् ॥	२१
तिलकाशोकपुन्नागवकुलैश्च विशोभिताम् ।	
रम्योपवनसंशुद्धां रक्तराजीवराजिताम् ॥	२२
मत्स्यकच्छपसम्बाधां तीरस्थतरुभास्वराम् ।	
पुष्पताम्रवणोपेतां केकित्रेकारवाकुलाम् ॥	२३
तिलकैर्बीजभूरैश्च वरैः शुक्लद्रुमैस्तथा ।	
पुष्पतैः करवीरैश्च भाण्डारैर्निचुलैस्तथा ॥	२४
अशोकैः सप्तपर्णैश्च केतकैरतिमुक्तकैः ।	
अन्यैश्च विविधैर्द्रुमैः पुष्पतैश्च मनोहराम् ॥	२५
स्वामिपुष्करिणीं दृष्ट्वा प्रमुदो महामनाः ।	
कृत्वा तु कुटिकां तत्र निवासमकरोद्बुधः ॥	२६
स्नानं त्रिषवणं कुर्वन् वेङ्कटेशं समर्चयन् ।	
व्रती च नियताहारो मासषट्कमवर्तत ॥	२७
ततः स्वामिसरोमध्यात् उदतिष्ठन्महाद्भुतम् ।	
अनेकसूर्यसङ्काशं शोभयच्च दिशो दश ॥	२८
दिव्यं विमानं तत्रैव तस्थौ देवः श्रियःपतिः ।	
शङ्खचक्रगदापाणिः श्रीभूमिसहितः परः ॥	२९
तत्र देवाः समाजमुर्ब्रून्नाद्या मुनयोऽपि च ।	
सिद्धा विद्याधराश्चैव किन्नराश्च दिशाधिपाः ॥	३०
वसवः सप्त मुनयः साध्या रुद्राः समागताः ।	
भेरीमुरजवाद्यानि नेदुश्चाकाशवर्त्मनि ॥	३१
गीतं नृत्तञ्च वाद्यञ्च चक्रुः सर्वाश्च देवताः ।	
तुष्टुवुः परमोदारैर्वेदमन्त्रैर्दिवौकसः ॥	३२

श्रीवाराहपुराणे प्रथमांगे ३८ तमोऽध्यायः २३

ससंभ्रमं समुत्थाय शङ्खणः प्रणिपत्य च ।  
स्तुत्वाऽथ देवदेवेशं व्यजिज्ञपददं नृपः ॥ ३३  
'देवदेव जगन्नाथ जगद्रक्षणतत्पर ! ।  
भवद्वत्तं क्रमायातं स्वामित्वं मम केशव ! ॥ ३४  
हंतं राजभिराक्रुत्य राज्याद्भृष्टोऽस्य भाग्यतः ।  
रक्ष मां करुणासिन्धो महोदार जगत्पते ! ॥ ३५  
न जाने व्रतशीलञ्च नियमं वा जपादिकम् ।  
दिष्ट्या दृष्टो मया स्वामिन्नमोऽघं दर्शनं तव ' ।  
इत्युक्तः कालमेघाभो बभूवेऽथ श्रियःपतिः ॥ ३६

श्रीनिवासः—

'मा शुचस्त्वं मया दत्तं स्वामित्वं पूर्वमागतम् ।  
यस्मात्तव महाशक्तिः स्वामिपुष्करिणीजले ॥ ३७  
ये केचन समागत्य स्नानं कुर्वन्ति संयताः ।  
स्वामिपुष्करिणीतीर्थे स्वामित्वं प्राप्नुयुर्नरा ॥ ३८  
तेषां व्रतानुगुण्येन स्वामित्वं भवति ध्रुवम् ।  
स्याद्वि तेषां पराश्रीनभावलेशः कदाऽपि न ॥ ३९  
त्वं च गत्वा महीपाल ! कुरु राज्यमकण्टकम् ' ।  
समक्षं देवदेवानामित्युक्त्वाऽन्तरव्रीयत ॥ ४०  
स्वामिपुष्करिणीशब्दो रूढस्तस्मिन्सरोवरे ।  
व्युत्पत्तिः कथिता ' यस्यास्तीर्थानां स्वामिनी यतः ॥ ४१  
स्वामिपुष्करिणी ' त्येव तस्मात्पूर्वं पुरातनैः ।  
प्रोक्तेदानीं भगवता व्युत्पत्तिस्तस्य सम्मता ॥ ४२  
स्वामित्वस्य प्रदानाच्च स्वामिपुष्करिणी त्वियम् ।  
अहो महत्त्वं तीर्थस्य दर्शनं पापनाशनम् ॥ ४३

धन्यास्त्वेते महाभागा एतद्विषयवासिनः ।	
इत्युक्त्वा त्रिदशाः सर्वे ययुः फुल्लहृदम्बुजाः ॥	४४
शङ्खणोऽपि महाराजः सभार्यो हृष्टमानसः ।	
अवसृज्य गिरेस्तस्मात् स्वञ्च देशं जगाम ह ॥	४५
तद्राज्यहारिणः सर्वे परस्परजिगीषया ।	
‘मम राज्यमिदं राज्यं ममै’ वेत्युद्यतायुधाः ॥	४६
अन्योन्यमाहताः सन्तः परिक्षीणाश्च तेऽभवन् ।	
‘मध्येऽस्माकं न कस्यापि राज्यं तस्यैव तद्भवेत्’ ॥	४७
इति निश्चित्य मनुजाः प्रेरिता राजभिस्तदा ।	
गोदावरीतीरदेशे शङ्खणं ददृशुर्मुदा ॥	४८
‘तव राज्यं महाभाग ! तुभ्यं दत्तञ्च राजभिः ।	
आगच्छ भुङ्क्व राज्यं त’ दित्युक्तस्तैर्महीपतिः ॥	४९
स्वकं देशं ययौ राजा काम्भोजं नाम नामतः ।	
ततः सर्वेऽपि राजानः शङ्खणं च वरासने ॥	५०
स्थापयित्वा जलैः पूनैरभिषिच्य ययुः पुरात् ।	
सोऽपि स्वदेशमासाद्य स्वामित्वं प्राप्य पूर्ववत् ॥	५१
वेङ्कटेशप्रसादेन चक्रे राज्यमकण्टकम् ।	
श्रुतं महत्त्वं तीर्थस्य मुनयः किं तपोधनाः ? ॥	५२

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अष्टराज्यस्य शङ्खणनृपस्य  
राज्यप्राप्तिक्रमवर्णनं नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥



आत्मारामाख्यविप्रस्य सम्पत्प्राप्तिक्रमः

श्रीसूतः —

- ‘वाल्मीकिना मुनीन्द्रेण यदुक्तं तन्मयाऽपि हि ।  
उक्तं तेनान्यदुक्तं तद् वक्ष्यते श्रूयतां बुधाः ॥ १
- मध्यदेशे द्विजः कश्चिदात्माराम इति श्रुतः ।  
महाकुलप्रसूतश्च देवब्राह्मणपूजकः ॥ २
- पिता च तस्य प्रथितः पृथिव्यां ब्राह्मणोत्तमः ।  
अत्यन्तं विष्णुभक्तश्च वेदवेदाङ्गपारगः ॥ ३
- असावपि विनीतश्च सर्वविद्वत्परिग्रहः ।  
पितर्युपरते तस्य क्रमायातं धनं गतम् ॥ ४
- वृत्तिश्च शिथिला जाता पूज्यता न च कुत्रचित् ।  
‘महाकुलप्रसूतस्य ममेयं वृत्तिरीदृशी ॥ ५
- अपकीर्तिर्महत्येषा पूर्वेषां मम सर्वदा ।  
किं कुर्मः कुत्र गच्छाम’ इति चिन्तामहाम्बुधौ ॥ ६
- मग्नः शनैर्जगामासौ वेङ्कटाद्रेः समीपगम् ।  
आगत्य कापिलं तीर्थं कपिलेश्वरसन्निधौ ॥ ७
- तत्र स्नात्वा तदारभ्य तीर्थेषु दशसप्तसु ।  
क्रमेण स्नातुमारेभे समारुह्य गिरिं वरम् ॥ ८
- स्नानेन गतपापश्च चित्तनैर्मल्यसंयुतः ।  
अधित्यकायामासीनश्चिन्ताशोकपरायणः ॥ ९
- तत्समीपगुहामध्ये ध्यानयोगपरायणम् ।  
सनत्कुमारं योगीन्द्रं ददर्श ज्वलनोपमम् ॥ १०



- ‘अदृष्टपूर्वो योगीन्द्रो वेत्ति सर्वमयं बुधः ।  
 पृच्छाम्येनं हितं किञ्चि’ दिनि कृत्वा प्रणम्य तम् ॥ ११
- ‘निरयाधिकदुःखेन दुःखितः पापकर्मकृत् ।  
 त्वामहं शरणं प्राप्तस्त्वं वेत्थ ब्रूहि मे हितम्’ ॥ १२
- इति भूमौ पपातासौ साष्टाङ्गं तस्य सन्निधौ ।  
 सोऽपि ध्यायंश्चिरं कालं व्याजहार मिताक्षरम् ॥ १३
- ‘उत्तिष्ठ वत्स ! किं शेषे कृत्वा घोरं पुरा भवे ।  
 पापमस्मिन्भवे पक्वे तस्मिन् शोचसि किं वृथा ॥ १४
- पुरा तु दानविघ्नाश्च प्रत्यूहाश्च प्रतिग्रहे ।  
 सुखस्थितानां पीडाश्च त्वया नानाविधाः कृताः ॥ १५
- किञ्चित्किञ्चिद्विजेभ्यो वा वित्तं दत्तं न तु त्वया ।  
 गृहं क्षेत्रं पशुधान्यं वस्त्रमाभरणं तथा ॥ १६
- अनाचाराः कृतास्तत्र न त्वाचारलवस्त्वया ।  
 प्रणतार्तिहरे विष्णौ प्रणताभीष्टदायिनि ॥ १७
- न कृतो भक्तिलेशोऽपि कथं सौख्यं भविष्यति ।  
 तथाऽप्यस्ति तवोपायो वदामि शृणु सादरम्’ ॥ १८
- इति कर्णामृतं श्रुत्वा वचः प्राह कृताञ्जलिः ।  
 ‘दुःखसागरमग्नस्य मम पोत इवागतः ॥ १९
- आतपक्लिन्नसस्यानां यथा वृष्टिस्तथा भवान् ।  
 निर्धिर्यथा निर्धनानां रोगिणां वा यथा निषक् ॥ २०
- तथा मया भाम्यलेशात् आप्तस्त्वं हि दयानिधिः ।  
 रक्ष मां पापिनं घोरं दययेक्षस्व चक्षुषा’ ॥ २१
- इत्युक्तः प्राह योगीन्द्रः कारुण्याब्धितरङ्गितः ।  
 ‘महद्रहस्यं तत्त्वार्थं शृणु वत्स ब्रवीमि ते ॥ २२

सनत्कुमारकथितव्यूहलक्ष्मीमन्त्रोद्धारक्रमः

श्रीसनत्कुमारः—

दयालोल्लतरङ्गाक्षी पूर्णचन्द्रनिभानना ।	
जननी सर्वलोकानां महालक्ष्मीर्हरिप्रिया ॥	२३
सर्वपापहरा सैव प्रारब्धस्यापि कर्मणः ।	
संहृतौ तु क्षमा सैव सर्वसम्पत्प्रदायिनी ॥	२४
तस्या व्यूहप्रभेदास्तु लक्ष्मीः कीर्तिर्जदयेति च ।	
तत्र या व्यूहलक्ष्मीः सा मुग्धा कारुण्यविग्रहा ॥	२५
अनायासेन सा लक्ष्मीः सर्वपापप्रणाशिनी ।	
सर्वैश्वर्यप्रदा नित्यं तस्या मन्त्रमिमं शृणु ॥	२६
“ वेदादिमायै मात्रे च लक्ष्म्यै नतिपदं वदेत् ।	
परमेति पदं चोक्ता लक्ष्म्या इति पदं ततः ॥	२७
विष्णुवक्षःस्थितायै स्यान्माया श्रीतारिका ततः ।	
वह्निजायान्तमन्त्रोऽयमभीष्टार्थसुरद्रुमः ” ॥	२८
द्विभुजा व्यूहलक्ष्मीः स्याद् बद्धपद्मासनप्रिया ।	
श्रीनिवासाङ्गमध्यस्था सुतरां केशवप्रिया ॥	२९
तामेव शरणं गच्छ सर्वभावेन सत्वरम् ।	
इति मन्त्रमुपादिश्य ददृशे न च कुत्रचित् ।	३०
भीतोऽसौ विस्मितश्चैव सन्तोषपुलकाङ्कितः ।	
‘ अद्य मे रजनी व्युष्टा शुभा जन्म च सत्फलम् ’ ॥	३१
इति मन्त्रं शुचिर्भूत्वा जपन्नास्त्र पर्वतम् ।	
तत्र तत्र गिरौ पश्यन् झरान् पर्वतनिर्गतान् ॥	३२
स्वामिपुष्करिणीं प्राप शनैर्दिष्ट्या महाद्भुताम् ।	
आकाशादवस्तुत्वात् स्थितां मन्दाकिनीमिव ॥	३३

- विरजामिव पापघ्नीं पुण्यदां पुण्यसेविताम् ।  
 आत्मारामस्तथा तत्र सखौ शास्त्रे यथे दितम् ॥ ३४
- स्नाने कृते तस्य देहो भारपाते यथा लघुः ।  
 तत उत्थाय तत्पुण्यं ददर्श वनमुत्तमम् ॥ ३५
- तत्र दृष्टं महद्वाम विमानं सिद्धसेवितम् ।  
 अनेकगोपुरोपेतं मण्डपानन्त्यसंयुतम् ॥ ३६
- अनेकरत्नखचितं तप्तहाटकनिर्मितम् ।  
 गन्धर्वनगरप्रसृतं दृष्टिचित्तापहारकम् ॥ ३७
- नृत्तवादित्ररुचिरं सुरसङ्घनिषेवितम् ।  
 'किमिदं निर्जने दृष्टं वनेऽस्मिन् महदद्भुतम्' ॥ ३८
- इति विस्मयसम्कुलहृदयाग्मोरुहस्तदा ।  
 द्रष्टुं विमानं तद्विव्यं ययौ पुण्यफलोदयः ॥ ३९
- ददर्श तत्र फुल्लाब्जनयनं वेङ्कटेश्वरम् ।  
 शङ्खचक्रधरं श्रीशं वरावनतहस्तकम् ॥ ४०
- किरीटमकुटोपेतं कुण्डलाभ्यां विराजितम् ।  
 सर्वाभरणसम्पूर्णं पीताम्बरधरं विभुम् ॥ ४१
- कोटिकन्दर्पलावण्यं श्रीभूमिसहितं परम् ।  
 'त्वमेव परमं धाम त्वमेव परमा गतिः ॥ ४२
- त्वमेव जगतां सृष्टा धाता हर्ता महेश्वरः' ।  
 इति स्तुतं शिवेनापि विधिनाऽपि स्तुतं सदा ॥ ४३
- प्रणम्योत्थाय सन्तोषात् स्तोतुं गद्गदकण्ठधृक् ।  
 'सर्वं त्वमेव जानासि सर्वात्मस्त्वां नमाम्यहम्' ॥ ४४
- इति प्रणम्य भूयोऽपि तूष्णीं पश्यन् स्थितोऽग्रतः ।  
 सर्वज्ञः करुणारूपः श्रीनिवासः परात्परः ॥ ४५

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४० तमोऽध्यायः २९

ज्ञात्वा मुग्धञ्च तं प्राह ' मा भैषीर्मा शुचः पुनः ।  
 क्षान्तं त्वया कृतं सर्वं व्यूहलक्ष्मीं विमृश्य तत् ॥ ४६  
 ऐश्वर्यं सुमहद्वत्तं दीर्घकालानुबन्धनम् ।  
 दीर्घमायुश्च ते दत्तमारोग्यं ज्ञानशीलता ॥ ४७  
 मया दत्तान् द्विजश्रेष्ठ ! भुङ्क्स्व भोगान् बहूनापि ' ।  
 एवं बुवति देवेशो प्रणनाम पुनश्च तम् ॥ ४८  
 उत्थाय भूयो देवं च नापश्यत्पुण्यकाननम् ।  
 अतिभीतः परिक्रम्य सरस्तीरं विमृश्य च ॥ ४९  
 ' स्वप्नो मतिभ्रमो वाऽपि माया वा सत्यमेव वा ? ।  
 न जाने देवदेवेश ! सत्यमेव भवेत्तु वा ' ॥ ५०  
 इति ब्रुवन् द्विजस्तस्मादवस्तुबिगिरिस्ततः ।  
 पर्यन्ते वेङ्कटाद्रेस्तु वासं चक्रे प्रसन्नधीः ॥ ५१  
 यथेप्सितं सुखं रेमे दीर्घकालेन वै द्विजः ।  
 इति वाल्मीकिना पूर्वमुक्तमुक्तं मया पुनः ॥ ५२

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये आत्मारामाख्यविप्रस्य  
 सम्पत्प्राप्त्यादिवर्णनं नाम एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ चत्वारिंशोऽध्यायः



कापिलादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यम्

प्रथमः—

' वराहाद्रिकथा नृणां श्रोतृणाममृतोपमा ।  
 वैकुण्ठाद्रेः कथां श्रोतुं भूयस्तृष्णा विवर्धते ॥ १  
 दशसप्त च तीर्थानि विद्यन्ते कनकाचले ।  
 इति पूर्वं त्वया सूत ! कीर्तितं हि प्रसङ्गतः ॥ २

ब्रूहि तेषां तु तीर्थानां माहात्म्यं पुण्यवर्धनम् ।  
इति पृष्टः पुनः प्राह मुनीनाह्वय सादरम् ॥

३

श्रीसूतः--

तीर्थानाञ्चैव माहात्म्यं तेषां वक्तुञ्च कृत्स्नशः ।  
न शक्यं लेशतस्तोषामुच्यते श्रूयतामिदम् ॥

४

गिरेरधः प्रदेशे तु कापिलं लिङ्गमुत्तमम् ।  
पाताले पूजितं पूर्वं कपिलेन माहात्मना ॥

५

कुतश्चित्कारणात्तु लिङ्गं परमपावनम् ।  
भित्त्वा तु धरणीं तस्मान्निर्गतं पूजितं सुरैः ॥

६

तद्विङ्गं स्थापितं भूमौ प्रार्थितं सर्वदैवतैः ।  
तदग्रे भुवमुद्भिद्य निर्गता कपिला पुरा ॥

७

तद्विलं कापिलं तीर्थं सर्वपापप्रणाशनम् ।  
तदूर्ध्वदेशे शक्रस्य तीर्थं परमपावनम् ॥

८

अहल्यासङ्गसम्भूतशोभोक्षस्तु यत्र तत् ।  
विष्णवेन सरस्तस्मादूर्ध्वं पुण्यविवर्धनम् ॥

९

वरुणस्य तमजो यत्र तपः कृत्वा सुदुस्तरम् ।  
सारूप्यं च हरेः प्राप्य सेनापत्यमवाप हि ॥

१०

पञ्चायुधानां तीर्थानि तदूर्ध्वं भान्ति सत्तमाः ।।  
तदूर्ध्वमग्निकुण्डं स्याद् दुरारोहमुपर्यतः ॥

११

ब्रह्मतीर्थं महाहत्यामोचनं पुण्यवर्धनम् ।

मुनीनाञ्चैव सप्तानां पुण्यतीर्थानि सन्त्यतः ॥

१२

दशाधिकफलं तेषां तीर्थानामुत्तरोत्तरम् ।

एतेषाञ्चैव माहात्म्यं मया वक्तुं न शक्यते ॥

१३

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४० तमोऽध्यायः ३१

- पुराऽभवद् द्विजः कश्चितीर्थयात्राकृतोद्यमः ।  
तमाह कमलाधीशः ' किमर्थं गच्छसि द्विज ! ॥ १४
- अस्मिन् पुष्करशैलेन्द्रे सन्ति दिव्यानि सप्त च ।  
दश तीर्थानि तत्राद्यं कापिलं सर उत्तमम् ॥ १५
- स्नात्वा चैतेषु विप्रेन्द्र ! शास्त्रोक्तज्ञानपूर्वकम् ।  
कृत्स्नतीर्थफलं पुण्यं प्राप्स्यसि त्वं न संशयः ' ॥ १६
- इति श्रुत्वा द्विजः पूर्वं स्वप्ने चोत्थाय विस्मितः ।  
निवृत्तस्तीर्थयात्रातः प्राप्य श्रीवेङ्कट चलम् ॥ १७
- तेषु तीर्थेषु दशसु सप्तसु क्रमशो गतः ।  
स्नात्वा तथैव विप्रेन्द्र आसवानिति मे श्रुतम् ॥ १८
- निस्रः कोटयोऽर्धकोटी च तीर्थानि भुवनत्रये ।  
तेषां प्रकृतिभूतानि तीर्थान्यस्मिन् हरेर्गिरौ ॥ १९
- भूमिप्रदक्षिणे वान्छा यद्यस्ति मुनिसत्तमाः ।  
सर्वतीर्थमयं सर्वपुण्यक्षेत्रमयं गिरिम् ॥ २०
- वेङ्कटाहं नरो गत्वा कुर्यात्तस्य प्रदक्षिणम् ।  
भूमिप्रदक्षिणे पुण्यं यत्तत्पुण्यमवाप्नुयात् ॥ २१
- वेङ्कटाचलशृङ्गाग्रे दृष्टमात्रे हलायुधः ।  
तीर्थयात्राफलं कृत्स्नं प्राप्सवानिति मे श्रुतम् ॥ २२

### पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम्

- पाण्डवा धर्मपुत्राद्याः कृष्णेनाक्लिष्टकर्मणा ।  
उपदिष्टाः समागम्य वेङ्कटाख्यं नगोत्तमम् ॥ २३
- कस्मिंश्चित् पुण्यतीर्थे हि क्षेत्रपालान्निरक्षिते ।  
कुर्वन्तः स्नानपानादीन् अवसन्नब्दमालकम् ॥ २४

तदा कदाचिद्धर्मोऽपि ददर्श स्वप्नमुत्तमम् ।  
 यस्मादस्मिन्महातीर्थे स्थितं वत्सरमात्रकम् ॥ २५  
 अनेन पुण्ययोगेन भवन्तः क्षीणकल्मषाः ।  
 युद्धे जयं तथा राज्यं गमिष्यन्ति क्रमागतम् ।  
 तदा प्रभृति तृतीयं पाण्डवं च विदुर्बुधाः ॥ २६

### जराहरादितीर्थत्रयमाहात्म्यम्

जगद्गुरुं बलिघ्नं च रसायनमिति त्रिकम् ।  
 तीर्थानां वर्तते तस्मिन् चिन्तामणिगिरौ तथा ॥ २७  
 स्वामिपुष्करिणीपूर्वदेशे पर्वतगह्वरे ।  
 द्वाविंशच्छरपाते तु किन्तु मायातिरोहितम् ॥ २८  
 न जानन्ति बुधास्तीर्थं तप्तु विस्मयकारकम् ।  
 अष्टानां खनयः सन्ति लोहानां कनकाचले ॥ २९  
 युगभेदेन दृश्यन्ते नरणां पुण्यकर्मणाम् ।  
 वेङ्कटाद्रौ परां भक्तिं बहन् गच्छति चेद्गिरिम् ॥ ३०  
 पङ्कजङ्घाल एव स्यात्, अचक्षुः पद्मलोचनः ।  
 मूको वाचस्पतिः, दूरश्चावी तु बधिरो भवेत् ॥ ३१  
 वन्ध्या तु बहुपुत्रा च, निर्धनः सधनो भवेत् ।  
 एतत्सर्वं गिरौ भक्तिमात्रेणैव भवेद्बुधम् ॥ ३२  
 तत्त्वतो वेङ्कटाद्रेस्तु स्वरूपं वेत्ति कः पुमान् ? ।  
 श्रीनिवास गिरिश्चायं कदाचित् कनकाचलः ॥ ३३  
 कदाचिज्ज्ञानरूपोऽयं कदाचिद्रत्नरूपकः ।  
 श्रीनिवास इवामाति कदाचिद्भूषणोज्ज्वलः ॥ ३४  
 कालभेदेन केषाञ्चित् प्राकृताचलरूपधृक् ।  
 तस्मादस्य गिरेः पुण्यं माहात्म्यं वेत्ति कः पुमान् ॥ ३५

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४१ तमोऽध्यायः

३३

श्रुतेषु किञ्चिद्दृष्टेषु मयोक्तं भवतामिदम् ।

श्रुतश्च सर्ववृत्तान्तः शक्यो वक्तुं मया न हि ॥

३६

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये कापिलादिसप्तदशतीर्थ-

माहात्म्यादिवर्णनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः



अथ एकचत्वारिंशोऽध्यायः



श्रीवेङ्कटाद्रिं प्रति श्रीरामागमनम्

मुनयः —

वेङ्कटाद्रेस्तु माहात्म्यं जनकर्णरसायनम् ।

शृण्वतां नास्ति तृप्तिस्तु मुनीनां नो बुधोत्तम ॥

१

‘भूयः कथय वृत्तान्तं श्रुतं किञ्चित्त्वया पुरा’ ।

इत्युक्तः प्राह सूतोऽपि श्रुतञ्च मुनिपुङ्गवान् ॥

२

श्रीसतः —

पुत्रो दशरथस्याऽऽसीद्रामो राजीवलोचनः ।

स सर्वलक्षणेऽप्येतः सर्वशास्त्रविशारदः ॥

३

रावणस्य वधार्थाय पुरा सौमित्रिणा सह ।

हनूमता वेगवता सुग्रीवेण महात्मना ॥

४

सह सैन्यैर्यदा पम्पातीराच्छे भित्तिपादपात् ।

निर्जगाम तदा रामः शुभे श्रीवेङ्कटाचले ॥

५

स्वामिपुष्करिणीतीर्थे स्नात्वा पश्चाद्रणे रिपुम् ।

रावणं सगणं हत्वा जयमापेति मे श्रुतम् ॥

६

तत्सर्वं कथयिष्यामि श्रोतव्यमवधानतः ।

ऋश्यन्काचलात्तस्मात् वानरैर्बहुभिर्वृतः ॥

७



रावागस्य वधार्थाय कृतोद्योगः सकार्मुकः ।	
शेषाचलसमीपे तु यदा रामः समागतः ॥	८
तदा सत्यञ्जना देवी वायुसूनेर्महात्मनः ।	
जननी पुरतो गत्वा रामं रक्तान्तलोचनम् ॥	९
नमस्कृत्य महाभागा वचनं चेदमब्रवीत् ।	
‘प्रतीक्षन्ती महाबाहो त्वदागमनमद्भुतम् ॥	१०
तिष्ठान्यस्मिन् गिरौ राम मुनयोऽपि च कानने ।	
तपः कुर्वन्ति सततं त्वदागमनकाङ्क्षया ॥	११
तान्सर्वान्समनुज्ञाय गन्तुमर्हसि भुवतः ।	
इत्युक्तः प्राह रामोऽपि हनूमन्मातरं प्रति ॥	१२

श्रीरामः—

‘कालात्ययो भवेद्देवि मयि तत्र समागते ।	
भमेदानीं वरारोहे कार्यस्य महती त्वरा ॥	१३
पुनरागमने देवि तथा भवतु सुन्दरि ।	
इत्युक्तं राघवेणैतत्वाक्यं श्रुत्वा ममामतिः ॥	१४
हनूमान् प्रणतो भूत्वा वाक्यं चैतदुवाच ह ।	
‘स्थातव्यमत्र भवता यत् कुत्वापि सर्वदा ॥	१५
यस्माच्छ्रान्ता महासेना वानराणां तरस्विनाम् ।	
अयं च मार्ग एवाद्रिः सदापुष्पफलद्रुमः ॥	१६
बहुप्रसवणोपेतो बहुकन्दरसानुमान् ।	
सुस्वादुकन्दमूलोऽयं अञ्जनाख्यो महागिरिः ॥	१७
मधूनि सन्ति वृक्षेषु बहूनि गिरिकन्दरे ।	
वेत्थ सर्वं महाबाहो यथेच्छसि तथा कुरु’ ॥	१८

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४१ तमोऽध्यायः ३५

- इत्युक्तो वायुपुत्रेण श्रीरामः प्रहसन्नसौ ।  
'जानेऽहमञ्जनासूनो ! तथाऽपि वचनं तव ॥ १९
- श्रोतव्यं हि महाबाहो गच्छाग्रे त्वं हरीश्वर ' ।  
इत्युक्त्वा वाहिनीं ताञ्च कर्षन् पर्वतमाययौ ॥ २०
- नागकेसरमाल्वरपुन्नागतरुशोन्तितम् ।  
चम्पकाशोकवकुलचूतकिंशुकराजितम् ॥ २१
- मयूरशारिकालपैः कोकिलानां स्वनैरपि ।  
शुकमञ्जुलनादैश्च कपोतस्वनहुङ्कृतैः ॥ २२
- शोभिः फलयुष्पैश्च वेङ्कटाख्यं नगोत्तमम् ।  
निर्लोमा नामतः कश्चिद्विप्रो वेदविदां वरः ॥ २३
- स्वयम्भुवं समुद्दिश्य ब्रह्मलोकजिगीषया ।  
तपश्चकार धर्मात्मा पर्वजोत्तरदेशतः ।  
आगत्य भगवान् ब्रह्मा तमाह द्विजसत्तमम् ॥ २४
- 'रामं दृष्ट्वा ससौमित्रिं ब्रह्मलोकमवाप्स्यसि ' ।  
इत्युक्तो ब्रह्मणा पूर्वं दृष्ट्वा रामं परात्परम् ॥ २५
- फललूलाशनैः सम्यक् पूजयित्वा तमब्रवीत् ।  
'अद्य मे सफलं जन्म त्वन्मुखाम्भोजदर्शनात् ॥ २६
- चिरकालजितं स्वामिन् ! फलितं तप उत्तमम् ।  
अनुज्ञापय मां राम ब्रह्मलोकं प्रतीश्वर ' ॥ २७
- इत्युक्तः स तु धर्मात्मा 'तथैवाऽऽचर भो द्विज ' ।  
इत्युक्त्वा तं तु विप्रेन्द्रमारुरोह नगोत्तमम् ॥ २८
- शापमोक्षं च यक्षाणां केषाञ्चित्पर्वजोत्तमे ।  
दत्त्वा रामोऽञ्जनादेव्या आश्रमं पुण्यवर्धनम् ॥ २९

आकाशगङ्गानिकटे प्रतिपेदे महामनाः ।	
तथा स पूजितः सुन्यक् तस्यै दत्त्वा वरोत्तमम् ॥	३०
आपृच्छद्य तां महाभागां स्वामिपुष्करिणीं ययौ ।	
तत्र रामो महातेजाः सौमित्रिर्मास्तात्मजः ॥	३१
सुग्रीवश्चाङ्गदश्चैव जाम्बवान् नील एव च ।	
चक्रुः स्नानं महातीर्थे सर्वत्र विजयप्रदे ॥	३२
फललूतानि चाऽनीय रामो धर्मभृतां वरः ।	
चकार दानं तत्रैव मुनिभ्यः शास्त्रवर्त्मना ॥	३३
तस्या नैर्ऋतिदिग्भागे कूर्तां कृत्वा पृथक्पृथक् ।	
सुस्वादुफललूतानि मधूनि सुबहूनि च ॥	३४
आनीय वायुपुत्रस्तं पूजयामास राघवम् ।	
ततो रामः संप्रहृष्टः सुग्रीवप्रमुखैः सह ॥	३५
न्यवसत्सुसुखं राम स्वरोह इव तत्र वै ।	
वानराश्च महात्मानो गेलाङ्गूला महाबला ॥	३६
सर्वतस्तत्र पुष्पाणि मूलानि च फलानि च ।	
मधूनि स्वादु गीर्थानि रक्ष्यजातान्यनेकशः ॥	३७
भक्षयित्वा मदेन्मत्ताः चेरुस्तत्र सहस्रशः ।	
आप्लवन्तः प्लवन्तश्च गर्जन्तश्च प्लवङ्गमाः ॥	३८
शृङ्गाच्छृङ्गं गिरेस्तत्र वृक्षाद्वृक्षं वनाद्वनम् ।	
चेरुस्ते वानराः सर्वे मुदिता बलगर्विताः ॥	३९
केचिदारुरुहुस्तत्र वानरान् वानरोत्तमाः ।	
कांश्चित्सुच्छप्रदेशे तु गृहीत्वा वानरान् क्वचित् ॥	४०
कर्षन्ति स्म तदा कांश्चित् केचित्कर्णं चुचुर्बरे ।	
‘दृष्ट्वैव रावणं सङ्ख्ये हन्याम ससुहृद्व्रणम् ॥	४१

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४२ तमोऽध्यायः ३७

लङ्कां सञ्चलमुत्पाद्य त्रिकूटं वा महागिरिम् ।  
आनेष्यामो वयं सिन्धुं बहुनक्रसमाकुलम् ॥ ४२  
तरामो बाहुवेगेन गृह्णीमश्चन्द्रमास्करौ ।  
पाटयामो गिरीन् सर्वान् रामार्थे भूरुहानपि ॥ ४३  
पातालं वा महालोकं प्रविशाम रसातलम् ।  
गच्छामो रावणो यत्न तिष्ठत्यविनयान्वितः ॥ ४४  
तमेव हन्म. शूरं तु सगणं लोककण्टकम् ।  
चिरायते शिरच्छेदे रामः परमधार्मिकः ॥ ४५  
इति द्रुवन्तस्ते सर्वे वानराः पर्वजोपमाः ।  
तस्मिन् दिव्ये महापुण्ये वेङ्कटाद्रौ वनेचराः ॥ ४६  
कोटिकोऽथर्वुदास्तत्र परार्वा बलशालिन ।  
परस्परमसम्बाधं न्यवसन् सुसुखं गिरौ ।  
अहो गिरिप्रभावोऽयं वर्णनीयः कथं बुधैः ॥ ४७

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाचलं प्रति श्रीरामागमन-  
अञ्जनाप्रार्थनादिवर्णनं नाम एकचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः

वैकुण्ठाख्यगुहाप्रविष्टवानरवृत्तान्तः

श्रीसूतः—

स्वामिपुष्करिणी यत्र तत ईशान्यभागतः ।  
गजो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः ॥ १  
मैन्दश्च द्विविदश्चैव सुषेणश्च महामतिः ।  
काञ्चिद्रुहां तमोरुद्धां प्रविष्टास्तत्र वानराः ॥ २

उन्निद्रनेत्राः सर्वेऽपि सिंहतुल्यपराक्रमाः ।	
जम्मुस्ते तमसाऽऽविष्टां सुदूरं तां गुहां तदा ॥	३
ददृशेऽत्र महाज्योतिः सूर्यकोटिरिवोदिता ।	
ज्योतिर्गणानां तटितां मिलितानामिवावभौ ॥	४
तत्र काचित्पुरी रम्या तप्तहाटकनिर्मिता ।	
कवाटोत्तरणवती रम्योद्यानशतैर्युता ॥	५
स्फटिकोपलवच्छुद्धजलनद्या समावृता ।	
रत्नमणिक्यवैडूर्यमुक्तानिर्मितगोपुरा ॥	६
अनेकमण्डपैर्युक्ता प्रासादशतसङ्कुला ।	
मशवीथीशतोपेता रथमातङ्गसंयुता ॥	७
वरनारीगणोपेता सर्वमङ्गलशोभिता ।	
शङ्खचक्रधरास्तत्र सर्वे चैव चतुर्भुजाः ॥	८
सशृङ्गमाल्यवसनाः सर्वाभरणभूषिताः ।	
दिव्यचन्दनलिप्ताङ्गाः परमानन्दपूरिताः ॥	९
तन्मध्ये सुमहद्दिव्यं विमानं सूर्यसन्निभम् ।	
अत्युन्नतमहामेरुशृङ्गतुल्यं मनोहरम् ॥	१०
बहुप्रकाशसम्पन्नं मणिमण्डपसंयुतम् ।	
मेरीमृदङ्गपणवमर्दलध्वनिशोभितम् ॥	११
नृत्तवादित्रसम्पन्नं किन्नरस्वनसंयुतम् ।	
ददृशुस्तत्र पुरुषं पूर्णचन्द्रनिभाननम् ॥	१२
चतुर्बाहुमुदारङ्गं शङ्खचक्रधरं परम् ।	
पीताम्बरधरं सौम्यमासीनं काञ्चनाऽऽसने ॥	१३
फणामणिमहाकान्तविराजितकिरीटिनम् ।	
भोगिभोगे समासीनं सर्वाभरणभूषितम् ॥	१४

आसनोपरि विन्यस्तवामेतरकराम्बुजम् ।	
प्रसार्य दक्षिणं पादमुद्धृते वामजानुनि ॥	१५
प्रसार्य वामहस्ताब्जं श्रीभूमिभ्यां निषेवितम् ।	
सेवितं नीलया देव्या वैजयन्त्या विराजितम् ॥	१६
श्रीवत्सकौस्तुभोरस्कं वनमालाविभूषितम् ।	
कृपारसतरङ्गौघपूर्णनेत्राम्बुजद्वयम् ॥	१७
शशिप्रसमच्छत्रं चामरव्यजने शुभे ।	
हस्ताभ्यां धारयन्तीनिः नारीभिः सेवितं मुदा ॥	१८
दृष्ट्वा ते वानराः सर्वे विस्मिताः शुभलोचनाः ।	
अत्रान्तरे महाभागः पुरुषः परमाद्भुतः ॥	१९
चतुर्भुजो दण्डहस्तो दृष्ट्वा त्वरितविक्रमः ।	
दण्डमुद्यम्य तान् सर्वान् भर्त्सयामास वै तदा ॥	२०
ते सर्वे वानरा भीता निर्जग्मुर्गिरिगह्वरात् ।	
निर्गत्य सहसा तेभ्यः प्रोचुर्दृष्टं यथा तथा ॥	२१
‘रावणस्तु महामायी कामरूपी च वञ्चकः ।	
अन्यो वा रावणो वाऽथ शोधनीयः प्रयत्नतः’ ॥	२२
इत्युक्त्वा वानरास्ते च सर्वे सम्भूय सम्भ्रमात् ।	
यत्र पूर्वं गुहा दृष्टा तत्तागच्छन् वनौकसः ॥	२३
नापश्यन्नगरीं तत्र चिह्नं वा दृष्टपूर्वकम् ।	
अमात्तमञ्जसा शैलं विचिन्वन्तश्च सर्वतः ॥	२४
अम इत्येव निश्चित्य तूष्णीमासन् वनौकसः ।	
ततः प्रभाते विरते रामो राजीवलोचनः ॥	२५
लक्ष्मणेन सह आत्मा वानरेन्द्रेण धीमता ।	
सह सैन्यैर्महातेजाः प्रतस्थेऽरिजिगीषया ॥	२६

जित्वा च रावणं युद्धे प्राप्य सीतां महाबलः ।	
अयोध्यां पुनरभ्येत्य आतृग्निः सहितोऽनघः ॥	२७
प्राप राज्यं स्वयं रामः स्वामितीर्थस्य वैभवात् ।	
इति श्रुतं मया पूर्वमब्रुवं भवतामहम् ॥	२८

### कैकुण्ठगुहाप्रभाववर्णनम्

मुनयः —

‘कैकुण्ठाद्रौ गुहा दृष्टा काचिद्वानरसत्तमैः ।	
इत्युक्तं भक्ता सूत ! वेदवेदाङ्गपारग ! ।	
गुहा का ? वद नो ब्रह्मन् श्रोतुं कौतूहलं हि नः ’ ॥	२९

श्रीसूतः —

श्रूयतामभिधास्याभि देवमाया मया श्रुता ।	
कैकुण्ठाख्या गुहा सा तु दुर्ज्ञेया मुनियोगिभिः ॥	३०
दुर्ज्ञेया सा तु देवैश्च मायया परमात्मनः ।	
लीलया विष्णुना पूर्वं वानराणां प्रकाशिता ॥	३१
तस्यां गुहायां ये दृष्टाः शङ्खचक्रधरा अपि ।	
ते तु मुक्तास्तथा नित्याः परमानन्दरूपिणः ॥	३२
भुञ्जते ब्राह्ममानन्दमाविर्भूतगुणाश्च ते ।	
सञ्चरन्तः कामरूपा लोकान् भगवता सह ॥	३३
आनन्दरूपाः कैङ्कर्यं कुर्वन्तो ब्रह्मणो हि ते ।	
वसन्ति तत्र सततं ब्रह्मणा परमेष्ठिना ॥	३४
यदा यदा कलिः कालो यदा वा जनता गिरौ ।	
तदा गुहायां तस्यां तु वसिष्यन्तीति नः श्रुतम् ॥	३५
एवंप्रभावः शेषाद्रिः वसत्यस्मिन् जगन्मयः ।	
क्रीडते लीलया युक्तो नित्यैर्मुक्तैश्च सूरिभिः ॥	३६

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४३ तमोऽध्यायः ४१

नीलमेघनिभं श्यामं नीलोत्पलविलोचनम् ।

नीलाद्रिशिखरस्थं तं भजाम्यत्रैव सुस्थितम् ॥ ३७

गुहाख्यानं श्रुतं किं वा ? युष्माभिर्वीतकल्मषैः ।

शृण्वतामिदमाख्यानं कलिदोषमलपहम् ।

धन्यं यशस्यमायुष्यं पुत्रपौत्राभिवर्धनम् ॥ ३८

इतीरितः शेषगिरेः प्रभावः श्रुतो मया योगिवरेभ्य आदरात् ।

समस्तजीवात्मसमष्टिरूपिणो हरेः प्रभावोऽपि करीन्द्रगोप्तुः ॥ ३९

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वैकुण्ठगुहाप्रविष्टवानर-  
वृत्तान्तादिवर्णनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः



रात्रणादिपीडितदेवर्षीणां क्षीरार्णवब्रह्मलोकादिगमनम्

मुनयः—

‘विश्वविश्रुतविश्वार्थविबोधनविचक्षण ! ।

वक्तुमर्हसि तत्सूत ! यत्पृच्छामो वयं पुनः ॥ १

वेङ्कटाद्राविदानीं तु सर्वप्रत्यक्षगोचरः ।

आस्ते ह्यञ्जनशैलभः सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥ २

कस्य वा पुण्यशीलस्य रूपमेतत्प्रदर्शितम् ।

वक्तव्यं तदशेषेण शृण्वतां नो महामुने ।

इत्युक्तो मुनिर्निस्तैस्तु सूतः प्राह मुनीन् प्रति ॥ ३

श्रीसूतः -

शृणुध्वं मुनयो यूयं वेङ्कटेशकथां पराम् ।

व्यासेन मुनिना प्रोक्तां मद्यं पूर्वं स्वयम्भुवः ॥ ४



- प्रदर्शितमिदं रूपमिति तत्कथयाम्यहम् ।  
वृत्तान्तमादितः कृत्वा शृण्वन्तु मुनिसत्तमाः ॥ ५
- पुरा कदाचिज्जाबलिः काश्यपो गौतमस्तथा ।  
अगस्त्यो वामदेवश्च शतानन्दो मुनिस्तथा ॥ ६
- योगिनः सनकाद्याश्च वासवाद्या दिवैकसः ।  
हिरण्यकशिपोर्वैशसम्भवैश्च दुरात्मभिः ॥ ७
- दैत्यैश्च पीडिताः केचित् विष्णवे तन्निवेदितुम् ।  
निर्जम्बुस्तेऽथ सम्भूय विचेतुं विष्णुमन्ययम् ॥ ८
- क्षीराब्धेरुत्तरं तीरं गत्वा देवं जनार्दनम् ।  
तुष्टुबुर्विविधैः स्तोत्रैः अगस्त्याद्याः सुराश्च ते ॥ ९
- ‘क्षीरोदशायिन् ! भगवन् ! सर्वकारणकारण ! ।  
सूक्ष्मप्रकृतिः संलीनजीवतत्त्वैर्युत ! प्रभो ! ॥ १०
- सृष्टिकाले भवानेव त्वत्तोऽन्यन्न हि विद्यते ।  
स्रष्टा त्वमेव सर्वस्य जङ्गमस्थावरात्मनः ॥ ११
- त्वमेव दृश्यसे विष्णो जगद्रूप नमोऽस्तु ते ।  
अङ्गीकृत्य भवानेव जगत्पालनकर्म च ॥ १२
- शेषे शेते श्रिया सार्द्धं निश्चितं मधुसूदन ! ।  
जागरूकः सदा त्वं तु जगत्पालनकर्माणि ॥ १३
- विचारयसि नास्मांस्त्वं विमर्थं मधुसूदन ! ।  
प्रसीद भगवन् विष्णो ! प्रसीद त्वं सुरेश्वर ! ॥ १४
- प्रसीद करुणासिन्धो ! प्रसीद वरदामल ! ।  
एतस्मिन्नन्तरे कश्चित् शङ्खचक्रगदाधरः ॥ १५
- पार्षदः परमेशस्य व्योम्नि चाऽऽगत्य वै मुनीन् ।  
पुरुषः सोऽब्रवीदेवं श्रूयतामिति तान्मुनीन् ॥ १६

- ‘आस्ते भूमौ गिरौ कापि मायावी कमलापतिः ।  
किमर्थमागतं सद्भिर्युष्माभिः सनकादिभिः ॥ १७
- तलैव यूयं गच्छध्व ’मिति चोक्त्वा ययौ पुनः ।  
निवृत्य तरसा तस्मात् देशद्वै सुरसत्तमाः ॥ १८
- सम्भूय ते विचार्याथ किमर्थं कमलापतिः ।  
मुक्त्वा क्षीराब्धिमध्ये तु वसेद्भूमौ सनातनः ’ ॥ १९
- इति सञ्चित्य मनसा वैकुण्ठं लोकमुत्तमम् ।  
ययुस्ते मुनयः सर्वे योगिनस्त्रिदशा अपि ॥ २०
- गच्छन्तो मार्गमध्ये तु ददृशुर्नारदं मुनिम् ।  
महतीं वाद्यन्तं च वीणां स्फटिकसन्निभम् ॥ २१
- कर्पूरधूलिसदृशपुण्ड्रोद्भासितविग्रहम् ।  
वैकुण्ठलोकादायान्तं दृष्ट्वा तं मुनयोऽब्रुवन् ॥ २२
- ‘ कासि नारद ’ पुण्यात्मन् ! प्रैल्लोबयं विदितं तव ।  
न तवाविदितं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु दिद्यते ॥ २३
- क वा वसति लक्ष्मीशः शंस विद्वन् महामुने ।  
श्रीशैलस्य समीपे तु दैत्याः केचन मायिनः ॥ २४
- बाधन्ते मनुजांस्तीव्रं तापसान् योगिनो मुनीन् ।  
रावणः सगणो नित्यं बाधते बलगर्वितः ॥ २५
- एतेषां विग्रहे शक्तो विष्णुरेव महाबलः ।  
तमेव शरणं यामः स तु कुत्र वसे ’ दिति ॥ २६
- पृष्ठः प्राह मुनीन्द्रोऽपि तान्मुनीन् प्रतिपूज्य च ।  
‘ नारायणमहं द्रष्टुं दिव्यकल्याणविग्रहम् ॥ २७
- अगमं परमं धाम परमानन्दकरणम् ।  
तदा कश्चित्समभ्येत्य तत्र मामुक्तवानिदम् ॥ २८

- ‘भूमौ कापि गिरौ विष्णुर्लक्ष्म्या सह विमोदते’ ।  
 इति श्रुत्वा वचः सम्यक् आगच्छामीह तापसाः ॥ २९
- ब्रह्मलोकं गमिष्यामः सर्वे वयमतः परम् ।  
 स एव वेत्ति तत्सर्वं सर्वलोकपितामहः’ ॥ ३०
- इत्युक्त्वा नारदेनैव सह लोकं स्वयम्भुवः ।  
 ययुः शीघ्रं सुराः सर्वे मुनयो योगिनोऽपि च ॥ ३१
- ब्रह्मलोकं समागम्य ददृशुस्तेऽमि तौजसः ।  
 चतुर्मुखं चतुर्बाहुं ज्वलन्तमिव पावकम् ॥ ३२
- सम्भूय वेदशास्त्रौघं मूर्तिमन्तमिव स्थितम् ।  
 गायत्र्या चैव सावित्र्या सरस्वत्या च सेवितम् ॥ ३३
- विन्नरोरगगन्धर्वसिद्धसङ्घनिषेवितम् ।  
 वेदैः सविग्रहैश्चैव शास्त्रैरपि च सेवितम् ॥ ३४
- सेवितञ्च दिशापालैरासीनं परमासने ।  
 उपसृत्य तु तं देवाः प्रणमुर्मुनयोऽपि च ॥ ३५
- आसनेषूपविष्टास्ते सुराश्च मुनयोऽपि च ।  
 पृष्टाश्च स्वागतप्रश्नैः इदं वचनमब्रुवन् ॥ ३६
- ‘स्वामिंस्तवैव कृपया न कुत्रापि दुरत्ययः ।  
 मङ्गलं सर्वथाऽस्माकं सर्वलोकपितामह ! ॥ ३७
- किन्तु बाधा च महती रावणस्य दुरात्मनः ।  
 दैत्याः केचन सम्भूताः श्रीशैलस्य समीपतः ॥ ३८
- बाधन्ते सर्वमनुजान् कर्मानुष्ठानतत्परान् ।  
 तपोव्ययभयात्सर्वे सहन्ते मुनयोऽमल्यः ॥ ३९
- इतः परमशक्यं तत् सोढुं रावणचेष्टितम् ।  
 मायावी भगवान् विष्णुः सर्वोपायविशारदः ॥ ४०

एतेषां हनने शक्तः सर्वशक्तिधरश्च सः ।

न पश्यामश्च तं विष्णुं कुत्रापि भुवनत्रये ।

त्वमेव गतिरस्माकमस्मांस्त्राहि महामयात् ॥ ४१

इतीरितो योगिवरैश्च तापसैः बुधोत्तमैः शक्रपुरोगमैश्च ।

ध्यात्वाऽथ देवः कमलासनोऽपि प्रोवाच देवान्मुनिपुङ्गवांश्च ॥ ४२

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये रावणादिर्षाडितदेवर्षीणां क्षीरार्णव-  
ब्रह्मलोकादिगमनवर्णनं नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

ब्रह्मादीनां श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

श्रीब्रह्मा —

‘अतितीव्रं तपस्तप्तं रावणेन पुरा सुराः ।

तेन लब्धमवध्यत्वं घोरं तपसा तदा ॥ १

मानुषेभ्यो बधस्तेन निश्चितो न विमुह्यता ।

तस्योपायमहं वक्ष्ये विष्णुरेव परा गतिः ॥ २

स चेदानीं गिरावास्ते भूमौ श्रीवेङ्कटाभिधे ।

स प्रार्थनीयः सर्वैश्च दैत्यैर्घानां निर्वहणे ॥ ३

अहमप्यागमिष्यामि गम्यतामविलम्बतः ।

न शक्यमचिराद्द्रष्टुं विचेतव्यमितस्ततः ॥ ४

सानवः सरितश्चापि निर्झराश्च गुहा अपि ।

विचेतव्याः सदा सर्वैर्युष्माभिश्च विशेषतः ॥ ५

तस्यात्यन्तप्रेयतमो भूधरो वेङ्कटान्धः ।

शुकपक्षिमृगादीनां रूपं धृत्वा परात्परः ॥ ६

क्रीडते रमया सार्धं सूरिभिस्तत्र पर्वते ।	
गिरिप्रदक्षिणे प्रीतिः महती तस्य वर्तते ॥	७
प्रदक्षिणविधानेन विचेतव्यः स भूधरः ।	
इक्ष्वाकुवंशप्रभवो राजा दशरथो महान् ॥	८
वेङ्कटाद्रिं समागत्य पुत्रार्थी तप उत्तमम् ।	
करिष्यति महाभाग स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	९
दर्शयिष्यति रूपं स्वं तस्य राज्ञः श्रियःपतिः ।	
इत्युक्ता ब्रह्मणा सर्वे मुनयश्च दिवौकसः ॥	१०
योगिनोऽपि महात्मानः तस्माल्लोकाद्विनिर्ययुः ।	
निर्गत्य सहसा शेषभूधरेन्द्रं समाश्रिताः ॥	११
नानामृगगणाकीर्णमनेकझषसङ्कुलम् ।	
तालहेन्तालपुन्नागचम्पकाशोकशोभितम् ॥	१२
कुन्दमन्दारपनसपूगकैतकसंयुतम् ।	
तिमिशैश्चिरिबिल्वैश्च नक्तमालैश्च पुष्पितैः ॥	१३
चम्पकैः पनसैरात्रैः नारिकेलैश्च शोभितम् ।	
कोविदारकरञ्जैश्च पाटलाश्चत्थपादपैः ॥	१४
प्लक्षोदुम्बरजम्बूभिः कपित्थकलिभूरुहैः ।	
चम्पकैः सिन्दुवारैश्च शोभितं रक्तचन्दनैः ॥	१५
भूलोकदुर्लभैर्द्वीपसम्भवैः पादपैरपि ।	
खर्जूरैः किंशुकैश्चैव स्यन्दनैः पद्मकैस्तथा ॥	१६
अङ्गुलैर्मुचुकुन्दैश्च शिशुपाभूरुहैस्तथा ।	
मधूकशाल्मलिभिश्च पुष्पिताभिः सुशोभितम् ॥	१७
सर्वकलफलैर्वृक्षैः सवन्मधुसुशोभितैः ।	
मत्तकोविलसन्नादैः षट्पदस्वनसम्भ्रमैः ॥	१८

शुकमञ्जुलसन्नादैः शारिकालापदिभ्रमैः ।	
मयूराणां निनादैश्च शोभितप्रस्थसानुकम् ॥	१९
अन्येषामपि दिव्यानां पक्षिणां मञ्जुलस्वनैः ।	
शोभितानन्दजनकं गिरिशृङ्गं मनोहरम् ॥	२०
मत्तमातङ्गशरभसिंहव्याघ्रनिषेवितम् ।	
महाक्रोडशतैश्चैव महिषैर्वनवासिभिः ॥	२१
वृकैर्बल्लूकमुख्यैश्च वानरैश्चापि सङ्कुलम् ।	
कस्तूरीमृगसङ्घैश्च कृष्णसारैश्च शोभितम् ॥	२२
चमरीमृगसङ्घैश्च गवयैश्च महामृगैः ।	
शोभितं पर्वतश्रेष्ठं वनमार्जारसङ्कुलम् ॥	२३
गुहाशतसमाकीर्णं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ।	
गन्धर्वाणां च नारीणां किन्नरीणां तथैव च ॥	२४
अप्सरस्सु च मुख्यानां वीणानादैर्मनोहरैः ।	
हृदयन्तं हृदम्भोजं पश्यतां हर्षवर्धनम् ॥	२५
गरुत्मता वेगवता त्वानीतं पर्वतोत्तमम् ।	
ददृशुर्मुनयो देवा योगिनः शुद्धचेतसः ॥	२६
दृष्ट्वा श्रीवेङ्कटं शैलमपनिन्यु श्रमं बुधाः ।	
शृङ्गाच्छृङ्गं समारुढ्वा वनाद्वनमितस्ततः ॥	२७
नदीषु पुण्यतोयासु हृदेषु सरसीषु च ।	
वापिकासु प्रवाहेषु तथा पुष्करिणीषु च ॥	२८
स्नात्वा स्नात्वा श्रीनिवासं पुष्पैरभ्यर्च्य सादरम् ।	
फलान्यमृतकल्पानि निवेद्य सुसमाहिताः ॥	२९
न तत्र देवं कञ्चिच्च नाऽलयं न च गोपुरम् ।	
ददृशुर्योगिनस्तत्र योगनिष्ठान् मुनीनपि ॥	३०

- तत्र स्थितान् मुनीन् दृष्ट्वा चेरुस्तत्र महौजसः ।  
लोकोत्तरात्रिलोचनं नानावर्णं मनोहरम् ॥ ३१
- मृगं वा पक्षिणं दृष्ट्वा गन्धर्वं वा दिवौकसः ।  
असावेव हरिश्चेति विस्मयोत्फुल्लमानसाः ।  
अनुजग्मुर्गिरौ तस्मिन् दिदृक्षाऽऽसक्तचेतसः ॥ ३२
- पुत्रार्थिनो दशरथस्य श्रीवेङ्कटाचलगमनम्  
तस्मिन् काले तु धर्मात्मा राजा दशरथः प्रभुः ।  
शशास मेदिनीं कृत्स्नामयोध्यायां महायशाः ॥ ३३
- वर्णाश्रमाचारयुताः प्रजा धर्मेण पालयन् ।  
चिरकालं महीं राजा बुभुजे भूरिदिक्रमः ॥ ३४
- न चाद्राक्षीत्कुमारस्य शुचिस्मेग्मुखाबुजम् ।  
वसिष्ठमब्रवीद्दुःखात् ब्रह्मर्षिममिजौजसम् ॥ ३५
- ‘पुरोहितोऽस्य वंशस्य विशेषेण भवान् मुने ! ।  
चिरं लालप्यमानस्य नाऽसीद्वंशकरः सुतः ॥ ३६
- पापिनो मम तु ब्रह्मन् ! मया पापं कृतं बहु ।  
पापस्य निष्कृतिः कस्मात् कथं पुत्रो भविष्यति ? ’ ॥ ३७
- इति प्रोक्तो वसिष्ठस्तु क्षणं ध्यात्वा प्रसन्नधीः ।  
प्राह चैनं नृपं धीरं वसिष्ठो भगवानृषिः ॥ ३८
- ‘पुण्यश्लोकस्य भवतः कथं पापं भविष्यति ।  
तथाऽपि तव राजेन्द्र पुत्रप्राप्तिविरोधकृत् ॥ ३९
- दुष्कृतं किञ्चिदस्तीति ध्यानेन प्रतिभाति मे ।  
तस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुत्राणां प्राप्तये तथा ॥ ४०
- सेव्यः श्रीवेङ्कटाक्षीशः क्षीराब्धितनयापतिः ।  
इत्युक्तः प्राह राजाऽपि ब्रह्मन् ! कुत्र श्रियःपतिः ॥ ४१

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४४ तमोऽध्यायः	४९
इदानीं वर्तते विष्णुः कथं दृश्यो मया प्रभुः ।	
इति पृष्टः पुनः प्राह वसिष्ठोऽपि महामुनिः ॥	४२
‘ शृणु राजन् महाभाग भागीरथ्याश्च दक्षिणे ।	
वर्तते वेङ्कटः शैलो योजनानां शतद्वये ॥	४३
सुवर्णमुखरीतीरात् उत्तरे क्रोशमात्रके ।	
अनेकपुण्यतोयैश्च पुण्यैश्चैव महाह्रदैः ॥	४४
अनेककिन्नरीभिश्च शोभितः पर्वतोत्तमः ।	
दिव्योऽयं पर्वतेन्द्रस्तु न पुनः प्राकृतो गिरिः ॥	४५
स्वरूपं तस्य शैलस्य न तु जानन्ति मानुषाः ।	
नारायणस्य देवस्य वैकुण्ठपुरवासिनः ॥	४६
सूर्यवैकुण्ठनाकेभ्यः प्रियोऽयं वेङ्कटाचलः ।	
तस्मिन् हि रमते नित्यं श्रीनिवासः श्रिया सह ॥	४७
दर्शनार्थं हरेस्तत्र यजन्ते मुनयोऽमलाः ।	
योगिनस्त्रिदशाश्चापि तपः कुर्वन्ति सन्ततम् ॥	४८
स्वयम्भूर्भगवान् ब्रह्मा तस्मिन् गिरिवरोत्तमे ।	
लोकानुग्रहसिद्धयर्थं करिष्यति तपो महत् ॥	४९
दर्शयिष्यति तस्मै च स्वस्य रूपं महद्भरिः ।	
दास्यत्यभीष्टं सर्वेभ्यो दर्शनादेव माधवः ॥	५०
कूलङ्कषमहौदार्यगुणसिन्धुः श्रियः पतिः ।	
तवाप्यभीष्टं गोविन्दो दास्यत्येव न संशयः ’ ॥	५१
एवमुक्तो वसिष्ठेन चक्रवर्ती गुणाकरः ।	
राजा दशरथो हृष्टः प्रसन्नमुखपङ्कजः ॥	५२
प्रययौ च वसिष्ठेन वेङ्कटाख्यं गिरिं प्रति ।	
गङ्गां गोदावरीं रम्यां कृष्णां वेणीमनन्तराम् ॥	५३



मलपहारिणीं भद्रां तुङ्गां पम्पां मनोहराम् ।	
भवनाशीं च सम्प्राप्य स्नात्वा स्नात्वा महारथः ॥	५४
वेङ्कटाद्रिं ददर्शाथ तुङ्गशृङ्गसमन्वितम् ।	
उद्यानं नन्दनं चैतरथं सम्भूय तिष्ठति ॥	५५
इत्युत्प्रेक्ष्य मनोहारिवृक्षगुल्मलतायुतम् ।	
युवानञ्च महामेरुमिव चक्षुष्पदं गिरिम् ॥	५६
आरुह्य नयनानन्दं हृदयाह्लादकारकम् ।	
निर्झरेषु तटाकेषु सरस्सु सरसीषु च ॥	५७
नदीषु देवखातेषु तथा पुष्करिणीषु च ।	
स्नात्वा निर्मलसर्वाङ्गः क्षालिताघो महाबलः ॥	५८
लब्ध्वा चित्तस्य संशुद्धिं पीतामृत इव प्रभुः ।	
मुमुदे च महाराजो भोक्तुकामः सुतोत्सवम् ॥	५९

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये ब्रह्मादीनां श्रीवेङ्कटाचलप्रगमनादि-  
वर्णनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः

दशरथेन श्रीवेङ्कटाचलत्रासिमहर्षिचरितदर्शनम्

श्रीसूतः —

ततो राजा दशरथो वसिष्ठेन सह प्रभुः ।	
पश्यन् पश्यन् वनं रम्यं सानूनि शिखराणि च ॥	१
प्राप तत्र गिरौ पुण्यां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ।	
फुल्लकल्हास्कुमुदपुण्डरीकमहोत्पलाम् ॥	२

नीलोत्पलगाणोपेतां रक्तोत्पलसुशोभिताम् ।	
वज्जुलैर्वकुलैश्चान्यैः सेवितां काननोद्भवैः ॥	३
हंसकारण्डवाकीर्णां बकभेकविघूर्णिताम् ।	
सारसारवसम्पूर्णां अमरारवनादिताम् ॥	४
मत्स्यकच्छपसम्बाधां शिशुमारनिषेविताम् ।	
नक्रैः कर्कटकैश्चान्यैः जलजैर्वनजैरपि ॥	५
सेवितां तीरजैर्वृक्षैः नारिकेलरसालकैः ।	
पूगचम्पकपुन्नागकेतकैः स्वर्णकेतकैः ॥	६
अशोककदलीमिश्र मातुलङ्गैश्च शोभिताम् ।	
लिकुचैर्बीजपूरैश्च निरन्तरतटद्रुमैः ॥	७
शोभितां सरसीं दृष्ट्वा मुमोद स महाद्युतिः ।	
मुनीन् ददर्श तत्रैव तपतो योगिनोऽमलान् ॥	८
वीरासने समासीनान् बद्धपद्मासने स्थितान् ।	
भद्रासनगतान् कांश्चित् सिंहासनगतान् परान् ॥	९
सिद्धासनगतान् कांश्चित् स्वस्तिकासनमाश्रितान् ।	
पर्णाशनान् वायुमक्षान् गोमुखासनसंस्थितान् ॥	१०
अङ्गुष्ठाग्रस्थितान् कांश्चित् एकपादेन विष्टितान् ।	
सूर्योन्मुखान्मुनीनन्यान् कांश्चित्पञ्चाग्निमध्यगान् ॥	११
भूशय्यान् जलशय्यांश्च फलमूलजलाशनान् ।	
केवलं कुम्भके सक्तान् केवलं रेचके रतान् ॥	१२
केवलं पूरके सक्तान् केवलं प्राणरोधकान् ।	
नाडीशुद्धौ महाव्यग्रान् शुद्धनाडीगणानपि ॥	१३
सुषुम्नासङ्गतप्राणान् षट्कर्मनिरतानपि ।	
दशधाऽनुष्ठिते योगकरणे सुसमाहितान् ॥	१४

व्याघ्राजिनधरानन्यान् कृष्णाजिनवराम्बरान् ।	
वल्कलऽऽवसनानन्यान् काषायवसनानपि ॥	१५
जलतर्पणसंसक्तान् होमकर्मसु निष्ठितान् ।	
बिल्वहोमरतानन्यान् शमीहोमरतानपि ॥	१६
तथाऽऽमलकहोमेषु निष्ठितान्निर्मलान्मुनीन् ।	
तिलक्षतैर्यवैः पुष्पैः तिलव्रीहिभिरेव च ॥	१७
पद्मेन्दीवरकल्हारैः पुण्डरीकैश्च पायसैः ।	
घृतैः पुष्पैर्मधुयुतैः फलैश्च कदलीगतैः ॥	१८
मुद्गान्नैश्च तिलान्नैश्च गुडान्नैर्माषसंयुतैः ।	
अपूपैर्मण्डकैश्चापि तिलपिष्टैस्तथैव च ॥	१९
होमञ्च कुर्वतः कांश्चित् तत्र तत्र सुनिष्ठितान् ।	
हृदम्बुजगतं श्रीशं विष्णुमर्चयतोऽपरान् ॥	२०
ददर्श पुरुषव्याघ्रः पुनस्तत्रैव केचन ।	
अर्चयन्ति जगन्नाथं सूर्यमण्डलवर्तिनम् ॥	२१
श्रीनिवासं तथा केचित् जलमध्यगतं हरिम् ।	
केचिद्विम्बं हरेः सौम्यं अर्चयन्ति च सर्वदा ॥	२२
त्रिविक्रमं तथा चान्ये नृसिंहं मीषणं हरिम् ।	
अर्चयन्ति तिलैः पुष्पैः अक्षतैश्च फलैरपि ॥	२३
केचिद्दूर्वाग्निरन्ये च पल्लवैश्च तथा परे ।	
अन्ये चम्पकपुष्पैश्च पद्मैरन्ये च तापसाः ॥	२४
अर्चयन्ति तथा केचित् पुण्डरीकैस्तथाऽपरे ।	
अशोकरुपुष्पैश्च नन्द्यावर्तैश्च केचन ॥	२५
अर्चयन्ति जगन्नाथं तथा बिल्वदलैरपि ।	
तुलस्याः सुदलैश्चापि कृष्णधेतैश्च योगिनः ॥	२६

अर्चयन्ति तथा केचित् मल्लिकाकुसुमैरपि ।	
केचिच्च जातीकुसुमैः मालतीपुष्पसञ्चयैः ॥	२७
करवीरैस्तथा केचित् पारिजातोद्वैरपि ।	
केचिद्गन्धकैश्चैव तथा मरुवकैः परे ॥	२८
एवमर्चयतो नित्यं ददर्श मुनिपुङ्गवान् ।	
नृसिंहानुष्टुभं केचित् जपन्तश्च तपोधनाः ॥	२९
तारकब्रह्मसंज्ञं च मनुं प्रणवपूर्वकम् ।	
केचिद्गोपालबीजं च भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥	३०
केचिद्द्वाराहमन्त्रं च जपन्ति मुनयोऽमलाः ।	
द्वादशाक्षरमन्ये च वासुदेवं महामनुम् ॥	३१
अष्टाक्षरं तथा केचित् नारायणमनुं परम् ।	
जपन्ति मुक्तिबीजं च भुक्तेरपि च साधनम् ॥	३२
न्यासद्वादशकं कृत्वा वेदसारं महामनुम् ।	
नीलमेघनिभं श्यामं पीतवाससमच्युतम् ॥	३३
चतुर्भुजमुदाराङ्गं श्रीभूमिसहितं परम् ।	
ध्यात्वा नारायणं मन्त्रं जपन्ति ज्ञानिनोऽमलाः ॥	३४
कुशग्रन्थिकृतां मालां पद्मबीजभवां तथा ।	
तुलसीकाष्ठसम्भूतां प्रवालमणिसम्भवाम् ॥	३५
स्फाटिकीं स्वर्णविकृतिं पुलजीवभवां तथा ।	
कृत्वाऽक्षमालां विविधां मन्त्रसिद्धयर्थमेव च ॥	३६
ध्यात्वा ददर्श जपतो मुनीन् परमभास्वरान् ।	
तेषां मध्ये महात्मानं ब्रह्माणं कमलसनम् ॥	३७
चतुर्मुखं चतुर्बाहुं जपन्तं ज्वलनोपमम् ।	
स्फाटिकीमक्षमालां च धारयन्तं महौजसम् ॥	३८

ध्यायन्तं मनसा श्रीशं नासाग्रन्यस्तलोचनम् ।	
व्याघ्रत्वचि समासीनं निश्चलं ध्यानयोगतः ॥	३९
निवातस्थं महादीपं निष्कम्पमिव च स्थितम् ।	
ददर्श राजा संहृष्टो वसिष्ठेन महात्मना ॥	४०
तत्र योगिमुनीन्सर्वान् देवान् नत्वा यथाविधि ।	
अतिष्ठच्च महाराजो विस्मयोत्फुल्ललोचनः ॥	४१
इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाचलवासि- महर्षिदिव्यचरित्रानुवर्णनं नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः	



अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः

### श्रीभगवदाविर्भावघट्टः

श्रीसूतः —

वसिष्ठोऽपि महातेजाः राजानमिदमब्रवीत् ।	
‘ श्रूयतां राजशार्दूल ! ब्रह्मा लोकपितामहः ॥	१
अयमत्र तपस्तीव्रं करोति मुनिभिः सह ।	
अचिराच्छीपतिर्विष्णुः आविर्भूतो भविष्यति ॥	२
त्वमप्यत्र शुचिर्भूत्वा स्नात्वा पुष्करिणीजले ।	
जपं कुर्वन्महीपाल ! निवस त्वमिहैव भोः ॥ ’	३
इत्युक्तः प्राह राजाऽपि ‘ मन्त्रं कञ्चित्प्रयच्छ भोः । ’	
इति पृष्टो वसिष्ठश्च प्रादान्मन्त्रमनुत्तमम् ॥	४
योऽसावष्टाक्षरो मन्त्रो वेङ्कटेशपरायणः ।	
लब्ध्वा तं मन्त्रमतुलं पार्थिवो यन्त्रसंयुतम् ॥	५

स्वामिपुष्करिणीतोये स्नात्वा विधिवदादरात् ।	
कचित्त्र समे देशे लिखित्वा यन्त्रमुत्तमम् ॥	६
तत्र विष्णुं समभ्यर्च्य श्रीनिवासं जगत्पतिम् ।	
तदग्रतो जपं कुर्वन् अतिष्ठत्परमासने ॥	७
वसिष्ठोऽपि जपन्मन्त्रमासने कुशविस्तृते ।	
अत्रान्तरे महाच्छब्दः कश्चित्समुदपद्यत ॥	८
किमित्येवाकुलैः सर्वैः वीक्षितं मुनिसत्तमैः ।	
दुर्निरीक्ष्यं महत्तेजो दृष्टं च सुरसत्तमैः ॥	९
समस्तविद्युतां कूटमाविर्भूतमिवाभवत् ।	
ज्योतिर्गणानां सङ्घात इव तेजः समुद्यतम् ॥	१०
अनेककोटिसूर्याश्च पूर्णचन्द्राश्च कोटयः ।	
एकीभूय समुद्भूता इव तेजः समुत्थितम् ॥	११
इदं किमिति तद्द्रष्टुमशक्ताः सहसैव तु ।	
न्यमीलयन्त नेत्राणि समुत्तस्थुश्च ते सुराः ॥	१२
सम्भ्रान्तमनसः सर्वे समूहीभूय सादरम् ।	
अतिष्ठन् विविधान्मन्त्रान् जपन्तो योगिनोऽमल्यः ॥	१३
तत्तेजसा जगत्सर्वं प्रदीप्तमिव च स्थितम् ।	
तेजोमध्ये समुद्भूतं त्रिमानं सूर्यभास्वरम् ॥	१४
अनेकगोपुरैर्युक्तमनेकावरणैर्युतम् ।	
तत्सहाटकनिर्वृत्तकवाटगणशोभितम् ॥	१५
नीलैर्मरकतैश्चैव कृततोरणसञ्चयम् ।	
समुच्छ्रितपताकाभिः शोभितं विविधैर्ध्वजैः ॥	१६
शातकुम्भमयैः कुम्भैः शोभिताग्रैश्च गोपुरैः ।	
अलङ्कृतं वितानैश्च विचित्रैर्वर्णभेदतः ॥	१७

लम्बमानैस्तत्र मुक्तादामभिर्दिवि सम्भवैः ।	
मल्लिकामालतीजातिपुष्पाणां च सैरेस्तथा ॥	१८
स्वर्णचित्तितवल्लैश्च लम्बमानैरलङ्कृतम् ।	
अनेकमणिरत्नाढ्यं क्रीडामण्डपसंयुतम् ॥	१९
आस्थानमण्डपान्तःस्थमणिस्तम्भसुशोभितम् ।	
चतुर्दिक्षु चतुर्द्वारं द्वारपालैश्च सेवितम् ॥	२०
सहस्ररत्नसुस्तम्भमणिमण्डपशोभितम् ।	
रथाश्वगजमुख्यैश्च दिव्ययानैरलङ्कृतम् ॥	२१
शारिकाशुकहंसानां मयूराणां स्वनैर्युतम् ।	
कपोतमधुरालपैः विचित्रमृगपक्षिभिः ॥	२२
शोभितं च सुगन्धैः सुधूपैश्चापि विराजितम् ।	
मेरीमृदङ्गपणवमुरजस्वनसम्भृतम् ॥	२३
ढक्कानिस्साणसन्नादसम्पूरितदिगन्तरम् ।	
वीणाकिन्नरभेदानां मञ्जुलस्वनसंयुतम् ॥	२४
रूपयौवनसम्पन्नदिव्यस्त्रीलस्यलालितम् ।	
श्रवणानन्दजननं हृदयाद्वादकारकम् ॥	२५
नयनानन्दजनकं सर्वमङ्गलशोभितम् ।	
चामरग्राहिणीभिश्च सुरूपामिः सुचारुभिः ॥	२६
गृहीतव्यजनाभिश्च रूपयौवनचारुभिः ।	
नीराजनकराग्राभिः श्यामाभिश्च निषेवितम् ॥	२७
छलध्वजधराभिश्च स्त्रीभिः सेवितमादरात् ।	
एवमत्यद्भुते दिव्यं विमानं ददृशुर्बुधाः ।	२८
ब्रह्मादयस्तथा देवाः सनकाद्याश्च योगिनः ।	
मुनयोऽगस्त्यमुत्थश्च दृष्ट्वा तत्परसद्गतम् ॥	२९

इतिकर्तव्यतामूढाः सम्पूर्णाह्लादमानसाः ।

तस्थुस्तथैव पश्यन्तो विस्मयोत्फुल्ललोचनाः ॥ ३०

आकाशचारिणो देवा विहगाः पक्षिणस्तथा ।

मृगाश्च पशवः सर्वे विमानं दिव्यमुत्तमम् ॥ ३१

दृष्ट्वा विस्मयसम्फुल्ललोचनाः पूर्णमानसाः ।

चेष्टुस्तस्मात्पदं नैव तस्थुस्तत्रैव सादरम् ॥ ३२

अत्यद्भुतं विमानं तद् दृष्ट्वा लोकपितामहः ।

परमानन्दभरितमुखलोचनपङ्कजः ॥ ३३

अगस्त्यं च वसिष्ठं च वामदेवं च काश्यपम् ।

जाबालिमथ कण्वं च देवलं देवदर्शनम् ॥ ३४

स्वपुत्रं नारदं चैव पराशरमृषिं तथा ।

व्यासं शुकं तथा गार्ग्यं भार्गवं च्यवनं तथा ॥ ३५

अन्यानपि मुनीन् पुण्यान् इन्द्राद्यांश्च सुरांस्तथा ।

सनकादींश्च योगीन्द्रान् समाहूयेदमब्रवीत् ॥ ३६

इदं तु दिव्यं परमाद्भुतं शुभं विमानमिन्द्रादिनिषेव्यमाणम् ।

विभाति विष्णोरिव मन्दिरं परं पश्याम सर्वे वयमद्भुतं गृहम् ॥ ३७

इतीरयित्वा प्रविवेश तद्गृहं पितामहः सर्वजगत्पतिस्तथा ।

तथैव सर्वे विबुधास्तपोधनाः तथैव गेहं विविशुश्च योगिनः ॥ ३८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीभगवदविर्भावादिवर्णनं नाम

षट्चत्वारिंशोऽध्यायः





अथ सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः

ब्रह्मादीनां भगवन्मन्दिरप्रवेशादिवर्णनम्

श्रीसूतः —

- अतीत्य प्रथमद्वारं रत्नतोरणभूषितम् ।  
तसद्द्वारकनिष्पन्नकवाटद्वयशोभितम् ॥ १
- चण्डप्रचण्डौ प्राग्द्वारे शङ्खचक्रगदान्वितौ ।  
द्वारपालौ प्रणम्यैव द्वितीयं द्वारमाविशन् ॥ २
- तथैव सप्त द्वाराणि समतीत्य महाभुजाः ।  
चतुर्मुखमुखाः सर्वे तत्र देवं श्रियःपतिम् ॥ ३
- अपश्यन्नतिसंहृष्टाः सह राज्ञा महात्मना ।  
विमाने बहुविस्तीर्णे सिद्धचारणसेविते ॥ ४
- पुष्पवृष्टिर्महत्यासीत् देवदुन्दुभिनिर्गतः ।  
आकाशे सुसहानासीत् रम्यमङ्गलनिस्स्वनः ॥ ५
- तुष्टुवुर्देवगन्धर्वा विमानस्थाप्सरोगणाः ।  
ननृतुर्गीतवादित्रसम्भ्रमः सुमहानभूत् ॥ ६
- त्रैलोक्यं पूरितं तेन सम्भ्रमेण तदाऽभवत् ।  
विदित्वा लोकपालश्च वसवो मुनयस्तथा ॥ ७
- सर्वे ग्रहास्तथा रुद्रा धातारो देवतागणाः ।  
नागा यक्षास्तथा सर्वे ये चाऽन्ये सात्त्विका मताः ॥ ८
- आजम्बुर्जगदीशानं द्रष्टुमच्युतमीश्वरम् ।  
ब्रह्माणं ते पुरस्कृत्य ददृशुर्भास्करोष्मम् ॥ ९
- नीलमेघनिभं श्यामं नीलमाणिक्यविग्रहम् ।  
तसद्द्वारकसङ्काशां चम्पकोद्दामदामभाम् ॥ १०

पङ्कजोदरलावण्यामार्द्रहारिद्रसन्निभाम् ।	
शरत्पूर्णनिशाकान्तमण्डलोपमसन्मुखाम् ॥	११
भृङ्गपङ्क्तिसमाकारदिव्यालक्षुशोभिताम् ।	
प्रफुल्लपङ्कजस्मेरमुखमन्दसितोज्ज्वलाम् ॥	१२
तरुणारुणसङ्काशकुसुम्भवसनोज्ज्वलाम् ।	
किरीटहारमकुटकेयूराङ्गदशोभिताम् ॥	१३
वामहस्ते लसद्वेमलीलाम्बुजमनोहराम् ।	
बल्याङ्गदसंशोभिलम्बमानान्यपाणिकाम् ॥	१४
पद्मासनस्थितां पद्मां पार्श्वं दक्षिणमाश्रिताम् ।	
वीक्षमाणां कटाक्षेण मुहुः श्रीवत्सलाञ्छनम् ॥	१५
श्रीधरं वामपार्श्वस्थां तुलसीश्यामलाङ्गकाम् ।	
सर्वसहां वसुमतीं सर्वाभरणभूषिताम् ॥	१६
द्विजराजज्वलज्ज्योत्स्नामन्दहासमनोहराम् ।	
मदमत्तचकोराक्षीं फुल्लपङ्कजवक्त्रकाम् ॥	१७
वामेतरकराभोजधृतनीलसरोरुहाम् ।	
श्यामामनुपमां भूमिं स्वर्णपद्मासने स्थिताम् ॥	१८
कटाक्षयन्तीं लोकेशममृतस्राविवीक्षणैः ।	
ददृशुर्ब्रह्मरुद्राद्याः त्रिदशा मुनिसत्तमाः ॥	१९
योगिनश्च तथा राजा कोसलेन्द्रो महाद्युतिः ।	
नानारत्नसमाकीर्णज्वलन्मकुटशोभितम् ॥	२०
मन्दस्मितमनोहारि श्रीमद्वदनपङ्कजम् ।	
दयारसतरङ्गौघफुल्लपङ्कजलोचनम् ॥	२१
सुनासिकापुटस्मेरपूर्णेन्दुमुखमण्डलम् ।	
कर्णद्वयलसद्वेममकराभरणोज्ज्वलम् ॥	२२

कण्ठलम्बिलसद्वेमग्रैवेयकविभूषितम् ।	
तप्तकार्तस्वरोद्भूतब्रह्मसूत्रविराजितम् ॥	२३
केयूराङ्गदसङ्ख्यं वृत्तायतचतुर्भुजम् ।	
ज्वालायुतसहस्रारसुदर्शनधरं वरम् ॥	२४
शरच्चन्द्रप्रतीकाशपाञ्चजन्यधरं शुभम् ।	
अश्रान्तवरदानोद्यदक्षपाणिसरोरुहम् ॥	२५
कटीतटसुविन्यस्तवामपाणिजलेरुहम् ।	
लावण्यसिन्धुलहरीमहावर्तसुनाभिकम् ॥	२६
सर्वलोकसमाधारजठरालङ्कृतं हरिम् ।	
कटिसूत्रव्यतिस्पृतकिङ्किणीकविराजितम् ॥	२७
कटीतटसुसम्बद्धच्छुरिकायुधभूषितम् ।	
मारद्विपमहाऽख्यनसमोरुद्वयशोभितम् ॥	२८
मदनेषुधिसंशोभिजङ्घाद्वयविराजितम् ।	
पीताम्बरधरं काञ्च्या पीताम्बरजगत्त्रयम् ॥	२९
गुल्फदेशलसद्भद्रकिङ्किणीकटकादिकम् ।	
हंसशिञ्जितमञ्जीरनूपुराढ्यपदाम्बुजम् ॥	३०
बालचन्द्रकलशोभिनस्वपङ्क्तिविराजितम् ।	
सहस्रपत्रपीठस्थं सर्वाभरणभूषितम् ॥	३१
पारिजाततरोर्भूले भासमानं श्रियःपतिम् ।	
कोटिकन्दर्पलवण्यसम्भोहितजगत्त्रयम् ॥	३२
यौवनोद्दामलवण्यं पञ्चविंशतिहायनम् ।	
कुमारं राजसिंहस्य क्रीडमानमिवाच्युतम् ॥	३३
मूर्तीभूतदयासिन्धुं मूर्तीभूतक्षमागुणम् ।	
मूर्तीभूतमहौदार्यं मूर्तिमद्रूपसम्पदम् ॥	३४

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४८ तमोऽध्यायः ६१

नारायणमनाद्यन्तमव्ययं पुरुषोत्तमम् ।  
ददृशुर्देवगन्धर्वाः प्रत्यक्षं सुरसत्तमाः ॥ ३५  
द्रष्टुं प्रत्यक्षतो यस्य रूपं तेपुस्तपोधनाः ।  
तमजं देवदेवेशं शृङ्गाररसवारिधिम् ॥ ३६  
चक्षुषां फलमत्यर्थं ददृशुः प्रीतमानसाः ।  
नयनानन्दजननं दृष्ट्वा तं सूर्यतेजसम् ॥ ३७  
सर्वेषां नेत्रपद्मानि विक्रासं प्रापुरञ्जसा ।  
हर्षविशसमाविष्टा दर्शनात्तस्य योगिनः ॥ ३८  
मुनयश्च तथाऽन्ये च ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।  
निपतन्तं पतन्त्यन्ये अन्तं आमयन्ति च ॥ ३९  
उत्पतन्तं पतन्त्यन्ये हर्षपर्याकुलेक्षणाः ।  
आनन्दाश्रु प्रमुञ्चन्तो मदोन्मत्ता इवाभवन् ॥ ४०  
अनुभूय तमानन्दं चिरात्स्वस्था गतज्वराः ।  
तस्थुश्च देवदेवेशं वीक्षमाणाः पुनः पुनः ॥ ४१

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये ब्रह्मादीनां भगवन्मन्दिर-  
प्रवेशप्रणमनादिवर्णनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः



अगस्त्यादिकृतभगवत्स्तुतिः

श्रीसूतः -- ॥

अथ ते मुनयः सर्वे हर्षाविष्टाश्च योगिनः ।  
स्तुत्या गम्यं स्तुतिप्रीतं प्रीत्यर्थं तुष्टुवुस्तदा ॥

श्रगस्त्यादयः —

“नमस्ते यज्ञरूपाय यज्ञभोक्त्रे नमो नमः ।	
यज्ञकर्त्रे नमो यज्ञप्रियाय च नमो नमः ॥	२
यज्ञगोप्त्रे नमो यज्ञफलदाय नमो नमः ।	
विश्वामित्रमश्रुयज्ञपालकाय नमो नमः ॥	३
यज्ञं श्राद्धं च दानं च कर्माण्यन्यानि यानि च ।	
तेषामपि त्वमेवैकः समस्तजपकर्मणाम् ॥	४
पालने फलदाने च प्रभुरित्युच्यसे बुधैः ।	
न केवलं त्वदुद्देशकृतानां कर्मणां प्रभुः ॥	५
अन्योद्देशकृतानां च यज्ञानां त्वं प्रभुस्तथा ।	
आदावन्ते तथा मध्ये त्वद् ज्ञानं तु न चेन्न तत् ॥	६
न्यूनं चापि कृतं कर्म त्वद्व्यानाद्याति पूर्णताम् ।	
कर्मणैव हि सुप्रीतस्त्वं तु धर्मं ददासि च ॥	७
अर्थकामौ तथा मोक्षं ददासि च तपःप्रियः ।	
वेदेषु बहवो भागाः कर्माण्येव वदन्ति हि ॥	८
तान्येव हि तव प्रीतिकारीणीति पुराविदः ।	
यथावत्तानि कर्तुं च न शक्यानि मनीषिभिः ॥	९
अस्माभिः क्रियते युष्मदाज्ञाबुद्ध्या हि कर्म तत् ।	
कर्मच्छिद्रं तपश्छिद्रं त्यक्तं चोपेक्षितं च यत् ।	
तत्सर्वं क्षम्यतां देव श्रीनिवास क्षमानिधे ॥ ”	१०
इति तस्मिन् स्तुते विष्णौ मुनिभिश्च तपोधनैः ।	
इन्द्राद्या देवताः सर्वाः तुष्टुवुर्जगदीश्वरम् ॥	११

इन्द्रादिकृतभगवत्स्तुतिः

इन्द्राद्याः —

- “ ओं नमो वेङ्कटेशाय शेषाद्रिनिलयाय च ।  
 सिंहाचलनिवासाय श्रीमन्नारायणाय च ॥ १२
- केशवाय नमो नित्यं वासुदेवाय ते नमः ।  
 हृषीकेशाय महते वामनाय नमो नमः ॥ १३
- सर्वेषां प्राणिनां स्वामिन् ! निवासार्थं यथायथम् ।  
 उद्धृत्य भूमिं पातालात् स्थापयित्वा दृढं पुनः ॥ १४
- अनुगृह्णन् जनान्त्सर्वान् प्रत्यक्षं दृश्यसे गिरौ ।  
 सुराणामुदधिं यत्नात् निर्मथ्योत्पाद्य चामृतम् ॥ १५
- अरक्षस्त्वं सुरान्त्सर्वान् दत्त्वा पीयूषमादरात् ।  
 त्वदीहा सर्वथा स्वामिन् परार्थैव सुरेश्वर ! ॥ १६
- त्वत्स्वरूपं यथावद्वि ज्ञातुं शक्नोति कः पुमान् ? ।  
 कचित्सहस्रमूर्धा त्वं सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ १७
- कदाचिद् द्विभुजस्त्वं तु कदाचित्त्वं चतुर्भुजः ।  
 कदाचिच्च तव स्वामिन् ! न किञ्चिच्चरणादिकम् ॥ १८
- आकाशमिव ते रूपं कदाचित् ज्ञानगोचरम् ।  
 कदाचिन्निर्विकल्पेन वेद्यं यत्नेन कस्यचित् ॥ १९
- आहुस्त्वां सगुणं केचित् निर्गुणं ज्ञानमात्रकम् ।  
 किञ्चिदित्येव केचित्तु सदित्येव तु केचन ॥ २०
- दिव्यावयवसौन्दर्यं नित्यविग्रहयोगिनम् ।  
 वदन्ति केचिदस्माकमपि तन्मतमुत्तमम् ।  
 हृद्यं प्रमाणभूयिष्ठं तं नतास्म जगद्गुरुम् ॥ ” २१

एवं हि स्तूयमाने तु गोविन्दे त्रिदशैरपि ।  
तुष्टुवुः सनकाद्याश्च योगिनो विजितेन्द्रियाः ॥ २२

### सनकादिकृतभगवत्स्तुतिः

सनकाद्याः —

“ वैकुण्ठधाम विष्णो त्वं जगतामादिकारणम् ।  
नमामि त्वां जगद्रूपं नमामि त्वामसङ्गिनम् ॥ २३  
आधारपद्मे हृत्पद्मे भ्रूमध्ये मूर्ध्नि पङ्कजे ।  
नीवारशूकवत्सूक्ष्मं पीताम्बं सर्वतोमुखम् ॥ २४  
सुषुम्नामार्गमध्येऽपि विसतन्तुनिभं परम् ।  
ज्ञानात्मकं मनोवेद्यं लयवाच्यमरूपकम् ॥ २५  
स्वयंप्रकाशरूपं च समाधौ त्वां नमाम्यहम् ।  
योगिनां परमाधारं योगीशं योगदायिनम् ॥ २६  
योगिनामप्यगम्यं च नमस्यामो जगद्गुरुम् ।  
हृत्पद्मकर्णिकामध्ये शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ २७  
नीलतोयदसङ्काशं पीतवाससमच्युतम् ।  
नमामो वेदवेद्यं त्वां वेदस्याविषयं तथा ।  
त्वत्पादं सर्वभावेन सर्वथा शरणं गताः ॥ ” २८  
इति स्तुते जगन्नाथे योगिभिः कोसलाधिपः ।  
तुष्टुव हृष्टस्तं देवं राजा दशरथस्तदा ॥ २९

### दशरथकृतभगवत्स्तुतिः

दशरथः —

“ ब्रह्मेन्द्रप्रमुखाः सर्वे तपः कुर्वन्ति यत्कृते ।  
त्वदधीना रम्यं स्नानं तु त्वत्प्रसादाभिव्यङ्गिणी ॥ ३०

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ४८ तमोऽध्यायः ६५

त्रिपुरारेर्महाविष्णो ! लोकसंहारकारिणः ।  
येन दग्धा पुरी तत्तु त्वदायुधमिति स्मृतम् ॥ ३१  
सर्वसृष्टिक्रियाकर्तृब्रह्माद्या देवतागणाः ।  
त्वदाज्ञाकारिणः श्रीश ! नास्ति कश्चित्त्वाधिकः ॥ ३२  
त्वदीयं धाम वैकुण्ठं निरपायं निराकुलम् ।  
सर्वप्रार्थ्य परानन्दं वक्तव्यं किमतः परम् ” ॥ ३३  
एवं नृपेण गोविन्दे स्तूयमाने चतुर्मुखः ।  
चतुर्भिस्तोषयामास मुखैर्वेदसुगन्धिभिः ॥ ३४

ब्रह्मकृतभगवत्स्तुतिः

ब्रह्म—

“ आसीदग्रे सदेकस्तु स च नारायणः श्रुतः ।  
अपोऽसृजत्ततो वीर्यं विसृष्टं तासु तेन वै ॥ ३५  
तदण्डमभवत्पश्चात् त्वया सृष्टोऽहमीश्वर ! ।  
मया सृष्टाः प्रजाः सर्वाः सर्वनूलं त्वमेव भोः ! ॥ ३६  
मादृशा विधयो जाताः त्वत्तः कति कतीश भोः ! ।  
जीवैः सूक्ष्मप्रकृत्या च विशिष्टस्त्वं तु कारणम् ॥ ३७  
त्वमेव सर्वभूतात्मा ‘ जग ’ दित्युच्यसे श्रुतौ ।  
एकं वृक्षं समासाते सुपर्णाव्युतौ हरे ! ॥ ३८  
तयोरन्यः कर्मजन्यं फलमश्नाति सर्वदा ।  
अस्पृष्टगन्धस्तलैव दीप्यसे त्वं यथा रविः ॥ ३९  
नियन्ता सर्वजीवानां प्रेरकश्चानुमोदकः ।  
सत्यं ज्ञानमनन्तं च त्वद्रूपं वै श्रियःपते ! ॥ ४०  
‘ नरानन्दाच्छतगुणात् देवगन्धर्वसम्मदाः । ’  
इत्यारभ्य तव स्तोतुमानन्दं कमलपते ! ॥ ४१



- उपक्रम्य परिच्छेत्तुं तवानन्तगुणार्णवम् ।  
 अजानन्तः पुरा वेदाः ते च नित्याः सहस्रधा ॥ ४२
- तूष्णीम्भावं ययुः सोऽहं त्वन्नाभिकमलोद्भवः ।  
 कथं स्तौमि गुणक्षीरपयोधिं त्वां रमापते ! ॥ ४३
- दयोद्विक्तमुत्साम्भोज दर्शनात्ते वयं सुराः ।  
 अवादिष्म च किञ्चित्तु तत्सर्वं क्षम्यतां मनो ! ॥ ४४
- प्रसीद परमोदार ! प्रसीद त्वं श्रियोज्ज्वल ! ।  
 प्रसीद परमानन्द ! प्रसीद सुमुखोज्ज्वल " ॥ ४५
- इति देवगणाः सर्वे हर्षोत्कुलहृदम्बुजाः ।  
 अस्तुवन् देवदेवशं याथात्म्याद्बहुधा तदा ॥ ४६
- इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगस्त्यादिकृत-  
 भगवत्स्तुत्यादिवर्णनं नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः



अथ एकोनपञ्चाशोऽध्यायः



ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृतं कृशं अनुयोगादयः

श्रीस्तुतः —

- मुनिभिर्देववृन्दैश्च स्तुतः श्रीवेङ्कटाधिपः ।  
 दयाप्रसन्नसङ्कुलनेत्राब्जभ्यां विलोकयन् ॥ १
- तान्त्सर्वान्वै सुधावृष्ट्याऽऽह्लादयन्निव सोऽच्युतः ।  
 बभाषे मेघगम्भीरवाचा कर्णामृतश्रिया ॥ २

श्रीभगवान्—

‘ब्रह्मन् ! प्रीतोऽस्मि ते भक्त्या स्तुत्या च कमलासन ! ।  
किमागमनकार्यं ते सुराणाञ्च तपस्विनाम् ।’  
इति पृष्ठः पुनः प्राह ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ ३

भगवते ब्रह्मादिभिः रावणोपद्रवनिवेदनम्

ब्रह्मा—

‘पूर्वं विश्रवसः पुत्रो रावणो नाम राक्षसः ।  
तपः कृत्वा सुघोरञ्च देवदानवराक्षसैः ॥ ४  
मानुषादितरैर्लब्ध्वा वरं चावध्यतामयम् ।  
बलदर्पादिमाँल्लोकान् बाधते नितरां मुनीन् ॥ ५  
श्रीशैलस्य सकाशे तु दैत्याः केचन सर्वदा ।  
बलोद्धता महावेगा नित्यं ब्राह्मणकण्टकाः ॥ ६  
बाधन्ते प्राणिनः सर्वान् नित्योद्यतवरायुधाः ।  
वैकुण्ठं क्षीरसिन्धुं च दृष्ट्वा त्वत्प्रीतिकारकम् ॥ ७  
तत्तत्स्थानं समालोक्य लीलालोलहृदम्बुजम् ।  
त्वां तु तत्र श्रियःकान्तमदृष्ट्वा चात्र ते वयम् ॥ ८  
आगताः शरणं नो हि त्वमेव रिपुसूदन ! ।  
जगद्रक्षणकर्ता त्वं तद्विस्तृत्य रमासख ! ॥ ९  
अतिचैत्ररथे दिव्ये गिरावस्मिन् वृषाभिधे ।  
क्रीडसे परमानन्दः क्रीडारसवशानुगः ॥ १०  
अस्माकं का गतिर्विष्णो ! वद वेङ्कटनायक !’ ।  
इत्युक्तः प्राह तान्तसर्वान् कृपानिधिरधोक्षजः ॥ ११

श्रीभगवान्—

- ‘अहमेव गतिर्ब्रह्मन्! भवतां माऽस्तु तद्वयम् ।  
 अभयं भवतां दत्तं मया हि कमलासन ! ॥ १२
- अचिराद्वाक्षसं क्रूरं रावणं लोककष्टकम् ।  
 सबन्धुं सरथं साश्वं वधिष्यामि न संशयः’ ॥ १३
- एवमुक्त्वा विधिं श्रीशः प्राहागस्त्यं नपोधनम् ।  
 ‘अगस्त्य! स्वागतं ते हि ब्रूहि कार्यं महामुने’ ॥ १४
- इत्युक्तः प्राह तं विष्णुं मुनिः परमपावनः ।  
 ‘मन्दस्मितमनोहारि त्वदीयमुखपङ्कजम् ॥ १५
- सद्यः सन्तापहरणं हृदयाऽऽह्लादकारणम् ।  
 अदृष्ट्वा तत्कथं स्थातुं शक्नुयां वेङ्कटेश्वर ! ॥ १६
- त्वदीयं दर्शनं पुण्यं ममोद्देश्यं प्रधानतः ।  
 अन्यच्च किञ्चिद्वक्ष्यामि श्रूयतां पुरुषोत्तम ! ॥ १७
- असुराः केचिदुद्धृताः श्रीशैलस्य समीपतः ।  
 वरदानोद्धृताः सर्वे बाधन्ते प्राणिनः सदा ॥ १८
- सत्यत्र तव सान्निध्ये देशपीडा कथं भवेत् ? ।  
 विषयोऽयं त्वदीयस्तु बालवृद्धद्विजाकुलः ॥ १९
- दस्युभिः पीड्यमानश्चेदुपेक्षाविषयः कथम् ? ।  
 दुष्टानां निग्रहः कार्यः शिष्टानां रक्षणं तथा ॥ २०
- भवद्देशजनाः सर्वे नीरोगा निरुपद्रवाः ।  
 दीर्घायुस्तथा सर्वे श्रीमन्तः पुत्रपौत्रिणः ॥ २१
- निर्मत्सरा भवेयुश्च भवदीयकटाक्षतः ।  
 कस्मेतद्देहि देव ममावश्यं श्रियःपते’ ।
- इति षष्ठः पुनः प्राह परमात्मा सनातनः ॥ २२

- ‘दत्तमेतद्वरं चाद्य मया मुनिवरोत्तम ।  
हनिष्ये सर्वदुष्टांश्च करिष्ये निरुपद्रवम् ॥ २३
- आरोग्यं सम्पदं दास्ये सन्ततीश्च शतायुषः ।  
दास्यामि सर्वदा तेषामेतद्विषयवासिनाम् ॥ २४
- अयाचितं च यच्चान्यत् काङ्क्षितं तद्दामि वः ’ ।  
इति दत्त्वा वरं सम्यङ् मुनये कमलापतिः ॥ २५
- सनकादीनुवाचेदं ‘स्वागतं भवता’ मिति ।  
इति पृष्टाः पुनः प्रेचुर्योगिनस्तं रमापतिम् ॥ २६
- ‘स्वामिन्नियं पुण्यभूमिः तपः सिद्धयति शीघ्रतः ।  
किं तु बाधा च महती दुस्सहा कलहार्थिनाम् ॥ २७
- निर्बाधं कुर्विमं देशं शीघ्रं शेषगिरीश्वर ।  
त्यक्त्वा वैकुण्ठमस्मिन् हि स्थीयसे पर्वणोत्तमे ॥ २८
- त्वमत्र वेङ्कटाधीश ! स्थित्वाऽपि प्राणिसौख्यदः ।  
अदृश्यः सर्वभूतैश्चेत् तावता किं प्रयोजनम् ? ॥ २९
- स्थातव्यं हि त्वया तात सर्वप्रत्यक्षगोचरम् ।  
इदमेव हरे स्वामिन् ! परमं नः प्रयोजनम् ’ ॥ ३०
- एवमभ्यर्थितः श्रीशः सनकादितपोधनैः ।  
‘तथैव कुर्वे योगीन्द्रा ’ इति चोक्त्वा मुनींस्तदा ॥ ३१
- प्राह चेन्द्रं वचो विष्णुः ‘ किं ते कार्यं वदे ’ ति च ।  
इति पृष्टः पुनः प्राह देवेन्द्रो विष्णुमव्ययम् ॥ ३२
- ‘ स्वामिन्नच्युत गोविन्द रावणेन दुरात्मना ।  
पीडिताश्च वयं सर्वे स्थानात्स्थानं भ्रमामहे ’ ॥ ३३
- इत्युक्तः प्राह देवोऽपि देवेन्द्रं कमलापतिः ।  
‘ स्वस्था भवत देवाश्च सर्वे यूयं गतज्वराः ॥ ३४

हत एव दुरात्मा च रावणो लोककण्टकः ।  
अचिरात् वन्निष्यामि सत्यमित्यवधार्यताम् ॥ ३५

शङ्करस्य शेषाचलाऽऽभेयदिगवस्थानप्राप्तिः

इत्युक्त्वा कमलानाथः प्राहेशानं शुचिस्मितः ।  
'किमागनकार्यं ते वद शङ्कर सत्वरम्' ॥ ३६

इति पृष्ठः शिवः प्राह स्वामिन्नित्यच्युतं वचः ।  
'स्वामिंस्त्वया सदा यत्र स्थायते वेङ्कटेश्वर ! ॥ ३७

तलैव देव स्थातव्यं मया वृषगिरीश्वर ।  
इति पृष्ठः पुनः प्राह नीलमेघसमद्युतिः ॥ ३८

'आकल्पं च वसामीह वेङ्कटाह्वयभूधरे ।  
त्वमप्यत्र मृडानीश महादेव वस प्रभो ॥ ३९

उपत्यकायामस्याद्रेः शोचिष्केशादिशीश्वर ! ।  
इत्यादिश्य नृपं प्राह कोसलाधिपमीश्वरः ॥ ४०

'चिरकालेन दृष्टोऽसि किं ते कार्यं वद प्रभो ।  
केशवेनैवमुक्तस्तु प्राह राजा मनोगतम् ॥ ४१

भगवन्तमुद्दिश्य दशरथकृतपुत्रप्रार्थना

स्वामिन् पुरुषशार्दूल ! त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत ! ।  
राज्यं भुक्तं चिरं दत्तं ब्राह्मणेभ्यो महद्भनम् ॥ ४२

अनुभूतं सुखं सर्वं जिताश्च रिपवस्तथा ।  
नानुभूतं सुखं पुत्रजन्मसम्भवमच्युत ! ॥ ४३

न लोकः पुत्रहीनस्य वदन्तीति द्विजातयः ।  
देहि मे पुत्रमोजिष्ठं लोकविख्यातपौरुषम् ॥ ४४

- इति पृष्टः पुनः प्राह राजानं वेङ्कटाधिपः ।  
 'राजंस्त्वया कृतं पूर्वं दुस्सहं बहु दुष्कृतम् ॥ ४५  
 किं कर्तव्यं मया राजन् ! ' इत्युक्तः प्राह वै नृपः ।  
 'स्वामिन्नभ्युदिते सूर्ये तमस्तिष्ठेत्कथं प्रभो ! ॥ ४६  
 'क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे' ।  
 इति वक्ति श्रुतिः स्वामिन् त्वयि दृष्टे न चास्त्यघम् ॥ ४७  
 इत्यतो मम गोविन्द ! कथं पापं त्वयि स्थिते' ॥  
 प्राह चैवं नृपेणोक्तः श्रीशः पापविनाशनः ॥ ४८  
 'राजन् ! प्रीतो भवद्भक्त्या चतुःश्लोक्या त्वदीयया ।  
 स्तुत्या च परमप्रीतः तव दास्ये वरोत्तमम् ॥ ४९  
 यस्मात्प्रीत्या चतुःश्लोकी त्वयोक्ता मम भूपते ! ।  
 तस्मात्तु तव पुत्राश्च चत्वारोऽमितविक्रमाः ॥ ५०  
 शूराश्च बलवन्तश्च मतुल्यबलविक्रमाः ।  
 दत्ता राजंस्त्वयाऽयोध्यां गत्वा यष्टव्यमादरात्' ॥ ५१  
 इत्युक्तः सोऽथ राजेन्द्रो बभूव पुलकाङ्कितः ।  
 स्तुत्वा नत्वा तु बहुधा देवदेवं रमापतिम् ॥ ५२  
 प्रदक्षिणं ततः कृत्वा पुनः स्तुत्वा प्रणम्य च ।  
 आमन्त्र्य शेषशैलेन्द्रनिलयं सपुरोहितः ।  
 ययौ दशरथः श्रीमान् अयोध्यां सह बन्धुभिः ॥ ५३

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृत-  
 कुशलन्युयोगादिवर्णनं नाम एकोनपञ्चाशोऽध्यायः



### भगवन्तं प्रति चतुर्मुखकृतप्रार्थनादिः

श्रीसतः —

- इति दत्त्वा वरं तस्मै नृपाय कमलापतिः ।  
 कमलासनमाहूय वचनं चेदमब्रवीत् ॥ १
- ‘ब्रह्मन् कालस्त्वतिक्रान्तः विमर्शं स्वीयते त्वया ।  
 विमर्शीष्टं वद क्षिप्रं सत्यं दास्यामि तद्वरम्’ ॥ २
- इति पृष्टः पुनः प्राह ब्रह्मा लोकपितामहः ।  
 ‘यदि दास्यसि विश्वेश ममाभीष्टं रमापते ! ॥ ३
- त्वमेवम्भूत एवात्र सर्वप्रत्यक्षगोचरः ।  
 केवलं दर्शनादेव सर्वेषां सर्वदः सदा ॥ ४
- भगवन्नर्हसि स्थातुं लोकानुग्रहकाम्यया ।  
 कलौ युगे जनाः सर्वे शिश्वोदरपरायणाः ॥ ५
- न जानन्ति नरा धर्ममधर्मं वाऽपि भूतले ।  
 प्रायशो दुर्बलाः सर्वे रोगिणः काममोहिताः ॥ ६
- पशुप्राया मनुष्या हि न जानन्त्यात्मनो हितम् ।  
 प्रायशः पापिनामेव युगे जन्म कलौ हरे ॥ ७
- क्षुत्तृष्णोपहताः सर्वे न त्वां जानन्ति विश्वेन ।  
 ते यद्युपेक्षिताः सर्वे नरका रौरवादयः ॥ ८
- न पर्याप्ताः पुनः सृज्या नरकास्ते सहस्रधा ।  
 भवेयुर्वेङ्कटाग्रीश दयालोलहृद्दम्बुज ! ॥ ९
- तेषामनुग्रहार्थाय स्थातव्यं भवता हरे !’ ।  
 ब्रह्मणाऽभ्यर्थितस्त्वेवं कृपानिधिरुवाच ह ॥ १०

- ‘ब्रह्मन्नभ्यर्थितं त्वेतत् महद्वरमनुत्तमम् ।  
सर्वजीवदयालुत्वमहो तव चतुर्मुख ! ॥ ११
- अनेन सुतरां प्रीतस्तव दास्ये यथेप्सितम् ।  
स्थास्याम्यतैव सर्वेषां प्रत्यक्षः सर्वकामदः ॥ १२
- आकल्पं च वसामीह श्रिया सार्धं चतुर्मुख ! ।  
शेषेण गरुडेनैव विष्वक्सेनेन सर्वदा ॥ १३
- भूम्या च नीलया सार्धं सर्वैः पारिषदैः सह ।  
ये केचिदत्र कुर्वन्ति तपांसि विविधानि च ॥ १४
- तेषां तपांसि सिद्धयन्तु सुलभेनाऽशु वर्त्मना ।  
तथैव यज्ञकर्माणि योगाश्चापि च योगिनाम् ॥ १५
- स्वामिपुष्करिणी चेयं ब्रह्मलोकपितामह ! ।  
तीर्थानां स्वामिभूतत्वादुच्यतेऽन्वर्थनामतः ॥ १६
- यानि कानि च तीर्थानि गङ्गादीनि महीतले ।  
तानि सर्वाणि चोत्पन्नान्यस्मात्तीर्थात् पितामह ! ॥ १७
- ऐरंमदतटाकश्च वैकुण्ठे यस्तु तिष्ठति ।  
स एव गीयते चात्र स्वामिपुष्करिणीति च ॥ १८
- अत्र स्नानेन नश्यन्ति महापातककोटयः ।  
उपपातकसङ्घाश्च रहस्ये च प्रकाशतः ॥ १९
- कृतानि यानि पापानि नश्यन्त्येव न संशयः ।  
यं यं कर्म समुद्दिश्य स्नात्यस्मिस्तु सरोवरे ॥ २०
- तं तं काममवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।  
काणः खञ्जः कृशः कुब्जो मूको बधिर एव च ॥ २१
- अनपत्यो दरिद्रो वा कुष्ठी वा व्याधिपीडितः ।  
मयि चानुत्तमां भक्तिं कृत्वा मद्दर्शनोत्सुकः ॥ २२



आयाति चेद्यथाकामं प्राप्नोति हि न संशयः ।  
 अद्यप्रभृति निश्शंका जनाः कमलसम्भव ! ।  
 विचरन्तु दिवारात्रं निर्बाधाश्च महीतले ' ॥

२३

### श्रीवेङ्कटाद्रिनिःकटस्थासुरवधार्थं चक्रप्रेक्षणम्

इत्थमाश्वास्य दुर्दैत्यविनाशाभ्यर्थिनं विधिम् ।  
 सुदर्शनं हेतिराजं समाहूयान्वशात्तदा ॥ २४  
 'सुदर्शन सहस्रार ज्वालामालाविभीषण ! ।  
 आगच्छ त्वं महाभाग शृणु मद्रचनं शुभम् ।  
 कुमुदादिगणैः सार्धं सर्वायुधपरिच्छदैः' ॥ २५  
 इतो निर्गत्य सहसा यत्न दैत्या महाबलाः ।  
 यक्षराक्षसनागाश्च दुष्टा ब्राह्मणहिंसकाः ॥ २६  
 ये चोरा वसुहर्तारो देशोपप्लवकारकाः ।  
 यत्र यत्र गिरौ वाऽपि देशे वा काननेऽपि वा ॥ २७  
 परितोऽस्य गिरेस्त्वं तु गत्वा दुष्टान् महाबलान् ।  
 निश्शेषं भस्मसात्कृत्वा देशं च निरुपद्रवम् ॥ २८  
 कृत्वा तु तत्र तत्रापि जनरक्षां विधाय च ।  
 आगच्छ त्वं महाभागे ' त्याज्यसश्चक्राडपि ॥ २९  
 विनिर्गत्य गिरेस्तस्मात् दैत्यसङ्घान् सुदुर्जयान् ।  
 अन्यानपि जनान् हत्वा देशबाधाविधायकान् ॥ ३०  
 क्षणेन सर्वान् दुष्टौघान् निश्शेषं भस्मसात्तदा ।  
 कृत्वाऽऽगच्छन्महाचक्रं सर्वेषां पश्यतां हरेः ॥ ३१

सन्निधौ तत्समागत्य व्यजिज्ञपदिदं वचः ।	
‘निहता दुष्टदैत्यास्ते प्रतापाच्चक्रिणस्तव’ ॥	३२
इति तस्मिन् समायाते चक्रराजे हरिः स्वयम् ।	
पुनराह सुरश्रेष्ठं ‘कर्तव्यं किमितः प्रभो ! ॥	३३
वदे’ति पृष्टः प्राहासौ ब्रह्मा हर्षसमाकुलः ।	
‘बिभेमि वक्तुं देवेश प्रसन्नमुखपङ्कज’ ॥	३४
इत्युक्तोऽथ हरिः प्राह ‘मा भैषीस्त्वं वदस्व तत्’ ।	
इत्याश्वस्तः पुनः प्राह ब्रह्मा ब्रह्मविदग्रणीः ॥	३५

### श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सवघट्टः

‘ध्वजारोहणपूर्वश्च कार्यस्तव महोत्सवः ।	
स च त्वया महाभूमन् ! अङ्गीकार्यः श्रिया सह’ ॥	
इति ब्रुवन् विधिस्तेन चोदितः ‘क्रियता’ मिति ॥	३६
विधिश्चकार मुनिभिः वैखानसमुखैः सह ।	
उत्सवं ध्वजपूर्वं च कन्यामासं गते रवौ ॥	३७
आहूताश्च सुराः सर्वे सर्वाभ्यो दिग्भ्य एव च ।	
आगता विबुधाः सर्वे राजानः पुण्यकृत्तमाः ॥	३८
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चान्त्यजनास्तथा ।	
नानाजातिसमुत्पन्नाः समुद्रवनवासिनः ॥	३९
अङ्गवङ्गकलिङ्गेषु गौडकाश्मीरसिन्धुषु ।	
चोलमालवपाण्ड्येषु कोसलेषु कुशेषु च ॥	४०
वसन्तस्ते जनाः सर्वे सकुटुम्बाः समाययुः ।	
घुष्यन्तः सङ्घशश्चोच्चैः “गोवि” न्देति पुनः पुनः ॥	४१

‘ योगिनामप्यदृश्योऽसौ दयया सर्वजन्तुषु ।	
सर्वप्रत्यक्षतां यातः श्रीनिवासः परात्परः ॥	४२
अङ्गीचकार विधिना निर्मितञ्च महोत्सवम् ।	
उत्सवे दर्शनं पुण्यं श्रीनिवासस्य शार्ङ्गिणः ’ ॥	४३
इति ब्रुवन्तस्ते सर्वे मध्येमार्गं जनास्तथा ।	
चक्रुः पानीयशालाश्च विविधान्नगृहाणि च ॥	४४
वाहनानि च वासांसि छत्राप्याभरणानि च ।	
पादुकाश्च जनाः सर्वे दधतः सर्वदैव हि ॥	४५
नृत्यन्तो वादयन्तश्च गायन्तश्च परस्परम् ।	
आजम्मुः सेवितुं सर्वे वेङ्कटाह्वयभूधरम् ॥	४६
ब्रह्मा च कारयामास समागतजनान् प्रति ।	
विश्वकर्माणमाह्वय समर्थं शिल्पिनां वरम् ॥	४७
अन्नशालाश्च विविधाः प्रपाश्च बहुधा तदा ।	
उपकार्याश्च बहुधा कारितास्तत्र तत्र वै ॥	४८
गिरेश्च परितस्तत्र नगराणि चकार ह ।	
विश्वकर्मा तु विधिक्त् मनोज्ञानि पुराणि च ॥	४९
पुरे पुरे च विविधा वीथयः पण्यवीथयः ।	
शोभन्ते गणिकानां च वणिजां पुण्यसम्पदः ॥	५०
तत्र तत्र च शोभन्ते मुक्ताविद्रुमराशयः ।	
सर्वे च धर्मनिरताः सर्वे च धनिनस्तदा ॥	५१
सेवार्थमागतानां तु ददुर्वस्त्राप्यनेकदाः ।	
सन्नानि च ददुः सर्वे पानीयान्नं च सर्वदा ॥	५२
ब्रह्मा च देवदेवस्य चकार परमोत्सवम् ।	
जगुः कलं च गन्धर्वान् ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥	५३

भेरीमृदङ्गमुरजाः पणवानकगोमुखाः ।

ढक्काश्शरनिस्साणवाद्यभेदास्त्वनेकधा ॥

५४

वादयामासुरव्यग्रं नादयन्तो दिशो दश ।

विमानं परितस्तत्र वीथयो भान्ति सर्वतः ॥

५५

विश्वकर्मा स्वसामर्थ्यं प्रकटीकृतवांस्तदा ।

तुङ्गप्रासादसम्बाधं विचित्रगृहभित्तिकम् ॥

५६

चन्द्रकान्तशिलोपेतं सूर्यकान्तसमन्वितम् ।

अनेकरत्नखचितं तप्तहाटकनिर्मितम् ॥

५७

तुङ्गध्वजसमोपेतं रत्नतोरणसंयुतम् ।

जलसिक्तं पुष्पकीर्णं दिव्यधूपसुधूपितम् ।

चकार नगरं तत्र गन्धर्वनगरं यथा ॥

५८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवन्तं प्रति चतुर्मुख-  
कृतप्रार्थनादिवर्णनं नाम पञ्चाशोऽध्यायः



अथ एकपञ्चाशोऽध्यायः



श्रीवेङ्कटेशमहोत्सववैभववर्णनम्

श्रीसूतः—

ब्रह्मा च वेङ्कटेशस्य दिव्योत्सवादिनेषु वै ।

नैवेद्यं बहुधा चक्रे घृतसूपगुडोत्तरम् ॥

१

गुडान्नं पायसान्नञ्च मुद्गान्नञ्च तिलौदनम् ।

शाल्यन्नं कूसरान्नञ्च मरीच्यन्नं तथैव च ॥

२

गोधूमान्नञ्च मापान्नं मधुरान्नं घृतोत्तरम् ।	
एवं बहुविधान्नञ्च फलानि विविधानि च ॥	३
व्यञ्जनानि विचित्राणि मनस्तोषकराणि च ।	
दिव्यान्यमृतकल्पानि सुस्वादुरसवन्ति च ॥	४
उच्चैश्श्रवसमश्वञ्च गजमैरावतं तथा ।	
अनन्तं नागराजञ्च गरुडञ्च त्रयीमयम् ॥	५
एकैकं समधिष्ठाय वेङ्कटाद्रिशिखामणिः ।	
दिने दिने सुरान्त्सर्वान् उत्सवार्थं समागतान् ॥	६
अनुजग्राह रथ्यायामटन् भूम्या श्रियाऽन्वितः ।	
समस्तवाद्यधोषैश्च गजाश्चैः समलङ्कृतैः ॥	७
चित्तध्वजपताकाभिः चित्रचामरराजिभिः ।	
सहितो नृत्तवादित्रैः वरनारीगणैः सह ॥	८
कविभिर्वन्दिमिश्चैव गायकैः पाठकैस्तथा ।	
नित्यं वैदैः स्तूयमानः श्रीनिवासः परात्परः ॥	९
प्रातर्देवगणैः कैश्चिदुपदाभिश्च पूजितः ।	
तथैव सायं देवैश्चोपदया पूजितो हरिः ॥	१०
ववृधे लोकवृद्धार्थमुत्सवे ब्रह्मनिर्मिते ।	
जुहुवुर्यागशालायां मुनयो वीतकल्मषाः ॥	११
विधिवत्स्थापयामासुः पूर्णकुम्भान् मनोहरान् ।	
दिग्बलिं विधिवच्चक्रुः वैखानसतपोधनाः ॥	१२
श्रीनिवासोत्सवादिनं पुण्यं पापप्रणाशनम् ।	
इत्यागता जनाः सर्वे चक्रुर्दानान्यनेकशः ॥	१३
अन्नदानं स्वर्णदानं वस्त्रदानं तथैव च ।	
गृहदानं महापुण्यमिति मत्वा महाजनाः ॥	१४

इष्टकादारुमिश्रैव निर्मितं हर्म्यसंयुतम् ।	
ददुः प्रत्येकशो वेष्ट्म सोपस्करमलङ्कृतम् ॥	१५
राजानः स्थापयामासुः विप्रेन्द्रांस्तत्र भूधरे ।	
वैश्यानन्यांश्च मनुजान् स्थापयामास वै विधिः ॥	१६
अतैव वासः कर्तव्यः सर्वदेति विनिश्चिताः ।	
वासं चक्रुश्च ततैव विप्राद्या मानवाः सदा ॥	१७
एवं श्रीवेङ्कटेशस्य वर्तमाने महोत्सवे ।	
कदाचित्स्यन्दनं दिव्यं नानारत्नविराजितम् ॥	१८
तप्तजाम्बूनदमयमुच्छ्रितध्वजशोभितम् ।	
नानाकुसुममाल्यैश्च मुक्तामाल्यैश्च शोभितम् ॥	१९
हैमवस्त्रवितानाढ्यं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ।	
विमानं पुष्पकं कान्त्या स्मारयन्तं मनोहरम् ॥	२०
रथं तं समधिष्ठाय श्रीभूमिसहितः परः ।	
श्रीनिवासः स्फुरद्भक्तिरिटमकुटोज्ज्वलः ॥	२१
ब्रह्मादिदेववृन्दैश्च सेव्यमानस्तपोधनैः ।	
परिक्रम्य महावीथीं राजवीथीं श्रियोज्ज्वलम् ॥	२२
पुनरागत्य तं दिव्यं वितानासनशोभितम् ।	
आस्थानमण्डपं तत्र मणिस्तम्भशतैर्युतम् ॥	२३
हिरण्मयमधिष्ठाय स्वयम्भुवमकल्मषम् ।	
आहूय वाचा भगवान् अब्रवीन्मधुरां गिरम् ॥	२४

महोत्सवसेवाफलदानफलप्रशंसादिकम्

श्रीभगवान्—

‘ब्रह्मन् ! प्रीतोऽस्मि नितरां त्वद्भक्त्या चोत्सवेन च ।

शृणुध्वं मुनयो देवा राजानो योगिनश्च ये ॥

वर्षे वर्षे तु मासेऽस्मिन् कन्याराशिं गते रवौ ।	
ये केचिदत्र कुर्वन्ति ब्रह्मवल्लभोत्सवं मम ॥	२६
ते यान्ति ब्रह्मणो लोकं भूमौ कामानवाप्य च ।	
इममुत्सवमुद्दिश्य सेवार्थं यस्तु वासतः ॥	२७
क्रमते पदमेकं तु गन्तुं शेषगिरिं प्रति ।	
पदस्यैकस्य तस्यैव फलं भवति मत्पदम् ॥	२८
ऐहिकं तु फलं तस्य ह्यवान्तरफलं भवेत् ।	
सेवन्ते ये हि मामस्मिन्नुत्सवे ब्रह्मकल्पिते ॥	२९
सेवन्ते तान् महीपालाः स्नेहाद्द्युश्च वाञ्छितम् ।	
प्रपामुत्सवकाले हि ये तु कुर्वन्ति देहिनः ॥	३०
मच्चित्तं तान्त्समुद्दिश्य शीतलं भवति क्षणात् ।	
अन्नदानं प्रशस्तं स्यात् विशेषेण महोत्सवे ॥	३१
येऽपि चान्नं प्रयच्छन्ति तेषां सप्तकुलावधि ।	
अन्नं बहुविधं चित्तं दीयते हि मया विधे ! ॥	३२
ते तु भुक्त्वा बहून् भोगान् मया दत्तानभीप्सितान् ।	
अन्ते हि मत्पदं यान्ति स्वर्गं भुक्त्वा तु मय्यतः ॥	३३
काणान्धपङ्गुभूकानामन्येषां विक्लाङ्गिनाम् ।	
अन्नवस्त्रहिरण्यदिदातृणां सम्पदः सदा ॥	३४
अनायासेन सिद्धयन्ति मच्छन्दात् पद्मसम्भव ! ।	
ये हि चात्र स्थितिं नित्यं वाञ्छन्ति मनुजा भुवि ॥	३५
तेषामिहैव दास्यामि सम्पदं सन्ततिं तथा ।	
तारतम्यवशाद्भक्तेः तेषां सिद्धयन्ति सम्पदः ॥	३६
जननं मरणं येषां स्थितिर्वाऽस्मिन्महीधरे ।	
तेषां मुक्तिः कतस्या हि ज्ञानसाध्या हि दुर्लभा ॥	३७

श्रीवाराहपुराणे प्रथमः ५२ तमोऽध्यायः ८१

यानि कानि च दानानि सन्ति शास्त्रे दितानि च ।  
तानि सर्वाणि दानानि क्रियमाणानि चेदिह ॥ ३८  
ऐहिकञ्च फलं दत्त्वा स्वर्गमीप्सितमेव वा ।  
मत्पदञ्च शरीरान्ते ददाम्येषां न संशयः ॥ ३९  
गिरेश्च परितो भूमौ ग्रामान्वा पत्तनानि वा ।  
करेति श्रद्धया राजा ब्राह्मणो योऽपि कोऽपि वा ॥ ४०  
स वै राज्यश्रियं भुक्त्वा भुक्त्वा स्वर्गादिकं चिरम् ।  
मत्सायुज्यं व्रजत्येव नात्र कार्या विचारणा ॥ ४१  
'पुण्यं क्षेत्रमिदं भूमौ स्थातव्यं हि सदाऽत्र तु' ।  
इति बुद्ध्याऽत्र वसतां गृहक्षेत्रादिकं तु ये ॥ ४२  
ददतीह नरास्ते वै लब्ध्वा वासफलानि च ।  
प्राप्नुवन्ति पुनश्चैव मामकञ्च पदं ध्रुवम् ॥ ४३  
अत्र ये वसतां प्राज्ञा विद्यादानमनुत्तमम् ।  
कुर्वन्ति तेषां विदुषां कीर्तिस्त्रैलोक्यगामिनी ॥ ४४  
तद्वन्धुबन्धुतद्वन्धुतद्वन्धुजनबान्धवाः ।  
सर्वेऽपि तत्फलं लब्ध्वा मेदन्ते दिवि देवताः ॥ ४५

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटेश्वरमहोत्सववैभववर्णनं  
नाम एकपञ्चाशोऽध्यायः

अथ द्विपञ्चाशोऽध्यायः

वेङ्कटाद्रौ पुण्योद्याननिर्माणादिप्रशंसा

श्रीसूतः ---

उक्त्वा चैवं वेङ्कटेशः पुनः प्रीत्या जगाद च ॥ १



श्रीभगवान्—

- ‘शृणुध्वं विबुधा यूयमन्यत्किञ्चिद्ब्रवीमि वः ।  
 ये हि चात्र प्रकुर्वन्ति बृन्दावनमनुत्तमम् ॥ २
- उद्यानानि च पुण्यानि नानावृक्षयुतानि च ।  
 पुष्पोद्यानानि कृत्वा च तत्पुष्पैरर्चयन्ति माम् ॥ ३
- दलस्यैकस्य दिव्यानि वत्सराण्यर्बुदानि च ।  
 स्वर्गे भुक्त्वा परान् भोगान् अन्ते यान्ति च मत्पदम् ॥ ४
- अवान्तरफलं तेषामीप्सितं हि महीतले ।  
 न च सन्ततिविच्छेदः तेषां पुण्यकृतां भुवि ॥ ५
- फलपुष्पाणि पत्राणि यावन्ति प्रतिवत्सरम् ।  
 उद्भवन्ति तथा कामाः तेषामपि महीतले ॥ ६
- प्रत्यहं मम नैवेद्यं यावत्प्रस्थचतुष्टयम् ।  
 सव्यञ्जनं कल्पयन्ति ते हि पुण्यतमा भुवि ॥ ७
- ब्रह्मेन्द्रलोकप्रमुखाः तैः सुखेन जिता नरैः ।  
 तदीयदर्शनात्सुप्तो भवन्ति महिमादयः ॥ ८
- तेषामैश्वर्यसम्पत्तौ वक्तव्यं नावशिष्यते ।  
 अन्ते यान्ति परं धाम पुनरावृत्तिवर्जितम् ॥ ९
- भूषणं स्वर्णखचितं वज्रमाणिक्यसंयुतम् ।  
 प्रयच्छन्ति च ये पुण्या मामुद्दिश्य महीतले ॥ १०
- रूपलावण्यसम्पन्ना विद्यावन्तश्चिरायुषः ।  
 भवन्ति पुत्रास्तेषाञ्च मच्छन्दात्सम्पदोऽपि च ॥ ११
- पद्मकङ्कहारतुलसीचम्पकैर्दामकारिणः ।  
 मदर्चननिमित्तं ये प्रत्यहं श्रद्धयाऽन्विताः ॥ १२

- लक्ष्म्या समेतस्तेषां हि गृहे वत्स्याम्यहं सुराः ।  
 तेषां येऽपि च साहाय्यं कुर्वते श्रद्धयाऽन्विताः ॥ १३
- तेषामपि सदा सम्पत्प्रदोऽहं कमलासन ! ।  
 भोः सुरा यं गिनः सर्वे येऽपि चाल समागताः ॥ १४
- युष्माकं यद्यदिष्टं तत् दास्येऽहं सकलं वरम् ।  
 पुत्रान् पौत्राञ्छ्रियं वाऽपि राज्यमारोग्यमेव वा ॥ १५
- आयुः कीर्तिञ्च यच्चान्यत् मत्तो वाञ्छति यः पुमान् ।  
 तत्तद्दाम्यहं तस्मै सत्यं सत्यं न संशयः ॥ १६
- बहुनेह किमुक्तेन ये चात्र वसतां पुनः ।  
 कुर्वन्ति चानुकूल्यं वै ते मे प्रियतरा मताः ॥ १७
- निवसद्भ्योऽल मनुजा द्रुहन्ति विबुधाश्च ये ।  
 असुरा राक्षसा यक्षाः पिशाचाः प्राणिनोऽपि वा ॥ १८
- तानहं नाशयिष्यामि सपुत्रपशुचान्धवान् ।  
 नियतोऽनियतो वाऽपि वेङ्कटाद्रिमिमं जनः ॥ १९
- व्याजाद्वा यः समारुह्य स्नात्वा स्वामिसरोजले ।  
 नमस्यति च मां सोऽपि सक्रामः सर्वथा सुराः ॥ २०
- कूलङ्कषमहौदार्यगुणक्षीरपयोनिधिः ।  
 इति श्रीवेङ्कटाधीशः तेभ्यो दत्त्वा वराण्यहो ! ॥ २१
- मेरीमृदङ्गपणवमङ्गलस्वनसंयुतः ।  
 पुष्पवृष्ट्या युतः श्रीमान् श्रीभूमिसहितस्तदा ।  
 विवेशान्तर्महद्दिव्यं विमानं रत्नजोरणम् ॥ २२
- ब्रह्मादयो देवगणाः सम्भूय प्रीतमानसाः ।  
 जयेति चास्तुवस्तेन घोषेणाऽऽपूरितं जगत् ॥ २३

ब्रह्माऽपि वेङ्कटेशस्य दिव्यमङ्गलसम्भ्रमम् ।

ऋषिभिः सह धर्मात्मा यथाशास्त्रमकारयत् ॥

२४

### महोत्सवावभृथस्नानप्रशंसा

ततः श्रवणनक्षत्रे देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।

चकारावभृथं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ॥

२५

स्वामिपुष्करिणीपुण्यसलिले लोकपूजिते ।

सस्नुर्ब्रह्मादिदेवाश्च मुनयो योगिनोऽपि च ॥

२६

राजानश्च तथा विप्राः सर्वे चैव नरास्तदा ।

तत्र स्नात्वा तु योगीन्द्रः सनकः सर्ववित् स्वयम् ॥

२७

सर्वेषां पुरतश्चेदमुवाच वचनं तदा ।

‘सर्वे शृण्वन्तु मद्वाक्यमुद्धृत्य भुजमुच्यते ॥

२८

ज्ञातञ्च ध्यानयोगेन सम्यक्छास्त्रैश्च चिन्तितम् ।

समस्ततीर्थभूतस्य देवदेवस्य चक्रिणः ॥

२९

यः स्नात्यवभृथे पुण्ये तस्य तत्पूर्वजन्मसु ।

अनन्तेषु कृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ’ ॥

३०

इति श्रुत्वा महादेवः ‘तत्तथैवे’ ति चाब्रवीत् ।

‘एवमेवे’ ति भगवान् विष्णुरप्यब्रवीत्तदा ॥

३१

प्रशंससुस्तदा देवाः स्वामिपुष्करिणीं तदा ।

विविधैर्दिव्यकुसुमैः राशीमतैः सुगन्धिभिः ॥

३२

उपचारैरनेकैश्च वेदघोषैः सुखश्रवैः ।

नृत्यगीतादिवादित्रैः दिव्यमङ्गलानिस्वनैः ॥

३३

इष्ट्वा प्रसूनयागाञ्च तोषयित्वा जनार्दनम् ।

प्रणाममकरोद्ब्रह्मा सर्वदेवैः समन्वितः ॥

३४

ततः प्रीतिसमायुक्तो ब्रह्मबल्लभोत्सवेन सः ।  
 उवाच च विधिं विष्णुः ' ब्रह्मन् ! प्रीतोऽस्मि साम्प्रतम् ॥ ३५  
 एतत्प्रीतिसमं किञ्चित् दातुं तव न विद्यते ।  
 ब्रह्मन् ! यद्वाऽथ किं दास्यं जगत्सृष्टिपटो विधे ! ॥ ३६  
 त्वमेवाहमहं त्वं हि यद्यस्त्यन्यद्वदस्व तत् ।'  
 इति पृष्ठोऽवदद्ब्रह्मा ' स्वामिन् यद्यस्ति ते कृपा ॥ ३७  
 कृतार्थोऽस्मि वरं नान्यत् लोकस्यानुग्रहं विना ।  
 एवमेव हरे स्वामिन् दद चेप्सितमर्थिने ॥ ३८  
 स्थातव्यं भवता विष्णो ! लोकानुग्रहकाम्यया ।  
 इदमेव ममाभीष्टं याचनीयं पुनः पुनः ' ॥ ३९  
 इति पृष्ठो रमाधीशः ' तथैवा ' स्त्विति चावदत् ।  
 उक्त्वा चैवं पुनः प्राऽह ब्रह्माणममिजौजसम् ॥ ४०

### ब्रह्मादीनां स्वावासगमनार्थं भगवदभ्यनुज्ञा

' ब्रह्मंस्त्वं सृष्टिकार्येषु नित्युक्तः पूर्वमेव हि ।  
 गत्वा त्वदीयलोकञ्च कुरु सृष्टिं सुखी भव ॥ ४१  
 ' इन्द्र गच्छ स्वकं लोकं शाधि राज्यं स्वकीयकम् ' ।  
 ' पिनाकपाणे भूतेश लोकं गत्वा त्वदीयकम् ॥ ४२  
 उमया विहरस्व त्वमवाप्तसकलेप्सितः ' ।  
 ' अगस्त्य मुनिशार्दूल शिष्यैः सह तपोधन ॥ ४३  
 स्वमाश्रमं प्रविश्यैव कुरु नित्यान्यतन्द्रितः ' ।  
 ' योगिनश्च यथायोग्यं गच्छताऽसमुत्तमम् ॥ ४४  
 ध्यानामृतसुतृप्तैश्च स्थातव्यं योगिभिश्चिरम् ' ।  
 इति श्रीवेङ्कटाधीशः सर्वानुत्सवसङ्गतान् ॥ ४५

तत्तत्स्थानं समुद्दिश्य विसृज्य प्रीतिपूर्वकम् ।

अन्तर्विमानं श्रीभूमिसहितः प्रविवेश ह ॥

४६

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाद्रौ पुष्पोद्यान-

निर्माणादिप्रशंसावर्णनं नाम द्विपञ्चाशोऽध्यायः



अथ त्रिपञ्चाशोऽध्यायः



श्रीवेङ्कटाद्रीशवैभवाप्रशंसा

मुनयः —

‘ भगवन् वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञानसुनिष्ठित ! ।

श्रुतं सूत ! महाश्चर्यमिहाऽख्यानमनुत्तमम् ॥

१

वेङ्कटाद्रिप्रभावोऽयमीदृशः पापनाशनः ।

तत्रैव भगवत्प्रीतिरीदृशी निस्तुल्य खलु ॥

२

वेङ्कटेशो महाश्चर्यदिव्यचारित्रभूषणः ।

आश्चर्यं तस्य चारित्रमद्भुतं परमाद्भुतम् ॥

३

अदृष्टाश्रुतपूर्वं तत् कुत्राऽपि जगतीतले ।

शृण्वतामिदमाख्यानं नास्ति तृप्तिस्तपोधन ॥

४

विसृज्य विबुधान् विणुरकरोत्किं रमापतिः ।

विसृष्टास्तेन देवाश्च विम्रकुर्वन् मुने वद ’ ।

इति पृष्ठोऽवदत्सूतः ‘ श्रूयता ’ मिति तान् मुनीन् ॥

५

ब्रह्मादीनां स्वादासगमनम्

श्रीसूतः —

आरुह्य हंसं ब्रह्मा तु स्तूयमानः सुरैस्तथा ।

सत्यलोकं जगामाऽऽशु सर्वलोकपितामहः ॥

- ६

दिव्यं विमानमास्थाय सहस्राक्षः पुरन्दरः ।	
गन्धर्वैर्गीयमानश्च प्रविवेशामरावतीम् ॥	७
नन्दिकेश्वरमुख्यैश्च गणैः प्रमथसंज्ञकैः ।	
सहितः पार्वतीनाथः पर्वतं वेङ्कटाभिधम् ॥	८
कुर्वन् प्रदक्षिणं पश्यन् वस्तुं स्थलमनुत्तमम् ।	
आग्ने-यां दिशि चाद्राक्षीत् वेङ्कटाद्रेः सरः शिवम् ॥	९
तत्र दृष्ट्वा सरः पुण्यं कापिलं लोकपावनम् ।	
‘रमणीयमिदं स्थानं स्थातव्यमुमया सह ॥	१०
अत्रैव’ वेति विनिश्चित्य जगाम रजताचलम् ।	
योगिनः सनकाद्याश्च पापनाशनतीरतः ॥	११
अतिष्ठन् परमप्रीताः काननेषु महत्सु वै ।	
ऋषयः सप्त तत्रैव दिशि चोत्तरपूर्वतः ॥	१२
फल्गुनीझरतीरे तु स्वाश्रमेष्ववसन् सुखम् ।	
फाल्गुन्यां पूर्णिमायां तु तत्तीरे कमलालया ।	
अरुन्धतीतपःप्रीता प्रादुरासीत्पुरा किल ॥	१३

### फल्गुनीतीर्थमाहात्म्यम्

तस्यै दत्त्वा वरं चेष्टं प्रार्थिता च तया रमा ।	
ददौ च सरितो नाम फल्गुनीशब्दपूर्वकम् ॥	१४
‘फाल्गुने मासि राकाऽऽख्ये फल्गुनीतारके तिथौ ।	
स्नास्यन्त्यत्र तु ये केचित् जनास्तेषामहं सदा ॥	१५
प्रीतो गृहे निवत्स्यामि सर्वकामफलप्रदा ’ ।	
इति दत्त्वा वरं तस्यै पुनः श्रीकमलासना ।	
अन्तर्धानं गता तत्र तत्तीरे मुनयोऽवसन् ॥	१६

देवाः केचन सम्भूय विनिश्चित्य विचार्य च ।	
‘ अतैव वर्तते श्रीशः तस्मादतैव सर्वदा ।	
सेवमाना वेङ्कटेशं स्थास्याम ’ इति निश्चिताः ॥	१७
उत्तरे स्वामितीर्थस्य देवनद्यास्तथोत्तरे ।	
कृत्वाऽऽश्रमं सुखं तत्र न्यवसंस्ते दिवौकसः ॥	१८

### जाबालि तीर्थमाहात्म्यम्

तत उत्तरदिग्भागे सरसः पश्चिमे तटे ।	
जाबालिः स्वाश्रमे शिष्यैः न्यवसद्विगतश्रमः ॥	१९
केचिद्गिरौ स्थिताश्चैव नित्यमीशं नमन्ति च ।	
गिरैः परिसरे केचित् न्यवसन्नित्यमेव हि ॥	२०
पुनरप्यागमिष्याम इति जम्मु परे तदा ।	
अगस्त्यो भगवांस्तत्र श्रीमद्वेङ्कटनायकम् ॥	२१
अर्चयन् विविधैः पुष्पैः कृत्वा चोद्यानमुत्तमम् ।	
चिरकालं महाभाग सह शिष्यैर्महामुनिः ॥	२२
पिबन्नानन्दपीयूषं न्यवसद्वेङ्कटाचले ।	
वेङ्कटेशः श्रिया भूम्या समेतः पुरुषोत्तमः ॥	२३
कृतत्रेताद्वारेषु देवराजैर्महीक्षितैः ।	
कल्पितैर्विविधैर्नित्यमुत्सवैः परमाद्भुतैः ॥	२४
पूजितो मोदते नित्यं ददन्निष्टं च याचते ।	
कलौ युगे तटिद्वृत्तिः आस्ते श्रीवेङ्कटाचले ॥	२५
एतद्भूः सर्वमाख्यानं कथितं मुनयोऽमलः ।	
श्रोतुमिच्छत्य भूयोऽपि किञ्चिद्वक्ष्यामि शंसत ।	
इत्युक्त्वा मुनयः सर्वे प्रोक्षुर्नेतद्वचसादा ॥	२६

पूर्वस्यां दिशि सुदर्शनकृतासुरवधप्रकारः

- ‘वेङ्कटेशाभ्यनुज्ञातः चक्रेण निहता रणे ।  
दुष्टदानवसङ्घाश्च दुष्टचोरा महीभृतः ॥ २७
- इत्युक्तं हि त्वया पूर्वं कथं के वा हता मुने ।  
श्रेतुमिच्छा हि महती यद्यस्मासु दया तव ॥ २८
- शंस सूत ! रथाङ्गस्य वृत्तान्तं रणभूमिषु ’ ।  
इति पृष्ठो जगादासौ सूतः परमवार्मिकः ॥ २९

- श्रूयतां चक्रराजस्य चरित्रं परमाद्भुतम् ।  
पराक्रमं सङ्गृहेण वक्ष्यामि शृणुतामलाः ॥ ३०
- न शक्यं विस्तराद्भुक्तं चक्रराजस्य वैभवम् ।  
‘दुष्टान्निर्बह’ येत्युक्तः चक्रराजो महाद्युतिः ॥ ३१
- आज्ञां वेङ्कटनाथस्य धारयञ्छिरसा तदा ।  
निर्जगाम गिरेः शृङ्गात् गन्धर्वगणसेवितः ॥ ३२
- उद्यतायुधशस्त्रैस्तैः महामुसलपाणिभिः ।  
प्रासतोमरहस्तैश्च शूलपट्टसवारिभिः ॥ ३३
- असिचर्मयैः शूरैः बाणशार्ङ्गसिधारिभिः ।  
गजवाजिरथैरुष्टैः युद्धसन्नाहसम्भ्रमैः ॥ ३४
- भेरीमृदङ्गपटहैः ढक्कानिस्साणमर्दलैः ।  
जयव्यञ्जकवाद्यैश्च संयुतोऽयं पदातिभिः ॥ ३५
- राजवेषधरः श्रीमान् सहस्रभुजमण्डितः ।  
किरीटहारमकुटकैः पूराङ्गदशोभितः ॥ ३६



- दंष्ट्राकरालवदनो ज्वलदग्निसमप्रभः ।  
 प्रवर्तकास्त्रसंयुक्तः पञ्चाशच्छतपाणिकः ॥ ३७
- निवर्तकास्त्रसंयुक्तः पञ्चाशच्छतहस्तकः ।  
 पद्मरागसमोद्योतरक्तवस्त्रविभूषितः ॥ ३८
- अनेकतुरगव्यूढं दिव्यं स्यन्दनमास्थितः ।  
 प्राचीं दिशं ययौ पूर्वं महाबोपसमन्वितः ॥ ३९
- तेन घोषेण महता जगत्तूस्तं चराचरम् ।  
 'स्फुटितं वा महद्योम दारिताः किमु पर्वताः' ।  
 इति भूतानि सर्वाणि चुक्रुशुश्च भृशं तदा ॥ ४०
- इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटाद्रिवैभव-  
 प्रशंसादिवर्णनं नाम त्रिपञ्चाशोऽध्यायः

अथ चतुःपञ्चाशोऽध्यायः

सुदर्शनसैन्यासुरसैन्ययोर्षुद्धप्रशंसा

- शेषाचलस्य पूर्वस्थां दिशि केचिन्महानगाः ।  
 आसंस्तत्र वनोद्देशे दस्यवो बलदर्पिताः ॥ १
- उद्यतायुधनिर्लिप्ताः खड्गचर्मासिपाणयः ।  
 मायाविनो मङ्गाधोरा वज्रकः प्राणिर्हिसकाः ॥ २
- क्षेत्रवित्तापहारेण नानाप्राणिभयङ्कराः ।  
 असाध्या नृपवर्याणां वनदुर्गसमाश्रयाः ॥ ३
- बाधमाना द्विजान् नित्यं साधूंश्चाऽसन् विशेषतः ।  
 गर्जन्तो मेघसङ्काशा नीलाञ्जनचयोष्माः ॥ ४

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५४ तमोऽध्यायः	९१
तेषां शतसहस्राणि चोराणां निर्गतानि च ।	
सुदर्शनमहाराजसेनायां तु पुरस्तराः ॥	५
केचिद्विरूपातसामर्थ्या निर्गताश्च तयोर्मिथः ।	
अभूतपूर्वं तुमुलमभूत् युद्धमनुत्तमम् ॥	६
समाप्तायुष्यशेषास्ते शलभा इव पावकम् ।	
विविशुश्चक्रराजस्य ज्वलन्तीं वाहिनीं तदा ॥	७
विनिर्दग्धाश्च ते सर्वे दस्युरूपा वनेचराः ।	
तद्वंशजास्तादृशाश्च शिशुबालाः स्त्रियोऽपि च ॥	८
ययुस्ते विलयं सर्वे चोरा मायोपजीविनः ।	
निष्कण्टकमभूत्तच्च वनं पक्षिमृगाऽकुलम् ॥	९
वेङ्कटाद्रिं समारभ्य यावद्वेला महोदधेः ।	
तावान् देशश्च सङ्ग्रामः सपत्तनवनालयः ॥	१०
सर्वबाधाविनिर्मुक्तः सपर्वतनदीतटः ।	
बभूव परमानन्दो राहुमुक्त इवोडुराट् ॥	११
बभूवुर्मुदिताः सर्वे जना जानपदाश्च ये ।	
तुष्टुदुर्ब्राह्मणाः सर्वे मुनयो योगिनोऽपि च ॥	१२
निवसन्ति तदारभ्य तस्मिन् देशे हि देहिनः ।	
तदा प्रभृति तद्देशे वासवश्चक्रशासनात् ॥	१३
काले वर्षति सस्यानि फलन्ति बहुधा तदा ।	
बहुक्षीरदुहा गावः तथा स्वादूदकं सरः ॥	१४
नीरोगाश्च जनाः सर्वे यथा कृतयुगे तथा ।	
कुशलाः कृषिविद्यायां विप्रा वेदेषु निष्ठिताः ॥	१५
तपस्विनस्तपोधर्मे योगाभ्यासे च योगिनः ।	
वाणिज्ये वणिजः सर्वे स्वस्वधर्मेषु निष्ठिताः ॥	१६

देशमध्ये समागत्य सुदर्शनहरिः प्रभुः ।  
 समाहूय जनान्त्सर्वान् वचनं चेदमब्रवीत् ।  
 'कर्तव्यं भवतां किं तदस्ति चेद्वक्तुमर्हथ' ॥ १७

जनाः—

'इतः पूर्वं वयं सर्वे पीडिताः सुभृशं प्रभो ! ।  
 दस्युनिस्तस्करैश्चोरैः चोरप्रायैश्च राजभिः ॥ १८  
 प्रसादाद्भवतः स्वामिन् ! देशोऽयं निरुपद्रवः ।  
 आसीद्वयं कृतार्थास्मे' त्युक्तः प्राह च चक्राट् ॥ १९  
 'धर्मात्मानं नृपं कञ्चित् कृत्वा देशाधिपं पुनः ।  
 न्याये कर्मणि वर्तध्वं यूयं तेन गतश्रमाः' ।  
 एवं सुरक्षितं चक्रे तं देशं हेतिभूषति ॥ २०

आग्नेयदिशि सुदर्शनकृतासुरवधप्रकारः

आग्नेयां दिशि शेषाद्रेः केचित् दैत्यांशसम्भवाः ।  
 महामायाविनो घोरा वज्रकाः क्षत्रबान्धवाः ॥ २१  
 बाधमाना द्विजानासन् साधून्त्सर्वान् जनांस्तथा ।  
 देवब्राह्मणविश्वासः तेषां नाऽसीत्कदाचन ॥ २२  
 वने दुर्गं गिरौ दुर्गं स्थले दुर्गं तथैव च ।  
 एवमावासदेशन्तु कृत्वाऽतिष्ठन्तु तत्र हि ॥ २३  
 ते हि ज्ञात्वा महामायागतामुद्यतायुधाम् ।  
 अयुच्यन्त महाघोरं दक्षैरक्षैः परश्वधैः ॥ २४  
 पाशैः खड्गैश्चिशूलैश्च तोमरैर्मुद्गरैस्तथा ।  
 निघ्नन्ति तत्र तथा योधान् अध्वानुष्टांश्च वारणान् ॥ २५

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५४ तमोऽध्यायः ९३

- शिरांसि बहुधा युद्धे पदातीनाञ्च चिच्छिदुः ।  
केचित् पादेषु सम्मिन्नाः केचिद्वस्तेष्वशेरत ॥ २६
- शिरोभिश्छिन्नपादैश्च कबन्धैश्च तथा करैः ।  
शस्त्रैरस्त्रैस्तनुत्राणैः उष्णीषैश्च शिरोरुहैः ॥ २७
- रक्तौघैर्मांसखण्डैश्च कीकसैरान्तराशिभिः ।  
आस्तृता युद्धभूमिः सा प्रेतराजस्य विस्तृता ॥ २८
- पुरीवाऽसीत्तदा तैस्तु सैन्यं सन्नञ्च तत्तदा ।  
सेनैकदेशं क्षुभितं दृष्ट्वा दौरात्म्यमेव च ॥ २९
- क्रुद्धो बभूव हेतीनां राजा परमकोपनः ।  
त्रिपुरारिर्यथा क्रुद्धः पुराणां सूदनेऽभवत् ॥ ३०
- तादृशानाञ्च चोराणां मायिनां निग्रहे तथा ।  
ज्वालामुखं बलाध्यक्षं ससैन्यं सन्दिदेश ह ॥ ३१
- ‘निश्शेषं कुरु राज्ञस्तान् चोरांश्च मददुर्मदान्’ ।  
इत्याज्ञप्तस्तदा तेन चक्रराजेन वै बली ॥ ३२
- ज्वालामुखस्तथा चक्रे युद्धं परमदारुणम् ।  
तत्सैन्यं लोडयामास मदमत्त इव द्विपः ॥ ३३
- छिन्ना भिन्नास्तथा जम्मुः चोरास्तत्र वनेचराः ।  
पलायन्ते स्म भीतास्ते त्यक्तशस्त्राऽयुधास्तदा ॥ ३४
- त्यक्त्वा समरभूमिञ्च वने लीनाश्च सानुषु ।  
न हि तत्र जनः कश्चित् ददृशे वनभूमिषु ॥ ३५
- गिरेर्दुर्गेषु सर्वेषु वनदुर्गेषु सानुषु ।  
महाबिलेषु कुञ्जेषु कुटीरेषु गुहासु च ॥ ३६
- मृगयामासुरव्यग्राः तस्य चानुचरास्तदा ।  
ददृशुर्न हि कश्चिच्च विनिर्गत्य तु विस्मिताः ॥ ३७

ज्वालामुखाय ते सर्वे प्रोचुरेवं पदातयः ।	
विस्मितः सोऽपि तां मायां ज्ञात्वा परमदुर्जयः ॥	४८
तद्देशवासिनः साधूनाहूयेदं वचोऽब्रवीत् ।	
‘इमं देशं विसृज्याऽऽशु गन्तव्यं देशमन्यकम् ॥	३९
क्षत्रमाला’ दिति प्रोक्त्वा जप्राह परमं धनुः ।	
अस्त्रं च सन्दधे तस्मिन् आग्नेयं मन्त्रवत्तदा ॥	४०
प्रजज्वाल च तद्विव्यमस्त्रं परमभास्वरम् ।	
कृशानवस्तदस्त्राच्च निष्पेतुश्च सहस्रशः ॥	४१
विचुक्रुशुश्च भूतानि चुक्षुभुः सागरास्तदा ।	
‘अन्तर्धानं गता यत्न चोरास्तिष्ठन्ति वञ्चकाः ॥	४२
गत्वा च देशे तत्रापि भस्मसात्कुरु तानरीन्’ ।	
इति चिक्षेप तद्विव्यमस्त्रमाग्नेयमुत्तमम् ॥	४३
आक्रम्य रोदसी तच्च ज्वालामालसमाकुलम् ।	
चोरदेशं समाक्रम्य गिरिदुर्गवनानि च ॥	४४
यत्र यत्नं च तिष्ठन्ति मायिनस्ते वनेचराः ।	
अदहत्तानि सर्वाणि स्थलान्यन्यानि यानि च ॥	४५
ते च सर्वे दुरात्मानो दग्धकेशतनूरूढाः ।	
तेषां स्त्रियश्च बालाश्च सर्वे दग्धाश्च वह्निना ॥	४६
विलेभ्यः कन्दरेभ्यश्च निष्पेतुः क्षत्रबान्धवाः ।	
वनं तदीयं तत्सर्वं भस्मीभूतश्च तत्क्षणात् ॥	४७
निर्वीजं तत्कुलं सर्वं दग्धमस्त्रस्य तेजसा ।	
भस्मीकृत्य तु तान्सर्वान् प्रविवेशेषुर्धि तदा ॥	४८
वृष्टिं समानयामास सद्यः शीतलकारिणीम् ।	
‘आप्लावयत तं देशमाजम्मुर्निर्गता वनाः ॥	४९

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५५ तमोऽध्यायः ९५

निहताः सर्वचोराश्च तेजसा भवतः प्रभो ' ।  
इति विज्ञापितस्तेन बलाध्यक्षेण स प्रभुः ॥ ५०  
सन्तुष्टस्तत्र तं देशमागत्य च सुदर्शनः ।  
तानि दुर्गाणि सर्वाणि स्थलीकृत्य वनानि च ॥ ५१  
प्रकाशानि ततश्चक्रे देशं प्रहृतमार्गकम् ।  
तत्रत्यान् स्थापयामास साधून् विप्रादिकानपि ॥ ५२  
स्थापयित्वा च तद्देशे धर्माध्यक्षं दयापरम् ।  
वृष्टिशाल्यादिवृद्ध्या च पोषयामास देशिकान् ॥ ५३

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुदर्शनसैन्यासुरसैन्ययोः  
युद्धप्रशंसादिवर्णनं नाम चतुः पञ्चाशोऽध्यायः



अथ पञ्चपञ्चाशोऽध्यायः



सुदर्शनस्यासुरवधार्थं दक्षिणदिग्गमनम्

श्रीसूतः—

सुदर्शनो महाराजः कृत्वा देशमकण्टकम् ।  
तस्माद्देशादपक्रम्य भागं दक्षिणमाययौ ॥ १  
आगत्य दक्षिणं देशं ससैन्यः सपरिच्छदः ।  
वादयामास वाद्यानि निस्साणप्रमुखानि च ॥ २  
तेन शब्देन महता दारिता इव भूधराः ।  
मदमत्तगजैरश्वैः सुन्दरैः पर्वतोपमैः ॥ ३  
अनेकैश्च वनं तत्र चूर्णितं हि सहस्रधा ।  
विपिनानि प्रकाशानि कृतानि गिरयस्तथा ॥ ४

वनदुर्गाणि तैः सर्वैः सुगमानि कृतानि वै ।	
तत्र दैत्यांशसम्भूताः शूराः शूद्रकुलोद्भवाः ॥	५
अङ्को वङ्कः पुलिन्दश्च बिडालो बालुकस्तथा ।	
एते शूराः प्रधानाश्च पञ्चैते पञ्च पापिनः ॥	६
बाधन्ते स्म द्विजान् नित्यं क्षेत्रविचापहारतः ।	
योगनिष्ठांस्तपोनिष्ठान् यज्ञकर्मसु निष्ठितान् ॥	७
पीडयन्ति स्म बालांश्च स्त्रियो वृद्धांश्च नित्यशः ।	
अग्निहोत्राणि वेदाश्च यज्ञाश्चोत्सव एव च ॥	८
आचारा वैदिकास्तत्र प्रावर्तन्त न च कचित् ।	
पीड्यमानाः सदा चोरैः पञ्चभिः प्राणिनो भृशम् ॥	९
क्षुद्राश्च बहवश्चासन् प्राप्तिपीडाकरा अपि ।	
ते सर्वे सहसा तत्र विचार्य च पुनः पुनः ॥	१०

### सुदर्शनासुरसेनयोर्युद्धप्रकारः

सुदर्शनं च राजानं ज्ञात्वा तत्र समागतम् ।	
‘सर्वैः सम्भूय योद्धव्यं नान्यथा गतिरस्ति नः ॥	११
राजा सुदर्शनो नाम सहस्रभुजमण्डितः ।	
विक्रमे स च राजा तु सहस्रविक्रणोष्मः ॥	१२
यत्र यत्र स वै राजा क्रुद्धः पश्यति सत्वरम् ।	
तत्तत्सर्वञ्च सहसा दग्वं विह्वलं विप्यति ॥	१३
अतः सर्वे वयं चोराः सावधानाश्च सर्वदा ।	
योत्स्याम ’ इति निश्चित्य तेऽथ सम्भूय दस्यवः ॥	१४
परिधानमृशान्प्रासान् शक्तिशूलपरश्वधान् ।	
धनुंषि च सबान्धनि खड्गांश्च विपुलाब्जान् ॥	१५

प्रगृह्य परमक्रुद्धा वरदानबलोद्धताः ।	
विचित्रवाससः सर्वे विविधाः शस्त्रपाणयः ॥	१६
निर्ययुर्मदमत्ताश्च चलन्त इव पर्वताः ।	
ते युद्धकुशलाः शूराः तोमराङ्कुशपाणयः ॥	१७
अन्ये लक्षणसंयुक्ता वरचर्मासिपाणयः ।	
‘अहमेव वविष्यामि सर्वा’ निति बलोद्धताः ॥	१८
तत्र सर्वे समाजम्मुः युद्धार्थं यमचोदिताः ।	
सुदर्शनोऽपि तान् दृष्ट्वा क्रुद्धो नाग इव श्वसन् ॥	१९
स्फुलिङ्गाक्षं बलाव्यक्षं ज्वालाकेशं महासटम् ।	
क्वालान्तकं रणघ्नञ्च पञ्च स्तष्ट्वा तु मानसान् ॥	२०
ससैन्यान् प्रेषयामास चोराणां निग्रहे तथा ।	
निर्ययुस्ते रथैरथैः नागानीकैः सुसंवृताः ॥	२१
परिधान् पट्टसांश्चैव शूलखड्गपरश्वधान् ।	
गृहीत्वा विविशुर्युद्धभूमिं ज्वलितकुण्डलाः ॥	२२
चिक्षिपुर्दुष्टचरेषु बाणान् प्राणहरान् रणे ।	
ते गदाभिर्विचित्राभिः प्रासैः खड्गैः परश्वधैः ॥	२३
अन्योन्यं समरे जघ्नुः अस्रैः शस्त्रैश्च योधकाः ।	
एवं प्रवृत्तं सङ्ग्रामे निर्धूतं सुमहद्व्रजः ॥	२४
दुष्टानां दैत्यजातानां शान्तं शोणितविस्रवैः ।	
रथमातङ्गकूलाश्चहयमत्स्या ध्वजद्रुमाः ॥	२५
शरीरसंङ्घं तवहाः सुस्रुवू रक्तनिम्नगाः ।	
स्फुलिङ्गाक्षो बलाव्यक्षः शरैरङ्गं जघान च ॥	२६
बङ्गं जघान समरे ज्वालाकेशः शिनैः शरैः ।	
महासटः पुलिन्दञ्च जघान समरे शरैः ॥	२७



कालान्तको विडालश्च वालुकं रणहा युधि ।	
जघान समरे क्रूरैः शरैराशीविषोपमैः ॥	२८
ततः सुदर्शनो राजा हयशीर्षं महाशरम् ।	
‘अन्तर्धानं गता यत्र तिष्ठन्ति गिरिसानुषु ॥	२९
प्राणिपीडाकरा ये तु ये तु दैत्यांशसम्भवाः ।	
यत्र कुत्र च तिष्ठन्ति तान् ज’ हीति सुदारुणम् ॥	३०
सन्धाय धनुषि क्षिप्रं विससर्ज महाप्रभुः ।	
तदस्त्रनिर्गमन्वानैः भग्नं सैन्यं दुरात्मनाम् ॥	३१
दैत्यान्धान् खरानुष्टान् रथान् युद्धसमागतान् ।	
द्विधा चकार समरे हयशीर्षं महाशरः ॥	३२
वनेषु गिरिदुर्गेषु ग्रामे वा पत्तनेऽपि वा ।	
यत्र यत्र दुरात्मानः ते सर्वे च द्विधा कृताः ॥	३३
तज्जातीयाश्च शिशवः तेषां दाराश्च बालिकाः ।	
द्विधा कृताश्च ते सर्वे चित्रमस्त्रस्य तेजसा ॥	३४
तद्दृष्ट्वा देवताः सर्वा देशीयाश्च जना अपि ।	
विस्मयं परमं जम्मुः किमिदं चेति तेजसा ॥	३५
छिन्नं भिन्नं शरैर्दग्धं प्रभग्नं शरपीडितम् ।	
बलं सर्वन्तु दुष्टानां ददृशे रणभूमिषु ॥	३६
देशबाधकदुष्टेषु न कश्चिद्दृशे तदा ।	
जलदुर्गं गिरौ दुर्गं वनदुर्गं तथैव च ॥	३७
स्थलदुर्गञ्च यश्चान्यो निवासो दुष्टदेहिनाम् ।	
तत्तत्सर्वं महाराजो भग्नं कृत्वा महागजैः ॥	३८
कृत्वा प्रकाशं तं देशं कृत्वा प्रहतमार्गकम् ।	
महामार्गञ्चसर्वत्र कृत्वा निहतकण्टकम् ॥	३९

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५६ तमोऽध्यायः

९९.

विप्रक्षत्तादिकान् साधून् अन्यान्पि जनान् बहून् ।

स्वे स्वे धर्मे नियुज्यैव स्थापयामास वै सुखम् ॥

४०

नीरोगाश्च जनाः सर्वे कामक्रोधपराङ्मुखाः ।

वेदशास्त्रपराः सर्वे सर्वे यज्ञैः सुनिष्ठिताः ॥

४१

काले वर्षन्तु मेघाश्च फल्न्तु च महीरुहाः ।

समृद्धानि च सस्यानि सन्तु नः शासना ' दिति ॥

४२

अनुगृह्य च तान्त्सर्वान् तस्थौ तद्देशवासिनः ।

ववृधे वेङ्कटाधीश करपङ्कजनानुमान् ॥

४३

तत्र देवाः समागत्य स्तुत्वा देवं हरिं प्रभुम् ।

ववर्षुः पुष्पवर्षाणि गन्धर्वाश्च जगुः कलम् ॥

४४

इदानीमत्र वसतां लब्धं ब्राह्मण्यमुत्तमम् ।

प्रसादाद्भवतः सोऽयं कृतो देशः सुखी प्रभो ॥

४५

इदानीं पश्चिमे भागे किञ्चित्कार्यं भविष्यति ।

इति विज्ञाप्य ते सर्वे दिवं जम्बुर्यथागतम् ॥

४६

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुदर्शनस्यासुरवधार्थं

दक्षिणदिग्गमनादिवर्णनं नाम पञ्चपञ्चाशोऽध्यायः

अथ षट्पञ्चाशोऽध्यायः

वरुणादिद्वयसुरसुदर्शनसेनायुद्धप्रशंसा

श्रीसूतः —

राजा सुदर्शनः श्रीमान् प्रतापहतकण्टकः ।

दक्षिणां दिशमासाद्य कृत्वा निर्बाधमेव ताम् ॥

१

देशस्य रक्षणार्थाय कञ्चिन्नृपवरं तदा ।	
धर्मात्मानं प्रतिष्ठाप्य प्रतस्थे पश्चिमां दिशम् ॥	२
शतं शतसहस्राणि भेरीणां व्यनदंस्तदा ।	
पताकिनो गजास्तत्र ध्वजयुक्ताश्च वाजिनः ॥	३
मत्तेभाः कलभाश्चैव तथा गम्भीरवेदिनः ।	
शस्त्रवर्मायुधोपेताः सन्नद्धा युद्धकारणात् ॥	४
घोटाश्च द्वीपसम्भूता वायुवेगास्तथाऽपरे ।	
वर्मास्त्रशस्त्रसम्भिन्ना निर्ययुश्च सहस्रशः ॥	५
शताध्वस्त्रिशताध्वश्च सहस्राध्वश्च यूथशः ।	
सर्वायुधैश्च सम्पूर्णाः पताकालङ्कृतास्तथा ॥	६
विमानानीव सिद्धानां शतशोऽथ सहस्रशः ।	
स्यन्दनानि विचित्राणि निर्ययुर्भास्वराणि च ॥	७
उद्यतायुधनिस्त्रिंशाः तथोद्यतपरश्वधाः ।	
उद्यतासिगदाशूलाः तथोद्यतकरायुधाः ॥	८
अट्टहासान् विमुञ्चन्तो निर्ययुश्च पदातयः ।	
मध्ये रराज राजाऽसौ सहस्रभुजमण्डितः ॥	९
निदाघे प्रतपन् सूर्यः सहस्रांशुरिवाऽबभौ ।	
तत्राऽसीत्पश्चिमे भागे वेङ्कटादेरदूरतः ॥	१०
काननं पर्वताकीर्णं सिंहव्याघ्रनिषेवितम् ।	
मातङ्गैर्नर्दमानैश्च वराहमहिषैस्तथा ॥	११
वृकभल्लकसंयुक्तं तस्मिन् महति कानने ।	
दैत्यांशः कश्चिदुत्पन्नः वित्रातः पर्वतोपमः ॥	१२
नाम्ना काननकर्ता च रिपुः स्रुतो बली ।	
स तु शम्भुं समुद्दिश्य व्रतचर्याप्रोऽभवत् ॥	१३

यक्षराक्षससिद्धानां मनुष्याणां महात्मनाम् ।	
दुर्जयत्वमसाविच्छन् साहसी तु कदाचन ॥	१४
क्रतुध्वंसकरं रुद्रं ध्यात्वा च धृतिमान् नरः ।	
खड्गमादाय चिच्छेद स्वशिरः पुष्पसम्भृतम् ॥	१५
अलङ्कृतञ्च गन्धाद्यैः शम्भवेऽर्पयितुं तदा ।	
प्रसादात्तत्क्षणाद्बुद्धो जीवयित्वा च तं पुनः ॥	१६
ददौ च तदभिप्रेतं लब्ध्वा सादरमुत्तमम् ।	
वनकर्ता समागत्य वने तस्मिन् दुरासदम् ॥	१७
स्थानं दुर्गं परामेघमधिष्ठाय महाबलः ।	
अनेकशतसाहस्रैरनीकैः परिवारितः ॥	१८
लोकानुत्सादयामास वरदानबलोद्धतः ।	
चुक्रुशुः पीडिताः सर्वे विप्राद्याः प्राणिनस्तदा ॥	१९
स तु ज्ञात्वा दुरात्मा च सुदर्शनमहानृपम् ।	
नृप इत्येव तं मत्वा निर्जगाम रणाय सः ॥	२०
एकामक्षौहिणीं सेनां गृहीत्वा सशरासनः ।	
सन्नद्धः कवची खड्गी दण्डी परबलार्दनः ॥	२१
रथमारुह्य सज्जश्च सर्वशस्त्रास्त्रभूषितः ।	
ययुश्च तस्य पुरतस्तुरगाश्च महागजाः ॥	२२
पदातयश्च सरथा ययुः शस्त्रास्त्रपाणयः ।	
प्रावर्तत महद्युद्धं सेनयोरुभयोरपि ॥	२३
शस्त्रैरस्त्रैः शितैर्बाणैः मिण्डिपालैः परश्वधैः ।	
कुन्ततोमरचक्रैश्च परिवधैः पट्टसैः शितैः ॥	२४
शक्तितोमरशूलैश्च गजचर्मासिसाधनैः ।	
शतघ्नीपरिघामिश्च चित्तैरन्यैश्च साधनैः ॥	२५

अन्योन्यञ्च यथापूर्वं देवदानवराजयोः ।	
सुदर्शनभटाश्चापि निजधनुस्तान् किरातकान् ॥	२६
विविधायुधहस्ताश्च शूलमुद्गरपाणयः ।	
गदाभिः पट्टसैर्दण्डैः आयसैर्मुसलैर्भृशम् ॥	२७
परिधैर्भिण्डिपालैश्च भल्लैः प्रातैः परश्वधैः ।	
रथैः कवचिनस्त्वन्ये ध्वजैश्च समलङ्कृतैः ॥	२८
हिरण्यजालविहितैः खरैश्च विविधाननैः ।	
हयैः परमर्शाघ्नैश्च गजेन्द्रैश्च मदोत्कटैः ॥	२९
सुदर्शनभटांश्चापि निर्जघ्नुस्ते किरातकाः ।	
तैर्गदाभिश्च भीमाभिः पट्टसैः कूटमुद्गरैः ॥	३०
घोरैश्च परिधैश्चित्रैः त्रिशूलैरपि संशितैः ।	
विदार्यमाणास्ते शूला निपेतुर्भुवि संयुगे ॥	३१
अमर्षाज्जनितोद्धर्षाः चक्रुः कर्माप्यमीतवत् ।	
शरनिर्भिन्नगात्रास्ते शूलनिर्भिन्नदेहिनः ॥	३२
ममन्युर्दुष्टचोरांश्च नामानि च बभाषिरे ।	
तद्बभूवाद्भुतं घोरं युद्धं सैन्यद्वयस्य च ॥	३३
वर्षं रुधिरं केचित् मुखैस्ते वनवासिनः ।	
पार्श्वेषु दारिताः केचित् केचिद्वस्तेषु दारिताः ॥	३४
पट्टसैश्चूर्णिताः केचित् प्रातैः केचिद्विदारिताः ।	
ध्वजैर्निपतितैर्नागैः अश्वैश्च विनिपतितैः ॥	३५
रथैर्विमृदिताः केचित् व्यथिताः कानने स्थिताः ।	
मुद्गरैराहताः केचित् पतिता धरणीतले ॥	३६
परिधैर्मथिताः केचित् भिण्डिपालैश्च दारिताः ।	
केचिद्विनिहता भूमौ रुधिरार्द्रा वनौकसः ॥	३७

- केचिद्वित्रासिता नष्टाः केचित्पार्श्वेन शायिताः ।  
विभिन्नहृदयाः केचित् त्रिशूलैर्दारिताः परे ॥ ३८
- एवं विद्रावितं सैन्यं वनकर्ता विलोक्य तत् ।  
बभूव क्रोधताम्राक्षः सेनाध्यक्षमुवाच ह ॥ ३९
- ‘ज्वालापातं महाशूरं जहि त्वं गच्छ शीघ्रतः’ ।  
इत्याज्ञस्ततस्तूर्णं ज्वालापातः प्रतापवान् ॥ ४०
- धनुर्विष्कारयामास रथस्थः कनकाङ्गदः ।  
सुदर्शनमहाराजः सेनाध्यक्षं सृजन् रुषा ॥ ४१
- वडवामुखनमानं वडवानलविक्रमम् ।  
‘जहि त्वं समरे गच्छ शत्रुसैन्यमशेषतः’ ॥ ४२
- इत्यब्रवीत्ततः सोऽपि निर्गतः सरथस्तथा ।  
शार्ङ्गमादाय सुमहत् तस्मिन् बाणान् युयोज च ॥ ४३
- मुमोच च ततः सैन्ये शरसङ्घान् महारथः ।  
शतं सहस्रमयुतं नराणां वडवाननः ॥ ४४
- बाणेनैकेन सहसा निजघान महारथः ।  
दश वा विंशतिं वऽपि त्रिशतं वा रथान् हयान् ॥ ४५
- गजानां च घटामेकां एकेन शितपत्रिणा ।  
जघान स महातेजाः कालानलयमोपमः ॥ ४६
- वडबापावको यद्वत् अम्भांसि असते क्षणात् ।  
तद्वत्सैन्यं परं चक्रे भस्मसात् वडवाननः ॥ ४७
- एकामक्षौहिणीं सेनां सुदर्शनबलाग्रणीः ।  
प्रापयद्यमलोकं हि मुहूर्तद्वयमात्रतः ॥ ४८
- निश्शेषं स्वबलं सर्वं हतमालोक्य वेगतः ।  
दिव्यमस्त्रञ्च सन्धाय ‘तिष्ठ ति’ ष्ठेति च ब्रुवन् ॥ ४९

आजगाम रथाच्छीघ्रं किरातो लघुविक्रमः ।

सुदर्शनमहाकोपसञ्जातो बडवाननः ॥

५०

विष्णुचक्रेण तं घोरं जघान वनगोचरम् ।

हते किरातराजे तु तद्वनं निर्मलं बनौ ॥

५१

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वरुणदिश्यसुरसुदर्शनसेना-  
युद्धप्रशंसादिवर्णनं नाम षट्पञ्चाशोऽध्यायः

अथ सप्तपञ्चाशोऽध्यायः

सुदर्शनस्यासुरवधार्थमुत्तरदिग्गमनम्

श्रीसूत —

सुदर्शनमशराजः सहस्रकिरणोपमः ।

तं देशं हतदुष्टं हतावप्रहकण्टकम् ॥

१

कृत्वा सर्वाणि दुर्गाणि गिरिस्थलवनानि च ।

विनिहत्य गजैरश्वैः सर्वदिक्षु महापथम् ॥

२

कृत्वा च तत्र मनुजान् स्थापयित्वा यथासुखम् ।

तद्देशरक्षकं कञ्चित् धर्मिष्ठं सत्यवादिनम् ॥

३

निवेश्य देशमध्ये च जनानामन्य सत्वरम् ।

प्रतस्थे सबलस्तस्मात् दुष्टचोरजिगीषया ॥

४

ततश्चोत्तरदिग्भागं सहस्रकिरणो यथा ।

नीहारशोषणार्थाय श्रीमान् भुजसहस्रवान् ॥

५

प्रतापविक्रमादित्यः सुदर्शनमहाप्रभुः ।

श्रीवेङ्कटनगावीशदिव्याज्ञापरिपालकः ॥

६

पदातयो गजाश्वाश्च रथाश्च गिरिसन्निभाः ।	
ययुरग्रे च वाद्यानि वादयन्ति स्म सर्वतः ॥	७
ततः प्रचोदिता भेर्यो मर्दलानकपुष्कराः ।	
हेमकोणहतास्तीव्रं बलानां चाग्रतस्तदा ॥	८
विनेदुश्च महाघोषाः शङ्खाः शतसहस्रशः ।	
तडिद्वास्करकल्पाश्च खड्गाः प्रासाश्च पट्टसाः ॥	९
बुभुस्तस्मिन् महासैन्ये यथा मेघेषु विद्युतः ।	
उत्तरे वेङ्कटाद्रेस्तु भागे कश्चिन्महासुरः ॥	१०

### भेरुण्डासु सुदर्शनसेनयोर्युद्धप्रशंसा

भेरुण्डो नाम दैत्यानां प्रवरो बलदर्पितः ।	
ब्रह्मणाऽसीत्पुरा दत्तवरः पर्वतसन्निभः ॥	११
स तु तत्र निवासञ्च कृत्वा तु बहुभिर्वृतः ।	
वेङ्कटाद्रौ तदन्यस्मिन् गिरौ वा काननेऽपि वा ॥	१२
तपांसि कुर्वतां विभ्रं कुर्वन् प्राणिभयङ्करः ।	
ग्रामे वा पत्तने वाऽपि स्थितान् विप्रादिमानुषान् ॥	१३
बबाधे सततं तीक्ष्णं तेन देशः प्रपीडितः ।	
काम्भोजा यवनाश्चापि म्लेच्छाः सङ्करजातिजाः ॥	१४
भेरुण्डस्य बलोद्विक्ताः तत्राऽसन् प्राणिपीडकाः ।	
ते सर्वे पापकर्माणः सम्भूय मुसलायुधाः ॥	१५
भेरुण्डमग्रतः कृत्वा सरथाश्चगजास्तदा ।	
युद्धार्थमागतं ज्ञात्वा राजानञ्च सुदर्शनम् ॥	१६
युद्धाय निर्ययुः सर्वे गदाशक्तिप्रश्वधान् ।	
गृहीत्वाऽङ्कुशपाशांश्च खड्गांश्च कनकत्सरून् ॥	१७



केचिचर्मयुधधराः केचित्तोमरपाणयः ।	
केचित्तिशूलहस्ताश्च शरचापधरा अपि ॥	१८
अट्टहासं विमुञ्चन्तो नर्दन्तस्ते महाबलाः ।	
वाद्यवोषांश्च महतः कारयन्ति स्म केचन ॥	१९
सन्नद्धाश्चैवमागत्य चक्रुस्ते कदनं महत् ।	
सुदर्शनभटाश्चापि भेरुण्डस्य भटा अपि ॥	२०
हताः सुदर्शनभटाः किरातैरधिकोर्जितैः ।	
निकृत्तशिरसः केचित् छिन्नपादास्तथाऽपरे ॥	२१
केचित्कृत्तशिरस्त्राणाः केचिद्वक्षसि ताडिताः ।	
केचिच्छिन्नतनुत्राणाः केचिच्छिन्नोस्बाहवः ॥	२२
एवं हतं बलं सर्वमसुरेण दुरात्मना ।	
तं दृष्ट्वा निहतं सैन्यं सुदर्शनमहाप्रभुः ॥	२३
क्रोधेनारुणताम्राक्षः प्रज्ज्वालान्तको यथा ।	
क्रुद्धे तस्मिन् प्रभौ सर्वं न बभौ क्लृप्तं जगत् ॥	२४
चन्द्रसूर्यौ तदाऽऽकाशे बभूवुः न च किञ्चन ।	
नक्षत्राणि न भान्ति स्म पेतुस्तन्नाः सहस्रशः ॥	२५
वाति स्म जवनोऽत्यर्थं सह धूल्या प्रभञ्जनः ।	
चकम्पे वसुधा कृत्स्ना पेतुः शैलाश्च पादपाः ॥	२६
चुक्षुभुः सागराः सर्वे नेदुर्मृतानि तत्क्षणात् ।	
युद्धार्थमागता दैत्याः किराताः पुलकसास्तथा ॥	२७
कम्पलोपहताः सर्वे विषण्णवदनास्तदा ।	
तत्कोपाग्निमुत्पत्यश्च पुरुषः परमाद्भुतः ॥	२८
चापी खड्गी रथी तूणी कश्चित् कनकापिङ्गलः ।	
नाम्ना पावकसङ्काशः साक्षात्पावकविक्रमः ॥	२९

- स तमाज्ञापयद्राजा 'जहि दैत्या'नितीश्वरः ।  
 पावकः सर्वशस्त्रास्त्रसम्पन्नः समरे बभौ ॥ ३०
- प्रलयाग्निरिवादित्यसहस्रसदृशप्रभः ।  
 मुमोच बाणवर्षाणि परसैन्येषु पावक ॥ ३१
- विनोदं कारयामास कञ्चिद्विस्मयकारकम् ।  
 सम्मोहनार्थं दैत्यानां गान्धर्वं समचोदयत् ॥ ३२
- मोहिताः परमास्त्रेण त्यक्तोद्यतवरायुधा ।  
 परसैन्यञ्च तत्सर्वं मत्वा स्वजनसार्धगम् ॥ ३३
- नायुध्यन्त तदा योधा दृष्ट्वा सेनापतिं पुनः ।  
 नाम्ना पावकसङ्काशं जनकं स्वकुलोद्भवम् ॥ ३४
- मत्वा सर्वे नमन्ति स्म पतित्वा वसुधातले ।  
 तद्दृष्ट्वा देवगन्धर्वाः सिद्धविद्याधरादयः ॥ ३५
- विस्मयं परमं जग्मुः 'साधु सा'ध्वति चाब्रुवन् ।  
 तान् दृष्ट्वा पावकप्रख्यो मोहितानां प्रमापणम् ॥ ३६
- अयुक्तमपि तद्विषयम् उपसंहृतवांस्तदा ।  
 विमुक्तमोहास्ते सर्वे गृहीत्वा शस्त्रबाणकान् ॥ ३७
- चक्रुस्ते कदनं घोरमसिभिः पट्टसायुधैः ।  
 क्रौञ्चमस्त्रं समादाय परेषां युद्धकाङ्क्षिणाम् ॥ ३८
- 'छिन्दि भोः कर्णनासे त्व'मिति मन्त्रं जजाप ह ।  
 तत्क्षणात्कृत्तनासाश्च कृत्तकर्णाश्च संयुगे ॥ ३९
- विलोक्य ते हि तत्कर्म क्रुद्धा जह्नुश्च तद्वलम् ।  
 पुनः पावकसङ्काशः सर्वास्त्रकुशलो युधि ॥ ४०
- मिण्डिपालेन सर्वेषां बाहून् चिच्छेद सर्वतः ।  
 सर्वे ते वीतहस्ताश्च परान् खादितुमुद्यताः ॥ ४१

- तच्च दृष्ट्वा तु पैशाचमस्त्रं मन्त्रेण मन्त्रितम् ।  
 विससर्ज तदा घोरं सर्वविस्मयकारकम् ॥ ४२
- प्रस्ताः पिशाचभूतैश्च स्लेच्छा दैत्यादयस्तथा ।  
 अन्योन्यखादने सक्ता ययुर्विलयमञ्जसा ॥ ४३
- स्वसैन्यं निहतं दृष्ट्वा निश्शेषं युद्धभूमिषु ।  
 भेरुण्डस्तु ततः क्रुद्धः शूलं परमदारुणम् ॥ ४४
- गृहीत्वा पावकप्रख्यमभिदुद्राव संयुगे ।  
 योजनत्रितयोत्सेधः कम्पयन् मेदिनीं तदा ॥ ४५
- वायव्यमस्त्रं प्रायुङ्क्त पावकार्चिस्समप्रभः ।  
 आमयामास वात्येव तृणं पर्वतसन्निभम् ॥ ४६
- प्रदक्षिणं कारयित्वा वेङ्कटाद्रेश्च दानवम् ।  
 पुनरुत्क्षिप्य तं दैत्यम् आकारो दशयोजनम् ॥ ४७
- प्रातयामास भूमौ तत् वायव्यं परमाद्भुतम् ।  
 जीर्णकूष्माण्डवद्भूमौ स शीर्णः पर्वतोपमः ॥ ४८
- एवं निहत्य तं दैत्यं कृत्वा देशमकण्टकम् ।  
 वनदुर्गाणि सर्वाणि खिलीकृत्य तदा जनान् ॥ ४९
- ससुखं स्थापयामास वेङ्कटाद्रौ सुदर्शनः ।  
 आकारो देवगन्धर्वाः पुष्पवर्षं विकीर्य च ॥ ५०
- ‘साधु सा’ ध्विति तं देवम् अस्तुवंस्तुतिभिस्तदा ।  
 स्वामिन्! जनपदाः सर्वे कृतः स्वस्थाः त्वया प्रभो! ॥ ५१
- गच्छ त्वं वेङ्कटाधीशसमीपं त्वरितं पुनः ।  
 इत्युक्त्वा च ययुः सर्वे दिवं देवा मुदऽन्विताः ॥ ५२
- स्वसैन्येषु ह्यत्र वे तु जीवयित्वा च तान् पुनः ।  
 स्वस्थं चक्षुरां तं देशं वेङ्कटेशाऽऽख्या तदा ॥ ५३

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५८ तमोऽध्यायः १०९

काले वर्षे पञ्चमः फलवन्तश्च पादपाः ।

सर्वसस्यानि तत्र स्म फलन्ति सुतरां तदा ॥ ५४

नीरोगश्च जनाः सर्वे दुष्टबाधा न च क्वचित् ।

‘वैकुण्ठोऽयमथाऽन्यो वा स्वर्गो वा भोगतः किम् ॥ ५५

इति तं मेनिरे सर्वे देशं श्रीवेङ्कटाभिधम् ।

वाञ्छन्ति जन्म तत्रैव देवा अपि दिवौकसः ॥ ५६

सुदर्शनमहाराजः सहस्रभुजमण्डितः ।

आज्ञां वेङ्कटनाथस्य कृत्वा सम्यक् प्रतापवान् ॥ ५७

जयमङ्गलघोषैश्च कुसुमोत्करवृष्टिभिः ।

सर्वसैन्यैश्च संयुक्तः सर्वाभरणभूषितः ।

प्रविवेश विमानं तद्वेङ्कटेशस्य मङ्गलम् ॥ ५८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुदर्शनस्यासुरवधार्थं

उत्तरदिग्गमनादिवर्णनं नाम सप्तपञ्चाशोऽध्यायः



अथ अष्टपञ्चाशोऽध्यायः

श्रीवेङ्कटेशस्य कलिद्रोपोपहतेषु विशेषतः कृपाऽधिक्यवर्णनम्

श्रीसूतः —

मुनयः श्रुतमाख्यां किम् चक्रकृताऽश्रयम् ।

वक्तुमर्हथ यूयं हि किं भूयः श्रोतुमिच्छथ ? ॥ १

मुनयः—

‘पिबतां वेङ्कटेशस्य कथां दिव्यरसायनम् ।

अस्त्यत्र तृप्तिर्नास्माकं भूयस्तृष्णा च भूयसी ॥ २

कलौ कलौ यथा तिष्ठेत् वेङ्कटाद्रिशिखामणिः ।	
पूजयिष्यति को वा तं वरदानञ्च कीदृशम् ? ॥	३
वक्तुमर्हसि तत्सर्वं शृण्वतां नो महामुने ! ।	
इति पृष्टोऽब्रवीत्सूतः कथां श्रीवेङ्कटेशितुः ॥	४

श्रीसूतः —

सन्धावपि कलेऽथैवं वेङ्कटेशस्य वर्तनम् ।	
ततः परमियान् भेदो मौनं तत्रैव तु स्थितिः ॥	५
अर्चावतारवद्भूयात् नराणां मांसचक्षुषाम् ।	
वैकुण्ठादागतं दिव्यं विमानन्तु तिरोहितम् ॥	६
विमानमात्रतु कलौ कारयिष्यन्ति मानवाः ।	
पुण्यशील्य महात्मानः कदाचित् क्षत्तसम्भताः ॥	७
कदाचिद्वाक्षणाः पुण्याः कदाचिद्बालवा नराः ।	
अर्चावतार इत्येव वदिष्यन्ति च मोहिताः ॥	८
तथैवावमर्तिं केचित् करिष्यन्ति कलौ युगे ।	
साक्षात्पश्यन् हि तत्सर्वमपश्यन्निव तिष्ठति ॥	९
साक्षाद्वाषणमेकन्तु नास्ति तस्य तपोधनाः ।	
परन्तु सर्वमस्त्येव निग्रहानुग्रहावपि ॥	१०
अधिकं वरदानन्तु भविष्यति कलौ युगे ।	
कृतकन्तु विमानं स्यात् इत्याख्यामात्रमेव हि ॥	११
किन्तु दर्शनमात्रेण पापकोटिं हरेद्द्रुवम् ।	
कदाचिन् महती पूजा स्वल्पैव तु कदाचन ॥	१२
स्वयं हि वेङ्कटाधीशः प्रकाशं हि ब्रजेत्कचित् ।	
अप्रकाशं कदाचिच्च वेङ्कटाद्रिशिरोमणिः ॥	१३

- एवं हि रमया सार्वं क्रीडत्येव च तत्र हि ।  
 कलौ युगे तु वैचित्र्यं दर्शयिष्यति केशवः ॥ १४
- अल्पदानेन वै भक्त्या स्वल्पया पूजया तथा ।  
 भविष्यति प्रसन्नश्च स्मृतिमात्रेण केशवः ॥ १५
- नृणां गमनमात्रेण वेङ्कटास्त्यगिरिं प्रति ।  
 प्रसन्नः स्यादयं क्षिप्रं दास्यतीष्टञ्च तद्बहु ॥ १६
- स्वयमप्राकृतो विष्णुः चरित्रं प्राकृतो यथा ।  
 करिष्यति तथा देवो मोहयिष्यति तान् जनान् ॥ १७
- मानुषांश्चैव भोगांश्च भोक्ष्यते प्रीतमानसः ।  
 उत्सवान् विविधांस्तस्य कारयिष्यन्ति मानवाः ॥ १८
- आगमिष्यन्ति देवाश्च सर्वार्थे वै कलौ यगे ।  
 स्नास्यन्ति स्वामितीर्थे वै करिष्यन्ति निवेदनम् ॥ १९
- निवेदितं भक्षयेयुः मनुष्याणामगोचराः ।  
 विमानं तद्धि पश्येयुः पूजयेयुर्हि सादराः ॥ २०
- प्रार्थयिष्यन्ति देवाश्च भविष्यामो नरा इति ।  
 तेषां हि वेङ्कटाधीशः क्षिप्रं दास्यति चेप्सितम् ॥ २१
- स्वल्पधर्मेण सन्तुष्टः पुत्रं क्षेत्रं कलत्रकम् ।  
 आरोग्यं भूतिमैश्वर्यं राज्यप्राप्तिञ्च सत्वरम् ॥ २२
- आयुश्च दुर्लभं नृणां स्वर्गलं कादिकानपि ।  
 जन्मकोटिशतैश्चैव कृतैः पुण्यैर्दुरासदाम् ॥ २३
- नित्यभूतिञ्च देवोऽसौ दास्यत्याचार्यसंश्रयात् ।  
 अहो वै वैष्णवो धर्मः चित्रो वेङ्कटभूधरे ॥ २४
- आश्चर्यमाश्चर्यमिति ब्रुवन्तो वैमानिकास्ते कमलासनाद्याः ।  
 यथा ब्रजेयुर्हि तथा मयाऽपि गीतं भविष्यद्भवतां पुरस्तात् ॥ २५

कलौ युगे तु सम्प्राप्ते विशेषाद्वेङ्कटाचलः ।	
प्रख्यातो बहिकं भूमौ भविष्यति तपेधनाः ॥	२६
सान्निध्यमधिकं तत्र करिष्यति रमापतिः ।	
स्लेच्छसङ्करजातीनां श्वपाकाधमयोषितम् ॥	२७
किरातपुल्कसादीनां शूद्राणां हीनजन्मनाम् ।	
भक्तिः श्रीवेङ्कटाधीशे बहिकञ्च भविष्यति ॥	२८
तेषामपि रमाधीशः शीघ्रं दास्यत्यभीप्सितम् ।	
सान्निध्यं तत्र कुरुते भक्त्या कीतो यतो हरिः ॥	२९
आर्यास्तुरुक्व मालव्या गौडा वङ्गाः कलिङ्गाः ।	
आन्ध्राः कर्णाटदेशीयाः कोसलोद्भूतमानुषः ॥	३०
अङ्गाश्चोलश्च पाण्ड्याश्च नानादेशेषु सम्भवाः ।	
द्वीपान्तरगताश्चापि वेङ्कटेशमहोत्सवे ॥	३१
धारयन्तो महाभक्तिमागमिष्यन्ति कोटिशः ।	
सर्वे लब्ध्वा वरं चेष्टं भविष्यन्ति मुदाऽन्विताः ॥	३२
अप्राकृतः स्वर्णसानुरपि श्रीवेङ्कटाचलः ।	
प्राकृताचलवद् भूमौ भविष्यति कलौ युगे ॥	३३
मतान्तरप्रविष्टानामपि भक्तिर्भविष्यति ।	
सर्वात्मके रमाऽधीशे वेङ्कटेशे पराऽत्मनि ॥	३४
एवं कृत्वा परां भक्तिं भविष्यन्ति च पावनाः ।	
भक्तिमन्तं परो दृष्ट्वा भक्तिं गच्छेद्वि केशवे ॥	३५
तथा दृष्टफलार्थञ्च भजमानाय सादरम् ।	
दृष्टप्रदं वेङ्कटेशं दृष्ट्वा तं तु व्रजेत् पुनः ॥	३६
सोऽपि दृष्टफलं लब्ध्वा वरानपि शतं भजेत् ।	
चिह्नं कलियुगे श्रीश्रेष्ठे विहरिष्यति भूधरे ॥	३७

अत एव 'कलिः साधुः साधु शूद्रश्च योषितः ।	
विशेषाद्वेङ्कटात्रीशसेवनं साधुभूषणम्' ॥	३८
इत्येवं मुनयो देवा वदिष्यन्ति कलौ युगे ।	
कलिदोषपरीतानां नराणां पापकर्मणाम् ॥	३९
वेङ्कटेशात्परो देवो नास्त्यन्यः शरणं भुवि ।	
"वेङ्कटेशसमो देवो नास्ति नास्ति महीतले ॥	४०
स्वामिपुष्करिणीतीर्थसमं नास्ति न चास्ति हि ।"	
द्रव्यार्जनपरो नित्यं भविष्यति कलौ युगे ॥	४१
अनुग्रहाय लोकानां कामैः पूर्णोऽपि सर्वदा ।	
'इदं द्रव्यं त्वया तावत् दातव्यं मम सम्प्रति ॥	४२
तवानीष्टमहं दास्ये दास्य' इत्येव च ब्रुवन् ।	
इति सर्वजनैः सार्धं क्रीडमाणो भविष्यति ॥	४३
कलौ तदीयचारित्रं वक्तुं कल्पशतैरपि ।	
न शक्यमुक्तं लेशेन चरित्रं तस्य मङ्गलम् ॥	४४

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटेशस्य कलिदोषो-  
पहतेषु विशेषतः कृपाधिक्यवर्णनं नाम अष्टपञ्चाशोऽध्यायः

अथ एकोनषष्ठितमोऽध्यायः

चेतनस्य आचार्याश्रयणात् पुरुषार्थप्राप्तिनिरूपणम्

मुनयः —

भगवन् सर्वशास्त्रार्थवेदवेदाङ्गपारग ! ।

आचार्यसंश्रयादेव लभन्ते हि परां गतिम् ॥ १

अहो हि वैष्णवो धर्म इति चोक्तं त्वया पुरा ।

सूत ! त्वया तु तत्सर्वं वक्तव्यं नस्तपोधन ! ॥ २



श्रीसूतः—

श्रूयतामभिधास्यामि सङ्गहेण तपोधनाः । ।	
उद्धृत्य भूमिं पातालात् वेङ्कटाह्वयभूधरे ॥	३
सितेन भूवराहेण धरण्यै भागिता पुरा ।	
पृच्छन्त्यै वैष्णवान् धर्मान् ये ये धर्मा मनोहराः ॥	४
व्यासप्रसादात् तान् धर्मान् वेद्यग्रहं मुनिसत्तमा ।	
सङ्गहेण प्रवक्ष्यामि गोप्याद्गोप्यतरानपि ॥	५
तेषां वैष्णवधर्माणां विश्वासस्तु परा गतिः ।	
यावानपि च विश्वासः तावती सिद्धिरीरिना ॥	६
गुरुरेव परो धर्मो गुरुरेव परा गतिः ।	
पापं क्षपयति क्षिप्रं गुरुरेवाऽऽत्मनिवनः ॥	७
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन विश्वसेत्परमं गुरुम् ।	
तत्पापं तद्गुरुर्हन्ति तत्पापं तद्गुरुर्दरेत् ॥	८
पारम्पर्यक्रमाद्विष्णुः सर्वपापहरो गुरुः ।	
कारुण्यनूतिः श्रीविष्णुः गुरुरूपी च पापिनः ॥	९
शास्त्रहस्तेन संसारमग्नानुद्धरते जनान् ।	
न्यायविच्छास्त्रवेदी च धर्माधर्मविवेकवान् ॥	१०
तपोनिष्ठो ब्रह्मनिष्ठः तप स्वाध्यायने रतः ।	
निर्ममो निरहङ्कारः शान्तो दान्तो विमत्सरः ॥	११
गुरुरित्युच्यते यस्तु परार्थैकप्रयोजन ।	
भीतः संसारदावेभ्यः शान्तो दान्तः शुचिर्बुधः ॥	१२
अतः परमनिर्विण्णो निर्वैरः सर्वजन्तुषु ।	
समाश्रयेद्गुरुं भक्त्या महाविश्वात्मपूर्वकम् ॥	१३

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ५९ तमोऽध्यायः ११५

- निक्षिपेत्सर्वभारांश्च गुरोः श्रीपादपङ्कजे ।  
नित्यनैमित्तिके कुर्वन् यथाशक्ति भयाद्धरेः ॥ १४
- मोक्षार्थं निर्नरस्तिष्ठेत् मन्त्रान्तरविवर्जितः ।  
साधनान्तरहीनश्च द्वयानुष्ठानतत्परः ॥ १५
- “नाष्टाक्षरात्परो मन्त्रो नास्ति नारायणात्परः ।  
नास्ति न्यासात्परो योगो ” ब्रवीति च तथा श्रुतिः ॥ १६
- एवं हि वर्तमानस्य देहान्ते परमं पदम् ।  
न्यासविद्यापरश्चैवं वर्तते परमार्थवित् ॥ १७
- ध्याननिष्ठश्च लब्धाशी वैराग्यं परमाश्रितः ।  
अहङ्कारविहीनश्च यतवाक्कायमानसः ॥ १८
- सर्वेन्द्रियाणि संयम्य विविक्तं स्थलमाश्रितः ।  
बलद्विविहीनश्च कामक्रोधविवर्जितः ॥ १९
- शान्तश्च निर्ममश्चापि परिग्रहविवर्जितः ।  
कल्पते ब्रह्मभूयाय ब्रह्मव्यानस्य वैभवात् ॥ २०
- ब्रह्मभावं गतस्यास्य प्रसन्नं मानसं भवेत् ।  
तस्य शोको न चेच्छा च सर्वभूतसमो भवेत् ॥ २१
- हरिभक्तिर्भवेत्तस्य भक्त्या जानाति केशवम् ।  
भगवत्तत्त्वयाथात्म्यं वेत्ति पश्चात् प्रसन्नवीः ॥ २२
- ततः परमसङ्गाच्च विष्णोः सायुज्यमश्नुते ।  
न्यासविद्यानिविष्टस्य कर्मणां त्याग इष्यते ॥ २३
- त्यागश्च फलतः प्रोक्तः स्वरूपेण न च क्वचित् ।  
कर्मणो नियतस्यैव त्यागो वै मोहनूलकः ॥ २४
- कर्माणि त्यजतः पुंसो नास्ति देहस्य धारणम् ।  
यज्ञादीनां त्यक्तसङ्गः कुर्यात्कर्माण्यशेषतः ॥ २५

सृष्ट्वा यज्ञान् प्रजाश्चापि प्राह ब्रह्मा चतुर्मुखः ।	
‘यज्ञ एव परं धर्मो भगवत्प्रीतिकारकः ॥	२६
अभीष्टकामधुक् यज्ञः तस्माद्यज्ञः परा गतिः ।	
तस्माद्यज्ञं प्रजाः सर्वाः कुर्युः सङ्गविवर्जिताः ॥	२७
यज्ञैः प्रीतो हरिः सर्वमभीष्टञ्च प्रयच्छति ।	
लब्ध्वाऽभीष्टं वरं तस्मात् यज्ञं कुर्यात् न चेत्पुनः ॥	२८
स्तेन एव स विज्ञेयः सर्वकर्मबहिष्कृतः ।	
ततः कर्म च कर्तव्यं फलसङ्गविवर्जितम् ॥	२९
कर्मणैव पुरा केचित् परां सिद्धिमिहो गताः ।	
भगवत्तत्त्वनिष्ठस्य तदाज्ञालङ्घनं महान् ॥	३०
दोषः तदाज्ञा वेदाश्च स्मृतयो धर्मसङ्ग्रहाः ।	
आज्ञानुवर्तनं पुंसां आदौ कार्यं हि सर्वदा ॥	३१
हरौ सर्वाणि कर्माणि सन्न्यसेद्योगवित्तमः ।	
निर्ममो नित्यतृप्तश्च भगवद्भयानभाश्रितः ॥	३२
सुखदुःखे समे कृत्वा लाभं हानिं जयं तथा ।	
पराजयञ्च शीतोष्णे मानं चाप्यवमानकम् ॥	३३
सर्वत्रगं परं ब्रह्म ध्यायन् सन्ततमात्मनि ।	
प्रातरारभ्य कर्माणि कुर्वन्निज्यादिकं तथा ॥	३४
स्वाध्यायञ्च तथा योगं तत्कालेन हापयेत् ।	
नित्यं नैमित्तिकं कर्म यथाशक्ति विनिर्वहेत् ॥	३५
बृन्दावनं वेङ्कटाद्रौ मालाकरणमेव च ।	
विमानलेपनञ्चैव यच्चान्यत् प्रीतिकारकम् ॥	३६
उत्सवे सेवनञ्चैव यथाशक्ति निवेदनम् ।	
तदीयाराधनञ्चापि कुर्वन्नेषमात्मसु ॥	३७

श्रीमद्वेङ्कटनाथस्य जलैस्तु विनिवेदितैः ।

अत्रैर्वस्त्रैस्तथा माल्यैः शरीरस्य च पोषणम् ।

कुर्वन्नाचार्यमाहात्म्यात् परां गतिमवाऽऽप्नुयात् ॥ ३८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये चेतनस्य आचार्याश्रयणात्

पुरुषार्थप्राप्तिवर्णनं नाम एकोनषष्टितमोऽध्यायः

अथ षष्टितमोऽध्यायः

अष्टाङ्गयोगस्वरूपनिरूपणम्

श्रीसूतः —

द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परञ्चापरमेव च ।

अपरं ब्रह्म जीवस्तु क्षराक्षरविभेदवान् ॥ १

क्षरस्तु सर्वभूतं स्यात् कूटस्थो ह्यक्षरः स्मृतः ।

परं ब्रह्म तु सत्त्वात्मा परमात्मा प्रकीर्तितः ॥ २

विभर्ति सर्वलोकांश्च प्रविश्यान्तर्नियच्छति ।

ईश्वरो योऽव्ययो नित्यः स एव पुरुषोत्तमः ॥ ३

अतीतः क्षरमत्यर्थं अक्षरञ्च परः पुमान् ।

यस्मात्तस्मात्तु विख्यातो लोकेऽसौ पुरुषोत्तमः ॥ ४

इति यो वेत्ति पुरुषं असम्बुद्धः परार्थवित् ।

स सर्वविद्भजेदेनं वेङ्कटेशसमाधिना ॥ ५

यस्तु वेदविदां श्रेष्ठो योगमारभ्य बुद्धिमान् ।

यमञ्च नियमञ्चैव पीठभेदांस्तथैव च ॥ ६

प्राणायामांश्च विविधान् प्रत्याहारञ्च साधयेत् ।

धारणं ध्यानभेदांश्च स समाधिं प्रसाधयेत् ॥ ७

यमादिध्यानपर्यन्ताः समाधेः सिद्धिहेतवः ।	
समाधिः स्वाङ्गसहितस्त्वष्टाङ्गो योग उच्यते ॥	८
कुर्याद्वि प्रत्यहं योगं एतावदिति निश्चयः ।	
निषिद्धाचारतः पुंसो निवृत्तिर्यम उच्यते ॥	९
स्वाध्यायो नियमः प्रोक्तः स्वस्तिकाद्यासनं विदुः ।	
रेचकः पूरकश्चापि कुम्भकश्चेति विश्रुतः ॥	१०
प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तः प्रत्याहारः स कथ्यते ।	
चित्तोपसंहारिण्यां तु विषयेभ्यश्च योगिनः ॥	११
आत्मन्येवात्र मनसः स्थापनं धारणं स्मृतम् ।	
तैलधारवदच्छिन्नज्ञानसन्तानलक्षणम् ॥	१२
ध्यानं स्यादात्मविज्ञानं ज्ञातृज्ञेयभिदात्मकम् ।	
ज्ञातृज्ञेयस्य बुद्धेश्च भेदज्ञानं यदा न हि ॥	१३
परमानन्दजनने परानन्दे चिदात्मनि ।	
मनो यदा महायोगं समाधिर्गीयते तदा ॥	१४
एवमभ्यस्य मेधावी पञ्चकालपरायणः ।	
तत्तत्कालविधानोक्तं आचारश्च समाचरेत् ॥	१५
सायङ्काले प्रतिदिनं योगं कुर्याद्विचक्षणः ।	
विविक्तदेशे कीटादिसर्वबाधाविवर्जिते ॥	१६
मृद्धासने सुखासीनः स्वस्तिकाद्यासने तथा ।	
ऋजुकायशिरोग्रीवो न साग्रन्यस्तलोचनः ॥	१७
इडया वायुमाकृष्य कुम्भयेच्च शनैःशनैः ।	
उद्धोध्य कुण्डलीं सुप्तां सुषुम्नायां प्रवेशयेत् ॥	१८
यदा तु योगिनो देहे जिहासा वर्तते तदा ।	
ओमित्युच्चारयेद्योगी वेङ्कटेशमनुसरन् ॥	१९

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ६० तमोऽध्यायः	११९
ब्रह्मरन्ध्राद्विर्नर्गच्छन् प्रविशेदर्चिराकृतिम् । अर्चिरादिकमार्गेण प्रविश्य परमं पदम् ॥	२०
सायुज्यं वेङ्कटेशस्य लब्ध्वाऽऽनन्दी भवेच्चिरम् । यदि स्यात् वेङ्कटेशस्य कैङ्कर्ये धीर्बलीयसी ॥	२१
तदा योगं स्थिरः कुर्यात् उपदेशाद्गुरोः स्वयम् । पूर्वोक्तेनैव मार्गेण योगं कुर्याद्विचक्षणः ॥	२२
गीर्भगवान्—	
इडया वायुमाकृष्य सुषुम्नायां प्रवेशयेत् । अर्चिषा सह कोष्ठाग्नेः प्रविशेद्धृदयान्बुजम् ॥	२३
तलस्थं केशवं बुद्ध्वा शङ्खचक्रगदाधरम् । आज्ञास्थानमतीत्यैव भ्रूमध्यं प्रविशेत् सुधीः ॥	२४
नीवारशूकवत्सूक्ष्मं तत्र पश्येच्छ्रूय पतिम् । सहस्रपत्रकमलमध्यस्थं चन्द्रमण्डलम् ॥	२५
तत्र पश्येद्रमाग्नीशं सुराग्नीशं सुधात्मकम् । तत्सङ्कल्पाच्चन्द्रबिम्बात् सवर्त्यः पूषबिन्दुना ॥	२६
अन्तर्बहिस्तथा व्याप्तं स्वस्य देहं विचिन्तयेत् । सुषुम्नायास्तथा मार्गात् अवरुह्य शनैःशनैः ॥	२७
प्राणादीन् स्थापयेद्वायौ तत्तत्स्थानेषु पूर्ववत् । एवञ्च प्रत्यहं कुर्वन् सन्ध्यामध्यमरात्रिषु ॥	२८
विना हस्तेन कुर्वीत वायोर्धारः प्रमात्मनि । शारीरादधिकं वायुं द्वादशाङ्गुलमानकम् ॥	२९
शरीरेण समं कुर्यात् न्यूनं वा वायुमात्मनि । एवमभ्यासयोगेन वज्रकायो भवेन्नरः । कालमृत्यू विनिर्जित्य जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥	३०

## सनकसनन्दनतीर्थमाहात्म्यम्

अस्य योगस्य विघ्नाश्चेत् भवन्ति बहवो भुवि । अविघ्नयोगसिद्धयर्थं वेङ्कटाह्वयभूधरे ॥	३१
अस्ति किञ्चित् सरः पुण्यं नाम्ना सनकनन्दनम् । उत्तरे पापनाशस्य कोशार्थं सिद्धसेविते ॥	३२
अतिगोप्यं न तत् केऽपि जानन्ति मनुजा भुवि । मार्गशीर्षे सिते पक्षे द्वादश्यामरुणोदये ॥	३३
स्वामिपुष्करिणीतीर्थे स्नात्वा नियतमानसः । त्रयोदशीं समारभ्य स्नायात् सनकनन्दने ॥	३४
स्नात्वा तु तत्र विमलो वेङ्कटाद्रिपतेः पुनः । श्रीमदष्टाक्षरं मन्त्रं जपेद्युतमन्वहम् ।	
पश्चात् समभ्यसेद्योगं ततः सिद्धो भविष्यति ॥	३५

## क यरसायनतीर्थमाहात्म्यम्

रहस्यं तत्समीपेऽस्ति तीर्थं कायरसायनम् । तस्य पानात्तु देहोऽपि शुद्धो भवति तत्क्षणात् ॥	३६
यत्किञ्चित् पाण्डुपलन्तु परीक्षार्थं विनिक्षिपेत् । तस्मिंस्तीर्थे क्षणादेव श्यामं भवति शोभनम् ॥	३७
शिलया पिहितं तत्तु योगिभिः सनकादिभिः । महात्मनां पुण्यवतां दर्शनं हि ददाति तत् ॥	३८
येन केन प्रकारेण कृत्वा देहं दृढं बुधः । कैङ्कर्यमेव कुर्वीत वेङ्कटेशस्य सर्वदा ॥	३९

स्वरूपमात्मनो यस्मात् कैङ्कर्यं शेषिणो हरेः ।	
कैङ्कर्यहीनः पुरुषः स्वामिद्रोही न संशयः ॥	४०
तस्मादेव तु कुर्वीत नित्यं नैमित्तिकं बुधः ।	
अन्यच्च प्रीतिकर्मापि यत्तु शास्त्रैरनिन्दितम् ॥	४१
इत्युक्तं प्राक् वराहेण धरण्यै वेङ्कटाचले ।	
शरीरधारणं भोगो ज्ञानं सामर्थ्यमेव च ॥	४२
क्षेत्रं गृहं धनं धान्यं यच्चान्यदुपकृतम् ।	
सर्वं वेङ्कटनाथस्य कुर्यात् स्वायं नमज्जसा ॥	४३
विनश्वरमिदं सर्वं जगत् पश्येद्धि बुद्धिमान् ।	
निरये पापकारी तु पतत्येव न संशयः ॥	४४
पुण्यकृत् सुखमाप्नोति ध्रुवमित्येव बुद्धिमान् ।	
चिन्तयेत्सततं योगी चित्ते वेङ्कटनायकम् ॥	४५
धर्मशास्त्रं सदा पश्येत् गुरुशुश्रूषणे रतः ।	
गृहस्थः स्वेषु दारेषु रमेत् योगी जितेन्द्रियः ॥	४६
साधून्नेव सदा योगी पृच्छेद्वै हितमात्मनः ।	
विचारयेच्च वेदार्थान् सदा वेदान्तमभ्यसेत् ॥	४७
बहुनेह किमुक्तेन विहितं नैव सन्त्यजेत् ।	
निषिद्धं नानुतिष्ठेद्धि सारोऽयं धर्मसङ्ग्रहः ॥	४८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अष्टाङ्गयोगस्वरूपादि-

वर्णनं नाम षष्ठितमोऽध्यायः





अथ एकघटितमोऽध्यायः

## श्रीवेङ्कटेशाष्टोत्तरशतनामावलिः

मुनयः—

‘सूत सर्वार्थतत्त्वज्ञ सर्ववेदान्तपारग ! ।  
 येन चाऽऽराधितः सद्यः श्रीमद्वेङ्कटनायकः ॥ १  
 भवत्यनीष्टसर्वार्थप्रदः तद्ब्रूहि नो मुने ! ’ ।  
 इति पृष्टस्तदा सूतो ध्यात्वा स्वात्मनि तत्क्षणात् ।  
 उवाच मुनिशार्दूल्यन् श्रूयनामिति वै मुनिः ॥ २

श्रीसूतः —

अस्ति किञ्चिन्महद्गोप्यं भगवत्प्रीतिकारकम् ।  
 पुरा शेषेण कथितं कपिलाय महात्मने ॥ ३  
 नाम्नामष्टशतं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।  
 आदाय हेमपद्मानि स्वर्णदीसम्भवानि च ॥ ४  
 ब्रह्मा तु पूर्वमभ्यर्च्य श्रीमद्वेङ्कटनायकम् ।  
 अष्टोत्तरशतैर्दिव्यैः नामभिः मुनिपूजितैः ॥ ५  
 स्वामीष्टं लब्धवान् ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः ।  
 भवद्विरपि पद्मैश्च समर्च्यः तैश्च नामभिः ॥ ६  
 तेषां शेषनगाधीशमानसोल्लासकारिणाम् ।  
 नाम्नामष्टशतं वक्ष्ये वेङ्कटाद्रिनिवासिनः ॥ ७  
 आयुरारोग्यदं पुंसां धनधान्यसुखप्रदम् ।  
 ज्ञानप्रदं विशेषेण महदैश्वर्यकारकम् ॥ ८  
 अर्चयेत् नामभिर्दिव्यैः वेङ्कटेशपदाङ्कितैः ।  
 नाम्नामष्टशतस्यास्य ऋषिर्ब्रह्मा प्रकीर्तितः ॥ ९

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ६१ तमोऽध्यायः

१२३

छन्दोऽनुष्टुप् तथा देवो वेङ्कटेश उदाहृतः ।

नीलगोक्षीरसम्भूतो बीजमित्युच्यते बुधैः ॥

१०

श्रीनिवासस्तथा शक्तिः हृदयं वेङ्कटाधिपः ।

विनियोगस्तदाऽभीष्टसिद्धयर्थे च निगद्यते ॥

११

### नामावलिस्तोत्रम्

ॐ नमो वेङ्कटेशाय शेषाद्रिनिलयाय च ।

वृषद्वगोचरायाथ विष्णवे सततं नमः ॥

१२

मेरुपुत्रगिरीशाय सरस्वामितटीजुषे ।

कुमाराकल्पसेव्याय वज्रिद्विषयाय च ॥

१३

सुवर्चलासुतन्यस्तसैनापत्यभराय च ।

रामाय पद्मनाभाय सदा वायुस्तुताय च ॥

१४

त्यक्तवैकुण्ठलोकाय गिरिकुञ्जविहारिणे ।

हरिचन्दनगोत्रेन्द्रस्वामिने सततं नमः ॥

१५

शङ्खराजन्यनेत्राब्जविषयाय नमो नमः ।

वसूपरिचरत्रात्रे कृष्णाय सततं नमः ॥

१६

अब्धिकन्यापरिष्वक्तवक्षसे वेङ्कटाय च ।

सनकादिमहायोगिपूजिताय नमो नमः ॥

१७

देवजित्प्रमुखानन्तदैत्यसङ्घप्रणाशिने ।

श्वेतद्वीपवसन्मुक्तपूजिताङ्घ्रियुगाय च ॥

१८

शेषपर्वतरूपत्वप्रकाशप्रपराय च ।

सानुस्थापितताक्ष्याय ताक्ष्याचलनिवासिने ॥

१९

मायागूढविमानाय गरुडस्कन्धवासिने ।

अनन्तशिरसे नित्यं अनन्ताक्षाय ते नमः ॥

२०

अनन्तचरणायाथ श्रीशैलनिलयाय च ।	
दामोदराय ते नित्यं नीलमेघनिभाय च ॥	२१
ब्रह्मादिदेवदर्शविश्वरूपाय ते नमः ।	
वैकुण्ठागतसद्देवविमानान्तर्गताय च ॥	२२
अगस्त्याभ्यर्थिताशेषजनदृग्गोचराय च ।	
वासुदेवाय हरये तीर्थपञ्चकवासिने ॥	२३
वामदेवप्रियायाथ जनकेष्टप्रदाय च ।	
मार्कण्डेयमहातीर्थजातपुण्यप्रदाय च ॥	२४
वाक्पतिब्रह्मदात्रे च चन्द्रलवण्यदायिने ।	
नारायणनगेशाय ब्रह्मवल्लोत्सवाय च ॥	२५
शङ्खचक्रवरानम्रलसत्करतलाय च ।	
द्रवन्मृगमदासक्तविश्रहाय नमो नमः ॥	२६
केशवाय नमो नित्यं नित्ययौवनमूर्तये ।	
अर्थितार्थप्रदात्रे च विश्वतीर्थाघहारिणे ॥	२७
तीर्थस्वामिसरस्नातजनाभीष्टप्रदायिने ।	
कुमारधारिकावासस्कन्दाभीष्टप्रदाय च ॥	२८
जानुदघ्नसमुद्भूतपोत्रिणे कूर्ममूर्तये ।	
किन्नरद्वन्द्वशापान्तप्रदात्रे विभवे नमः ॥	२९
वैखानसमुनिश्रेष्ठपूजिताय नमो नमः ।	
सिंहाचलनिवासाय श्रीमन्नारायणाय च ॥	३०
सद्भक्तनीलकण्ठार्च्यनृसिंहाय नमो नमः ।	
कुमुदाक्षगणश्रेष्ठसैष्यप्रदाय च ॥	३१
दुर्मेधप्राणहर्त्रे च श्रीधराय नमो नमः ।	
क्षत्रियान्तकरामाय मत्स्यरूपाय ते नमः ॥	३२

पाण्डवारिप्रहर्त्रे च श्रीं कराय नमो नमः ।

उपत्यक्प्रदेशस्थ शङ्करध्यातमूर्तये ॥ ३३

रुक्माब्जसरसीकूललक्ष्मीकृततपस्विने ।

लसल्लक्ष्मीकराम्भोजदत्तकल्हारकस्तजे ॥ ३४

सालग्रामनिवासाय शुक्रदृग्गोचराय च ।

नारायणार्थिताशेषजनदृग्द्विषयाय च ॥ ३५

मृगयारसिक्रयाथ वृषभासुरहारिणे ।

अञ्जनागोत्रपतये वृषभाचलवासिने ॥ ३६

अञ्जनासुतदात्रे च माधवीयाघहारिणे ।

प्रियङ्गुप्रियनक्षाय श्वेतकोलवराय च ॥ ३७

नीलधेनुपयोधारासेकदेहोद्भवाय च ।

शङ्करप्रियमित्राय चोलपुत्रप्रियाय च ॥ ३८

सुधर्मिणीसुचैतन्यप्रदात्रे मधुघातिने ।

कृष्णाख्यविप्रवेदान्तदेशिकत्वप्रदाय च ॥ ३९

वराहाचलनाथाय बलभद्राय ते नमः ।

त्रिविक्रमाय महते हृषीकेशाय ते नमः ॥ ४०

अच्युताय नमो नित्यं नीलाद्रिनिलयाय च ।

नमः क्षीराब्धिनाथाय वैकुण्ठाचलवासिने ॥ ४१

मुकुन्दाय नमो नित्यं अनन्ताय नमो नमः ।

विरिञ्चाभ्यर्थिताऽनीतसौम्यरूपाय ते नमः ॥ ४२

सुवर्णमुखरीस्नातमनुजा शिष्टदायिने ।

हलायुधजगतीर्थसमस्तफलदायिने ।

गोविन्दाय नमो नित्यं श्रीनिवासाय ते नमः ॥ ४३

अष्टोत्तरशतं नाम्नां चतुर्थ्यां नमसाऽन्वितम् ।	
यः पठेच्छृणुयान्नित्यं श्रद्धामक्तिसमन्वितः ॥	४४
तस्य श्रीवेङ्कटेशस्तु प्रसन्नो भवति ध्रुवम् ।	
अर्चनायां विशेषेण ग्राह्यमष्टोत्तरं शतम् ॥	४५
वेङ्कटेशाभिधेयैर्यो वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ।	
अर्चयेन्नामभिस्तस्य फलं मुक्तिः न संशयः ॥	४६
गोपनीयमिदं स्तोत्रं सर्वेषां न प्रकाशयेत् ।	
श्रद्धामक्तियुजामेव दापयेत् नामसङ्ग्रहम् ॥	४७
इति शेषेण कथितं कपिलाय महात्मने ।	
कपिलाख्यमहायोगिसकाशात्तु मया श्रुतम् ।	
तदुक्तं भवतामद्य सद्यः प्रीतिकरं हरेः ॥	४८

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीवेङ्कटेशाष्टोत्तरशतनामावलि-  
कीर्तनं नाम एकषष्ठितमोऽध्यायः

अथ द्विपष्ठितमोऽध्यायः

महर्षीणां श्रीवेङ्कटेशसेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलगमनम्

श्रीसूतः —

‘ब्रूत यूयं पुनः श्रोतुं किमिच्छथ तपोधनाः । ।  
वक्ष्यामि तदशेषञ्च नात्र कार्या विचारणा ।’  
इत्युक्ता मुनयः सर्वे प्रोचुरेवमिदं वचः ॥ १

मुनयः—

‘भगवन् भगवद्भक्तिकक्षीरसागरचन्द्रमाः । ।  
वेङ्कटेशस्य माहात्म्यं उक्तं सूत त्वयाऽनघ ! ॥ २

विचितं तस्य चारितं औदार्यं निस्तुलं तथा ।	
रहस्यानि च नामानि सम्यगस्मानिरेव हि ॥	३
श्रोत्राभ्यां पीतमेतत्तु वेङ्कटेशकथाऽमृतम् ।	
तस्माच्चक्षुर्द्रव्यस्यापि पिपासा तु गरीयसी ॥	४
अस्माँस्त्वमनुजानीहि सेवार्थं वेङ्कटेशितुः ।	
रहस्यानि च नामानि शेषाद्रेश्व तदीशितुः ॥	५
स्वामिपुष्करिणीतीर्थमाहात्म्यञ्च प्रकाशितम् ।	
अत्यद्भुतं हरेर्दिव्यं कलौ माहात्म्यमेव तु ॥	६
श्रुतञ्च मुनिशार्दूल ! सम्यगस्मानिरेव हि ।	
श्रोत्राभ्यां सम्यगापीतं वेङ्कटेशकथाऽमृतम् ॥'	७
इत्युक्तस्तु ततः सूतः प्रोवाच मुनिपुङ्गवान् ।	
'गच्छध्वं मुनयो यूयं शनैः श्रीवेङ्कटाचलम् ॥	८
तत्र गत्वा गिरिं पुण्यं कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ।	
स्नात्वा पर्यन्ततीर्थेषु नत्वा पर्यन्तगान् सुरान् ॥	९
आरुह्य रत्नसानुं तं शुककोविलम्बजुलम् ।	
स्वामिपुष्करिणीं पद्मवनवातेन रञ्जिताम् ॥	१०
प्राप्य स्नात्वा च तत्तीर्थे प्रदक्षिणविधानतः ।	
परिसृत्य विमानञ्च दर्शनात् पापनाशनम् ॥	११
हृदयानन्दजननं पुलकोद्गमकारकम् ।	
प्रविश्य भूवराहञ्च नत्वा श्रीवेङ्कटाधिपम् ॥	१२
श्रीभूमिभ्यां मुदा युक्तं शङ्खचक्रवरायुधे ।	
दधानं पुण्डरीकाक्षं समयमानमुखाम्बुजम् ॥	१३
दयाऽमृततरङ्गाब्धिमन्दसितमनोहरम् ।	
सम्यग्दृष्ट्वा च नत्वा च स्तुत्वा नामानिरेव च ॥	१४

अर्चयित्वा च कमलैः लब्ध्वाऽभीष्टञ्च दुर्लभम् ।	
कृतकृत्या विवर्तध्वं 'इत्युक्ता मुः यस्तथा ॥	१५
आमन्त्र्य सूनं ते सर्वे प्रहृष्टाश्च प्रतस्थिरे ।	
भरद्वाजः कौशिकश्च जाबालिरथ काश्यपः ॥	१६
क्रतुर्दक्षः पुलस्त्यश्च गौतमः पुलहस्तथा ।	
आङ्गीरसो देवक्षश्च देवदर्शन एव च ॥	१७
कौत्सः कण्वो मृकण्डुश्च शतानन्दो महामुनिः ।	
मैत्रेयप्रमुखास्तत्र सङ्गता ये तपोधनाः ॥	१८
घुष्यन्तः सङ्घः श्वोच्चैः गोविन्देति पुनः पुनः ।	
तीर्त्वा भागीरथीं पश्चात् गौतमीं कृष्णवेणिकाम् ॥	१९
तत्र तत्र महानद्यां स्नात्वा स्नात्वा तपोधनाः ।	
वेङ्कटाद्रिं समागत्य तप्तजाम्बूनदात्मकम् ॥	२०
सर्वतीर्थमयं पुण्यं सर्वसिद्धनिषेवितम् ।	
मदमञ्जुलमायूरकेकास्वनमनोहरम् ॥	२१
दिव्यनिर्झरसम्पूर्णं फलपुष्पद्रुमैर्युतम् ।	
अनतिक्रम्य सूक्तोक्तसेवाक्रममिमे बुधाः ॥	२२
चक्रुः श्रीवेङ्कटेशस्य सेवां परमपावनीम् ।	
स्नानं मन्त्रैश्च कुर्वन्तो निर्झरेषु सरस्तु च ॥	२३
पश्यन्तस्तानि रम्याणि सानूनि मणिमन्ति च ।	
शृण्वन्तः श्रेतरम्याणि पक्षिणां वचनान्यपि ॥	२४
गायन्तः सामगानानि पठन्तः स्तुतिसञ्चयम् ।	
नृत्यन्तः सम्भ्रमात् सर्वे श्वेलन्तश्च तपोधनाः ॥	२५
उत्पतन्तः पतन्तश्च हर्षविशवशं गताः ।	
गिरिप्रदक्षिणं सम्यक् कुर्वन्तस्ते शनैः शनैः ॥	२६

श्रीवाराहपुराणे प्रथमभागे ६२ तमोऽध्यायः १२९

स्नात्वा कापिलतीर्थं च दृष्ट्वा नत्वा शिवं गिरिम् ।	
आरुह्य मेरुशृङ्गानं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ॥	२७
‘ अत्यद्भुतात् रत्नसानोः हेमाद्रेरद्भुतो गिरिः ।	
अयं ह्यभूतपूर्वो हि श्रीमद्वेङ्कटभूधरः ’ ॥	२८
इति ब्रुवन्तस्ते सर्वे ददृशुर्दिव्यमुत्तमम् ।	
विमानं स्वामितीर्थं च स्नात्वा देवं श्रियःपतिम् ॥	२९
कोटिकन्दर्पलावण्यं किरीटमकुटोज्ज्वलम् ।	
उरस्थितश्रियाऽऽक्रान्तमुक्तादामोपशोभितम् ॥	३०
चतुर्भुजमुदाराङ्गं शङ्खचक्रधरं परम् ।	
नीलमेघनिभं श्यामं पीतवाससमच्युतम् ॥	३१
श्रीभूमिसहितं विष्णुं पद्मार्चितपदाम्बुजम् ।	
प्रणेमुः सहसा हृष्टाः हर्षोत्फुल्लविलोचनाः ।	
तुष्टुवुर्वेदमन्त्रैश्च स्तोत्रैश्च श्रुतिसम्मतैः ॥	३२

### महर्षिकृतभगवत्स्तुतिः

मुनयः —

‘ यः पार्थिवानि गणयेत् रजांसि सुबहून्यपि ।	
विष्णोर्वीर्याणि गणयेत् निश्शेषं स पुमान् हरेः ॥	३३
त्रेधा च निदधे पादान् भूमौ विष्णुस्त्रिविक्रमः ।	
धर्माश्च धारयन् यस्तु तस्मै ते विष्णवे नमः ॥	३४
अत्यतिष्ठद्विधतो यो व्याप्य भूमिं दशाङ्गुलम् ।	
भूतं भव्यञ्च यद्व्याप्तं तस्मै ते विष्णवे नमः ॥	३५
पादो विश्वं त्रिपाद्योम यस्य तस्मै नमो नमः ।	
ऋचः सामानि यस्मात्तु जज्ञिरे तुरगास्तथा ॥	३६



विप्रो मुखात् भुजात् राजा वैश्यश्चोर्वोरनन्तरम् ।	
शूद्रः पद्भ्यां मुखादग्निः इन्द्रश्च मनसो विधुः ॥	३७
नेत्रात् सूर्योऽथ सञ्जज्ञे तस्मै ते ब्रह्मणे नमः ।	
इयत्तया गुणानां ते निवर्तन्ते न मानवाः ।	
बुद्धीनां किन्तु दौर्बल्यात्, वेदश्चापि तथैव भोः ' ॥	३८
एवं तं बहुधा स्तुत्वा स्तोत्रैः श्राव्यैर्मनोहरैः ।	
आदाय पद्मपत्राणि श्रीपादं वेङ्कटेशितुः ॥	३९
अर्चयामासुरव्यग्रं नामभिः सूतभाषितैः ।	
ततः प्रीतो जगद्धाता बभाषे वेङ्कटेश्वरः ॥	४०
‘ तत्रैवं नैमिशारण्ये प्रीतोऽस्मि भवतामहम् ।	
वेङ्कटाचलमाहात्म्यश्रवणान्मुनयो बुधाः ॥	४१
चिरकालतपोलभ्यं अपि दत्तं फलं मया ।	
यद्यदिष्टं मुनीनान्तु भवतां दत्तमेव तत् ॥	४२
वेङ्कटाद्रेस्तु माहात्म्यं बहुदूरस्थितोऽपि यः ।	
शृणोति वा श्रावयति पठेद्वा श्रद्धयाऽन्वितः ॥	४३
कन्यामासे विशेषेण तस्याहं सुलभो ह्यहम् ।	
धनं धान्यं महीमिष्टां पुत्रान् पौत्रान् ददाम्यहम् ॥	४४
ददामि सर्वान् कामांश्च देहान्ते मत्पदं तथा ' ।	
इति लब्ध्वा वरांस्ते तु तत्र वत्सरपञ्चकम् ॥	४५
स्नात्वा सर्वेषु तीर्थेषु वेङ्कटाद्रौ तपोधनाः ।	
आश्चर्याप्यपि दृष्ट्वा ते सम्यगाराध्य माधवम् ।	
पुनश्च नैमिशारण्यं ययुः सर्वे तपोधनाः ॥	४६

सुतं प्रति शौनकादिस्तुतिः

गत्वा तु नैमिशारण्यं मुनिसङ्घनिषेवितम् ।	
उपसृत्य पुनः सूतं प्रोचुरेवमिदं वचः ॥	४७
‘अहो! तव तु विज्ञानं अहो! सामर्थ्यमेव ते ।	
यथोक्तं भवता विष्णोः वेङ्कटाद्रिनिवासिनः ॥	४८
रूपमौदार्यरूपञ्च गिरिरूपं तथैव च ।	
स्थितं तथैव तत्सर्वं अहो! वेङ्कटभूधरः ॥	४९
त्वत्प्रसादात् वयं सर्वे कृतार्थाः स्मो महामुने! ।	
संस्थानं वेङ्कटेशस्य गिरेस्तस्य च सर्वतः ॥	५०
दृष्टमेतत् त्वया किं वा श्रुतं वा सूत तन्मुने!’ ।	
इति स्तुतः ततः सूतः प्रोवाचेदं वचस्तदा ॥	५१
व्यासस्यानुग्रहात् सर्वं वेद्मि तत्त्वं तपोधनाः ।	
वेङ्कटाचलमाहात्म्यं कल्पकोटिशतैरपि ॥	५२
न शक्यं वर्षसाहस्रैः शेषाणाञ्च सहस्रकैः ।	
बक्तुं तथाऽपि माहात्म्यं कीर्तितं किञ्चिदेव हि ॥	५३
पुण्यं पवित्रमायुष्यं माहात्म्यमिदमुत्तमम् ।	
यः पठेत्प्रयतो भक्त्या शृणुयाद्वा लिखेदपि ।	
सर्वान् कामान् अवप्नोति सम्प्राप्नोति च मङ्गलम् ॥	५४

इति श्रीवाराहपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये महर्षीणां श्रीवेङ्कटेश्वरसेवार्थं  
श्रीवेङ्कटाचलागमनादिवर्णनं नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः

प्रथमो भगः समाप्तिमगमत्

॥ ॐ तत् सत् ॥

श्री वाराहपुराण प्रथमभागान्तर्गत समुदिताध्यायसंख्या — ३०.



श्रीरस्तु  
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः  
श्रियै पद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् ( श्रीवाराहपुराणद्वितीयभागान्तर्गतम् )



श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥  
श्रीवेङ्कटाचलाधीशं श्रियाऽध्यासितवक्षसम् ।  
श्रितचेतनमन्दारं श्रीनिवासमहं भजे ॥

हरिः ॐ

प्रथमेऽध्यायः



नारदस्य सुमेरुशिखरस्थयज्ञवराहदर्शनम्

ऋषयः—

‘रौमहर्षण ! सर्वज्ञ ! पुराणार्थविशारद ! ।  
माहात्म्यं श्रोतुमिच्छामो गिरीन्द्राणां महीतले ।  
ब्रूहि त्वं नो महाभाग ! के प्रधाना महीवराः ?’ ॥ १

श्रीसूतः—

एतमेव पुरा प्रश्नं अपृच्छं जाह्नवीतटे ।  
व्यासं मुनिवरश्रेष्ठं सोऽब्रवीन्मे गुरुत्तमः ॥ २

व्यास —

‘पुरा देवयुगे सूत! नारदो मुनिसत्तमः ।	
सुमेरुशिखरं गत्वा नानारत्नसुशोभितम् ॥	३
तन्मध्ये विपुलं दीप्तं ब्रह्मणो दिव्यमालयम् ।	
दृष्ट्वा तस्योत्तरे देशे पिप्पलद्रुममुत्तमम् ॥	४
सहस्रयोजनोच्छ्रायं विस्तीर्णं द्विगुणं तथा ।	
तन्मूले मण्डपं दिव्यं नानारत्नसमन्वितम् ॥	५
पद्मरागमणिस्तम्भैः सहस्रैः समलङ्कृतम् ।	
वैडूर्यमुक्तामणिभिः कृतस्वस्तिकमालिकम् ॥	६
नवरत्नसमाकीर्णं दिव्यतोरणशोभितम् ।	
मृगपक्षिमिराकीर्णं नवरत्नमयैः शुभैः ॥	७
पुष्परागमहाद्वारं सप्तभूमिकगोपुरम् ।	
सन्दीप्तवज्रसुकृतकवाटद्वयशोभितम् ॥	८
प्रविश्याऽदौ ददर्शान्तः दिव्यमौक्तिकमण्डपम् ।	
वैडूर्यवेदिकं तुङ्गं आरुरोह महामुनिः ॥	९
तन्मध्ये तुङ्गमतुलं वसुपादविराजितम् ।	
ददर्श मुक्तासङ्कीर्णं सिंहासनमहर्द्युति ॥	१०
तन्मध्ये पुष्करं दिव्यं सहस्रदलशोभितम् ।	
श्वेतं चन्द्रसहस्राभं कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् ॥	११
तस्य मध्ये समासीनं पूर्णचन्द्रायुतप्रभम् ।	
कैलासपर्वताकारं सुन्दरं पुरुषाकृतिम् ॥	१२
चतुर्बाहुमुदाराङ्गं वराहवदनं शुभम् ।	
शङ्खचक्राभयवरान् बिभ्राणं पुरुषोत्तमम् ॥	१३

पीताम्बरधरं देवं पुण्डरीकायतेक्षणम् ।	
पूर्णेन्दुसौम्यवदनं वपागन्धिमुखाम्बुजम् ॥	१४
सामध्वनिं यज्ञमूर्तिं सुवतुण्डं सुवनासिकम् ।	
क्षीरसागरसङ्काशं किरीटोज्ज्वलिताननम् ॥	१५
श्रीवत्सवक्षसं शुभ्रं यज्ञसूत्रविराजितम् ।	
कौस्तुभश्रीसमुद्द्योतं समुन्नतमहोरसम् ॥	१६
जाम्बूनदमयैर्दिव्यैः सुरत्नाभरणैर्युतम् ।	
विद्युन्मालापरिक्षिप्तशरन्मेषमिवोज्ज्वलम् ॥	१७
वामपादतलक्रान्तपादपीठविराजितम् ।	
कटकाङ्गदकेयूरकुण्डलोज्ज्वलितं सदा ।	१८
चतुर्मुखवसिष्ठात्रिमार्कण्डेयैर्मुनीश्वरैः ।	
भृग्वादिनिरनेकैश्च सेव्यमानमहर्निशम् ॥	१९
इन्द्रादिलोकपालैश्च गन्धर्वाप्सरसां गणैः ।	
सेवितं देवदेवेशं प्रणिपत्याभिगम्य च ॥	२०
दिव्यैरुपनिषद्भगैः अभिष्टूय धराधरम् ।	
नारदः परमप्रीतः स्थितो देवस्य सन्निधौ ॥	२१

### वराहसन्निधिं प्रति धरण्यागमनम्

एतस्मिन्नन्तरे चाभूत् दिव्यदुन्दुभिनिस्स्वनः ।	
ततः समागता देवी धरणी सखिसंयुता ॥	२२
सरत्नसागराकारदिव्याम्बरसमुज्ज्वला ।	
सुमेरुमन्दराकरस्तनभारावनामिता ॥	२३
नवदूर्वादलक्ष्यामा सर्वाभरणभूषिता ।	
इडया वै पिङ्गल्या सखीभ्याञ्च समन्विता ॥	२४

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे प्रथमोऽध्यायः १३५

ततस्ताभ्यां समानीतं पुष्पाणां निचयं मही ।  
श्रीमद्वाराहदेवस्य पादमूले विकीर्य च ॥ २५  
प्रणम्य देवदेवेशं कृताञ्जलिपुटा स्थिता ।  
तां देवीं श्रीवराहोऽपि ह्यालिङ्ग्याङ्गे निधाय च ।  
पप्रच्छ कुशलं पृथ्वीं प्रीतिप्रवणमानसः ॥ २६

### धर्णीवराहसंवादः

श्रीवराहः -

‘त्वां निवेश्य महीदेवि ! शेषशीर्षे सुखावहे ।  
लोकं त्वयि निवेश्यैव त्वत्सहायान् धराधरान् ।  
इहागतोऽस्म्यहं देवि किमर्थं त्वमिहागता ? ’ ॥ २७

पृथिवी—

‘मां समुद्धृत्य पातालात् सहस्रफणशोभिते ।  
रत्नपीठ इवोत्तुङ्गे सरत्नेऽनन्तमूर्धनि ॥ २८  
कृत्वा मां सुस्थिरां देव ! धरां श्वापि न्यवेश्ययः ।  
मद्धारणक्षमान् पुण्यान् त्वन्मयान् पुरुषोत्तम ! ।  
तेषु मुख्यान् महाबाहो ! मदाधारान् वदस्व मे ’ ॥ २९

### शेषाचलस्य सर्वपर्वतातिशायित्ववर्णनम्

श्रीवराहः—

सुमेरुः हिमवान् विन्ध्यो मन्दरो गन्धमादनः ।  
सालग्रामः चित्रकूटो माल्यवान् पारियात्रकः ॥ ३०  
महेन्द्रो मलयः सद्यः सिंहाद्विरपि रैवतः ।  
मेरुपुत्रोऽञ्जनो नाम शैलः स्वर्णमयो महान् ॥ ३१

एते शैलवराः सर्वे त्वदाधारा वसुन्धरे ! ।	
ये मया देवसङ्घैश्च ऋषिसङ्घैश्च सेविताः ॥	३२
एतेषु प्रवरान् वक्ष्ये तत्त्वतः शृणु माधवि ! ।	
सालग्रामश्च सिंहाद्रिः शैलेन्द्रो गन्धमादनः ॥	३३
एते शैलवरा देवि ! दिशं हैमवतीं श्रिताः ।	
दक्षिणस्यां प्रतीतांस्तु वक्ष्ये शैलान् वसुन्धरे ! ॥	३४
अरुणाद्रि हस्तिशैलो गृध्राद्रिः घटिकाचलः ।	
एते शैलवराः सर्वे क्षीरनद्याः समीपगाः ॥	३५
हस्तिशैलादुत्तरतः पञ्चयोजनमात्रतः ।	
सुवर्णमुखरी नाम नदीनां प्रवरा नदी ॥	३६
तस्या एवोत्तरे तीरे कमलाख्यः सरोवरः ।	
तत्तीरे भगवान् आस्ते शुक्रस्य वरदो हरिः ॥	३७
बलभद्रेण संयुक्तः कृष्णो भक्तार्तिनाशनः ।	
वैखानसैः मुनिगणैः नित्यमाराधितोऽमलैः ॥	३८
कमलाख्यस्य सरस उत्तरे काननोत्तमे ।	
कोशद्वयार्धमात्रे तु हरिचन्दनशोभिते ॥	३९
श्रीवेङ्कटाचलो नाम वासुदेवालयो महान् ।	
सप्तयोजनविस्तीर्णः शैलेन्द्रो योजनोच्छ्रितः ॥	४०
अस्ति स्वर्णमयो देवि ! रत्नसानुभृदायतः ।	
इन्द्राद्या दैवतगणा वसिष्ठाद्या मुनीश्वराः ॥	४१
सिद्धाः साध्याश्च मरुतो दानवा दैत्यराक्षसाः ।	
रम्भाद्या अप्सरस्सङ्घा वसन्ति नियतं धरे ॥	४२
तपश्चरन्ति नागाश्च गरुडाः विन्नरास्तथा ।	
एतैरधिष्ठितास्तत्र सरितः पुण्यदर्शनाः ॥	४३

सरांसि विविधान्यत्र सन्ति दिव्यानि माधवि । ।

तीर्थानाञ्चैव सर्वेषां शृणुष्व प्रवराणि वै ॥

४४

स्वामिपुष्करिण्याः सर्वतीर्थातिशायित्ववर्णनम्

चक्रतीर्थं दैवतीर्थं वियद्गङ्गा तथैव च ।

कुमारधारिकातीर्थं पापनाशनमेव च ॥

४५

पाण्डवं नाम तीर्थञ्च स्वामिपुष्करिणी तथा ।

ससैतानि वराण्याहुः नारायणगिरौ शुभे ॥

४६

एतेषु प्रवरा देवि ! स्वामिपुष्करिणी शुभा ।

अस्यास्तु पश्चिमे तीरे निवसामि त्वया सह ॥

४७

आस्तेऽस्या दक्षिणे तीरे श्रीनिवासो जगत्पतिः ।

गङ्गाद्यैः सकलैर्तीर्थैः समा सा सागराम्बरे ! ॥

४८

त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि सरांसि सरितस्तथा ।

तेषां स्वामित्वमापन्नं धरे ! स्वामिसरोवरम् ॥

४९

स्वामिपुष्करिणीं पुण्यां सेवितुं दिव्यभूधरे ।

वसन्ति सर्वतीर्थानि तेषां सङ्ख्यां वदामि ते ॥

५०

षट्षष्टिकोटितीर्थानि पुण्येऽस्मिन् भूधरोत्तमे ।

तेषु चात्यन्तमुख्यानि षट् तीर्थानि वसुन्धरे ! ॥

५१

पञ्चानां तीर्थराजानां तुम्बो गर्भसमो महान् ।

गर्भवासभयध्वंसी स्नातानां भूधरोत्तमे ॥

५२

धरणी—

षट् तीर्थानि महाबाहो ! त्वयोक्तानि महीधरे ।

माहात्म्यं वद तेषां मे यथाकालं यथाविधि ।

फलानि तेषु स्नातानां नराणां वद भूधरे ॥

५३



श्रीवराह.—

‘ नारायणाद्रिमाहात्म्यं वदामि शृणु माधवि ।	
देवाश्च ऋषयश्चैव योगिनः सनकादयः ॥	५४
कृतेऽञ्जनाद्रिं त्रेतायां नारायणगिरिं तथा ।	
द्वापरे सिंहशैलश्च कलौ श्रीवेङ्कटाचलम् ॥	५५
प्रवदन्तीह विद्वांसः परमात्माऽऽल्यं गिरिम् ।	
योजनानां सहस्रान्ते द्वीपान्तरगतोऽपि वा ॥	५६
यो नमेत् भूधरेन्द्रं तद्दिशमुद्दिश्य भक्तितः ।	
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥	५७
तस्मिन् षट्तीर्थमाहात्म्यं यथाकालं वदामि ते ।	
शृणुष्ववहिता भद्रे ! सर्वपापप्रणाशनम् ॥	५८

## कुमारधारामाहात्म्यम्

कुम्भसंस्थे रवौ माघे पौर्णमास्यां महातिथौ ।	
मघानक्षत्रयुक्तायां भूधरेन्द्रे वसुन्धरे ! ॥	५९
कुमारधारिका नाम सरसी लोकपवनी ।	
यत्नाऽऽस्ते पार्वतीसूनुः कार्तिकेयोऽग्निसम्भवः ॥	६०
देवसेनासमायुक्तः श्रीनिवासार्चकोऽमले ।	
तस्यां यः स्नाति मध्याह्ने तस्य पुण्यफलं शृणु ॥	६१
गङ्गादिसर्वतीर्थेषु यः स्नाति नियमात् धरे ! ।	
द्वादशाब्दं जगद्वात्रि ! तत्फलं समवाप्नुयात् ॥	६२
योऽन्नं ददाति तत्तीर्थे शक्त्या दक्षिणयाऽन्वितम् ।	
स तावत् फलमाप्नोति स्नाने तूक्तं फलं यथा ॥	६३

### तुम्बतीर्थमाहात्म्यम्

मीनसंस्थे सवितरि पौर्णमासीतिथौ धरे ! ।

उत्तराफाल्गुनीयुक्ते चतुर्थे कालसत्तमे ॥

६४

पञ्चानामपि तीर्थानां तुम्बेऽथ गिरिगह्वरे ।

यः स्नाति मनुजो देवि ! पुनर्गर्भे न जायते ॥

६५

### आकाशगङ्गामाहात्म्यम्

अग्निवाहस्थिते भानौ चित्रानक्षत्रसंयुते ।

पूर्णिमाख्ये तिथौ पुण्ये प्रातःकाले तथैव च ।

आकाशगङ्गासरिति स्नातो मोक्षमवाप्नुयात् ॥

६६

### पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम्

वृषभस्थे रवौ राधे द्वादश्यां रविवासरे ।

शुक्ले वाप्यऽथ वा कृष्णे पक्षे भौमसमन्विते ॥

६७

तीर्थे पाण्डवनाग्न्यत्र सज्जवे स्नाति यो नरः ।

नेह दुःखमवाप्नोति परत्र सुखमश्नुते ॥

६८

### पापनाशनतीर्थमाहात्म्यम्

शुक्ले पक्षेऽथ वा कृष्णे याङ्कवारेण सप्तमी ।

युक्ता पुण्यर्क्षसंयुक्ता हस्तर्क्षेण युताऽपि वा ॥

६९

तस्यां तिथौ महाभागे पापनाशनसंज्ञके ।

तीर्थे यः स्नाति नियमात् भूधरेन्द्रस्य मस्तके ॥

७०

कोटिजन्मार्जितैः पापैः मुच्यते स नरोत्तमः ।  
शृणु देवि ! परं गुह्यमनन्ताख्ये महागिरौ ॥

७१

### देवतीर्थमाहात्म्यम्

महिव्याल्यवायव्ये शिखरे गिरिगह्वरे ।  
द्वंद्वतीर्थमिति ख्यातं तटाकमतिशोभनम् ॥ ७२  
तस्मिन् पुण्यतमे देवि स्नानकालं वदामि ते ।  
गुरुपुण्ये व्यतीपाते सोमश्रवणके तथा ॥ ७३  
दिनेष्वेतेषु यः स्नाति तस्य पुण्यफलं शृणु ।  
यानि कानीह पापानि ज्ञानाज्ञानकृतानि च ॥ ७४  
तानि सर्वाणि नश्यन्ति देवतीर्थेऽतिपावने ।  
पुण्यान्यपि च वर्धन्ते देवतीर्थनिमज्जनात् ॥ ७५  
दीर्घमायुरवाप्नोति पुत्रपौत्रसमन्वितः ।  
अन्ते स्वर्गं समासाद्य चन्द्रलोके महीयते ॥ ७६  
तद्दिनेष्वन्नदो देवि ! यावज्जीवान्नदो भवेत् ।  
अतिगुह्यतमं देवि ! प्रोक्तं तुभ्यं वसुन्धरे ! ॥ ७७  
श्रुत्वाऽथ पृथिवी देवी प्रीतिप्रवणमानसा ।  
इष्टाभिर्वाग्भिरतुलं तुष्टाव धरणीधरम् ॥ ७८

### धरणीकृतचराहस्तुतिः

धरणी —

“ नमस्ते देवदेवेश वराहवदनाऽच्युत ! ।  
क्षीरसागस्सङ्काश ! वज्रशृङ्ग ! महाभुज ! ॥

७९

उद्धृताऽसि त्वया देव ! कल्पादौ सागराम्भसः ।	
सहस्रबाहुना विष्णो ! धारयामि जगन्त्यहम् ॥	८०
अनेकदिव्याभरण ! यज्ञसूत्रविराजित ! ।	
अरुणारुणाम्बरधर दिव्यरत्नविभूषित ! ॥	८१
उद्यद्भानुप्रतीकाशपादपद्म ! नमो नमः ।	
बालचन्द्राभदंष्ट्राग्र ! महाबलपराक्रम ! ॥	८२
दिव्यचन्दनलिप्ताङ्ग ! तप्तकाञ्चनकुण्डल ! ।	
इन्द्रनीलमणिद्योतिहेमाङ्गदविभूषित ! ॥	८३
वज्रदंष्ट्राग्रनिभिन्नहिरण्याक्ष ! महाबल ! ।	
पुण्डरीकाभिताम्राक्ष ! सामस्वनमनोहर ! ॥	८४
श्रुतिसीमन्तभूषात्मन् ! सर्वात्मन् ! चारुविक्रम ! ।	
चतुराननशम्भुभ्यां वन्दिताऽऽयतलोचन ! ॥	८५
सर्वविद्यामयाकार ! शब्दातीत ! नमो नमः ।	
आनन्दविग्रहानन्त ! कालकाल ! नमोनमः ॥	८६
इति स्तुत्वाऽचल्य देवी ववन्दे पादयोर्विभुम् ॥	८७
वराहस्य भगवतो धरण्या साकं शेषाचलागमनम्	
वन्दमानां समुद्रीक्ष्य प्रीत्युत्फुल्लविलोचनः ।	
उद्धृत्य धरणीं देवीं आलिलिङ्गंऽथ बाहुभिः ॥	८८
आघ्राय धरणीवक्त्रं वामाङ्के सन्निवेश्य च ।	
आरुह्य गरुडेशानं जगाम वृषभाचलम् ॥	८९
मुनीन्द्रैः नारदाद्यैश्च स्तूयमानो महीपतिः ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्चिमे लोकपूजिते ॥	९०
तदाद्यैः तैः श्रीवराहो मुनीन्द्रैः तत्र पूजितः ।	
वैखानसैः महाभागैः ब्रह्मतुल्यैः महात्मभिः ॥	९१

## अध्यायफलश्रुतिः

व्यासः—

‘ तद्दृष्ट्वा नारदः सूत ! मुनीनामुक्तवान् पुरा ।	
तदेतदहमश्रौषं तत्र वै मुनिसंसदि ॥	९२
यत्पृष्टोऽहं त्वया सूत माहात्म्यं धरणीभृताम् ।	
मया तूक्तं यथावद्धि नारदाच्च पुरा श्रुतम् ॥	९३
य इदं धर्मसंवादं आवयोः सूत ! पावनम् ।	
पठेद्वा देवपुरतो ब्राह्मणानां पुरस्तथा ॥	९४
सर्वेषामपि वर्णानां शृण्वतां भक्तिपूर्वकम् ।	
स प्रतिष्ठामवाप्नोति पुत्रपौत्रसमन्वितः ।	
शृण्वतामपि सर्वेषां यदिष्टं तद्विष्यति ’ ॥	९५

श्रीसूतः—

‘ इति मे भगवान् व्यासः प्रोवाच मुनिसेवितः ।	
यथाश्रुतं मया पूर्वं कृष्णद्वैपायनाद्गुरोः ॥	९६
तत्तथा सर्वमेवात्र मयाऽप्युक्तं मुनीश्वराः ! ’ ।	
श्रुत्वा सूतवचस्त्वित्थं ते प्रीतमनसोऽभवन् ॥	९७

ऋषयः—

सूत ! त्वयोक्तं भुवि पर्वतेषु पुण्येषु पुण्यस्य महीधरस्य ।	
माहात्म्यमस्माकमहीन्द्रनाम्नः पापापहं मोक्षफलप्रदायकम् ॥९८	
ततो वृषाद्रिं सम्प्राप्य वराहो धरणीयुतः ।	
विमुक्तवान् धरण्यै स तन्नो ब्रूहि महामते ! ’ ॥	९९

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
उत्तरभागे नारदस्य सुमेरुशिखरस्थयज्ञवराहदर्शनप्राप्त्यादिवर्णनं

नाम प्रथमोऽध्यायः



अथ द्वितीयोऽध्यायः

### श्रीवराहमन्ताराधनविधिः

श्रीसूतः—

शृणुध्वं मुनयः सर्वे कथां पुण्यां पुरातनीम् ।  
 वैवस्वतोऽन्तरे पूर्वं कृते पुण्यतमे युगे ॥ १  
 नारायणाद्रौ देवेशं निवसन्तं क्षमापतिम् ।  
 वराहरूपिणं देवं धरणी सखिभिर्वृता ।  
 प्रणम्य परिप्रच्छ रक्तपद्मायतेक्षणम् ॥ २

धरणी—

‘ आराध्यः केन मन्त्रेण भवान् प्रोतो भविष्यति ।  
 तं मे वद त्वं देवेश ! यः प्रियो भवतः सदा ॥ ३  
 जपतां सर्वसम्पत्तिकारकं पुत्रपौत्रदम् ।  
 सार्वभौमत्वदश्चैव कामिनां कामदं सदा ॥ ४  
 अन्ते यस्त्वत्पदप्राप्तिं ददाति नियताऽत्मनाम् ।  
 एवंभूतं वद प्रीत्या मयि वाराह मानद ! ’ ॥ ५

श्रीसूतः—

इति पृष्टस्तया भूम्या प्राह प्रीतिस्मिताननः ॥ ६

श्रीवराहः—

‘ शृणु देवि परं गुह्यं सद्यः सम्पत्तिकारकम् ।  
 भूमिदं पुत्रदं गोप्यं अप्रकाश्यं कदाचन ॥ ७  
 किञ्च शुश्रूषवे वाच्यं भक्ताय नियतात्मने ।  
 “ ॐ नमः श्रीवराहाय धरण्युद्धरणाय च ॥ ८

वह्निजायासमायुक्तः ” सदा जप्यो मुमुक्षुभिः ।	
अयं मन्त्रो धरादेवि ! सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥	९
ऋषिः सङ्कर्षणः प्रोक्तो, देवता त्वहमेव हि ।	
छन्दः पङ्क्तिः समाख्याता श्रीं बीजं समुदाहृतम् ॥	१०
चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं सद्गुरोर्लब्धतन्मनुः ।	
जुहुयात्पायसान्नं वै क्षौद्रसर्पिःसमन्वितम् ॥	११
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि मनःशुद्धिप्रदायकम् ।	
“ शुद्धस्फटिकशैलभं रक्तपद्मदलेक्षणम् ॥	१२
वराहवदनं सौम्यं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ।	
श्रीवत्सवक्षसं चक्रशङ्खाभयकराम्बुजम् ॥	१३
वामोरुस्थितया युक्तं त्वया मां सागराम्बरे ।	
रक्तपीताम्बरधरं रक्ताऽभरणभूषितम् ॥	१४
श्रीकूर्मपृष्ठमध्यस्थशेषमूर्त्यब्जसंस्थितम् ” ।	
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सदा चाष्टोत्तरं शतम् ॥	१५
सर्वान् कामानवाप्नोति मोक्षञ्चान्ते व्रजेद्भुवम् ।	
प्रोक्तं मया ते धरणि ! यत्पृष्टोऽहं त्वयाऽमले । ।	
अतः किं ते व्यवसितं ब्रूहि तत् विमल्यनने ! ” ॥	१६

### श्रीवराहमन्त्रेण धर्मादीनां स्वाभीष्टसिद्धिवर्णनम्

श्रीसूत. —

एतच्छ्रुत्वा ततो भूमिः पप्रच्छ पुनरेव तम् ।	
‘ केनैवानुष्ठितं देव ! पुरा प्राप्तं फलञ्च किम् ? ’ ॥	१७
इति पृष्टः पुनर्देवः श्रीवराहोऽब्रवीदिदम् ।	
‘ पुरा कृतयुगे देवि धर्मो नाम मनुः महान् ॥	१८

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे तृतीयोऽध्यायः १४५

ब्रह्मणोऽमुं मनुं लब्ध्वा जप्त्वाऽस्मिन् धरणीधरे ।  
मां च दृष्ट्वा वरं लब्ध्वा प्रातोऽभूत् मामकं पदम् ॥ १९  
इन्द्रो दुर्वाससः शापात् पुरा भ्रष्टः त्रिविष्टपात् ।  
अनेनेष्टाऽल मां देवि पुनः प्राप्तः त्रिविष्टपम् ॥ २०  
अन्येऽपि मुनयो भूमे ! जप्त्वा प्राप्ताः परां गतिम् ।  
अनन्तः पन्नगाधीशो ह्यमुं लब्ध्वाऽथ कश्यपात् ॥ २१  
श्वेतद्वीपे जपित्वैव बभूव धरणीधरः ।  
तस्माज्जप्यः सदा चेह मनुष्यैश्च धरार्थिभिः ॥ २२

श्रीसूत.—

एतच्छ्रुत्वाऽथ सुग्रीता पुनः प्राह धराधरम् ॥ २३

धरणी—

‘वेङ्कटस्थे महाशैले श्रीनिवासो जगत्पतिः ।  
कदा ह्यायाति देवेशः श्रीभूमिसहितोऽमलः ? ॥ २४  
कथं कल्पान्तरस्थायी भविष्यति जनार्दनः ? ।  
एतद् ब्रूहि वराहात्मन् ! महत् कौतूहलं मम ’ ॥ २५

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटचलमाहात्म्ये  
उत्तरार्धे श्रीवराहमन्त्राराधनविध्यादिवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः



अथ तृतीयोऽध्यायः



अगस्त्यप्रार्थनया भगवतः सर्वजनदृग्गोचरत्ववर्णनम्

श्रीवाराहः

‘हन्त ! ते कथयिष्यामि पुरा वृत्तं वरानने ।।  
शृणु पुण्यं महादेवि ! सभविष्यं सहोत्तरम् ॥ १



वैवस्वतेऽन्तरे देवि ! पूर्वे कृतयुगान्तरे ।	
वायोस्तपो महद्दृष्ट्वा श्रीभूमिसहितोऽनघे ॥	२
आगच्छत् श्रीनिवासश्च स्वामिपुष्करिणीतटे ।	
दक्षिणेऽस्मिन् पुण्यतमे विमाने नन्दसंज्ञके ॥	३
वसिष्यति च श्रीकान्तो वायोः प्रियकरो हरिः ।	
तदारभ्य हृषीकेशः सेनान्याऽऽराधिनोऽनिशम् ।	
आकल्पान्तमदृश्येऽस्मिन् विमानेऽसौ वसिष्यति ' ॥	४

धरणी—

‘ अदृश्यो भगवान् मर्त्यैः कथं दृश्यो भविष्यति ? ।	
श्रीनिवासोऽपि देवेशो भवद्दक्षिणपार्श्वर्गः ।	
एतद्वद सुराधीश ! जनैराराध्यते कथम् ? ' ॥	५

श्रीवराह --

‘ अगस्त्योऽस्मिन् समासाद्य पुरा देवं सनातनम् ।	
आराध्य द्वादशाब्दं तं प्रीणयित्वा पुनः पुनः ॥	६
ययाचे तत्र सान्निध्यं ‘ भवान् दृश्यो भव ’ त्विति ।	
एवमुक्तो हृषीकेशः श्रीभूमिसहितो धरे ! ॥	७
‘ अहं दृश्यो भविष्यामि त्वत्कृते सर्वदेहिनाम् ।	
एतद्विमानं देवर्षे न दृश्यं स्यात् कदाचन ॥	८
आकल्पान्तं मुनीन्द्रास्मिन् दृश्योऽहं नात्र संशयः ’ ।	
मुनिस्तद्वचनं श्रुत्वा प्रीतः प्रायात् स्वमाश्रमम् ॥	९
ततश्चतुर्भुजो देवः स दृश्योऽभून्नरादिभिः ।	
विमाने मुनिचिन्त्येऽस्मिन् आसिता च तथोत्तरम् ॥	१०
आराध्यमानः स्कन्देन वायुना सेवितः सदा ।	
एवं गते महाकाले चतुर्युगसमन्विते ॥	११

मित्रवर्मणः आकाशराजाख्यसुतोत्पत्तिवर्णनम्

अष्टाविंशे तु सञ्जाते द्वापरान्ते वसुन्धरे ! ।	
युद्धे च भारतेऽतीते तिष्ये सति युगे तथा ॥	१२
विक्रमार्कादयो भूपाः शकाः शूद्रादयस्तथा ।	
गमिष्यन्ति स्वर्गलोकं मामज्ञात्वा वरानने ! ॥	१३
ततः सोमकुलोद्भूतो मित्रवर्मा महारथः ।	
तुण्डीरमण्डले राजा नारायणपुरे वसन् ॥	१४
भविष्यति वरारोहे ! महाभाग्योदयो महान् ।	
तस्मिन् शासति भूलोकं धर्मेण पृथिवीपतौ ॥	१५
अकृष्टपत्न्या पृथिवी सर्वसस्यविभूषणा ।	
निरीतिकोऽभवत् सर्वो जनो धर्मसमन्वितः ॥	१६
तस्य पत्नी समभवत् पाण्ड्यकन्या मनोरमा ।	
तस्य जज्ञे कुलोत्तंसो वियन्नामा सुतोऽस्य वै ॥	१७
तस्य पत्नी तु धरणी नाम्नाऽऽसीच्छकवंशजा ।	
तस्मिन् राज्यं विनिक्षिप्य मित्रवर्मा नृपोत्तमः ।	
ययौ तपोवनं पुण्यं वेङ्कटद्रेः समीपतः ॥	१८

धरणीतलात् पद्मावत्युत्पत्तिक्रमः

आकाशनामा तु महान् राजाऽभूत् सार्वभौमकः ।	
एकदारव्रतो राजा धरणीसक्तचेतनः ॥	१९
यज्ञार्थं शोधयामास भुवमारणितीरतः ।	
काञ्चनेन हलेनैव कृष्यमाणे धरातले ॥	२०

बीजमुष्टिं विकिरता दृष्टा कन्या धरोद्गता ।	
पद्मशय्यागता रम्या सर्वलक्षणलक्षिता ॥	२१
तप्तजाम्बूनदमयी पुत्रिकेव विराजती ।	
तां दृष्ट्वा स महीपालो विस्मयोत्फुल्ललोचनः ॥	२२
आदाय 'तनया चेयं ममै' वेति पुनः पुनः ।	
जहर्ष मन्त्रिभिश्चैनं प्राह वागशरीरिणी ॥	२३
'सत्यं तदैव तनया वर्धयस्व सुलोचनाम्' ।	
ततः प्रीतमना राजा स्वपुरं प्रविवेश ह ॥	२४
आहूय धरणीं देवीं इदमाह महीपतिः ।	
'देवदत्तामिमां पश्य भूतलादुत्थितां मम ॥	२५
आवाभ्यां तदपुत्राभ्यां पुत्रीयं भविता ध्रुवम्' ।	
इत्युक्त्वा प्रददौ देव्या हस्ते प्रीत्या वियन्नृपः ॥	२६

आकाशराजस्य धरण्याख्यपत्न्यां वसुदानाख्यसुतोत्पत्तिः

तस्यां गृहं प्रविष्टायां धरणी गर्भमादधौ ।	
वियन्नृपश्च सुप्रीतो वीक्ष्य स्निग्धविलोचनाम् ।	
उवाच 'फलिता सुभ्रु ! लता सान्तानिकी च मे' ॥	२७
अथ सा धरणीदेवी काले कमललोचना ।	
सुप्रशस्ते मुहूर्ते च स्वोच्चसंस्थेषु पञ्चसु ॥	२८
ग्रहेषु सुषुवे पुत्रं मेषस्थे च दिशकरे ।	
देवदुन्दुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिः गृहेऽपतत् ॥	२९
ववौ वायुः सुखस्पर्शः तज्जन्मदिवसे तदा ।	
पुत्रसूतिप्रवक्तृणां सुप्रीतः पुत्रजन्मनि ॥	३०

सर्वस्वदानमकरोत् छत्रचामरवर्जितम् ।

कपिलकोटिदानञ्च वृषभाणां शताधिकम् ॥ ३१

दिवसे द्वादशे पुण्ये जातकर्मादिकाः क्रियाः ।

चकार नामधेयञ्च 'वसुदान' इति स्वयम् ॥ ३२

आकाशतनयो देवि ! वसुदानो मनोरमः ।

बभूवे दिवसैर्बालः शुक्लपक्ष इवोडुराद् ॥ ३३

उपनीतो विनीतोऽसौ गुरुभिः ब्रह्मपारगैः ।

पितुरस्त्राणि शस्त्राणि मन्त्रवत् सोऽप्यशिक्षत ॥ ३४

चतुष्पादं धनुर्वेदं साङ्गोपाङ्गमधीतवान् ।

पिता तेनातिबलिना दुराघर्षः परैरभूत् ॥ ३५

आकाश इव निष्पङ्को ग्रीष्मे भानुमता युतः ।

वैशाख इव मध्याह्ने दुःसहो दुर्निरीक्षकः ' ॥ ३६

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे अगस्त्यप्रार्थनया भगवतः सर्वजनदृग्गोचरत्वादिवर्णनं

नाम तृतीयोऽध्यायः

— —

अथ चतुर्थोऽध्यायः

— —

उद्यानवासिन्याः पद्मावत्याः समीपे नारदागमनम्

' उक्तं भगवता तस्य वियत्पुत्रस्य नाम च ।

अयोनिजायास्तत्पुत्र्याः किं नाम च तदाऽकरोत् ' ॥ १

श्रीसूतः

इति पृष्टः पुनः प्राह श्रीवराहो जगत्पतिः ।

श्रीवराहः —

- ‘ आकाशराजो मतिमांस्तां दृष्ट्वा कमलेशयाम् ॥ २  
 पद्मिनी ’ ति च नाम्ना वै चकार वसुधासुताम् ।  
 तां तु यौवनसम्पन्नां सखीभिः परिवारिताम् ॥ ३  
 आरामे विहरन्तीञ्च शुक्रकोकिलनादिते ।  
 यदृच्छयाऽऽगतस्तत्र नारदो मुनिसत्तमः ।  
 वनलक्ष्मीमिवालोक्य विस्मयादिदमब्रवीत् ॥ ४

नारदः—

- ‘ काऽसि कस्य सुता भीरु ! हस्तं दर्शय मे तव ’ ।  
 इत्युक्ता सा सुचार्वङ्गी स्वात्मानं मुनयेऽब्रवीत् ॥ ५  
 ‘ वियद्राजसुता ब्रह्मन् लक्षणानि वदस्व मे ’ ।  
 इत्युक्तः स तदा प्राह नारदो मुनिसत्तमः ॥ ६

नारदोदीरितपद्मावतीशरीरलक्षणानि

नारदः—

- ‘ शृणु त्वं चारुवदने लक्षणानि वदामि ते ।  
 पादौ प्रतिष्ठितौ सुभ्रु ! रक्तपद्मदलान्वितौ ॥ ७  
 पादाङ्गुल्यः समा रक्ता रक्ततुङ्गनखान्विताः ।  
 गुल्फौ गूढौ समावेतौ जङ्घे चारोमशे शुभे ॥ ८  
 जानुनी समसुखिग्रे समावूरु क्रमादूरु ।  
 नितम्बौ पृथुलौ पीनौ जघनं चिन्त्यमेव हि ॥ ९  
 नाभिर्मण्डलवान् निम्नः पार्श्वौ ते मेचकाकुभौ ।  
 त्रिवलीललितं मध्यं रोमराजिविराजितम् ॥ १०

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे चतुर्थोऽध्यायः १५१

स्तनौ पीनौ घनौ स्निग्धावुन्नतौ ममचूचुकौ ।	
करौ ते रक्तपद्माभौ पद्मरेखासमन्वितौ ॥	११
सुसूक्ष्मौ रक्तसत्पर्वनिरन्तरसमाङ्गुली ।	
शुकतुण्डसमाकारनखपङ्क्तिविराजितौ ॥	१२
दीर्घौ च कोमलौ भद्रे भुजौ ते पुष्पदण्डवत् ।	
पृष्ठं ते वेदिवद्भाति विलग्नमृजुमध्यमम् ॥	१३
कण्ठस्तु रक्तो दीर्घश्च स्कन्धौ चावनतौ शुभे ।	
मुखं प्रसन्नं सततमकलङ्कशशिप्रभम् ॥	१४
कपोलौ कनकादर्शसदृशौ कुण्डलोज्ज्वलौ ।	
तिलपुष्पसमाकारा नासिका ते शुभानने ॥	१५
अकलङ्काष्टमीचन्द्रसदृशोऽतिमनोहरः ।	
दृश्यतेऽयं ललाटस्ते नीलालकसुशोभितः ॥	१६
मूर्धा ते समवृत्तश्च स्निग्धाऽऽयतकचान्वितः ।	
स्मितसंशोभिदशनं बिम्बाधरसमन्वितम् ॥	१७
मुखं ते विष्णुयोग्यं स्यादिति मे निश्चिता मतिः ।	
नाभिस्ते दक्षिणावर्त आवर्त इव गाङ्गजः ।	
त्वं हि क्षीराब्धिसम्भूता लक्ष्मीरिव हि दृश्यसे ' ॥	१८

श्रीवाराह—

इत्युक्त्वा पूजितस्ताभिः नारदोऽन्तर्दधे तदा ।	
एतच्छ्रुत्वाऽथ तत्सख्यः तामूचुः पद्मिनीं सखीम् ॥	१

पद्मावत्याः स्वसखीभिः साकं पुष्पाटवीगमनम्

‘ वनं गच्छाम पुष्पार्थं वसन्तः समुपगतः ।

कर्णिकाराश्च चूताश्च चम्पकाः पारिमद्रकाः ॥ २०

पालशः पाटलः कुन्दा रक्ताशोकाश्च पुष्पिताः ।	
पद्मिन्यः सिन्धुवाराश्च मालत्यो यूथिकालताः ॥	२१
कल्हारकरवीराश्च सङ्घर्षादिव पुष्पिताः ।	
पुष्पापचयनं कुर्मो वनेऽस्मिन् सुमनोहरे ' ॥	२२
इत्युक्त्वा ता वनं जम्बुराकाशतनयायुताः ।	
पुष्पाण्याहरमाणास्तु विचरन्त्यस्ततस्ततः ॥	२३
कञ्चिद्व्रजेन्द्रं ददृशुः शुभ्रदन्तद्वयोज्ज्वलम् ।	
गण्डभित्तितलोद्भूतमदधाराद्वयोज्ज्वलम् ॥	२४
उन्नतं करिणीयूथैः समुपेतं रजोज्ज्वलम् ।	
फूत्कारिपुष्करप्रोद्यच्छीकरापूरिताननम् ।	
दृष्ट्वा चोद्विग्नहृदया वनस्पतिमुपाश्रिताः ॥	२५

### मृगयार्थं पुष्पाटवीं प्रति श्रीनिवासागमनम्

एतस्मिन्नन्तरे चाशु ददृशुर्हयमुत्तमम् ।	
अकलङ्केन्दुधवलं जाम्बूनदपरिष्कृतम् ॥	२६
स्फुरद्विद्युलतायुक्तशरन्मेषमिवोन्नतम् ।	
तस्मिंस्तु पुरुषं कृष्णं मदनाकारवर्चसम् ॥	२७
पुण्डरीकदलाकारकर्णान्तायतलोचनम् ।	
सुसूक्ष्मक्षौमसंवीतनीलचूलिकयोज्ज्वलम् ॥	२८
पद्मरागमणिद्योति स्फुरत्कुण्डलमण्डितम् ।	
सुवर्णरत्नखचितशार्ङ्गदिव्यधनुर्धरम् ॥	२९
अपरेण करेणैव वहन्तं काञ्चनं शरम् ।	
पीतकक्ष्यासुसंवीतकटिदेशं सुमध्यमम् ॥	३०

श्रीवराहपुराणे द्वितीयभागे चतुर्थोऽध्यायः १५३

रत्नकङ्कणकेयूरकटिसूत्रविराजितम् ।	
विशालवक्षःसंशोभिदक्षिणावर्तसंयुतम् ॥	३१
स्वर्णयज्ञोपवीतेन स्फुरत्कन्धं मनोहरम् ।	
ईहामृगं समुद्दिश्य महावेगादनुद्रुतम् ॥	३२
तं दृष्ट्वा विस्मिता नार्यः सस्मिताः तत्स्थुरत्र वै ।	
तं दृष्ट्वा हयमारूढं गजेन्द्रो नम्रमस्तकः ॥	३३
तुण्डमुद्धृत्य गर्जन् वै विनिवृत्य ययौ वनम् ।	
तस्मिन् गते गजे तत्र हयाऽऽरूढः समाययौ ।	
ईहामृगं विचिन्वानः पुष्पलावीसमीपतः ॥	३४

भगवतः कन्यकानां चान्योन्यसंवादः

ताः समेत्य स चोवाच तुरगोपरि संस्थितः ।	
‘अत्राऽगतो मृगः कश्चिदीहामृग इतीरितः ।	
दृष्टो वा भवतीभिः स ब्रूत मे कन्यका ’ इति ॥	३५

श्रीवराहः—

प्रत्यूचुस्तास्तु तं कन्या ‘दृष्टोऽस्माभिः न कश्चन ।	
किमर्थमागतोऽस्माकं वनं वरधनुर्धरः ॥	३६
अत्रावध्या मृगाः सर्वे वर्तमाना निषादप ! ।	
आशु गच्छ वनादस्मात् आकाशात्मजपालितात् ’ ॥	३७
इति तासां वचः श्रुत्वा हयादवरुरोह सः ।	
‘ कास्तु यूयमियं चापि कनकाम्बुजसन्निभा ॥	३८



सुभगा चारुसर्वाङ्गी पीनोन्नतपयोधरा ।

ब्रूत मेऽहं गमिष्यामि श्रुत्वा स्वस्याऽऽलयं गिरिम् ' ॥ ३९

इति तस्य वचः श्रुत्वा धरण्यात्मजयेरिता ।

सखी पद्मावती प्राह निषादं पर्वतालयम् ॥ ४०

‘ आकाशराजतनया वसुधातलसम्भवा ।

अस्माकं नायिका शूर ! पद्मिनी नाम नामतः ॥ ४१

ब्रूहि, त्वं सुभगाकार । किं नामा कस्य वा सुतः ? ।

जातिः का कुल ते वासः किमर्थं त्वमिहागतः ? ’ ॥ ४२

इति पृष्टः स ताः प्राह मन्दस्मितमुखाम्बुजः ।

‘ दिवाकरकुलं प्राहुः अस्माकं तु पुराविदः ॥ ४३

यस्य नामान्यनन्तानि पावनानि मनीषिणाम् ।

वर्णतो नामतश्चापि कृष्णं प्राहुस्तपस्विनः ॥ ४४

ब्रह्मद्विषां सुरारीणां यस्य चक्रं भयावहम् ।

यस्य शङ्खध्वनिं श्रुत्वा मोहमीयुर्हि वैरिणः ॥ ४५

यस्य वै धनुषस्तुल्यं धनुर्नैवामरेष्वपि ।

तं मां वीरपतिं प्राहुः वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ॥ ४६

तस्मादद्रितयात् सोऽहं निषादैरनुगैर्वृतः ।

मृगयार्थं हयारूढो युष्माकं वनमागतः ॥ ४७

मयाऽप्यनुद्भुतः कश्चित् मृगो वायुगतिर्ययौ ।

तमदृष्ट्वा वनं पश्यन् दृष्टवान् सुभगामिमाम् ॥ ४८

कामादिहाऽऽगतोऽहं वा मया किं लभ्यते त्वियम् ’ ? ।

इति कृष्णवचः श्रुत्वा क्रुद्धास्ताः पुनरब्रुवन् ॥ ४९

‘ आकाशराजो दृष्ट्वा त्वां कृत्वा निगडबन्धनम् ।

यावन्नयति तावत्त्वं गच्छ शीघ्रं स्वमायलम् ’ ॥ ५०

तर्जितस्तामिरेवं स हयमारुह्य शीघ्रगम् ।

युक्तः स्वानुचरैः सर्वैः ययौ द्रुततरं गिरिम् ' ॥ ५१

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
उत्तरार्धे उद्यानवासिन्याः पद्मावत्याः समीपे नारदागमन - श्रीश्रीनिवास-

मृगयादिवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः

अथ पञ्चमोऽध्यायः

पद्मावतीदर्शनेन श्रीनिवासस्य मोहप्राप्तिः

श्रीवराहः—

सम्प्राप्य चाऽऽल्यं दिव्यमवतीर्य ह्योत्तमात् ।

विसृज्य सानुगान् सर्वान् देवान् कैरातरूपकान् ॥ १

'विश्रमध्व' मिति प्रोच्य दिवेश मणिमण्डपम् ।

आरुह्य मणिसोपानं पञ्चकक्ष्या अतीत्य च ॥ २

मुक्तागृहं समासाद्य तस्मिँल्लोलयिते शुभे ।

नवरत्नमये मञ्चे संविवेशावशो हरिः ॥ ३

संस्मरन् पद्मगर्भाभां तामेवाऽऽयतलोचनाम् ।

तनुमध्यां पीनकुचां मन्दस्मितमुखाम्बुजाम् ॥ ४

क्षीराब्धितनयामेव मेने पद्मोद्भवां शुभाम् ।

तस्यां गतमना देवः श्रीनिवासो मुमोह च ॥ ५

मुह्यमानं श्रीनिवासं प्रति वकुलमालिकोक्तिः

ततो मध्याह्नसमये कृत्वाऽन्नं दिव्यमुत्तमम् ।

सूपदंशं सुगन्धञ्च देवार्हमतिशोभनम् ॥ ६

शुद्धान्नं पायसान्नञ्च गौडं मुद्धान्नमेव च ।	
कृत्वा पञ्चविधापूपान् पूरिकावटकानपि ॥	७
देवं द्रष्टुं ययौ शीघ्रं सखी वकुलमालिका ।	
पद्मावती पद्मपत्रा चित्ररेखासमन्विता ॥	८
निवेश्य द्वारि देवस्य ताः सर्वाः प्रमदोत्तमाः ।	
विवेश तत्समीपं सा स्वयं वकुलमालिका ॥	९
गत्वा समीपं देवस्य ववन्दे भक्तिभावतः ।	
दृष्ट्वाऽथ देवं विवशं पर्यङ्के रत्नभूषिते ॥	१०
पादसंवाहनं कृत्वा निमीलितविलोचनम् ।	
तं ध्यायन्तञ्च किमपि व्याजहार शुचिस्मिता ॥	११
‘उत्तिष्ठ देवदेवेश ! किं शेषे पुरुषोत्तम ! ।	
परमान्नं कृतं देव भोक्तुमागच्छ माधव ! ॥	१२
किं वा त्वमार्तवच्छेषे सर्वलोकार्तिनाशन ! ।	
मृगयामता देव ! किं दृष्टं भवता वने ॥	१३
अवस्था ते विशालाक्ष ! कामुकस्येव दृश्यते ।	
का दृष्टा देवकन्या वा मानुषी वाऽहिकन्यका ? ।	
ब्रूहि मे त्वमचिन्त्यात्मन् ! कन्यां तां चित्तहारिणीम् ’ ॥ १४	

श्रीवराहः—

तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा निःश्वासमकरोद्विभुः ।	
निःश्चसन्तं पुनः प्राह प्रीता वकुलमालिका ॥	१५
‘एवं मनोहरा का सा तवापि पुरुषोत्तम ! ? ’ ।	
तामवोचद्वृषीकेशो वक्ष्यामि शृणु तत्त्वतः ॥	१६



श्रीनिवासोक्तपद्मावतीपरिणयकारणानि

श्रीभगवान्—

- ‘पुरा त्रेतायुगे पुण्ये रावणं हतवानहम् ।  
तदा वेदवती कन्या साहाय्यमकरोच्छ्रूयः ॥ १७
- सीतारूपाऽभवच्छुद्धीः जनकस्य महीतलात् ।  
गते मयि तु मारीचं हन्तुं पञ्चवटीवने ॥ १८
- ममानुजोऽपि मामेव सीतया चोदितोऽन्वितात् ।  
तदन्तरे राक्षसेन्द्रो हर्तुं सीतामुपाययौ ॥ १९
- अग्निहोत्रगतो बहिः तं ज्ञात्वा रावणोद्यमम् ।  
आदाय सीतां पाताले स्वाहायां सन्निवेश्य च ॥ २०
- तेनैव रक्षसा स्पृष्टां पुरा वेदवतीं शुभाम् ।  
अग्नौ विसृष्टदेहां तां संहर्तुं रावणं पुनः ॥ २१
- सीताया रूपसदृशीं कृत्वा चैवोत्ससर्ज ह ।  
सा रावणहता भूत्वा लङ्कायाञ्च निवेशिता ॥ २२
- हते तु रावणे पश्चात् पुनरग्निं विवेश सा ।  
अग्निस्तु रक्षितां लक्ष्मीं स्वाहायां मम जानकीम् ॥ २३
- दत्त्वा हस्ते च मामाह सीतया सहितं शिखी ।  
“इयं वेदवती देव ! सीतायाः प्रियकारिणी ॥ २४
- सीतार्थं राक्षसपुरे तेन बन्दीकृता स्थिता ।  
तस्मादेनां वरेणैव प्रीणय त्वं श्रिया सह ” ॥ २५
- इति बह्विवचः श्रुत्वा सीता मामवदच्छुभा ।  
“मम प्रीतिकरी नित्यमियं वेदवती विभो ।  
तस्मात्परं भागवतीं देवैनां वरय प्रभो ” ॥ २६

श्रीभगवान्—

“ तथा देवि करिष्यामि ह्यष्टाविंशे कलौ युगे । तावदेषा ब्रह्मलोके वसत्वमरपूजिता ॥	२७
पश्चात्तु भूमितनया भविष्यति वियत्सुता ” । इति दत्तवरा पूर्वं मया लक्ष्म्या च सुन्दरी ॥	२८
अद्य नारायणपुरे सम्भूता धरणीतलात् । पद्मासमा पद्मनेत्री पद्मा दत्तवरा सती ॥	२९
सखीभिरनुरूपाभिः वने पुष्पाणि चिन्वती । मृगयामटता तत्र मया दृष्टा मनोरमा ॥	३०
तस्या रूपं मया वक्तुं न शक्यं शतहायनैः । लक्ष्म्येव च तया मेऽद्य सङ्गमो भविता यदि ॥	३१
प्राणाः स्थिरा भविष्यन्ति सत्यमित्यवधारय । त्वं तत्र गत्वा तां कन्यां दृष्ट्वा वकुलमालिके ! ॥	३२
जानीहि रूपलवण्यादियं योग्येति चास्य वै । अनवद्या विशालाक्षी पद्मेन्दीवरलोचना ’ ॥	३३

वियद्राजपुरं प्रति वकुलमालिकागमनम्

इत्युक्त्वा मोहमापन्नं तं प्राह वकुला पुनः । ‘ इतो गच्छामि देवेश ! मनोज्ञा तव यत्र सा ॥	३४
मार्गं वद रमाधीश ! गमिष्ये येन तां प्रति ’ । एवमुक्तो रमाधीशः तां प्राह वकुलस्रजम् ॥	३५
‘ इतो गच्छ महाभागो ! श्रीनृसिंहगुहा यतः । तन्मार्गेणावतीर्याऽस्मात् भूधरेन्द्रात् मनोरमात् ॥	३६

अगस्त्याश्रममासाद्य दृष्ट्वा लिङ्गं तदर्चितम् ।	
‘ अगस्त्येश ’ इति ख्यातं सुवर्णमुखरीतटे ॥	३७
तीरेणैव ततो गच्छ शुक्रब्रह्मत्रयैर्वनम् ।	
पश्यन्ती स्वर्णमुखरीं तत्र कल्लोलमालिनीम् ॥	३८
तत्र पद्मसरो नाम पावनं पद्मसंयुतम् ।	
तत्र स्नात्वाऽथ तत्तीरे तपन्तं मुनिसत्तमम् ॥	३९
छायाशुकं नमस्कृत्य कृष्णञ्च बलसंयुतम् ।	
आराध्यमानं मुनिना शुकेन सततं शुभे ! ॥	४०
इन्द्रनीलमणिश्यामं पीतनिर्मलवाससम् ।	
तीर्थयात्रां गमिष्यन्तं बलभद्रं सिताऽकृतिम् ॥	४१
उपासयन्तं मन्त्राणि मुक्तान्वितकरद्वयम् ।	
उद्यन्तं पादुकायुक्तं बलभद्रं प्रणम्य च ॥	४२
आदाय स्वर्णकमलं सरसोऽस्माद्वरानने ।	
तीर्त्वा सुवर्णमुखरीं वनान्युपवनानि च ॥	४३
अरणीतीरमासाद्य विश्रम्य च वनान्तरे ।	
नारायणपुरीं दृष्ट्वा विस्मयञ्च गमिष्यसि ॥	४४
तस्याश्चोपवने वृक्षान् पुष्पाढ्यान् फलसंयुतान् ।	
पनसाम्रशिरीषांश्च कुन्दतिन्दुकपाटलान् ॥	४५
पुन्नागानागवरुणरसालाङ्गोलचम्पकान् ।	
वकुलामलकान् सालान् तालहिन्तालपद्मकान् ॥	४६
जम्बूनिम्बकदम्बैलापिप्पलीमधुकार्जुनान् ।	
प्रियङ्गुहिङ्गुर्खजूरमायूरशोकलोध्रकान् ॥	४७
अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षवदरीभूर्जकीचकान् ।	
चिञ्चार्किशुकमन्दारशाल्मलीबीजपूरकान् ॥	४८

पूगनारङ्गलिकुचनारिकेल्वनाकुलान् ।	
मल्लिकामालतीकुन्दयूथिकाकेतकीयुतान् ॥	४९
करवीराब्जसम्पन्नान् राजरम्भाविराजितान् ।	
मयूरकीरगरुडशुकसारससङ्कुलान् ॥	५०
भृङ्गशङ्कारनिविडान् आरामान् सुमनोहरान् ।	
पश्यन्ती परमं हर्षमवाप्य च नदीतटे ॥	५१
गत्वा पुष्पोत्तरे मार्गे पुरीमिन्द्रपुरीसमाम् ।	
गङ्गयेवावृतां नित्यं सरि 'ताडरणि' नामया ।	
आकाशराजनगरीं गत्वा तत्रोचितं कुरु ॥	५२

श्रीवराहः —

इत्यादिश्य सुराधीशः सखीं तां वकुलामिधाम् ।	
विसृज्य शयेन शुभ्रे स शिश्ये श्रीसमन्वितः ॥	५३
प्रणम्य देवदेवेशसखी वकुलमालिका ।	
गुञ्जामणिसमाकारं रक्ताश्वमधिरुह्य सा ॥	५४
यथोक्तमार्गेण ययौ पश्यन्ती विविधान् मृगान् ।	
मत्तेभान् पर्वताकारान् श्वेतदन्तविभूषितान् ॥	५५
करिणीयूथसहितान् जलदाऽऽदानतत्परान् ।	
सिंहान् श्वेतघनप्रख्यान् सिंहीयूथैरनुद्रुतान् ॥	५६
शार्दूलक्षांश्च खड्गांश्च शरभान् गवयान् मृगान् ।	
कृष्णसारान्श्च गोमायून् शशांश्च प्रियकानपि ॥	५७
सारसांश्च मयूरांश्च मार्जारान् वनगोचरान् ।	
वृकान् शुकान् सूकरांश्च सुवाचः पक्षिणस्तथा ॥	५८
पश्यन्ती विविधाकारान् तुष्यन्ती च मुहुर्मुहुः ।	
आससादाऽरणीतीरं पश्चिमं पादपाकुलम् ॥	५९

अवतीर्याऽरुणादध्वात् अमस्त्येशसमीपतः ।

दृष्ट्वाऽगस्त्येश्वरं लिङ्गमगस्त्येन सुपूजितम् ।

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च विशश्राम नदीतटे ॥

६०

दिव्योद्यानस्थपद्मावतीसखीः प्रति वकुलमालिकोक्तिः

तत्ताऽऽगता राजगृहात् योषितो देवसन्निधौ ।

सखीः पद्मालयायास्ता दृष्ट्वा वकुलमालिका ।

गत्वा समीपे तासां सा किंवदन्तीं स पृच्छति ॥

६१

वकुलमालिका —

‘ का यूयं योषितो ब्रूत विचित्राऽऽभरणस्रजः ।

कुतः समाग ॥ बल किं कार्यं वोऽमलाननाः ? ’ ॥

६२

तास्तु तस्या वचः श्रुत्वा स्मितपूर्वमथाऽब्रुवन् ।

‘ शृणुष्ववहिता देवि ! वयं वक्ष्यामहेऽधुना ’ ॥

६३

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे पद्मावतीदर्शनेन श्रीनिवासस्य मोहप्राप्त्यादिवर्णनं

नाम पञ्चमोऽध्यायः



अथ षष्ठोऽध्यायः



वकुलमालिकां प्रति सखीविनिवेदितपद्मावत्युदन्तः

योषितः —

‘ वयमाकाशराजस्य शुद्धान्तनिलयाः स्त्रियः ।

सख्यः पद्मालयाया वै दुहितुर्वसुधापतेः ॥

१

राजपुत्रीं पुरस्कृत्य गताः पूर्वं वनान्तरम् ।

कुर्वन्त्यः पुष्पापचयं राजपुत्र्यर्थमाकुलाः ॥

२



- वृक्षमूले समासीनाः तत्र पश्याम पूरुषम् ।  
 इन्द्रनीलशिलाश्यामं इन्दिरामन्दिरोरसम् ॥ ३  
 ईषत्स्मितमुखं चारुपीनदीर्घभुजद्वयम् ।  
 मृष्टपीताम्बरं हेमबाणबाणाऽऽसनोज्ज्वलम् ॥ ४  
 सुवर्णमकुटं हारकेयूरादिविभूषितम् ।  
 तं तु पद्मालया दृष्ट्वा सखी कमललोचनम् ॥ ५  
 द्रुतहेमनिभाकारा 'पश्य पश्ये' ति साऽब्रवीत् ।  
 पश्यन्तीनां तदाऽस्माकं गतोऽन्तर्धानमाशु सः ।  
 सा सखी मूर्च्छिताऽस्माभिर्नीता राजगृहं ततः ॥ ६  
 पद्मावतीमुद्दिश्य दैवज्ञं प्रति विगद्राजकृतप्रश्नादिः  
 दृष्ट्वाऽस्वस्थां नृपः पुत्रीमपृच्छद्वैवचिन्तकम् ।  
 'वद विप्रेन्द्र ! पुत्र्या मे ग्रहचारफलं मुने' ॥ ७  
 बृहस्पतिसमो विप्रो विचार्याऽऽत्मनि खेचरान् ।  
 'अनुकूला ग्रहाः सर्वे तव पुत्र्या नृपोत्तम ! ॥ ८  
 किन्तु नित्यं ग्रहफलं किञ्चित् भ्रान्तिकरं नृप' ॥ ९  
 तमुवाच पुनर्धीमान् प्रश्नकालं विचार्य च ॥ ९  
 छायां गुणित्वा लम्बञ्च फलानि च विचार्य च ।  
 'लम्बे लम्बाधिपश्चन्द्रः केन्द्रे चैव बृहस्पतिः ॥ १०  
 निद्राति दिनपक्षी तु प्रश्नपक्षी तु राज्यगः ।  
 शृणु राजन् ! फलं तस्य स्वास्थ्यमेव भविष्यति ॥ ११  
 उत्तमः पुरुषः कश्चित् आगतः कन्यकां प्रति ।  
 तं दृष्ट्वा मूर्च्छिता पुत्री तेन योगं समेष्यति ॥ १२  
 तेनैव प्रेषिता क्वचित् आगमिष्यति कन्यका ।  
 सा तु वक्ष्यति यद्वाक्यं तद्धितं ते भविष्यति ॥ १३

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे षष्ठोऽध्यायः १६३

तत्कुरुष्व महाराज ! सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।  
 किञ्च सर्वार्थदं यत्तु सर्वव्याधिविनाशकम् ॥ १४  
 वक्ष्यामि तत्कुरुष्वद्य पुन्यास्तव सुखावहम् ।  
 कारयागस्त्यलिङ्गस्य ब्राह्मणैरभिषेचनम् ॥ १५

दैवज्ञोक्त्या अगस्त्यलिङ्गार्चनाय विप्रादिप्रेषणम्

इत्युक्त्वाऽथ गृहं यातो राजानं दैवचिन्तकः ।  
 आकृशराजोऽपि तदा विप्रानाहूय वैदिकान् ॥ १६  
 अभ्यर्च्याऽऽज्ञापयामास ' गत्वा देवालयं द्विजाः ।  
 महाभिषेकं शम्भोश्च कुरुध्वं मन्त्रपूर्वकम् ॥ ' १७  
 इत्यनुज्ञाप्य तानस्मान् आहूयाभ्यवदच्छुभे ! ।  
 ' महाभिषेकसम्भारान् सम्पादयत कन्यकाः ॥ ' १८  
 इत्याज्ञप्ता नृपेणैव वयं देवाऽलयं गताः ।  
 ब्रूहि त्वं सुभगेऽस्माकं त्वदागमनमञ्जसा ॥ १९  
 कुतोऽसि कस्य वाऽर्थेन क्व वा जिगमिषा हि ते ।  
 दिव्याश्वमधिरुद्धं देवलोकादिवागता ॥ '' २०

श्रीवाराहः —

इति ताभिस्तदा पृष्ट्वा हृष्टा वकुलमालिका ।  
 प्रोवाच वाचं मधुरां हर्षयन्तीव बालिकाः ॥ २१

वकुलमालिका —

' श्रीवेङ्कटाद्रेः प्राप्ताऽहं नाम्ना वकुलमालिका ।  
 धरणीं द्रष्टुकामाऽहं आरुद्धेन तुरङ्गमम् ॥ २२  
 द्रष्टुं शक्या भवेद्देवि ! किमु तत्र नृपाऽलये ।'  
 इति तस्या वचः श्रुत्वा ताः प्रोचुर्नृपकन्यकाः ॥ २३

‘अस्माभिः सहिता त्वं वै द्रक्ष्यसे धरणीं शुभे ।’  
 इत्युक्ता सा ततस्ताभिरागता नृपमन्दिरम् ॥ २४  
 आगच्छन्तीषु तास्वेवं धरणी तु पुलिन्दिनीम् ।

धरणीकृतप्रश्नस्य पुलिन्दिनीप्रतिवचनम्

आयान्तीं वीथिकायां सा सगुञ्जाशङ्खभूषिताम् ॥ २५  
 शिशुं स्तनन्धयं पृष्ठे बद्धा वस्त्राञ्चलेन वै ।  
 ‘वदामि सत्यं शृणुत भूतं भव्यं भविष्यकम् ॥’ २६  
 वदन्तीं वीथिवीथीषु, तामाहूय शुचिस्मिता ।  
 स्वर्णशूर्पं समादाय तस्मिन् मुक्ता निधाय च ॥ २७  
 त्रिप्रस्थमालान् त्रीन् राशीन् कृत्वा तस्यै निधाय च ।  
 ‘वद सत्यं पुलिन्दे त्वं एष्यद्वा भूतमेव वा ॥’ २८  
 इत्येवं धरणी देवी पृच्छन्ती तां स्थिताऽभवत् ।  
 पृष्ट्वा साऽवददस्यास्तु मनसा यद्विचिन्तितम् ॥ २९  
 ‘मध्यराशौ चिन्तितं ते वद कल्याणि मे ऋजु ।’  
 ‘ओ’ मित्याहाऽथ धरणी पुलिन्दां राजवल्लभा ॥ ३०

धरणी —

‘राशिरुक्तः फलं ब्रूहि धनराशिं ददामि ते ।’

पुलिन्दा —

‘सत्यं वदामि ते सुभ्रु ! शिरोरत्नं प्रयच्छ मे’ ॥ ३१  
 इत्युक्ता सा तु धरणी स्वर्णपात्रेऽन्नमाददे ।  
 दत्त्वा तस्यै पुलिन्दिन्यै ‘सत्यं ब्रू’ हीति साऽवदत् ॥ ३२  
 सक्षीरमन्नादाय दत्त्वा पुत्राय भामिनी ।  
 सा सत्यमवदत् ‘सुभ्रूः दुहितुर्देहशोषणम् ॥ ३३

पुरुषादागतं भीरु तद्रूपादर्शनादियम् ।	
अङ्गतापं समापन्ना ह्यनङ्गशरपीडिता ॥	३४
स तु देवादिदेवो वै वैकुण्ठादागतः स्वयम् ।	
श्रीवेङ्कटाद्रिशिखरे स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	३५
मायावी परमानन्दः श्रिया सह रमापतिः ।	
कामरूपी विहरते स्वभक्ताभीष्टदो हरिः ॥	३६
स तुरङ्गं समारुह्य विहरन् काननान्तरे ।	
आगत्योपवनं राज्ञि ! तव कन्यां स दृष्टवान् ॥	३७
रमासमामिमां दृष्ट्वा स्वयं कामवशं गतः ।	
स्वसखीं ललितां देवः प्रेषयिष्यति तेऽन्तिकम् ॥	३८
रमेव तं समेत्यैषा रमिष्यति सुखं चिरम् ।	
एतत्सत्यं मम वचः तस्याऽद्यैव नृपालमजे ॥	३९
पुत्रस्यान्नं प्रय 'च्छेति तूष्णीमास पुलिन्दिनी ।	
अन्नं दत्त्वा पुनर्भूमिं तस्यै तां विससर्ज ह ॥	४०
तस्यां विनिर्गतायां तु पुलिन्दिन्यामनिन्दिता ।	
उत्थाय चाङ्गणात्तस्मात् विवेशान्तःपुरं शुभम् ॥	४१
यत्नं पद्मालया कन्या समास्ते स्वसखीवृता ।	
गत्वा पुत्रीसमीपस्थाः कन्याः कामातुरां सुताम् ॥	४२
‘पुत्रि ! किं ते करिष्यामि वस्तु किं वा प्रियं शुभे ’ ! ।	
इति मात्राऽभिपृष्टा सा मन्दमाह मनस्विनी ॥	४३

पद्मावतीनिवेदित भगवद्भागवतलक्षणाणि

‘नेत्राभिरामं यल्लोके सतामपि मनःप्रियम् ।	
यं द्रष्टुकामा ब्रह्माद्या यत्तु सर्वगतं महत् ॥	४४

तेजसामपि तेजस्वी देवानामपि दैवतम् ।  
 भक्तैस्सद्भिरिह प्राप्यभक्तैर्न कदाचन ॥ ४५  
 तस्मिन्नेव मनो मेऽम्ब वस्तुनीह प्रवर्तते ।  
 तदेवान्विष्यतां मातः भक्तानां सर्वकामदम् ॥ ' ४६

श्रीवराहः —

एतच्छ्रुत्वाऽथ धरणी तामपृच्छत् पुनः सुताम् ।  
 'तद्वक्तृलक्षणं ब्रूहि यैः प्राप्यं तत् सुलोचने ' ॥ ४७

पद्यालया —

'भक्तानां लक्षणं मातः शृणु गुह्यं समाहिता ।  
 शङ्खचक्राङ्किते नित्यं भुजयुग्मे वसुन्धरे ॥ ४८  
 ऊर्ध्वपुण्ड्रं सान्तरालं तेषामेव विशेषतः ।  
 पुण्ड्राणि द्वादश पुनः धारयन्ति तथाऽपरे ॥ ४९  
 ललाटोदरहृत्कण्ठे जठरे पार्श्वयोरपि ।  
 भुजद्वन्द्वे सयुग्मे च पृष्ठे च गलपृष्ठके ॥ ५०  
 केशवादीनि नामानि द्वादशाङ्गेषु द्वादश ।  
 'वासुदे ' वेति तन्मूर्ध्नि धारयन्ति नमोऽस्त्विति ॥ ५१  
 तेषां तु नियमान् वक्ष्ये मातः शृणु मनोरमान् ।  
 वेदपारयणरताः कर्म कुर्वन्ति वैदिकम् ॥ ५२  
 सत्यं वदन्ति ये देवि ! नासूयन्ति परान् क्वचित् ।  
 परनिन्दां न कुर्वन्ति परस्वं न हरन्ति ये ॥ ५३  
 न स्मरन्ति न पश्यन्ति न स्पृशन्ति कदाचन ।  
 परदारान् सुरूपांश्च ये च तान् विद्धि वैष्णवान् ॥ ५४  
 सर्वभूतदयावन्तः सर्वभूतहिते रताः ।  
 सदा गायन्ति देवेशमेतान् भक्तानवेहि वै ॥ ५५

येन केन च सन्तुष्टाः स्वदारनिरताश्च ये ।	
वीतरागभयक्रोधाः तान् भक्तान् विद्धि वैष्णवान् ॥	५६
एवं विधैर्गुणैर्युक्ताः पञ्चायुधधरा अपि ।	
पित्ता चाऽऽचार्यरूपेण शिष्टेनान्येन वा पुनः ॥	५७
स्वगृह्योक्तविधानेन बहिर्मादाय वै बुधः ।	
चक्राद्यायुधमन्त्रेण जुहुयात् षोडशाहुतीः ॥	५८
मूलमन्त्रेण सूक्तेन पौरुषेण ततः परम् ।	
जातवेदः सुमन्त्रेण पश्चादष्टोत्तरं शतम् ॥	५९
हुत्वा महान्याहृतिभिः चक्रादींस्तत्र तापयेत् ।	
सद्भान् सुतप्तान् गुरुणा मन्त्रवद्धारयेद् बुधः ॥	६०
भुजद्वये शङ्खचक्रे मुग्धे शार्ङ्गशरौ तथा ।	
लल्यटे तु गदा धार्या हृदये सङ्गमेव च ॥	६१
एवं धार्याणि पञ्चैव विष्णुभक्तैर्मुमुक्षुभिः ।	
अथवा भुजयोश्चक्रशङ्खौ चैव सुलक्षणौ ॥	६२
एवं लाञ्छनयुक्ता ये भक्तास्ते वैष्णवाः स्मृताः ।	
तैरेव लभ्यं तद्ब्रह्म सदाचारसमन्वितैः ॥	६३
तस्मिन्नेव मम प्रीतिः तत्प्राप्तिं काङ्क्षते मनः ।	
मातर्विष्णुं विनाऽन्येषु वाञ्छा काचिन्न जायते ॥	६४
स्मरामि श्यामलं विष्णुं वदामि हरिमच्युतम् ।	
तेनैव मातर्जीवामि तद्योगे चिन्त्यतां विधिः ॥ '	६५

श्रीवाराहः —

इत्युक्त्वा मातरं दीनां विररामाम्बुजानना ।

तच्छ्रुत्वा चिन्तयामास विष्णुः प्रीतः कथं भवेत् ? ॥ ६६

वकुलमालिकाया सार्धं सखीनां धरणीममीने आगमनम्

एतस्मिन्नन्तरे कन्या अगस्त्येशं समर्च्य च ।

आगता धरणीं द्रष्टुं सहैव वकुलसजा ॥ ६७

आगतान् ब्राह्मणांस्तत्र पूजयित्वा सुभोजनैः ।

दत्त्वाऽथ दक्षिणाः पूर्णां वस्त्रालङ्कारसंयुताः ॥ ६८

आशिषो वाचयित्वाऽथ वाञ्छितार्थस्य सिद्धये ।

विस्तृज्य ब्राह्मणान् सर्वानथापृच्छत् स्वयोषितः ।

पूजयित्वा ह्यगस्त्येशमामतास्ता मनस्वनीः ॥ ६९

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे वकुलमालिकां प्रति सखीविनिवेदितपद्मावत्युदन्तविष्णुभक्त-  
लक्षणादिर्वर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः

अथ पप्तमोऽध्यायः

धरणीद्वयै वकुलमालिकानिवेदितश्रीनिवासोदन्तः

धरणी —

‘कैषा ब्रूत वरा कन्या युष्माभिः सङ्गता कुतः ।

किमर्थमागता चेह पूजयैषा प्रतिनाति मे? ॥’ १

कन्यकाः —

‘एषा दिव्याङ्गना देवी त्वयि कार्यार्थमागता ।

देवालये सङ्गतेयमस्माभिः शिवसन्निधौ ॥ २

पृष्ट्वाऽवदच्च ‘भवतीं द्रष्टुमेवाऽऽगतेति वै ।

शक्या द्रष्टुं राजगृहे मया राज्ञौ मुखेन वः’ ॥ ३

एवं पृष्टास्ततो ब्रूमः 'सहासामिश्च गम्यताम् ।

वयन्तु धरणीदास्यो गमिष्यामो नृपाल्यम्' ॥

४

इत्युक्ताऽस्माभिरायाता त्वत्समीपं वसुन्धरे ।

भवत्या पृच्छयतामेषा 'किमित्यगमनं तव' ॥

५

श्रीवाराहः —

इति तासां वचः श्रुत्वा तामपृच्छत् वसुन्धरा ।

धरणी —

'कुतस्त्वमागता देवि ! किं वा कार्यं मया तव ।

ब्रूहि सत्यं करिष्यामि त्वदागमनकारणम्' ॥

६

वकुलमालिका —

'वेङ्कटाद्रेः समायाता नाम्ना वकुलमालिका ।

स्वामी नारायणोऽस्माकमास्ते श्रीवेङ्कटाचले ॥

७

कदाचित् हयमारुह्य हंसशुक्लं मनोजवम् ।

मृगयार्थं गतो राज्ञो वेङ्कटाद्रेः समीपतः ॥

८

वनानि विचरन् काले शोभने कुसुमाकरे ।

पश्यन् मृगान् गजान् सिंहान् गवयान् शरभान् रुरुन् ॥

९

शुकान् पारावतान् हंसान् पक्षिणोऽन्यान् वनान्तरे ।

गजराजं तत्र कञ्चित् यूथपं मदवर्षिणम् ।

करैणुसहितं तुङ्गमन्वगच्छत् सुरोत्तमः ॥

१०

श्रीनिवासोक्त्या शङ्खनृपस्य स्वामितीर्थे तपःकरणम्

वनान्नान्तरे गत्वा नृपं शङ्खमुपासमत ।

तपस्यन्तं बृहच्छैले प्रतिष्ठाप्य जनार्दनम् ॥

११



- श्रीभूमिसहितं नित्यमर्चयन्तश्च भक्तितः ।  
 शङ्खनागविलं नाम सरः पावनमुत्तमम् ॥ १२  
 तत्सरस्तीरमासाद्य तुरङ्गादवरुद्ध च ।  
 राजवेषं समासाद्य तमपृच्छन्नरोत्तमम् ।  
 'क्रियते किं नृपश्रेष्ठ ! पादेऽस्मिच्छेषभूभृतः ' ॥ १३

शङ्खः —

- 'अहं हैहयदेशीयः पुत्रः श्वेतस्य भूभृतः ।  
 महाविष्णोः प्रीतयेऽत्र कृतवानखिलान् क्रतून् ॥ १४  
 अदर्शनान्महाविष्णोः निर्विष्णोऽहं नृपात्मज ! ।  
 तदानीमवददिव्या बाणी सर्वोर्तिनाशिनी ॥ १५  
 'राजन् नात्र भविष्यामि प्रत्यक्षं ते वचः शृणु ।  
 गच्छ नरायणाद्रिं त्वं तपः कु ' विंति मां स्फुटम् ॥ १६  
 ततो देशमहं त्यक्त्वा तपसाऽऽराधयाम्यहम् ।  
 अत्र देवं नृपाचिन्त्यं प्रतिष्ठाप्य श्रियःपतिम् ॥ १७  
 अगस्त्यानुग्रहान्नित्यमर्चयामि विधानतः ' ।  
 इति तस्य वचः श्रुत्वा सोत्प्राप्तं प्राह तं विभुः ॥ १८  
 'गच्छ नारायणाद्रिं त्वं अस्य पादे किमास्यते ? ।  
 आरुद्धानेन मार्गेण पश्चिमे शिखरे स्थितम् ॥ १९  
 प्रणम्य विष्वक्सेनं त्वं बालं न्यग्रोधमूलतः ।  
 स्वामिपुष्करिणीं गत्वा स्नात्वा तीरेऽथ पश्चिमे ॥ २०  
 अधत्थं तत्र बल्मीकं द्रक्ष्यसे नृपनन्दन ! ।  
 तयोर्मध्यं समासाद्य तपः कु ' विंत्यचोदयत् ॥ २१  
 कश्चिच्छ्वेतो वराहोऽस्मिन् बल्मीके चरति ध्रुक्म् ।  
 स तु पुण्यवतामेव सेवां यच्छति भूपते ! ॥ २२

श्रीवाराहः -

इत्यादिश्य हयारूढो जगाम मृगयां विभुः ।	
चरन् वनाद्वनं सुभ्रुः । समासाद्याऽरणीं नदीम् ॥	२३
अवरूढ हयात्तत्र विचचार तटे शुभे ।	
वनान्तादागतो वायुः पद्मकङ्कहारशीतलः ।	
श्रमापनयनो मन्दं सिषेवे पुरुषोत्तमम् ॥	२४
तरवः पुष्पवर्षाणि विकिरन्तः सिषेविरे ।	
एवं स विचरन् देवः पुष्पभारनतांस्तखन् ॥	२५
विचिन्वन् गजराजं तं पुष्पलावीर्ददर्श ह ।	
कन्याः सुवेषा रुचिरा मेघेष्विव शतह्रदाः ॥	२६
तासां मध्यगतां तन्वीं ददर्शातिमनोहराम् ।	
लक्ष्मीसमां हेमवर्णां तस्यां सक्तमना अभूत् ॥	२७
तां गृध्रुराह ताः कन्याः ' केय ' मित्येव पूरुषः ।	
उक्तस्ताभि ' रियं कन्या वियद्राज्ञो महाबल ! ' ॥	२८
इदं श्रुत्वा वचस्तासां हयमारूढ वेगवान् ।	
आजगामाशु भगवान् स्वालयं रुचिरं गिरिम् ॥	२९
तत्र स्वालयमासाद्य स्वामिपुष्पकरिणीतटे ।	
मामाहूयावदद्देवो ' हला वकुलमालिके ! ॥	३०
वियद्राजपुरं गत्वा प्रविश्यान्तपुरं सखि ! ।	
तत्पत्नीं धरणीं प्राप्य पृष्ट्वा कुशलमेव च ॥	३१
याचस्व तनयां तस्या रुचिरां कमलालयाम् ।	
राज्ञोऽभिमतमाज्ञाय शीघ्रमागच्छ भामिनि ! ' ॥	३२
इत्थं देवेन चाज्ञप्ता देवि ! त्वद्गृहमागता ।	
यथोचितं कुरुष्वेह राज्ञा मन्त्रियुतेन च ॥	३३

## बकुलमालिकोत्तया धरण्यादिकृतविवाहनिश्चयः

कन्यया च विचार्यैव प्रोच्यतामुत्तरं वचः ॥ ' ३४

श्रीवराहः —

अथ तस्या वचः श्रुत्वा प्रीता राज्ञी बभूव ह ।  
आहूयाऽऽकाशराजं तमुपेत्य कमलालयम् ॥ ३५

मन्त्रिमध्येऽवदद्देवी वचनं वकुलस्रजः ।  
श्रुत्वा प्रीतोऽवदद्राजा मन्त्रिणः सपुरोहितान् ॥ ३६

आकाशराजः —

‘ कन्या त्वयोनिजा दिव्या सुभगा कमलालया ।  
अर्थिता देवदेवेन वेङ्कटाद्रिनिवासिना ॥ ३७

पूर्णो मनोरथो मेऽद्य ब्रूत किं संमतं तु वः । ’  
श्रुत्वा मन्त्रिगणाः सर्वे राज्ञो वचनमुत्तमम् ॥ ३८

प्रोचुः सुप्रीतमनसो वियद्राजं महीपतिम् ।  
‘ वयं कृताभ्यां राजेन्द्र ! कुलं सर्वोन्नतं भवेत् ॥ ३९

भवत्कन्येयमतुला श्रिया सह रमिष्यति ।  
दीयतां देवदेवस्य शार्ङ्गिणे परमात्मने ॥ ४०

अयं वसन्तः श्रीमांश्च शुभं शीघ्रं विधीयताम् ।  
आहूय धिषणं लम् विवाहार्थं विधीयताम् ॥ ’ ४१

बृहस्पत्युक्त्या विवाहलग्नस्थिरीकरणम्

तथास्त्वित्रग्राह्यमग्नस सुश्लोकाद् बृहस्पतिम् ।

पप्रच्छः कन्यावस्योर्विवाहार्थं नरेश्वरः ॥ ४२

राजोवाच—

कन्याया जन्मनक्षत्रं मृगशीर्षमिति स्मृतम् ।  
 देवस्य श्रवणक्षन्तु तयोर्योगो विचार्यताम् ॥ ४३  
 श्रुत्वाऽब्रवीत्स धिषणस्तयोरुत्तरफल्गुनी ।  
 सम्मतात्सुखवृद्धयर्थं प्रोच्यते दैवचिन्तकैः ॥ ४४  
 तयोरुत्तरफल्गुन्यां विवाहः क्रियतामिति ।  
 वैशाखमासे विधिवत् क्रियतामिति सोऽब्रवीत् ॥ ४५

श्रीवाराहः—

राजा तु धिषणं तत्र संपूज्याथ विसृज्य च ।  
 देवस्य दृतिकामाह गच्छ देवालयं शुभे ॥ ४६  
 वैशाखे देवदेवाय कल्याणं वद सुव्रते ।  
 वैवाहिकविधानं तु कृत्वा चागम्यतामिति ॥ ४७  
 ततो देव्याः प्रियकरं शुक्रं दूतं तया सह ।  
 विसृज्य वायुं स्वसुतमिन्द्राद्यानयनेऽसृजत् ॥ ४८

विश्वकर्मादिकृतपुरालङ्कारादिक्रमः

आहूय विश्वकर्माणं पुरालङ्कारकर्मणि ।  
 नियोजयामास सोऽपि निर्ममे निमिषान्तरात् ॥ ४९  
 इन्द्रोऽसृजत्पुष्पवृष्टिं ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।  
 धनदो धनधान्याद्यैः पूरयामास वेदम् तत् ॥ ५०  
 यमस्तु रोगरहितांश्चकार मनुजान् भुवि ।  
 वरुणो रत्नजालानि सौक्तिकदीन्यपूरयत् ।  
 एवं संपात्र सर्वाणि ययुर्देवा वृषाचलम् ॥ ५१

पद्मावती शुकेन सह वकुलायाः श्रीनिवाससमीपे गमनम्

श्रीवराहः —

ततः सा हयमारुह्य शुकेन सहिता ययौ ।  
 श्रीवेङ्कटादिमासाद्य देवालयसमीपतः ॥ ५२  
 अवरुह्य तुरङ्गात्सा सशुकाऽभ्यन्तरं ययौ ।  
 दृष्ट्वा देवं रत्नपीठे श्रिया सह सुलोचनम् ॥ ५३  
 प्रणम्य श्ववदत्पीता कृत्यं तत्त कृतं विभो ! ।  
 माङ्गल्यवार्ता वक्तुं वै शुक एष समागतः ॥ ५४

श्रीनिवासाय शुकावेदितपद्मावतीपरिणयवृत्तान्तः

वदेति देवेनाज्ञप्तः शुको नत्वा तमब्रवीत् ।  
 त्वां प्रत्याह सुता भूमेः ' मामङ्गीकुरु माधव ॥ ५५  
 वदामि तव नामानि स्मरामि त्वद्गुणसदा ।  
 ध्रियन्ते तव चिह्नानि भुजाद्यङ्गै रमापते ॥ ५६  
 त्वद्भक्तानर्चयामीह पञ्चसंस्कारसंयुतान् ।  
 त्वत्पीतये हि कर्माणि करोमि मधुसूदन ! ॥ ५७  
 एवं सदैवाचरन्त्याः पित्रोरनुमते मम ।  
 कुरु प्रसादं देवेश मामङ्गीकुरु माधव ! ॥ ' ५८

शुकः -

इति विज्ञापयामास कमलस्था धरासुता ।  
 शुकस्य वचनं श्रुत्वा सुप्रियं त्वात्मनो हरिः ॥ ५९

पद्मावत्या शुकदत्तश्रीनिवासमालाधारणम्

श्रीभगवान्—

' कर्तुं कल्याणमुद्गाहमागमिष्यामि चामरैः ' ।  
 शुक गच्छ वदैवं तामित्थं देवोऽब्रवीदिति ॥ ६०

शुकः श्रुत्वा देववाक्यमादाय वनमालिकाम् ।	
देवदत्तां ययौ शीघ्रं वियद्राजसुतां प्रति ॥	६१
तुलसीमालिकां दत्त्वा मृगनाभिसुगन्धिनीम् ।	
प्रणम्य देवीमवदत् शुको देववचः शुभम् ॥	६२
श्रुत्वा तन्मालिकां गृह्य भूमिजा शिरसा दधौ ।	
चक्रेऽलङ्कारमुचितं देवागमनकाङ्क्षिणी ॥	६३
वियद्राजोऽपि सानन्दं इन्दुमाहूय सादरम् ।	
अन्नं विधीयतां राजन् विविधं रससंयुतम् ॥	६४
विष्णोर्नैवेद्ययोग्यं यत् परमान्नं विधीयताम् ।	
देवानाञ्च ऋषीणाञ्च नराणामपि सम्मतम् ॥	६५
चतुर्विधं सुगन्धाढ्यं अमृतांशैः सुधाकर ! ।	
एवं कृत्वा संविधानं प्रतीक्ष्याऽऽगमनं विभोः ॥	६६
सभायां मन्त्रिसहितः समास्त प्रीतमानसः ।	
पुत्रीमलङ्कृतां कृत्वा धरणीसहितो नृपः ॥	६७

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे धरणीदेव्यै वकुलमालिकानिवेदितश्रीनिवासोदन्त-

कमलालयाकल्याणविध्यादिवृत्तान्तवर्णनं

नाम सप्तमोऽध्यायः





## श्रीनिवासस्य लक्ष्म्यादिकृतपरिणयालङ्कारः

श्रीवराहः —

ततो देवाधिदेवोऽपि लक्ष्मीमाहूय भामिनीम् ।	
‘ किं कार्यं वद कल्याणि विवाहार्थं सुलोचने ! ॥	१
आज्ञापयस्व स्वसस्त्रि रसे ! कार्यं कुरु प्रियम् ’ ।	
श्रीस्तु कृष्णलवः श्रुत्वा सखीनामभ्यचोदयत् ॥	२
श्रियाऽऽज्ञप्ता ततः प्रीतिः सुगन्धं तैलमाददौ ।	
श्रुतिः क्षौमं समादाय तस्थौ देवस्य सन्निधौ ॥	३
भूषणानि समादाय स्मृतिरप्याययौ मुदा ।	
धृतिरादर्शमदत्त कान्तिमृगमदं ददौ ॥	४
यक्षकर्ममादाय ह्रीः स्थिता पुरतो हरेः ।	
कीर्तिः कनकपट्टञ्च सरत्नं मकुटं ददौ ॥	५
छत्रं ददौ तदेन्द्राणी चामरन्तु सरस्वती ।	
द्वितीयं चामरं गौरी व्यजने विजयाजये ॥	६
आगतांस्ताः समालोक्य श्रीरुत्थायाऽथ सत्वरं ।	
सुगन्धं तैलमादाय देवमभ्यज्य शीर्षतः ॥	७
उद्धर्तितं गन्धचूर्णैः देवाङ्गं परिभृज्य च ।	
आनीतान् करिमित्तोयकलशान् कञ्चनान् शतम् ॥	८
वियद्गङ्गादितीर्थेभ्यः कर्पूरादिसुवासितान् ।	
एवमेकं समादाय त्वभ्यषिञ्चद्रमा हरिम् ॥	९
सन्धूप्य केशान् धूपेन ताम्राश्यामान् बबन्ध च ।	
सुगन्धेनानुलिप्याङ्गं स्वर्णवर्णेन तद्विभोः ॥	१०

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे अष्टमोऽध्यायः

१७७

पीतकौशेयकं बद्धा कच्छां काञ्चीसमन्वितम् ।

मुकुटादिविभूषाभिः भूषयामास चेन्दिरा ॥

११

अङ्गुलीयकरत्नानि सर्वास्वेवाङ्गुलिषु च ।

आदर्शं दर्शयामास धृतिर्देवस्य सन्निधौ ॥

१२

दृष्ट्वाऽऽदर्शं देवदेवो ह्यूर्ध्वपुण्ड्रं स्वयं दधौ ।

आरुह्य गरुडं पश्चात् स्वयं लक्ष्मीसमन्वितः ॥

१३

ब्रह्मादिभिस्साकं श्रीनिवासस्य त्रियद्राजपुङ्गव नम्

ब्रह्मेशवज्रिवरुणयमयक्षेशसेवितः ।

वसिष्ठाद्यैर्मुनीन्द्रैश्च सनकाद्यैश्च योगिभिः ॥

१४

भक्तैर्भागवतैर्युक्तो नारायणपुरीं ययौ ।

जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥

१५

देवदुन्दुभयो नेदुः तदा देवस्य सन्निधौ ।

जपन्तः स्वस्तिसूक्तानि मुनयस्तं समन्वयुः ॥

१६

देवो देवगणैर्युक्तो विष्वक्सेनादिपार्षदैः ।

सखीभिस्स्यन्दनस्थानिः वकुलाद्यानिरन्वितः ।

आकाशराजस्य पुरमाससाद स्वलङ्कृतम् ॥

१७

पद्मावतीपरिणयवट्टः

देवमागतमालोक्य कन्यामैरावतस्थिताम् ।

पुरीं प्रदक्षणीकृत्य गोपुरद्वारमागताम् ॥

१८

आलोक्याऽऽकाशराजोऽपि समानीय वधूवरौ ।

बन्धुनिः सहितस्तस्थौ देवमालोक्य केशवम् ॥

१९

विष्णुर्मालां स्वकण्ठस्थां हस्तेनाऽऽदाय सस्मितः ।

कमलायाः स्कन्धदेशे मुमोच सुमनश्चिताम् ॥

२०



आदाय मल्लिकामालां साऽस्य कण्ठे समर्पयत् ।	
एवं त्रिवारं तौ कृत्वा वाहनादवरुह्य च ॥	२१
स्थित्वा पीठे क्षणं पश्चात् गृहं विविशतुः शुभम् ।	
ब्रह्मादिदेवयूथैश्च सहितौ भूमिजाहरी ॥	२२
माङ्गल्यसूत्रबन्धादि साङ्कुरार्पणमञ्जजः ।	
वैवाहिकं कारयित्वा राजहोमान्तमेव च ॥	२३
व्रतादेशं समाज्ञाय शायितौ कमलाहरी ।	
चतुर्थे दिवसे सर्वं समाप्य चतुर्मुखः ॥	२४
अनुज्ञाप्य वियद्राजमारोप्य गरुडे हरिम् ।	
देवीभ्यां सहितं देवं देवैर्गन्तुं प्रचक्रमे ॥	२५
दिव्यदुन्दुभिनिघौषैः संप्राप्य वृषभाचलम् ।	
तुष्टुवुर्देवदेवेशं ब्रह्माऽऽद्या देवतागणाः ॥	२६
शुकादयो मुनिगणाः तुष्टुवुः पुरुषोत्तमम् ।	
स्तूयमानोऽथ देवोऽपि विवेश मणिमण्डपम् ।	
रमाधरणिजाभ्याञ्च तत्र सिंहासनं ययौ ॥	२७
वधूवरयोर्विधद्राजवितीर्णप्राभृतादिकञ्च	
आकाशराजोऽपि तदा महेन्द्रादिसुरैः सह ।	
पुत्रीविष्णोः प्रियार्थन्तु प्राभृतं कर्तुमुद्यतः ॥	२८
सौवर्णेषु कटाहेषु तण्डुलान् शालिसम्भवान् ।	
मुद्गपात्राण्यनेकानि घृतकुम्भशतानि च ॥	२९
पयोघटसहस्राणि दधिमाण्डान्यनेकशः ।	
दिव्यानि चूतकदलीनारिकेलफलानि च ॥	३०
धात्रीफलानि कूष्माण्डराजरम्भाफलानि च ।	
पनसान् मातुलङ्गान्श्च शर्करापूरितान् घटान् ॥	३१

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे अष्टमोऽध्यायः १७९

सुवर्णमणिमुक्ताश्च क्षौमकोट्यम्बराणि च ।  
दासीदाससहस्राणि कोटिशो गास्तथैव च ॥ ३२  
हंसेन्दुशुक्लवर्णानां हयानामयुतं ददौ ।  
तुङ्गानां नित्यमत्तानां गजानामधिकं शतात् ॥ ३३  
अन्तःपुरचरा नारीः नृत्तगीतविशारदाः ।  
ददौ चतुःसहस्राणि श्रीनिवासाय विष्णवे ॥ ३४  
दत्त्वा चैतानि सर्वाणि तस्थौ देवपुरो विभुः ।

श्रीनिवासकृपया वियद्राजस्य भक्तिप्राप्तिरूपवरप्राप्तिः

दृष्ट्वा देवोऽपि तत्सर्वं देवीभ्यां सहितो हरिः ॥ ३५  
सुप्रीतः प्राह राजानं श्वशुरं वेङ्कटेश्वरः ।  
'वरं वृणीष्व हे राजन् ! गुरो मत्तो यदिच्छसि' ॥ ३६  
इति श्रीशवचः श्रुत्वा वियद्राजोऽवदद्विभुम् ।  
'त्वत्सेवैवेह देवैवं भूयादव्यभिचारिणी ।  
मनस्त्वत्पादकमले त्वयि भक्तिर्ममास्तु वै' ॥ ३७

श्रीभगवान् —

'त्वया यदुक्तं राजेन्द्र ! सर्वमेतद्विष्यति ।'  
इति दत्त्वा वरं तस्मै सम्मान्यैव यथोचितम् ॥ ३८

विवाहार्थमागतानां ब्रह्मादीनां स्वाऽऽवासगमनम्

ब्रह्मेशादिसुरान् सर्वान् समभ्यर्च्य यथोचितम् ।  
स्वर्लोकागमानायैवमनुमेने मुदा हरिः ।  
गतेषु तेषु सर्वेषु श्रिया भूमिजया युतः ॥ ३९

विहरन् स यथापूर्वं स्वामिपुष्करिणीतटे ।

आस्ते दिव्यालये देवोऽप्यर्च्यमानो गुहेन वै ॥ ४०

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

उत्तरार्धे ब्रह्मादिभिः साकं श्रीनिवासस्य विद्यद्राजपुरगमनकमलालया-

परिणयादिवर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः

अथ नवमोऽध्यायः

वसुनामकनिषादवृत्तान्तः

धरणी :—

‘कलौ युगे भूमिधर ! केन त्वं द्रक्ष्यसे प्रिय ।

विमानं केन ते देव कार्यतेऽस्मिन् महीधरे ॥ १

श्रीनिवासोऽपि केनैव द्रक्ष्यते सुभगाकृतिः ।

एतद्ब्रूहि मम प्रीत्या श्रोतुं कौतूहलं विभो ’ ॥ २

श्रीवराहः --

वक्ष्यामि शृणु हे देवि ! भविष्यद्यद्ब्रूदामि ते ।

अस्मिन् महीधरे पुण्ये निषादो वसुनामकः ॥ ३

श्यामाकवनपालोऽभूद्भक्तिमान् पुरुषोत्तमे ।

श्यामाकतण्डुलान् पक्त्वा मधुना परिषिच्य च ॥ ४

निवेद्य देवदेवाय श्रीभूमिसहिताय च ।

एवं भक्तिमतस्तस्य भार्या चित्रवती शुभा ॥ ५

असूत तनयं बाला वीरनामानमुत्तमम् ।

वसुः पुत्रेण सहितो भार्यया पतिभक्त्या ॥ ६

कस्मिंश्चिद्विसे पुत्रं श्यामाकं पालयेति च ।

विस्तृज्य पत्न्या सहितो मध्वन्वेषणतत्परः ॥ ७

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे नवमोऽध्यायः १८१

गतो वनान्तरं शीघ्रं मधुच्छत्रदिदक्षया ।  
 बालः श्यामाकपक्वानि गृहीत्वाऽग्नौ निधाय च ॥ ८  
 पिष्ट्वा निवेदयामास वृक्षमूले श्रियःपतेः ।  
 नैवेद्यं भक्षयित्वैव वीरस्त्वास सुखेन वै ॥ ९  
 तदन्तरे वसुश्चापि मध्वादाय समागतः ।  
 श्यामाकान् भक्षितान् दृष्ट्वा सन्तर्ज्य सुतमात्मनः ।  
 खड्गमादाय तं हन्तुं त्वरया हस्तमुद्धौ ॥ १०

सुतहननोद्युक्तं सं प्रणि भगवदुक्तिः  
 तद्वृक्षस्थस्तदा विष्णुः खड्गं जग्राह पाणिना ।  
 खड्गं गृहीतं केनेति पश्यन् वृक्षं ददर्श सः ॥ ११  
 शङ्खचक्रगदापाणिं वृक्षगूढार्थविग्रहम् ।  
 मुक्त्वा वसुश्च तं खड्गं प्रणम्योवाच केशवम् ॥ १२  
 “किमिदं देवदेवेश चेष्टितं क्रियते त्वया ?” ।

श्रीभगवान् —

“वसो ! शृणु वचो मे त्वं पुत्रस्ते भक्तिमान् मयि ॥ १३  
 त्वत्तोऽपि मे प्रियतमः तस्मात् प्रत्यक्षमागतः ।  
 तस्य सर्वत्र तिष्ठामि तव स्वामिसरस्तटे ” ।  
 इति देववचः श्रुत्वा प्रीतिमानभवद्बलुः ॥ १४  
 एतस्मिन्नेव काले तु पाण्ड्यदेशात् समागतः ।  
 बाल्यात्मभृति शूद्रोऽपि विष्णुभक्तिसमन्वितः ॥ १५

रङ्गदासस्य श्रीनिवाससेवार्थं श्रीशेषाचलागमनम्

नारायणपुरीं प्राप्य श्रीवाराहं प्रणम्य च ।  
 तत्र श्रुत्वा श्रीनिवासं वेङ्कटादिनिवासिनम् ॥ १६

- स्वयम्भूदेवदेवेशसेवितं प्रययौ ततः ।  
 सुवर्णमुखरीं प्राप्य स्नात्वा चोत्तीर्य तत्तटे ॥ १७
- कमलस्थे सरसि च स्नात्वा पुण्यप्रदायिनि ।  
 तत्तीरवासिनं देवं कृष्णं रामेण संयुतम् ॥ १८
- नमस्कृत्य ततः प्रायात् वनं गजघटायुतम् ।  
 शनैः सम्प्राप्य शेषाद्रिं निर्झरं सन्ददर्श ह ॥ १९
- तत्समीपं समासाद्य कपिलपूजितं शिवम् ।  
 तत्पुरश्चक्रतीर्थं तत् अगाधं पापनाशनम् ॥ २०
- तत्र स्नात्वा ततोऽगच्छत् वेङ्कटाद्रिं शनैः शनैः ।  
 आराद्धं गच्छता मार्गे युक्तो वैखानसेन च ॥ २१
- रङ्गदासस्त्वारुरोह बालो द्वादशवार्षिकः ।  
 स्वामिपुष्करिणीं प्राप्य स्नात्वा भक्तिसमन्वितः ॥ २२
- वैखानसेन मुनिना गोपीनाथेन पूजितम् ।  
 वनमध्ये तरोर्भूले स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ २३
- तिष्ठन्तं पुण्डरीकाक्षं श्रीभूमिसहितं हरिम् ।  
 आकाशस्थं सन्ददर्श पीतनीलाकृतिं शुभम् ॥ २४
- पार्श्वस्थशङ्खचक्राभ्यां गदाऽसिभ्यां निषेवितम् ।  
 पक्षौ विस्तार्य चाक्रशे देवमूर्ध्नि वितानवत् ।  
 स्थितञ्च गरुडेशनं पश्चाच्छाङ्गं शरं तथा ॥ २५
- श्रीनिवासार्थं रङ्गदासकृतदिव्योद्यानमण्डपनिर्माणानि  
 एवं दृष्ट्वा श्रीनिवासं विस्मितो रङ्गदासकः ।  
 अस्य देवस्य चारामं करिष्यामीत्यचिन्तयत् ॥ २६
- निश्चित्य मनसा सर्वं तस्मूलेऽवसत् सुधीः ।  
 कृत्वा वैखानसाद्विष्णोः नैवेद्यञ्च दिने दिने ॥ २७

शनैश्छित्वा वनं घोरं वृक्षांश्चिच्छेद पार्श्वगान् ।	
आस्थानचिञ्चां देवस्य रमायाश्चम्पकं तरुम् ॥	२८
देवाज्ञतो वर्जयित्वा तावुभौ देवसेवितौ ।	
देवस्य परितो भूमौ शिलाकुड्यं तदाऽकरोत् ॥	२९
तत्कुड्यस्यैव परितः पुष्पारामांश्चकार ह ।	
मल्लिकाकरवीराब्जकुन्दमन्दारमालतीः ॥	३०
तुलसीचम्पकानाञ्च वनान्येव चकार ह ।	
खनित्वा तत्र कूपं तु वर्धयंस्तज्जलैर्वनम् ॥	३१
आरामपुष्पाण्यादाय स्वयं दामान्यथाऽकरोत् ।	
विचित्राणि तदा बद्ध्वा पूजकस्य करे ददौ ॥	३२
आदाय पूजकस्तानि स्कन्धे मूर्ध्नि बबन्ध च ।	
श्रीनिवासस्य देवस्य श्रीभूमिसहितस्य च ॥	३३
एवं देवस्य कैङ्कर्यं कुर्वस्तथावुदारधीः ।	
तस्यैव वर्तमानस्य समास्त्वासप्ततेर्गताः ।	
कुर्वाणे पुष्पापचयं रङ्गदासे महात्मनि ॥	३४

रङ्गदासस्य गन्धर्वक्रीडादर्शनेन भगवत्कैङ्कर्यविस्मृतिः

आरामे सरसि स्नातुं गन्धर्वः कश्चिदाययौ ।	
गन्धर्वराजः कन्याभिः तरुणीभिः समन्वितः ॥	३५
जलक्रीडां करोति स दिवि स्थाप्य विमानकम् ।	
सुरूपाभिश्च सहितं क्रीडन्तं कमलाकरे ॥	३६
पश्यन् श्रीरङ्गदासोऽयं व्यस्सरन्माल्यसञ्चयम् ।	
जितेन्द्रियोऽपि तत्क्रीडां पश्यन् रेतः ससर्ज ह ॥	३७
पश्यतस्तस्य सरसः समुत्तीर्य मनोहरः ।	
दिव्यवस्त्राणि चाच्छाद्य कान्ताभिः सह सस्मितम् ॥	३८

अधिरूढ विमानं तु ययौ स धनदालयम् ।  
 गते गन्धर्वराजे तु रङ्गदासो विमोहितः ॥ ३९  
 त्यक्त्वा च तानि माल्यानि स्नात्वा सरसि लज्जितः ।  
 पुनराहृत्य पुष्पाणि शनैर्देवालयं ययौ ॥ ४०  
 वैखानसस्तु तं दृष्ट्वा पूजाकालमतीत्य च ।  
 आगतं किमिति प्राह “ सखेऽतिक्रम्य चागतः ।  
 न बद्धा मालिकाश्चापि त्वयाऽऽरामे च किं कृतम् ? ॥ ” ४१

श्रीवराह —

इत्थं पृष्टो रङ्गदासो नावदल्लज्जया ततः ।  
 लज्जितं रङ्गदासं तं प्रोवाच मधुसूदनः ॥ ४२

स्वरूपानुमन्धानेन लज्जितं रङ्गदासं प्रति श्रीनिवासश्च चनम्

श्रीभगवान् —

“ लज्जया किं रङ्गदास ! मया त्वं मोहितो ह्यसि ।  
 न तावज्जितकामस्त्वं धीरो भव महामते ! ॥ ४३  
 गन्धर्वराजवद्राजा भविताऽसि महीतले ।  
 तत्र भुक्त्वा महाभोगान् भक्तिमान्मयि सर्वदा ॥ ४४  
 प्राकारञ्च विमानञ्च कारयिष्यसि मे तदा ।  
 तत्र मुक्तिं प्रदास्यामि प्रीत्या परमया युतः ॥ ४५  
 अतैव कुरु सेवां त्वं आशरीरविमोक्षणात् ।  
 मद्भक्तानां सकामानामेवं मुक्तिर्भविष्यति ॥ ” ४६  
 इत्युक्त्वा भगवान् विष्णुः पुनर्नोवाच किञ्चन ।  
 श्रुत्वा तद्रङ्गदासोऽपि चक्राऽऽराममुत्तमम् ॥ ४७

तोण्डमानामकनृपवृत्तान्तः

साग्रं शताब्दं सेवित्वा गतः स्वर्गममन्दधीः ।	
जातः सोमकुले तुङ्गे ' तोण्डमा ' निति विंश्रुतः ॥	४८
सुवीरतनयो वीरो नन्दिनीगर्भसम्भवः ।	
स पञ्चवर्षादुद्भूतविष्णुभक्तिः स्वयं सुधीः ।	
सौशील्यशौर्यवीर्यादिगुणानामाकरो महान् ॥	४९
पाण्ड्यस्य तनयां पद्मां उपयेमे मनोहराम् ।	
ततो राजा शतं कन्या नानादेश्याः स्वयंवराः ॥	५०
रेमे देवेन्द्रवद्भूमौ नारायणपुरे वसन् ।	
अनुज्ञां प्राप्य पितृतः पुत्रः पञ्चास्यविक्रमः ।	
उद्दिश्य मृगयां वीरो वेङ्कटाद्रेः समीपतः ॥	५१

तोण्डमान्नृपस्य मृगयार्थं श्रीशेषाचलगमनम्

पादचारेण विचरन् परिवारैः समन्वितः ।	
मदधारां विमुञ्चन्तं ददर्श गजयूथपम् ॥	५२
तं दृष्ट्वा विस्मितो भूत्वा गृहीतुं तमनुद्रुतः ।	
सुवर्णमुखरीं तीर्त्वा ब्रह्मर्षिं शुकमुत्तमम् ॥	५३
नमस्कृत्याऽभ्यनुज्ञातः ततोऽगच्छद्वनाद्वनम् ।	
ददर्श रेणुकां देवीं बल्मीकाऽऽकारसंस्थिताम् ॥	५४
इष्टदामिष्टभक्तानां दिव्यारामनिवासिनीम् ।	
परिवारैः सदोपेतां पूजितां त्रिदशैरपि ।	
तोण्डमानपि तां नत्वा ततः पश्चान्मुखो ययौ ॥	५५



## श्रीनिवाससमीपस्थपञ्चवर्णशुकवृत्तान्तः

- पञ्चवर्णं शुकं दृष्ट्वा तं जिघृक्षुरनुद्रुतः ।  
 स वदन् “ श्रीनिवासे ” ति गिरिं शीघ्रतरं ययौ ॥ ५६  
 अनुद्रवन् स राजापि गिरिराजं समारुहत् ।  
 दरीश्च विविधाः पश्यन् शिखराणि समन्ततः ॥ ५७  
 शुकमन्वेषमाणोऽसौ श्यामाकवनमेयिवान् ।  
 तमदृष्ट्वा शुकवरं वनपालं ददर्श ह ॥ ५८  
 तं तु राजानमायान्तं प्रत्युद्गच्छन् स सत्वरः ।  
 प्रणम्य विनयोपेतः कृताञ्जलिपुटः स्थितः ॥ ५९  
 तोण्डमानपि सम्पूज्य तं पप्रच्छ वनेचरम् ।  
 ‘ पञ्चवर्णः शुकः कश्चित् दृष्टश्चात्राऽऽगतस्त्वया ।  
 “ श्रीनिवासे ” ति च वदन् क्व गतोऽसौ वनेचरः ? ॥ ’ ६०

वनचरः —

- ‘ स पञ्चवर्णो राजेन्द्र श्रीनिवासप्रियः सदा ।  
 पार्श्ववर्ती सदा तस्य श्रीभूमिभ्यां विवर्धितः ॥ ६१  
 स्वामिपुष्करिणीतीरे सदाऽऽस्ते देवसन्निधौ ।  
 गृहीतुं स शुकः श्रीमान् न तु केनापि शक्यते ॥ ६२  
 विहृत्य स्वेच्छया नित्यमस्मिन् गिरिवरे शुभे ।  
 दिनान्ते देवमासाद्य तत्समीपे वसत्ययम् ॥ ६३  
 तं देवमाराधयितुं गमिष्यामि नृपात्मज ।  
 विश्रम्यतां वृक्षमूले यावदागमनं मम ।  
 पुत्रेणानेन सहितो विहर त्वं यथासुखम् ॥ ’ ६४

राजा ---

‘ त्वया सहाऽऽगमिष्यामि द्रष्टुं देवं जैनार्दनम् ।  
त्वं मे दर्शय देवेशं वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ॥ ’ ६५

तस्य राज्ञो वचः श्रुत्वा श्यामाकं मधुमिश्रितम् ।  
चूतपत्रपुटे क्षिप्त्वा राज्ञा सह ययौ हरिम् ॥ ६६

तोण्डमान्नृपस्य निषादेन सह श्रीनिवाससेवागमनम्

गत्वा सुदूरमध्वानं पश्यन्तौ तौ शिलातल्मम् ।  
मुहूर्तदेव सम्प्राप्तौ स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ॥ ६७

स्नात्वा तत्र विधानेन राज्ञा सह निषादपः ।  
दर्शयामास देवेशं राज्ञस्तस्य महात्मनः ॥ ६८

स्वामिपुष्करिणीतीरे स्थितं श्रीवृक्षमूलके ।  
अतसीपुष्पसङ्काशं अम्बुजायतलोचनम् ॥ ६९

चतुर्भुजमुदाराङ्गं ईषत्स्मितमुखाम्बुजम् ।  
दिव्यपीताम्बरधरं किरीटकटकोज्ज्वलम् ॥ ७०

पार्श्वस्थाभ्यां सुरुपाभ्यां श्रीभूमिभ्यां समन्वितम् ।  
परितः शङ्खचक्रासिगदाशाङ्गेषु सेवितम् ॥ ७१

अन्यैर्दिव्यायुधैश्चापि दिव्यमाल्यैर्निषेवितम् ।  
स्कन्देनाऽऽराध्यमानं तं त्रिसन्ध्यं पुरुषोत्तमम् ॥ ७२

वल्मीकगूढपादाब्जं आजानुपुरुषोत्तमम् ।  
ततो दृष्ट्वा मुदा देवं प्रमणेतुरुभौ तदा ॥ ७३

राजा तु प्राञ्जलिर्भूत्वा विस्मयोत्फुल्ललोचनः ।  
आनन्दलहरीं प्राप्य न प्राज्ञायत किञ्चन ॥ ७४

निषादोऽपि निवेद्यैव श्यामाकं मधुमिश्रितम् ।  
राज्ञे तदर्धं दत्त्वैव शिष्टार्धं मुक्तवान् स्वयम् ॥ ७५

पीत्वा पुष्करिणीतोयं तेन राज्ञा समन्वितः ।  
 स पुनः श्यामाकवने पुण्यां पर्णकुटीं ययौ ॥  
 उषित्वा चैकरालन्तु प्रातरुत्थाय भूमिपः ।  
 स्वसैन्येन समायुक्तो निवृत्तः स्वपुरं ययौ ॥

तोण्डमान्द्रुपं प्रति रेणुकोक्तिः

पुनर्देवीवनं गत्वा हयादवततार ह ।  
 चैतशुद्धनवम्यां तु पूजयामास रेणुकाम् ॥  
 हविष्यं परमान्नञ्च सोपस्करमनेकशः ।  
 पशूपहारसहितं धूपदीपसमन्वितम् ॥  
 सुराघटीशतं दत्त्वा जातीकेसरवासितम् ।  
 एवं संपूजिता देवी प्रीता राज्ञे वरं ददौ ॥  
 आविष्टः पुरुषः कश्चित् अवदन्तृपसत्तमम् ।  
 'शृणु राजन् ! भविष्यं ते राज्यं निहतकण्टकम् ॥  
 राजंस्तवैव नाम्नाऽत्र राजधानी भविष्यति ।  
 मत्समीपे महाराज ! चिरं राज्यं करिष्यसि ॥  
 देवदेवप्रसादश्च भविष्यति तवानघ ! ।'  
 इति दत्त्वा वरं तस्मै आविष्टः प्रकृतिं ययौ ।  
 ततो लब्धवरो राजा ययौ शुक्लमुनिं पुनः ॥

शुक्लगणितपद्मसरोवरमाहात्म्यम्

अभिवाद्य मुनिं तेन पूजितो मुदितोऽभवत् ।  
 'माहात्म्यं सरसो ब्रूहि कमलाख्यस्य मे मुने !' ॥

श्रीशुकः —

पुरा दुर्वाससः शापात् अवतीर्णा सुरालयात् ।  
 पद्मा पद्माक्षदयिता विष्णुना सहिता नृप ॥

सर काञ्चनपद्मादयं इदं प्राप्य महेश्वरी ।	
तपश्चकार वर्षाणां दिव्यानामयुतं रमा ॥	८६
ततो देवा विचिन्वन्तः श्रियं विष्णुसमन्विताम् ।	
पुरन्दरेण संयुक्ता राजन् अस्मिन् सरोवरे ॥	८७
स्थितां सुवर्णकमले पुण्डरीकाक्षसंयुताम् ।	
दृष्ट्वा प्रीतिसमायुक्ताः प्रणम्याम्बुजधारिणीम् ।	
कृताञ्जलिपुटाः सेन्द्राः तुष्टुवुर्लोकमातरम् ॥	८८

### देवादिकृत श्रीलक्ष्मीस्तुतिः

देवाः —

नमः श्रियै लोकधाय्यै ब्रह्ममात्रे नमो नमः ।	
नमस्ते पद्मनेत्रायै पद्ममुख्यै नमो नमः ॥	८९
प्रसन्नमुखपद्मायै पद्मकान्त्यै नमो नमः ।	
नमो बिल्ववनस्थायै विष्णुपत्न्यै नमो नमः ॥	९०
विचित्रक्षौमधारिण्यै पृथुश्रोण्यै नमो नमः ।	
पद्मबिल्वफलपीनतुङ्गस्तन्यै नमो नमः ॥	९१
सुरक्तपद्मपत्राभकरपादतले शुभे ।	
सुरत्नाङ्गदकेयूरकाञ्चीनूपुरशोभिते ।	
यक्षकर्मसंलिसर्वाङ्गे कटकोज्ज्वले ॥	९२
माङ्गल्याभरणैश्चित्रैः मुक्ताहारैर्विभूषिते ।	
ताटङ्कैरवतंसैश्च शोभमानमुखाम्बुजे ॥	९३
पद्महस्ते नमस्तुभ्यं प्रसीद हरिवल्लभे ।	
ऋग्यजुःसामरूपायै विद्यायै ते नमो नमः ॥	९४
प्रसीदास्मान् कृपादृष्टिपातैरालोकयाब्धिजे ।	
ये दृष्टास्ते त्वया ब्रह्मरुदेन्द्रत्वं समामुयुः ॥ '	९५

## इन्द्रादीन् प्रति स्तुतिप्रसन्नलक्ष्मीवचनम्

श्रीशुकः —

इति स्तुता तदा दैवैः विष्णुवक्षःस्थलालया ।  
विष्णुना सह सन्दृश्या रमा प्रीताऽवदत्सुरान् ॥ ९६

श्रीः —

‘सुरारीन् सहसा हत्वा स्वपदानि गमिष्यथ ।  
ये स्थानहीनाः स्वस्थानात् अंशिता ये नरा भुवि ॥ ९७  
ते मामनेन स्तोत्रेण स्तुत्वा स्थानमवाप्नुयुः ।  
अखण्डैर्बिल्वपत्रैर्मर्मचरन्ति नरा भुवि ॥ ९८  
स्तोत्रेणानेन ये देवा नरा युष्मत्कृतेन वै ।  
धर्मार्थकाममोक्षाणां आकरास्ते भवन्ति वै ॥ ९९  
इदं पद्मसरो देवा ये केचन नरा भुवि ।  
प्राप्य स्नानं करिष्यन्ति मां स्तुत्वा विष्णुवल्लभाम् ॥ १००  
तेऽपि श्रियं दीर्घमायुः विद्यां पुत्रान् सुवर्चसः ।  
लब्ध्वा भोगांश्च मुक्त्वाऽन्ते नरा मोक्षमवाप्नुयुः ॥’ १०१  
इति दत्त्वा वरं देवी देवेन सह विष्णुना ।  
आरुह्य गरुडेशानं वैकुण्ठस्थानमाययौ ॥ १०२

इति श्रीवाराहपुराणे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
उत्तरार्धे वसुनामकनिषादवृत्तान्त-पद्मसरोमाहात्म्यादिवर्णनं  
नाम नवमोऽध्यायः ।



अथ दशमोऽध्यायः

तोण्डमान्नृपस्य स्वपितुःसकाशाद्राज्यप्राप्तिः

श्रीशुक --

‘ इदं पद्मसरो नाम सर्वपापप्रणाशनम् ।  
कीर्तनात् स्मरणात् स्नानान्नृणां लक्ष्मीप्रदं भुवि ॥  
कृत्वा स्नानं त्वमप्यस्मिन् व्रज स्वपितुरन्तिकम् ।’

श्रीवराह —

एतच्छुकवचः श्रुत्वा स्नात्वा पद्मसरोवरे ॥ २  
तं नत्वा हयमारुह्य तोण्डमान् स्वपुरं ययौ ।  
तं पिता युवराजानं कृत्वा त्रीन् वत्सरानथ ॥ ३  
रञ्जकत्वं च सामर्थ्यं शौर्यं वीर्यं सुशीलताम् ।  
भक्तिं विप्रेषु पुत्रस्य वीक्ष्य राजा स्वमन्त्रिभिः ॥ ४  
स्वपदे स्थापयामास स्वमिषिच्य विधानतः ।  
अनुनीय सुतं पत्न्या सार्धं राजा वनं ययौ ॥ ५

वसोर्वल्मीके श्रीवराहसन्दर्शनम्

तोण्डमानपि साम्राज्यं लब्ध्वा राज्यं चक्र ह ।  
निषादस्य वने देवो वाराहं रूपमास्थितः ॥ ६  
श्यामाकपङ्कं भक्षित्वा रात्रौ रात्रौ चचार ह ।  
पदानि स वराहस्य चान्वियेष दिवा दिवा ॥ ७  
अदृष्ट्वा तं वराहं स रात्रौ जाग्रदनुर्धरः ।  
स्थितोऽपश्यत् चरन्तं तं चन्द्रकोटिसमप्रभम् ॥ ८  
वराहं सुभगाकारं श्यामाकवनमध्यतः ।  
तं दृष्ट्वा धनुरादाय सिंहनादं चक्र ह ॥ ९

वराहः तद्धनिं श्रुत्वा वनान्निष्क्रम्य सत्वरम् ।	
ययौ तं चाप्यनुययौ वराहं स निषादपः ॥	१०
रात्रिशेषमनुद्रुत्य वने चन्द्रसमप्रभम् ।	
वल्मीकं प्रविशन्तञ्च ददर्श स निषादपः ॥	११
गच्छन्तं पूर्णिमाचन्द्रं अस्तं गिरिवरं यथा ।	
विस्मितोऽखानयत् कोपात् वल्मीकं स निषादपः ॥	१२
धरावराहो ददर्श मूर्छितोऽयं पपात ह ।	
पितरं मूर्च्छितं दृष्ट्वा तत्पुत्रो भक्तिमांस्तदा ॥	१३
वराहदेवं तुष्टाव येन प्रीतो भवेद्धरिः ।	
आविश्य पितरं तस्य प्रोवाच मधुसूदनः ॥	१४

श्रीभगवान् —

‘अहं वराहदेवेशो नित्यमस्मिन् वसाम्यहम् ।	
राज्ञे त्वमुक्त्वा मामत्र प्रतिष्ठाप्यैव पूजय ॥	१५
वल्मीकं कृष्णगोक्षीरैः क्षालयित्वा तदुत्थिते ।	
शिलातले च वाराहमुद्धृत्य धरणीस्थितम् ॥	१६
कारयित्वा प्रतिष्ठाप्य विप्रैर्वैखानसैश्च माम् ।	
पूजयेद्विविधैर्भोगैः तोण्डमान् राजसत्तमः ॥ ’	१७
इत्युक्त्वा तं जहौ देवः स च स्वस्थो बभूव ह ।	
सुखासीनन्तु पितरं नमस्कृत्य निषादजः ॥	१८
न्यवेदयद्देववचः पित्रे सर्वं यथातथम् ।	
स श्रुत्वा विस्मितो भूत्वा कृत्स्नं पुत्रवचः शुभम् ॥	१९

तोण्डमन्नृपाय वसुनिवेदितवराङ्गोदन्तः

राज्ञे वक्तुं ययौ शीघ्रं निषादः स्वानुगैः सह ।

वसुर्निषादाधिपतिः राजद्वारमुपागमत् ॥

निषादाधिपमाज्ञाय द्वारपालैः नृपोत्तमः ।

आहूय तं निषादेश सभायां मन्त्रिभिः सह ॥

२१

सत्कृत्य तं वसुं राजा सपुत्रं सपरिच्छदम् ।

पप्रच्छ प्रीतिमान् राजा वसुं तं वनगोचरम् ॥

२२

‘ किमागमनकृत्यं ते वद त्वं वनगोचर । ’

वसुः —

‘ राजन् मम वने दृष्टं आश्चर्यं शृणु भूपते ! ॥

२३

कश्चित् श्वेतवराहस्तु श्यामाकमचरन् निशि ।

तं वराहं धनुष्पाणिः अन्वधावमहं नृप ! ॥

२४

अनुद्रुतो वायुवेगो गत्वा बल्मीकमाविशत् ।

स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्यतो मम भूपते ॥

२५

बल्मीकमखनं क्रोधात् मूर्च्छितो न्यपतं भुवि ।

मत्पुत्रोऽयं समागत्य मां दृष्ट्वा मूर्च्छितं भुवि ॥

२६

शुचिर्भूत्वा देवदेवं तुष्टाव मधुसूदनम् ।

ततो मयि समाविश्य वराहोऽप्यवदत्सुतम् ॥

२७

‘ राज्ञे निवेदय क्षिप्रं मच्चरितं निषादप ! ।

कृष्णगोक्षीरसेकेन बल्मीकं क्षालयेन्नृपः ॥

२८

दृश्यते च शिल्प कश्चित् बल्मीकस्था सुशोभना ।

वामाङ्गस्थमुवं मां च वराहवदनं स्थितम् ॥

२९

कारयित्वा शिल्पिनाऽथ प्रतिष्ठाप्य मुनीश्वरैः ।

वैखानसैर्मुनिवरैः अर्चयेत् तोण्डमानपि ॥

३०



अथ गत्वा श्रीनिवासं वल्मीकावृतपङ्कजम् ।	
कपिलाकृष्णगोक्षीरसेचनैः क्षालयेच्छनैः ॥	३१
आपादपीठपर्यन्तं क्षालयित्वा दिने दिने ।	
कुर्यात् प्राकारमुभयोः उत्तरे दक्षिणे तथा ' ॥	३२
इत्युक्त्वा चैवमामुञ्चदेवः स्वस्थोऽभवत् नृप ।	
इदं ते वक्तुमायातो देवदेवचिकीर्षितम् ॥	३३

### नृपस्य निपादवाक्यस्वप्नाभ्यां बिलमार्गेण शेषाचलगमनम्

श्रीवराहः —

तोण्डमानपि तच्छ्रुत्वा सुप्रीतो विस्मितोऽभवत् ।	
ततः कार्यं विनिश्चित्य मन्त्रिभिः पुष्करादिभिः ॥	३४
वेङ्कटाद्रिं जिगमिषुः गोपानाहूय सर्वशः ।	
'कृष्णाश्च कपिला गावो याः काश्चित्सन्ति मामिकाः ॥	३५
ताः सवत्सा आनयध्वं वेङ्कटाद्रिसमीपतः ।'	
इत्याज्ञप्य नृपो गोपान् श्वो यात्रेति च मन्त्रिणः ॥	३६
विस्तृज्य प्रकृतीः सर्वाः विवेशान्तःपुरं वशी ।	
उक्त्वा कथां तां पत्नीभ्यः सुष्वाप निशि पार्थिवः ॥	३७
तं स्वप्ने श्रीनिवासोऽपि बिलमार्गं हृदयार्थम् ।	
स्वपुरादाबिलं मार्गे पल्लवानसृजद्धरिः ॥	३८
एवं स्वप्नं नृपो दृष्ट्वा प्रातरुत्थाय सत्वरः ।	
आहूय मन्त्रिणः सर्वान् प्रकृतीः ब्राह्मणानपि ॥	३९

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः १९५

स्वप्नं तथाविधं चोक्त्वाऽपश्यत्द्वारेऽथ पल्लवम् ।  
युक्ते मुहूर्ते प्रययौ हयमारुह्य तोण्डमान् ॥ ४०  
पश्यंश्च पल्लवान् गाश्च शनैः प्रीतो ययौ बिलम् ।  
दृष्ट्वा विस्मयमापन्नो निर्ममे तत्र पत्तनम् ॥ ४१

भगवदुत्तया तोण्डमान् नृपकृतक्षीराभिषेकाप्रनिर्माणादिकम्

बिलमन्तःपुरे कृत्वा प्राकारं चाप्यकारयत् ।  
वसंस्तत्त नृपेन्द्रोऽसौ निर्जित्य पृथिवीमिमाम् ॥ ४२  
यथोक्तं देवदेवेन क्षीरप्रक्षालनादिकम् ।  
कृत्वा प्राकारनिर्माणं कर्तुमुद्यं गमाययौ ॥ ४३  
तदानीं देवदेवेन स्वयमाज्ञापितो नृपः ।  
'तिन्त्रिणीं चम्पकं चोभौ पाल्यैतौ नगोत्तमौ ॥ ४४  
मम चाऽस्थानिकीं चिञ्चा लक्ष्म्याः स्थानञ्च चम्पकः ।  
नमस्कार्यौ नृपैस्तौ हि ऋषिदेवनरैः सदा ॥ ४५  
संस्थाप्यैतौ नृपश्चेष्ट छेदयान्यान् नगोत्तमान् ।  
प्राकारमात्रं कुरु मे द्वारगोपुरसंयुतम् ॥ ४६  
विमानं तु भवद्वंशयो नाम्ना नारायणो नृपः ।  
कारयिष्यति मद्भक्तः स्वर्णेनालङ्कारिष्यति ।'  
एवमुक्त्वा तोण्डमानं विरराम श्रियःपतिः ॥ ४७

श्रीवाराहः —

एवं देववचः श्रुत्वा कृत्वा प्राकारमेव च ।  
पूजयामास मुनिभिः वैखानसकुलोद्भवैः ॥ ४८

नित्यं बिलेन चागत्य देवं नत्वा नृपोत्तमः ।

राज्यं चकार धर्मेण भुञ्जानो भोगमुत्तमम् ।

एतस्मिन्नेव काले तु दाक्षिणात्यो द्विजोत्तमः ॥

४९

### गङ्गास्नानागतवीरशर्माख्यविप्रचरित्रम्

गङ्गास्नानाय गच्छन्वै सदारः प्रययौ पुरात् ।

मार्गेऽथ गर्भिणी जाता ब्राह्मणी ब्राह्मणः स च ॥

५०

तां तु गर्भवतीं दृष्ट्वा स्वात्मानुगमनेऽक्षमाम् ।

राजानं द्रष्टुकामोऽसौ राजद्वारमुपागमत् ॥

५१

द्वाःस्थेन ज्ञापितो राजा तमाहूय द्विजोत्तमम् ।

पूजयित्वा तु विधिवत् पप्रच्छ कुशलं द्विजम् ॥

५२

राजा —

‘ विन्मागमनकृत्यं ते किं करिष्याम्यहं द्विज ! ’ ।

द्विजः —

‘ वासिष्ठो वीरशर्माऽहं सामवेदी नृपोत्तम ! ॥

५३

सदारो निर्गतो राजन् गङ्गास्नानाय सादरः ।

मार्गे च गर्भिणी चेयं कौशिकी पुण्यशालिनी ॥

५४

नाम्ना लक्ष्मीरिति स्याता सुशील्य च पतिव्रता ।

स्थाप्य चैनां तव गृहे व्रतं निर्वर्तयाम्यहम् ॥

५५

तस्माद्राजन् प्रयच्छास्यै यथेष्टं भक्तवेतने ।

तावच्च रक्ष्यतां लक्ष्मीः यावदागमनं मम ' ॥

५६

श्रीवाराहः —

राजा तस्य वचः श्रुत्वा तण्डुलानि धनान्यपि ।

दत्त्वा घण्टासपर्यन्तं गृहमन्तःपुरे ददौ ॥

५७

तां न्यस्य ब्राह्मणः प्रीतो गङ्गास्नानाय निर्ययौ ।

गत्वा भागीरथीं गङ्गां प्रयागे क्षेत्रे उत्तमे ॥

५८

स्नात्वा काशीं ततो गत्वा तत्रोषित्वा दिनत्रयम् ।

गयां प्राप्य पितृश्राद्धं अकरोत् ब्रह्मणोत्तमः ॥

५९

गत्वाऽयोध्यामपि पुरीं प्रययौ बदरीवनम् ।

सालग्रामं ततो गत्वा स्वदेशं प्रति निर्ययौ ॥

६०

संवत्सरद्वयेऽतीते चैत्रे मासि शुभे दिने ।

निवृत्तोऽसौ द्विजश्रेष्ठः शनैरागत्य माधवे ॥

६१

एकादश्यां शुक्लपक्षे पुनः राजानमाययौ ।

राजा तु विस्मृत्य तदा ब्राह्मणीं नास्मरन्तृपः ॥

६२

ब्राह्मणीं मानिनीं गेहे मृता शुष्का बभूव ह ।

वीरशर्मा ततो विप्रो गङ्गातोयकरण्डके ॥

६३

विमुच्य बन्धनं त्वेकं गाङ्गं तु करकं शुभम् ।

प्रदाय राज्ञे पप्रच्छ ' पत्नी कुशलि ' नीति मे ॥

६४

स्मृत्वाऽयं राजा विप्रं तं ' स्थायिता ' मिति चाब्रवीत् ।

अन्तःपुरं ततो गत्वा तामपश्यन्मृतां गृहे ॥

६५

अनुक्त्वा ब्रह्मणे तस्मै प्रविश्य च बिलोत्तमम् ।  
 श्रीनृसिंहं नमस्कृत्य पुनः प्राप्य बिलोत्तमम् ॥ ६६  
 श्रीनिवासं ययौ द्रष्टुं श्रीभूमिसहितं परम् ।  
 तं दृष्ट्वा सहसायान्तं जुगूहाते धरारमे ॥ ६७  
 प्रणमन्तमवोचत् तं 'किमकाले नृप आगतः ? ' ।  
 नृपोऽवदत् प्रणम्येशं भीतोऽथ 'ब्राह्मणीं मृताम्' ॥ ६८

### अस्थिसरोवरमाहात्म्यम्

तच्छ्रुत्वा देवदेवोऽपि 'मा भी राजन् ! द्विजोत्तमात् ।  
 आन्दोलिकां तामारोप्य स्त्रीभिः स्वाभिः समन्वताम् ॥ ६९  
 मदाल्यात् पूर्वभागे द्वादश्यां स्नापय प्रभो ! ।  
 अस्थिनाम्नि सरस्यस्मिन् अपमृत्युनिवारणे ॥ ७०  
 प्राप्तजीवा समं स्त्रीभिः ब्राह्मणेन च योक्ष्यते ।  
 शीघ्रं याहि नृपश्रेष्ठ यथोक्तं वचनं कुरु ' ॥ ७१  
 इति देववचः श्रुत्वा प्रययौ स्वपुरं नृपः ।  
 आन्दोलिकासु स्न्यासु स्त्रिय आरोप्य तामपि ॥ ७२  
 ब्राह्मणञ्च पुरस्कृत्य द्रष्टुं देवं ययौ नृपः ।  
 अस्थिकूटसरः प्राप्य स्नापयामास ताः स्त्रियः ॥ ७३  
 त्वगस्थिरूपा सा चापि ताभिः क्षिप्ता सरोवरे ।  
 प्राप्तजीवा यथापूर्वं सुव्यञ्जितशरीरजा ॥ ७४  
 उत्थिता सरसः स्नात्वा राज्ञीभिः सह मङ्गला ।  
 प्राप्ता च ब्राह्मणं प्रीता भर्तारं पुनरागतम् ॥ ७५

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः १९९

राजा हरिं पूजयित्वा ब्राह्मणाय धनं ददौ ।  
सहस्रनिष्कपर्यन्तं वस्त्राणि विविधानि च ॥ ७६  
स्वदेशगमनायैव सादरं विससर्ज ह ।  
विप्रः श्रुत्वा स्त्रियो वृत्तं प्रभावं वेङ्कटेशितुः ॥ ७७  
आशीः प्रयुज्य राज्ञेऽथ स्वदेशं प्रययौ द्विजः ।  
विप्रे गते श्रीनिवासो राजानं पुनरब्रवीत् ॥ ७८  
'दिने दिने च मध्याह्ने नैवेद्यानन्तरं नृप ! ।  
आगत्य मामर्चयित्वा यथेष्टं स्वर्णपङ्कजैः ॥ ७९  
गत्वा पुरीं स्वधर्मेण राज्यं कुरु नराधिप ! ।  
यद्यदिष्टं तव नृप भविष्यति न संशयः ॥ ८०  
नागान्तव्यमकाले तु त्वया नृप कदाचन ।  
एवं कालर्चनं कृत्वा गत्वा त्वं स्वपुरे वस ' ॥ ८१

राजा

'तथा करिष्ये देवेश मध्याह्ने चार्चयाम्यहम् ' ।  
इति देवाज्ञया नित्यमर्चयन् स्वर्णपङ्कजैः ।  
तदूर्ध्वं तुलसीपुष्पं जातवपश्यत् स मृष्मयम् ॥ ८२

कुर्वग्रामस्थकुलालवंशजभीमाख्यभक्तोदन्तः  
विस्मितो देवदेवेशमपृच्छत् नृपसत्तमः ।

राजा

'केनार्च्यसे मृष्मयैश्च कोमलैः तुलसीसुमैः ' ॥ ८३  
राज्ञा पृष्टो देवदेवः स्मृत्वा राजानमब्रवीत् ।  
'कश्चित्कुललो मद्भक्तः कुर्वग्रामे वसत्यसौ ॥ ८४

स्वगृहेऽर्चयते राजन् ! तदङ्गीक्रियते मया । ’  
 इति देववचः श्रुत्वा तं द्रष्टुं प्रययौ नृपः ॥ ८५  
 गत्वा कुर्वपुरं तस्य कुलालस्य गृहं ययौ ।  
 राजानमागतं दृष्ट्वा प्रणम्यैवाग्रतः स्थितः ॥ ८६  
 स्थितं तं भीमनामानं पप्रच्छ नृपसत्तमः ।

तोण्डमान्—

‘भीम पूजयसे देवं कथं वद कुलोत्तम ! ’ ॥ ८७

श्रीवराहः—

पृष्ठः प्राह कुललोऽपि ‘जातु जाने न चार्चनम् ।  
 केनोक्तं नृपतिश्रेष्ठ ! कुललोऽर्चयतीति हि ’ ॥ ८८

तोण्डमान्—

‘देवेन श्रीनिवासेन ममोक्तं हि त्वदर्चनम् ’ ।  
 स तु श्रुत्वा नृपवचः स्मृत्वा देववरं पुरा ॥ ८९

भीमः—

‘यदा प्रकाशिता पूजा यदा राजा समागतः ।  
 तोण्डमांस्तेन संवादस्तदा मोक्षं गमिष्यसि ’ ।  
 इति पूर्वं वरं देवो दत्तवान् वेङ्कटेश्वरः ’ ॥ ९०

कुर्वग्रामस्थभीमाख्यभक्तस्य पत्न्या सह वैकुण्ठप्राप्तिः

इत्युक्त्वाऽथ कुललोऽपि पत्न्या सार्धं तदैव च ।  
 विमानमागतं दृष्ट्वा देवं दृष्ट्वा जनार्दनम् ॥ ९१

श्रीवाराहपुराणे द्वितीयभागे दशमोऽध्यायः २०१

प्रणमन् प्रजहौ प्राणान् सदारो भक्तसत्तमः ।  
पश्यतो राजराजस्य विमानमधिरुह्य च ॥ ९२  
दिव्यरूपधरो देव्या सार्वं विष्णुपदं ययौ ।  
दृष्ट्वा राजाऽद्भुतं तत्र स्वपुरं प्राप्य हर्षितः ॥ ९३  
स्वपुत्रं श्रीनिवासाख्यं अभिषिच्य विधानतः ।  
'परिपालय धर्मेण मानवांश्च वसुन्धराम्' ॥ ९४  
इत्याज्ञाप्य सुतं धीमांस्तताप परमं तपः ।  
तप्यतस्तस्य देवोऽपि प्रत्यक्षमभवद्भरिः ॥ ९५

श्रीनिवासकृपया तोण्डमान् नृपस्य सारूप्यप्राप्तिः

आरुह्य गरुडं देवो रमाभूमिसमन्वितः ॥ ९६

श्रीभगवान्—

'किं करोमि नृपश्रेष्ठ तपसा तोषितस्तव' ।  
इत्युक्तो देवदेवेन तोण्डमानपि राजराट् ॥ ९७  
प्रीतिमान् प्राञ्जलिर्भूत्वा सगद्गदमुवाच ह ।  
'त्वच्छोके वस्तुमिच्छामि जरामरणवर्जिते ॥ ९८  
इदमेव वरं देहि माधवैतन्ममेप्सितम् ।'

श्रीवाराहः—

इत्युक्त्वा निपपातोर्व्यां साष्टाङ्गं देवसन्निधौ ।  
तदा कलेवरं मुक्त्वा विमानं त्वारुरोह च ॥ ९९  
गन्धर्वैः स्तूयमानोऽसौ सारूप्यं प्राप्य शार्ङ्गिणः ।  
यच्छोकमोहरहितं जरामरणवर्जितम् ।  
पुनरावृत्तिरहितं तद्विष्णोः पदमाययौ ॥ १००



### एतन्माहात्म्यश्रवणपठनफलश्रुतिः

एतद्भविष्यं देवेशि मयोक्तं वरवर्णिनि ।

यः श्रावयेद्यः शृणुयात् विष्णुलोकं स गच्छति ॥ १०१

श्रीसूतः—

इत्युक्तां देवदेवेन सभविष्यां सहोत्तराम् ।

शृणुयाद्यः पठेद्भक्त्या कथां पुण्यां पुरातनीम् ।

स तु मुक्त्वाऽखिलान् कामान् अन्ते विष्णुपदं व्रजेत् ' ॥ १०२

॥ हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीवाराहपुराणे उत्तरार्धे भूगोलोपाख्याने धरणीवराहसंवादे

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भविष्यद्वर्णने तोष्टमानचक्रवर्ति-

चरितवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥

इति श्रीवाराहपुराणान्तर्गत वेङ्कटाचलमाहात्म्यं पूर्वभागोत्तरार्द्धात्मिकं

॥ संपूर्णम् ॥



॥ धीरन्तु ॥

श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः

श्रियै श्रीपद्मावत्यै नमः

श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः

( अथ श्रीपाद्मपुराणान्तर्गत श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् )

## श्री पाद्मपुराणारम्भः



श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।

श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

मेरुशिखराच्छुक्रब्रह्मर्षेः वेङ्कटाचलागमनम्

देवः—

‘देवदर्शन ! देवर्षे ब्रह्मभूयकरं परम् ।

मुकुन्दानन्दनं ब्रूहि धर्मं कर्मविमोचनम् ’ ॥

१

देवदर्शन.—

‘साधु देवल भूदेव यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ।

शृणु विद्वन् ! विशेषेण वक्ष्यामि तव सुव्रत ॥

२

इतिहासमिमं पुण्यं चतुर्वर्गफलप्रदम् ।

यशस्करं रत्ननकं आयुरारोग्यभूतिदम् ॥

३

पुरा सुमेरुशिखरे नानारत्नविचित्रिते ।

स्वचित्तानेकमाणिक्ये सौवर्णे कुट्टिमस्थले ॥

४

अनुस्यूतस्रवद्देवस्रवन्ती निर्झराऽऽप्सुते ।	
मयूखोद्गामरत्नौघखण्डितध्वान्तकुञ्जके ॥	५
सान्द्रस्निग्धतरुच्छायसुरद्रुमवनोदरे ।	
मकरन्दं स्रवन्तीभिः स्रग्मिस्तु परिलम्बिते ॥	६
माणिक्यस्तम्भमहिते मकराननतोरणे ।	
विचित्ररत्नप्रत्युत्सवर्णस्तम्भचतुष्कके ॥	७
सिंहासने महारत्नविचित्रांशुविराजिते ।	
सावित्र्या च सरस्वत्या सदाऽऽसीनः पितामहः ॥	८
गन्धर्वैर्गर्वनिर्वाहैः गानविद्याविचक्षणैः ।	
गायद्भिः किन्नरगणैः गीयमानश्च वीणया ॥	९
स्तूयमानस्तुम्बुरुणा हाहाहूहूतथतेजसा ।	
सेव्यमानः सहस्राक्षप्रमुखैः सुरसत्तमैः ॥	१०
ब्राह्मीभिः शक्तिभिर्ब्रह्मभाषाभूषाभिरात्मभूः ।	
अंशुकाभरणालेपाकल्पहस्ताभिरन्तिके ॥	११
वसिष्ठप्रमुखैः ब्रह्ममुनिभिः सिद्धचारणैः ।	
मार्कण्डेयमरीच्यत्तिभृगुपूर्वैः महर्षिभिः ॥	१२
शापानुग्रहसामार्थ्यसाधनैश्च तपोधनैः ।	
माहात्म्यं पुण्यदेशानां ऊचिवद्भिः परस्परम् ॥	१३
समन्ततः सेव्यमानः सेवारसविशारदैः ।	
निषद्गणैरुपनिषद्गणैः श्रुतिगणैरपि ॥	१४
साङ्गैः संशिक्षितमना विश्वसर्गाविलासभूः ।	
आस्ते समालपन् ब्रह्मा स्वपदाद्वादनिर्भरः ॥	१५
कथाप्रसङ्गादत्रैव नारायणमिरेर्महत् ।	
माहात्म्यमाचिर्भावञ्च श्रीनिवासस्य शार्ङ्गिणः ॥	१६

श्रुत्वा शुकः परमत्रयैः सभायां समुपस्थितः ।	
स देशं तं दिदृक्षुः सन् कौतूहलसमाकुलः ॥	१७
विज्ञापयन् ब्रह्मणे तं नमस्कृत्य च सर्वतः ।	
जगाम तस्मादेशाद्वै दक्षिणाभिमुखः सुधीः ॥	१८
वासुदेवे वहन् भक्तिं पुराणपुरुषोत्तमे ।	
तत्कथाऽऽलापकुतुकः स्मयमानमुखो मुनिः ।	
ददर्श नारायणाद्रिं तत्र नारायणाश्रमम् ॥	१९

### श्रीवेङ्कटाचलवर्णनम्

नीलजीमूतमुदितनीलकण्ठविडम्बनम् ।	
शृङ्गकोटीरविश्रान्तवालखिल्यकुलाकुलम् ॥	२०
तिग्मांश्चश्वखुरक्षुण्णशृङ्गमाणिक्यमण्डलम् ।	
अमृतांशुकस्पर्शनिर्यदिन्दुदृषद्द्रवम् ॥	२१
तुङ्गशृङ्गस्फुरद्गततरलीकृततारकम् ।	
माणिक्यकुण्डलमहोमाद्यद्द्युमणिमण्डलम् ॥	२२
वियल्लिहोत्तुङ्गशृङ्गविशङ्कटविटङ्ककम् ।	
चन्द्रकान्तसवास्वादिचकोरकुलसङ्कुलम् ॥	२३
स्फाटिकाश्मदरीशृङ्गनिर्यन्निर्मलनिर्झरम् ।	
अधित्यकारूढफुल्ललोघ्रसिंहविडम्बनम् ॥	२४
माकन्दकुसुमामन्दमकरन्दसमुक्षितम् ।	
दन्तावलघटाघातदर्दुरप्रस्थकन्दरम् ॥	२५
व्युत्क्रमक्रमणाक्रान्तशरमप्रस्थदुःस्थलम् ।	
महाऽन्धकारमहिमदुर्निरीक्ष्यमहर्षभम् ॥	२६

आघ्रातव्याकुलप्राणिव्याघ्रभीमभृगुस्थलम् ।	
निर्झरापातपर्यन्तप्रस्तमुस्तार्धसूकरम् ॥	२७
यमवाहनदुर्दर्शनिनदन्महिषाकुलम् ।	
शाखाशिखाक्रमच्छाखामृगसानुमहीरुहम् ॥	२८
विकीर्णश्चापदानीकाधित्यकोपत्यकात्यघम् ।	
अभ्रङ्कषाप्रविविधविटपाटविपाटनम् ॥	२९.
धातुप्रस्थस्थलीनिर्यदोघप्रस्रवणाकुलम् ।	
अन्तकास्यप्रतीकाशगुहागेहोषितार्णकम् ॥	३०
शिल्लिकानादबधिरीभूतदिवचक्रवालकम् ।	
दिव्यं विभूत्यपादानं तत् गायद्भिरुषितान्तरम् ॥	३१
नानामणिमयूखौघमहेन्द्रायुधवर्चसम् ।	
कृष्णसारवरोदित्तरिणीकुलसङ्कुलम् ॥	३२
विधुन्वद्भालविमलचमरीचङ्कूभोत्कटम् ।	
लाङ्गूलवेल्लितलसद्गोलङ्गूलकुलाकुलम् ॥	३३
प्रवालकाण्डप्रस्तारमण्डितान्तरकन्दरम् ।	
इतस्ततस्तपस्यद्भिः ऋषिभिः निर्झरान्तिके ॥	३४
आस्थातव्यप्रस्थदेशं ब्रह्मध्यानपरायणैः ।	
आश्रितार्तिहरच्छायविशालवनपादपम् ।	
तस्य सानुमतः सोऽपि पादानाश्रित्य सत्वरः ॥	३५
शुकस्य श्रीवेङ्कटाचलस्थपुण्यतीर्थावगाहनम्	
निर्झरेष्वाप्लवं कुर्वन् विमलोदेष्वनन्यधीः ।	
हृदेषु देवखातेषु नदीप्रस्रवणेषु च ॥	३६
अन्येष्वमलतीर्थेषु त्रिवृद्ब्रह्म जपन् मुनिः ।	
संसारमोचनीं ब्रह्मविद्यां विद्याविजृम्भिणीम् ॥	३७

जपन्नुपांशु मनसाऽवद्याविद्यानिबर्हिणीम् ।	
निवसन् रजनीमेकां तत्र तत्र समाहितः ॥	३८
अतन्द्रितोऽञ्जनगिरिं प्राप विप्रोपवेशनम् ।	
तत्र तत्र गुहागेहेष्वासीनैः मुनिपुङ्गवैः ॥	३९
योगिभिः सिद्धसङ्घैश्च विशुद्धज्ञानशालिभिः ।	
वैखानसैश्च मुनिभिः कृतातिथ्यसपर्यकम् ॥	४०
शिलातलेषु निवसन् विपुलेषु शनैःशनैः ।	
कुमारधारां धारालच्यवमानामलोदकाम् ।	
आससादाह्वं चात्र चक्रे व्यासौरसो मुनिः ॥	४१

### स्कन्दस्य कुमारधारास्नानेन शक्त्यायुधप्राप्तिः

अस्या माहात्म्यमतुलं तुलितानन्यतीर्थकम् ।	
शक्तिप्रदं शक्तिपाणेः शरण्यं शरणार्थिनाम् ।	
पुराऽमरैः प्रार्थितेन शङ्करेण पुरारिणा ॥	४२
औमापत्यो बाहुलेयः सैनापत्ये नियोजितः ।	
तद्वोदुमसहन् सोऽपि सैनापत्ये निविष्टधीः ॥	४३
अनेकापायसदनमुपायरहितो गुहः ।	
दैत्यारेः प्राप्तुकामस्सन् तत्प्रतीकारमाप्तवान् ॥	४४
त्रिसन्ध्यमाह्वं कुर्वान्निवृद्धश्च जपन् सुधीः ।	
त्रिसन्ध्यमर्चयन् विष्णुं दिव्यैः पुष्पैरनन्यधीः ॥	४५
अस्या निर्झरधारायां तपस्तेपे समीपतः ।	
तपसा तस्य सन्तुष्टो भगवान् विष्टरश्रवाः ॥	४६
आविर्भूय ददौ शक्तिं तस्मै सोऽपि तिरोदधे ।	
कुमारस्तं प्रणम्याथ देवं स्वर्गं जगाम सः ॥	४७

तस्मात्कुमारधारेति विख्याता विमलोदका ।

प्रथमानप्रशंसाऽमूत् अप्रमेयफलप्रदा ॥

४८

**इन्द्रस्य पापनाशनस्नानेन वृत्रवधजनितपापनिर्मुक्तिः**

ततो गतः पापनाशं कृत्वा स्नानादिकं वशी ।

उवास त्रिदिनं तस्य तीर्थस्य निकटे तटे ॥

४९

यत्र तीर्थे सकृत् स्नात्वा मधवा वृत्रहा पुरा ।

ब्रह्महत्याविमुक्तः सः प्राप चैन्द्रं पुनः पदम् ॥

५०

‘पापनाशः’ स विख्यातो निर्झरो जर्झरैनसाम् ।

देवतिर्यङ्मनुष्यणां अवगाहान्मलापहाम् ॥

५१

**आकाशगङ्गामाहात्म्यम्**

आकाशगङ्गामन्वास्य समस्तफलदयिकम् ।

आसाद्यास्यामाप्लवञ्च चकार निरुपप्लवः ॥

५२

यस्याः संसारार्णवस्य कर्णधारेऽमलेऽम्भसि ।

देवस्त्रियो नागकन्याः गन्धर्व्यः किन्नराङ्गनाः ॥

५३

सिद्धाङ्गनाश्च कुर्वन्ति स्नानं वैखानसाङ्गनाः ।

नारायणगिरेः शौरैः तदीशस्य प्रभावकम् ।

प्रथयन् मनसाऽतीव सयमानो महामुनिः ॥

५४

**व्रततीवर्तनीतीर्थस्नानकाले शुकब्रह्मर्षिं प्रति अशरीरोक्तिः**

व्रततीवर्तनीतीर्थमाससाद महामुनिः ।

तत्राघमर्षणं चक्रे सूक्तं वैष्णवमुच्चरन् ॥

५५

स्मरन् भगवतो विष्णोः जिष्णोः द्वैपायनात्मजः ।

जले ममृतनोस्तस्या उदमूढागशरीरिणी ॥

५६

- ‘अमृतोदन्वदुत्तुङ्गतरङ्गमहिमावली ।  
 श्रीवत्सवक्षा नित्यश्री अदृश्यश्च मलात्मनाम् ॥ ५७
- अनन्तभोगायतनोऽनन्तोऽनन्तफलप्रदः ।  
 अतोऽस्मादग्निदिग्गणे सार्धयोजनमात्रके ॥ ५८
- अस्य सानुमतः पादमूले कूलङ्कषद्रुमे ।  
 नद्याः सद्योऽघनाशिन्याः स्वर्णमुख्यास्तटे शुभे ॥ ५९
- ‘पद्म’ मित्युत्तरे ख्यातं पवित्रं परमं सरः ।  
 तस्य गत्वा तटे तूर्णं अत्युग्रं तप आचर ॥ ६०
- पश्चादचञ्चलत्वं ते मनीषाया भविष्यति ।  
 तदा स्याद्भगवान् विष्णुः प्रत्यक्षः सर्वसाक्षिभूः । ’  
 एवं सादरमुक्त्वा वाक् जनानां शृण्वतामपि ॥ ६१

### अशरीरोक्तया शुकस्य पद्मसरोवरगमनम्

- प्रक्षालयन्ती शमलं मुनेर्याताऽशरीरिणी ।  
 एवमेतां नशम्यासौ जलादुत्तीर्य तीर्थतः ॥ ६२
- अतिस्नेहो विस्मितश्च वैयासिः मुनिरत्वरः ।  
 एवमालोचयन् बुद्ध्या शरीरात्मविशोधनीम् ॥ ६३
- प्रसादसूचिनीं विष्णोः प्र-विष्णोः प्रशंसिनीम् ।  
 जगाम वेगात्तं देशं यत्र पद्मसरोवरः ॥ ६४

### पद्मसरोवरवर्णनम्

- प्रसन्नं सन्मन इव वैडूर्यविमलेदकम् ।  
 उत्फुल्लैः पुण्डरीकैश्च कल्हारैः कनकाम्बुजैः ॥ ६५



नीलोत्पलैः कुवल्यैः रक्ताब्जैरञ्चितान्तरम् ।	
मकरन्दमदोन्मत्तमधुरालिकुलोज्ज्वलम् ॥	६६
कारण्डवैः कलरवैः वाचाटितदिगन्तरम् ।	
अमद्भ्रमरवृन्दैश्च मधुपानमदोद्धतैः ॥	६७
गृहीतग्राहदुर्ग्राहं बलमानसुमीनकम् ।	
वराहसङ्घैरभितो ग्रस्तमुस्तैरलङ्कितम् ॥	६८
मृणालकवलाऽऽकीर्णकैः करिकदम्बकैः ।	
एणैः सशबैरेणीभिः उपान्ते परितो वृतम् ॥	६९
मदोन्मत्तैर्वनचरैः वयोभिरभितो वृतम् ।	
तपस्यत्पापसक्लेशहरणं रमणं हरेः ।	
श्रीमदेतत् पद्मतीर्थं महातीर्थं शुको मुनिः ॥	७०

शुकस्य पद्मसरसि श्रीनिवासध्यानपूर्वकस्नानादिकम्

ददर्श स गतक्लेशः स्नानपाननिषेवणैः ।	
सरन् नारायणं विष्णुमभूत् निश्चलचेतनः ॥	७१
मुहूर्तं तत्र विश्रम्य संयमी नियमस्थितः ।	
वन्यैरपाकैः पक्षैश्च फलैः स्वपतितैरपि ॥	७२
दिनस्य पञ्चकाले वै कृताहारोऽभवन्मुनिः ।	
शिश्ये च दर्भशय्यायां स निवर्त्याऽऽह्निकीं क्रियाम् ॥	७३
ब्राह्मे मुहूर्ते चान्येद्युः उत्थाय प्रयतो वशी ।	
चिन्तयन् पुण्डरीकाक्षं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥	७४
करुणारसकलोलतरङ्गितकटाक्षकम् ।	
शरत्पूर्णेन्दुवक्त्राभं पीतकौशेयवाससम् ॥	७५
महोरस्कमुदारङ्गं श्रीनिवासं महामतिः ।	
सन्ध्यामुपास्य विधिवत् स्नानपूर्वं समाहितः ॥	७६

पद्मसरोवरतीरस्थदिव्याऽगमवर्णनम्

ददर्श सरसस्तस्य तीरे त्वभिनवं वनम् ।	
पुन्नागनागपनसपाटलशोर्ककिंशुकैः ॥	७७
कुन्दमन्दारमाकन्दहरिचन्दनचन्दनैः ।	
तालचम्पकहिन्तालहरितालतमालकैः ॥	७८
नक्तमालैश्च सरलैः नारिकेलैश्च केसरैः ।	
पनसैः केतकैः सालैः पालशैः पिप्पलैः वटैः ॥	७९
खर्जूरैः खादिरैः प्लक्षैः रुद्राक्षैः रसनैर्धवैः ।	
सङ्कीर्णमभितः सान्द्रं महेन्द्रोपवनोपमम् ॥	८०
माधवीमल्लिकायूथीवनयूथीसुजातिभिः ।	
शतपत्रिनिराकीर्णं सुमनोभिः सुगन्धिभिः ॥	८१
दमनीमरुशाखाभिः तुलसीभिः विजृम्भितम् ।	
कुन्दमल्लिकयोपेतं कुशकाशप्रकशितम् ।	
विश्वामितैः पवित्रैश्च मुञ्जैरप्यभिजृम्भितम् ॥	८२

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवल - देवदर्शनसंवादे

सुमेरुशिखरात् शुकस्य श्रीवेङ्कटाचलागमन - पद्मसरःप्राप्त्यादिवर्णनं

नाम चतुर्विंशोऽध्यायः





## दिव्यारामे शुक्रब्रह्मर्षेः महानियमपूर्वकतपोनुष्ठानम्

देवदर्शनः —

तटे श्रीपद्मतीर्थस्य पद्मवाटीपटीयसः ।	
वटाटवीजटाऽऽटोपविशङ्कटवियत्तटे ॥	१
अधीतवेदवेदान्ततापसौघनिषेविते ।	
अनूदितब्रह्मघोषैः अन्विते वयसां गणैः ॥	२
पतङ्गाऽध्यापिताऽऽम्नायप्रमोदर्षिकुमारके ।	
हुतवैतानबहुशुत्थहविर्गन्धसुमोदिते ॥	३
मृगशावविल्लनाग्रकुशगुल्मविजृम्भिते ।	
मनःशन्तोषकरणे सर्वोपकरणान्विते ॥	४
विचित्रविविधाऽऽमोदे वने चैत्ररथोपमे ।	
तपःकरिष्यन् दिष्ट्या तु समाहितमना मुनिः ॥	५
विचिन्तयन् वियद्वाक्यं विमलत्मा व्यतिष्ठत ।	
स्वाध्यायं समधीयानो विष्णुमेवाग्रतो यजन् ॥	६
पर्णाशनो हिताचारनियतो नियमस्थितः ।	
मितभाषी मिताहारः शान्तो दान्तो गुरुप्रियः ॥	७
सात्त्विकः सत्त्वसम्पन्नो विष्णुभक्तो बभूव ह ।	
श्रीनिवासमनाराध्य किञ्चिन्नाश्नाति नित्यशः ॥	८
क्षुधाक्षामोऽप्यनैवेद्यं नोपजीवति चैकदा ।	
विष्णुपादोदकादन्यत् तृष्णातर्तोऽपि न चापिबत् ॥	९
निर्द्वन्द्वो निरहङ्कारो धीरो विगतमत्सरः ।	
कुशेशयासनासीनः कुशास्तरणभूतले ॥	१०

कुशाग्रबुद्धिरचलः कुशहस्तपवित्रकः ।	
कृष्णाजिनोत्तरासङ्गः कृष्णवर्त्मशिखाजटः ॥	११
कृष्णाजिनाम्बरधरः कृष्णद्वैपायनात्मजः ।	
अक्षमालाधरकरो विजिताक्ष क्षमाक्षमः ॥	१२
नासाग्रन्यस्तनयनः आर्जवोर्जितकायकः ।	
दन्तैरसंस्पृशन् दन्तान् जिह्वागूहिततालुकः ॥	१३
धारणाध्यानसम्पन्नः प्राणायामविशुद्धधीः ।	
उपांशु मानसजपगूढोष्ठस्फुरणाननः ॥	१४
वैकुण्ठेऽकुण्ठितमतिः गायत्रीं वैष्णवीं जपन् ।	
वर्षासु जलमध्यस्थो ग्रीष्मे पञ्चामिमध्यगः ॥	१५
अध्यर्कदृक्समद्वन्द्वोपद्रवो वीतनिद्रकः ।	
कालानलप्रतिभटकायः कमललोचनः ॥	१६

### शुकमुनितपोग्रिज्वालाभिर्लोकोपद्रवोत्पत्तिः

एवं प्रवृत्तो घोरश्च तपश्चर्तुं तपोधनः ।	
तपसा तस्य सन्तप्ता चचाल च वसुन्धरा ॥	१७
मार्तण्डश्चण्डकिरणो न तताप नमोऽन्तरे ।	
अब्धयः क्षुभिताः सर्वे ववर्षुः न बल्लहकाः ॥	१८
जातवेदा न जज्वाल विमानानि दिवौकसाम् ।	
नमोमध्ये न चेरुश्च बभूवेन्द्रश्च शङ्कितः ॥	१९
वृत्तवैरी महेन्द्रोऽपि किंकर्तव्यविमूढधीः ।	
चिन्तयन्नस्य तपसो विघ्नमप्सरसस्तदा ।	
समाहूयाऽऽह वचनं सादरं सान्त्वपूर्वकम् ॥	२०

## शुकतपोभङ्गाय महेन्द्रोत्तरम्भादिसान्त्ववचनानि

- ‘ विसृष्टा वेधसा यूयं निसर्गात् जगतो हि ते ॥ २१
- रूपयौवनलावण्यशालिन्यः पद्मलोचनाः ।
- मत्तमातङ्गगामिन्यो मन्दमन्थरगीतयः ॥ २२
- सुभ्रुवश्च सुकेशान्ताः घनपीनपयोधराः ।
- शुचिस्मिताः पक्वबिम्बाधरोष्ठा मदलालसाः ॥ २३
- युष्माभिर्मोहितं विश्वं ससुरासुरमानुषम् ।
- वीक्षणाद्यैर्विलसैस्तु निर्जिता मम शत्रवः ॥ २४
- कामिनीः पुरतो दृष्ट्वा कः समाधौ प्रवर्तते ।
- निर्याति मानसं तस्मात् कर्मकात् सायको यथा ॥ २५
- यूयमापदि सर्वत्र बलमस्माकमेव हि ।
- नाशक्यमस्ति वः किञ्चित् सर्वेषु भुवनेष्वपि ॥ २६
- उपस्थितमिदानीं नः सकलानर्थकं भुवि ।
- कर्तव्यः प्रशमस्तस्य भवतीभिः झटित्यपि ॥ २७
- वासवेनैवमुक्तानां प्रधानाप्सरसां वरा ।
- प्रणम्य प्राञ्जलिः प्राह रम्भा मधुरभाषिणी ॥ २८

## महेन्द्रनिकटे रम्भादिकृतप्रतिज्ञा

- ‘ यच्छाससि सुरेशान ! तदद्य विदधीमहि ।
- भवत्कृते जीवितं नः त्रिदशाभ्यक्ष केवलम् ॥ २९
- श्वेतद्वीपं ब्रह्मलोकं कैल्यसं वाऽन्यमूर्जितम् ।
- प्रवेक्ष्यामो वयं देशं वर्तन्ते यत्न तेऽरयः ॥ ३०
- मोहिताश्च भविष्यन्ति तेऽस्मद्वीक्षणवीक्षिताः ।
- एकाकिनः सदैकान्तभावाः सात्त्विकसत्तमाः ॥ ३१

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे पञ्चविंशोऽध्यायः २१५

प्रणमन्ति स्म नः पादान् शिरोभिः मोहिताः स्वयम् । '  
एवमुक्तस्तु देवेशः तया मधुरभाषया ॥ ३२  
एवमाह स सन्तुष्टो रम्भामप्सरसां वराम् ।  
' सत्यमुक्तं त्वया रम्भे ! मुनिमोहनरूपया ॥ ३३  
भूमौ कश्चित् मुनिवरः 'शुक' इत्येव नामतः ।  
सुवर्णमुखरीतीरे तपश्चरति दुश्चरम् ॥ ३४  
तत्र गत्वा मुनिश्रेष्ठं मोहयध्वं वराङ्गनाः ' ।  
इत्युक्ता देवराजेन प्रेषिताः सादरं किल ।  
देवस्त्रियस्तं प्रणम्य जम्भुर्यत्न तपोधनः ॥ ३५

**शुकतपोवनं प्रत्यागतानां रम्भादीनां शृङ्गारलीलाः**

मुनेः समीपतो गत्वा ताः स्त्रियो मधुरं जगुः ।  
मदोद्धताश्च ननृतुः वेणुवीणारवान्वितम् ॥ ३६  
कन्दर्पदर्पकलिताः कथयन्त्यः कथा मिथः ।  
वदन्ति स्म हसन्ति स्म क्ष्वेलयन्ति मदालसाः ॥ ३७  
स्थित्वा पुरस्तात् तस्येत्यं मदान्धाः सुरयोषितः ।  
शृङ्गारचेष्टाः चक्रुश्च विविधाः चाटुपूर्वकम् ॥ ३८  
इन्द्रप्रचोदितस्तत्र तपनो न तताप च ।  
वायुः कल्हारसुरभिः ववौ मन्दः सुखावहः ॥ ३९  
सुधानिधिश्च ववृधे मदयन् सुरसुन्दरीः ।  
कालः सर्वर्तुकुसुमोपेतस्तत्र बभूव ह ॥ ४०  
एवंविधे मधूद्वेगमहितेऽस्मिस्तपोवने ।  
इतस्तनः शम्बरारिर्विशङ्को विचचार ह ॥ ४१  
अतश्चानङ्गविवशाः चेष्टयन्त्योऽमराङ्गनाः ।  
ता न शेकुस्तस्य नेत्रे निवर्तयितुमग्रतः ॥ ४२

## श्रीनिवासध्यानेन जितकामं शुक्रं प्रति रम्भादिहासोक्तिः

सोऽपि ध्यायन् श्रीनिवासं शङ्खन्यब्जगदाधरम् ।	
वासुदेवं हृषीकेशं जगतां कारणं परम् ॥	४३
समाश्रितार्तिहरणं सुहृदं सर्वदेहिनाम् ।	
नाचिन्तयच्चान्तिकस्थाः ताः स्त्रियस्तपसैधितः ॥	४४
समीक्ष्य तास्तं दुर्धर्ममूचुरप्सरसस्तदा ।	
लज्जाक्रोधसमाविष्टश्चैवमूचुः परस्परम् ॥	४५
‘को वा ह्याऽस्तेऽत्र दुर्बुद्धिः पूष्णि निक्षिप्तवीक्षणः ।	
उपस्थितमुपेक्ष्येमं गणमप्सरसां स्वयम् ॥	४६
समीपस्थमसम्प्रेक्ष्य सर्वस्य तपसः फलम् ।	
दुरात्मनाऽतिमूढेनामुत्र किं चिन्त्यतेऽधुना ॥	४७
दृष्ट्वा मुखान्यप्सरसां सहस्राक्षः शचीपतिः ।	
सुराधीशः सहस्राक्षणां साफल्यं सम्यगश्नुते ॥	४८
यागादिकाः क्रियाः सर्वाः कुर्वन्त्यसत्कृते नराः ।	
ददुश्च धनधान्यानि तप्यन्ति स्म तपांसि च ॥	४९
यस्त्वस्माकं प्रियालापान् न शृणोति मनोरमान् ।	
अचेतनो वृथाजीवी भवत्यल्पमतिः स हि ॥	५०
स्तनाश्लेषं नरोऽस्माकं लभते यः सुदुर्लभम् ।	
स धन्यः पुरुषो लोके गण्यते पुण्यकोविदैः ॥	५१
विद्यानामार्जनं बाल्ये यौवने विषयैषिता ।	
वृद्धत्वे तपसां वृत्तिः इत्युशन्ति मनीषिणः ॥	५२
सुकुमारो युवाऽत्यन्तसुभगः तपसि स्थितः ।	
शृङ्गारिणीन् शृङ्गारः सुन्दरीजनसुन्दरः ॥	५३

देशकालवतिक्रम्य यत्कर्म कुरुते नरः ।	
तत्तस्य निष्फलमिति प्रवदन्ति मनीषिणः ॥	५४
स्वधर्माचारनिरता वेदशास्त्रविशारदाः ।	
करस्थरत्नमुत्सृज्य मूढधीः अन्यदिच्छति ॥	५५
दिव्याङ्गनाः पूजनीया मनुष्याणां विशेषतः ।	
अयमस्मान् अनादृत्य तिष्ठत्यत्यन्तदुर्मतिः ॥	५६
पूज्यपूजाविपर्यासः श्रेयो हन्तीत्युशन्ति हि ।	
तास्वित्थं जल्पमानासु सुरयोषित्सु सुव्रतः ॥	५७

### रम्भादिदुर्व्यापारान् विलोक्य शुक्रब्रह्मर्ष्यनुतापः

तपःकृशतराकारः कृष्णद्वैपायनाऽत्मजः ।	
नाचिन्तयत् समस्तास्ता घुष्यन्तीरिव गर्दभीः ॥	५८
उपस्थितं तपोविघ्नं चिन्तयामास च स्थिरः ।	
‘केनेमाः प्रेषिताः ह्यसत्तपोभङ्गचिकीर्षुणा ॥	५९
अव्याजवैरिणा कश्चित् लोभोपहतचेतसा ।	
निदानं पापचेष्टानां पापीयस्यः स्वतः स्त्रियः ॥	६०
अनेकानर्थसार्थास्ता व्यक्तमुक्ता मनीषिभिः ।	
ब्रीडा विज्ञानमास्तिक्यं पौरुषं श्रुतिरुन्नतिः ॥	६१
दर्शनादेव नश्यन्ति स्त्रीणामेतानि सर्वशः ।	
धैर्यपारंगतः सर्वधर्मशास्त्रविशारदः ॥	६२
योषिर्दर्शनमात्रेण मुह्यति क्षुभ्यति स्वयम् ।	
स्त्रियो हि नरकद्वारं निर्मितं परमेष्ठिना ॥	६३
तस्मात्तद्दर्शनं पापं नराणान्तु तपस्विनाम् ।	
स्त्रीपुंविभागो जगतां भूतैर् धात्वा विनिर्मितः ॥	६४



- तेन प्रवर्तते लोकः पुरुषार्थात्मकेन तु ।  
 अज्ञानिनो नरा मुह्यन्त्यन्योन्यप्रणयादिह ॥ ६५
- पुरुषाश्च स्त्रियो दृष्ट्वा तांश्च दृष्ट्वा च तास्तथा ।  
 तितीर्षुस्तपसाऽज्ञानमयं संसारसागरम् ॥ ६६
- निवृत्तविषयोऽतैव स्थितोऽस्मिन् विजने वने ।  
 विधिनाऽऽपादितश्चैवान्तरायस्तपसो मम ॥ ६७
- स्त्रियस्तपोविघ्नकर्यः परिहार्याः प्रयत्नतः ।  
 तितीर्षुं दुस्तरं धोरं महासंसारसागरम् ॥ ६८
- गृह्णाति विषयग्राहो मध्ये पुरुषमित्युत ।  
 तपोलोभभयादित्थं चिन्तयन् सहसा मुनिः ॥ ६९
- समदर्शी तु सर्वत्र जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।  
 कन्दर्पसायकान् घोरान् जित्वाऽक्षोभ्यो हि निर्ममः ।  
 श्रीनिवासं हृषीकेशं सहसा शरणं ययौ ॥ ७०
- कमलविभवलोभनैरनङ्गाभिनवविभूतिविभागभागधेयैः ।  
 अधरितमुनिमानसानुभावैः अवमतिमाकलयन् विलोकनैश्च ॥ ७१
- शिखरदशनदीधितिप्रतानप्रसभनिरस्ततमश्छटैः प्रहासैः ।  
 नटनविकटविभ्रमैः चिकीर्षन् नयनविलासभरैः तपोऽन्तरायम् ॥ ७२
- इति विबुधविलासिनीगणस्तं मुनिमभितः परिवार्य चावतस्थे ।  
 व्यवसितमतिरच्युतप्रपत्तौ स च न शशाप तपोविनाशभीरुः ॥ ७३

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवल-देवदर्शनसंवादे

पाद्मसरस्तीरस्थदिव्यारामे शुकब्रह्मर्षेः महानियमपूर्वकतपः-

करणादिवर्णनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः

## अथ षड्विंशोऽध्यायः

श्रीनिवासमुद्दिश्य रम्भद्यप्सरस्सङ्घभीतशुकस्तुतिः

अथ विबुधविलासिनीषु विष्वङ् मुनिमभितः परिवार्य तस्थुषीषु ।

मदविकृतविकल्थनप्रलापास्ववमतिनिर्मितनैजचापलासु ॥ १

त्रिभुवनमुदमुद्यतासु कर्तुं मधुसहसाऽगतिगर्वनिर्वहासु ।

मधुरसभरिताखिलात्मभावास्वगणितभीतिषु शापतः शुकस्य ॥ २

अतिविमलमतिर्महानुभावो मुनिरपि शान्तमनाः निजात्मगुप्त्यै ।

अखिलभुवनरक्षकस्य विष्णोः स्तुतिमथ कर्तुमना मनाक् बभूव ॥ ३

“ श्रियः श्रियं षड्गुणपूरपूर्णं श्रीवत्सचिह्नं पुरुषं पुराणम् ।

श्रीकण्ठपूर्वामरबृन्दवन्द्यं श्रियःपतिं तं शरणं प्रपद्ये ॥ ४

विभु हृदिस्थं भुवनेशमीड्यं निराश्रयं निर्मलचित्तचिन्त्यम् ।

परात्परं पारमपारमेनं उपेन्द्रमूर्तिं शरणं प्रपद्ये ॥ ५

स्मेरातसीसूनसमानकान्तिं सुरक्तपद्मप्रभपादहस्तम् ।

उन्निद्रपङ्केरुहचारुनेत्रं पवित्रपाणिं शरणं प्रपद्ये ॥ ६

सहस्रभानुप्रतिमोपलौघस्फुरत्किरीटप्रवरोत्तमाङ्गम् ।

प्रवालमुक्तानवरत्नतारहारं हरिं तं शरणं प्रपद्ये ॥ ७

तत्र तत्कृतदशावतारस्तोत्रम्

“ पुरा रजोदुष्टधियो विधातुः अपाकृतान् यो मधुकैटभाभ्याम् ।

वेदानुपादाय ददौ च तस्मै तं मत्स्यरूपं शरणं प्रपद्ये ॥ ८

पयोधिमध्ये पृथुमन्दराद्रिं धर्तुं च यः कूर्मवपुर्बभूव ।

सुधां सुराणामवनार्थमिच्छन् तमादिदेवं शरणं प्रपद्ये ॥ ९

वसुन्धरां दुर्भरदैत्यपीडितां रसातलान्तर्विवराभिविष्टाम् ।

उद्धारणार्थञ्च वराह आसीच्चतुर्भुजं तं शरणं प्रपद्ये ॥ १०

- नखैरुस्तीक्ष्णमुखैर्हिरण्यं अरातिमामर्दितसर्वसत्त्वम् ।  
विदारयामास हि यो नृसिंहो हिरण्यगर्भं शरणं प्रपद्ये ॥ ११
- यो यज्ञवाटमभिगम्य पूर्वं बलेर्ययाचे त्रिपदीं भुवश्च ।  
पश्चाद्ददौ तत्पदमेव तस्मै श्रीवामनं तं शरणं प्रपद्ये ॥ १२
- त्रिस्सप्तकृत्वः क्षितिपाललोकं परश्वथेनापि निहत्य पित्ने ।  
ददौ निवापं तदसृग्जलौघैः तं भार्गवं राममहं प्रपद्ये ॥ १३
- दशाननं दाशरथिः स भूयः छित्त्वा शिरांस्येकशरेण वीरः ।  
लङ्कां ददौ यश्च विभीषणाय तं रामभद्रं शरणं प्रपद्ये ॥ १४
- हलायुधो यो यदुवंशदीपः प्रलम्बपूर्वामरवैरिहन्ता ।  
अभूद्वदान्यो बलभद्ररामो विराट् परं तं शरणं प्रपद्ये ॥ १५
- वृष्ण्यन्ववायप्रभवं धरित्री भारापहारप्रथितप्रभावम् ।  
कृष्णं परं पाण्डवभागाधेयं योगीन्द्रवन्द्यं शरणं प्रपद्ये ॥ १६
- कलिं स्वतः कल्मषदुष्प्रथर्षं कलानुविद्धं विकरालवेषम् ।  
संहर्तुकामो भविता च कल्की यस्तं मुकुन्दं शरणं प्रपद्ये ॥ १७
- अहं महत्वेन्द्रियपञ्चभूततन्मात्रमात्रा प्रकृतेः पुराणी ।  
यतः प्रसूता पुरुषः तदात्मा तमात्मनाथं शरणं प्रपद्ये ॥ १८
- पुरा य एतत्सकलं बभूव येनापि तद्यत्नं च लीनमेतत् ।  
आस्तां यतोऽनुग्रहनिग्रहौ च तं श्रीनिवासं शरणं प्रपद्ये ॥ १९
- निरामयं निश्चलनीरराशिनिकाशसद्वरूपमयं महस्तत् ।  
नियन्तृनिर्मातृनिहन्तृनित्यं निद्राणामेकं शरणं प्रपद्ये ॥ २०
- जगन्ति यः स्थावरजङ्गमानि संहृत्य सर्वाण्युदरेशयानि ।  
एकवर्णवान्तर्वटपत्ततल्पे स्वपित्यनन्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २१
- निरस्तदुःखौघं अतीन्द्रियं तं निष्कारणं निष्कलमप्रमेयम् ।  
अणोरणीयांसमनन्तमन्तः आत्मानुभावं शरणं प्रपद्ये ॥ २२

- सप्ताम्बुजीरञ्जकराजहंसं सप्तार्णवीसंसृतिकर्णधारम् ।  
 सप्ताश्वबिम्बस्थहिरण्मयं तं सप्ताचिरङ्गं शरणं प्रपद्ये ॥ २३
- निरागसं निर्मलपूर्णबिम्बनिशीथिनीनाथनिभाननाभम् ।  
 निर्णीतनीतिं निगमान्तनित्यनिश्चयसं तं शरणं प्रपद्ये ॥ २४
- द्वितीयहीनं रचिताजडात्मनिजान्तरारोपितविश्वविश्वम् ।  
 निस्सीमकल्याणगुणात्मभूतं निधिं निधीनां शरणं प्रपद्ये ॥ २५

### श्रीनिवासमुद्दिश्य शुक्रब्रह्मर्षिप्रार्थना

- त्वक्चर्ममांसास्थ्यसृग्श्रुमूत्रश्लेष्मान्त्रविट्छुक्रसमुच्चयेषु ।  
 देहेष्वसारेषु न मे स्पृहैषु ध्रुवं ध्रुवं त्वं भगवन्! प्रसीद ॥ २६
- कारुण्यपाथोनिधिवल्गदूर्मिमालालसच्छैवलकज्जलाक्तैः ।  
 राजीवराजीरमणैरपाङ्गैरनाथमानन्दय नाकनाथ! ॥ २७
- भक्तिः क मे त्वच्चरणारविन्दमधूदमाद्यन्महिमाऽप्यनन्या ।  
 बुद्धिः क दुष्टेन्द्रियवाजिरूढा नैकत्र तेजस्तिमिरस्थितिर्हि! ॥ २८
- न विद्यते त्वत्पदपद्मपीठनिषेविणां काप्यशुभं नराणाम् ।  
 उपस्थितं मे भयमुत्पलक्षीविलोकनैर्लोपय लोकनाथ! ॥ २९
- समाधिभङ्गोऽयमिह प्रवृत्तो दुरात्मना केन दुरन्तचिन्तः ।  
 त्वमेव मां रक्ष भयादमुष्मात् त्वदन्यतो नास्ति गतिर्मुकुन्द ॥ ३०
- अनाथनाथ! धिषणा मम त्वय्येव वर्तते ।  
 सर्वथा सर्वकालेषु तदाऽऽस्तां त्वत्प्रसादतः ॥ ३१
- प्रसन्ने त्वयि गोविन्दे लभ्यं सर्वत्र किं प्रभो ।  
 स्वर्गापवर्गौ भगवन् त्वद्भक्तानामदुर्लभौ ॥ ३२
- भवता वीक्ष्यते यस्तु तस्य त्वद्भक्तिरुज्जिता ।  
 उपेक्ष्यते तु यस्तस्य भोगेच्छा चाभिजायते ॥ ३३

अतः शृङ्गारयोभ्यस्त्रीभयविह्वलमत्र माम् ।

रक्ष त्वमेव शरणं अनन्यशरणो गतः ॥

३४

नमः सकलकल्याणकारिणे करुणात्मने ।

श्रीवत्सवक्षसे तस्मै लक्ष्मीनारायणात्मने ॥ ”

३५

### रम्भादीनां स्वलावण्यनिन्दापूर्वकं यथागतं गमनम्

पाराशरे ब्रह्ममुनौ पुराणं पुमांसमित्थं शरणं प्रपन्ने ।

देवस्त्रियः कामशरेण विद्धा यथागतं क्षीणधियः प्रतीयुः ॥ ३६

अथ सुरवनिताभिरीक्षणाद्यैः निर्जविकृतैरगृहीतचित्तवृत्तिः ।

विधुरिव तमसा गृहीतमुक्तो मुनिरपि निश्चलधीः तपः प्रपन्नः ॥

फलान्यलभमानासु तपोभङ्गे महामुनेः ।

रूपवेषाभ्यसूयासु निर्गतास्वप्सरस्वितः ॥

३८

### भगवत्कृपया शुककृतदृढतरभक्तिपूर्वकं भगवदुपासनम्

ततःसरन् भगवतो हृषीकेशस्य शार्ङ्गिणः ।

इन्द्रियग्राममखिलं संयम्यास्मै समर्पयन् ॥

३९

परां काष्ठां समाकाङ्क्षन् काष्ठाश्मसमकायकः ।

अतितापसचारित्रं कुर्वन्नङ्गुष्ठभूमिगः ॥

४०

भक्तार्तिभञ्जनपरं भक्तवत्सलमव्ययम् ।

हृत्पुण्डरीकनिलयं चिन्तयन् पुष्करेक्षणम् ॥

४१

विज्ञानवैराम्यनिधिः कार्णद्वैपायनिर्मुनिः ।

अतिघोरतरं क्रूरं चकार सुमहत्तपः ।

तपसा तस्य सर्वात्मा सन्तुष्टः पद्मलोचनः ॥

४२

शुकमुनिं प्रति तपस्तुष्टश्रीनिवासागमनम्

संहर्ता रक्षिता स्रष्टा भुवनानि चतुर्दश ।	
अनुग्रहीताऽन्तर्यामी निग्रहीता निरन्तरः ॥	४३
शङ्खचक्रगदाम्भोजराजत्करचतुष्टयः ।	
मुक्तातपत्रितानन्तसहस्रफणमण्डलः ॥	४४
नवैरभिनवाकल्पैः तपनीयमयांशुकैः ।	
सुमनोभिः दिव्यगन्धैर्दिव्यालेपनचन्दनैः ॥	४५
अलङ्कृताङ्गमहिमा सयमानमुखाम्बुजः ।	
मकरन्दस्रवत्पद्मप्रभावगुणवीक्षणः ॥	४६
आपादचूडमाधुर्यमहिमा महतो महान् ।	
सेवाविशारदैः सार्धं गणैस्तु कुमुदादिभिः ॥	४७
विचित्रहेतिहस्तेन विष्वक्सेनेन सेवितः ।	
पञ्चायुधैः मूर्तिमद्भिः परीक्षितसमीक्षणः ॥	४८
महर्षिभिः मरीच्यत्रिभृगुपूर्वैः महात्मभिः ।	
इन्द्रादिभिः लोकणलैः सेवानुगुणभूतिभिः ॥	४९
त्रयस्त्रिंशत्कोटिभिश्च देववृन्दैरभिष्टुतः ।	
पञ्चात्मनः सुपर्णस्य पञ्चोपनिषदात्मनः ॥	५०
पञ्चवक्त्रप्रतिकृतेः पञ्चाथर्वाङ्गसम्पदः ।	
ऋग्यजुस्सामवपुषो नागाभरणभूषिणः ॥	५१
अप्रमेयप्रभावस्य स्कन्धपीठमधिष्ठितः ।	
अहंप्रथमपूर्वाभिः द्वात्रिंशत्कोटिशक्तिभिः ॥	५२
वैष्णवीभिः सेव्यमानो देवः पद्मसरस्तटे ।	
श्रीभूमिनीलासहितः प्रादुरासीत् परः पुमान् ॥	५३

भगवन्तं विलोक्य शुकमुनिकृतनटनादिकम्  
ततस्तपःकशिताङ्गो मुक्तः परमपावनः ।

पुरुहूतजितस्कन्धं पुरुपीठमविष्टितम् ।

पुरुहूतानुजं पूतं पुरुषं तं पुरातनम् ॥

५४

कटाक्षवीक्षाविध्वस्तश्रितक्लेशभरं परम् ।

प्रसन्नवदनं दृष्ट्वा विष्टरश्रवसं विभुम् ॥

५५

वैयासिर्मुनिशार्दूलः तपोविगतकल्मषः ।

ससम्भ्रमं समुत्थाय निविष्टः कुशविष्टरात् ॥

५६

रोमाञ्चकञ्चुकतनुः हर्षोत्फुल्लविलोचनः ।

स हसन् उत्तरासङ्गं छिन्दन् कृष्णमृगत्वचम् ॥

५७

विक्षिपन् अक्षमालाञ्च तूर्णं भिन्दन् कमण्डलुम् ।

आनन्दाश्रुपरीताक्षो गद्गदद्गलकन्धरः ॥

५८

ततश्च नर्तनं कर्तुं त्रिकर्तनविभास्वरः ।

निवृत्तिधर्मनिष्णातो मुनिः प्रववृते मुदा ॥

५९

मतङ्गजक्रमभ्रमोभ्रमन्मतङ्गजभ्रमः

सुधाभिलाषदेवभूः अमन्दमन्दविक्रमः ।

निवातदीपनिश्चलः चलत्कर रवस्फुटत्

दिगन्तरालमण्डलो ननर्त नन्दयन् विभुम् ॥

६०

परिभ्रमन् अदक्षिणं प्रदक्षिणं परिभ्रमन्

विभावयन् विलोकयन् अभावयन् अलोकयन् ।

शनैःशनैरसञ्चरन् सुसञ्चरन् शनैः शनैः

मुदाविलावलोकनो मदाविलावलोकनः ॥

६१

ततस्तु तोटकं वृत्तं करताडनपूर्वकम् ।

रचयन् दण्डमादाय कराभ्यामवलम्बयन् ॥

६२

आस्फोटयन् क्ष्वेलयंश्च स्वपदस्पर्शमस्तकः ।

ननर्त परमानन्दो वाचयन् नाम शार्ङ्गिणः ॥ ६३

“चरणं चटुलं कलयन् कलयन् कमलारसिकं सरसं रमयन् ।

नटनं घटयन् सुपदं सुवदन् हरिनाम मुनिः शुनदायि शुक्रः ॥ ६४

अरुणारुणपङ्कजसोदरदृक् करुणापरिणामिकटाक्षचणम् ।

रथनेमिलसत्करनीररुहं रमयन्नतसीकुसुमाङ्गरुचिम् ॥ ६५

सरसं विचरन् पुरतः परितो विलसन्नसकृत् मुरवैरिविनोः ।

करपङ्कजताडनताल्लसद्गमनं निगमान्तविलसभुवः ॥ ६६

भुजबद्धजटः करयुग्मभृताञ्जलिको मृगयूथपट्टसवपुः ।

मृगयन्निव यूथपतिं परितः पुनरप्यसकृत् विकृतः सुकृतः ॥ ६७

अतिकुण्डलिताङ्गभुजङ्गसमो नटनस्फुटकुट्टितकुट्टिमभूः ।

रजनीमुखताण्डवकुण्डलितत्रिपुरान्तकरीतिपुरश्चरणः ॥ ” ६८

इति दृढकृतभक्तिः वासुदेवे परस्मिन्

अकलसकलमिश्रश्रेयसि श्रीनिवासे ।

विगतकलिलकायोऽपायशून्यात्मभूतिः

विमलविषणभूतः संयमी व्याससूनुः ॥ ६९

हृदयकमलमध्याध्यासितं पङ्कजाक्षं

परिजनपरिबर्हाभूषणास्त्रादिसेव्यम् ।

बहिरिव पुरतस्तं वीक्ष्य चक्षुःपदस्थं

नियमितनिगमान्तः पूर्णकामो बभूव ॥ ७०

श्रीनिवासकृपया शुक्रब्रह्मर्षेर्भुक्तिः

ईदृशं तादृशमृषिं भक्तिविह्वलचेतसम् ।

भक्तार्तिभञ्जनकरो भगवांस्तार्क्ष्यवाहनः ॥ ७१



दयामिताम्भोधितुङ्गलोलकलोलकेलिना ।	
समीक्ष्य कमलाभोगभागधेयेन चक्षुषा ॥	७२
शब्दब्रह्मव्यूहगर्भं संस्कर्तुञ्च समुद्यतः ।	
स्नेहगर्भेण वचसा बभाषे हृदयन् हरिः ॥	७३

श्रीभगवान्—

‘मुने ! तापसशार्दूल ! तपस्तप्तं सुदुश्चरम् ।	
आनन्दकन्दसद्गर्भनिःश्रेयसकरं परम् ॥	७४
मुक्तिर्दत्ता मुदाकारा सशरीराऽविनश्वरी ।	
कल्पक्षये च सायुज्यमसन्मन्ताङ्गसम्भवम् ॥ ’	७५
इत्युक्त्वा भगवान् विष्णुः कृष्णद्वैपायनात्मजम् ।	
भक्तप्रतारितो भक्तैः तत्त्वैवान्तर्दधे स्वतः ॥	७६
मुक्तः शुको मुनिरपि मुकुन्दगतचेतनः ।	
अप्राकृताङ्गः प्रथयन् प्रकृत्या प्रकृतिप्रभाम् ॥	७७
प्रणम्य दण्डवद्भूमौ साष्टाङ्गं तत्र सत्वरः ।	
अवाप्ताभीष्टकामः सन् तत्राऽऽस्ते सुखमाश्रमे ॥	७८

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे

श्रीनिवासमुद्दिश्य रम्भाद्यप्सरस्सङ्घभीतशुकस्तुत्यादिवर्णनं

नाम षड्विंशोऽध्यायः ।



## अथ सप्तविंशोऽध्यायः



## शुकः । निकृतशुकपुगष्टोत्तरशतविप्रगृहनिर्दिष्टानि

देवदर्शनः —

तत्र श्रीपद्मतीर्थस्य तीरेऽस्मिन् निवसन् शुकः ।	
ध्यानयोगपरोऽध्यात्मब्रह्मविद्याविशुद्धधीः ॥	१
एकान्तभावमातिष्ठन् एकायनविदां वरः ।	
साङ्ख्ययोगपरो नित्यं सद्ब्रह्मनाध्ययनान्वितः ॥	२
द्वादशाक्षरशिक्षाक्षः प्रत्यक्षरनिरक्षकः ।	
पराशरात्मजसुतः सुतरां परमो मुनिः ॥	३
उवास सुचिरं कालं श्रीनिवासपरायणः ।	
स्वामिपुष्करिणीतीर्थमुपगन्तुमनास्ततः ॥	४
चक्रे स्वनाम्नाऽग्रहारमष्टोत्तरशतं द्विजान् ।	
नित्यतयीकान् त्रय्यन्तमुखान् मन्त्रमुखक्रियान् ॥	५
सुवृत्तान् शुभ्रमनसो निवृत्तावैदिकक्रियान् ।	
नानागोत्रानब्जदलैः निर्ममे ननु सादरान् ॥	६

## शुकपुरे बलभद्रसहकृतकृष्णप्रतिष्ठा

बलभद्रेण बलिना मायया सह मायिनम् ।	
देवक्या वसुदेवस्य यशोदानन्दगोपयोः ॥	७
आनन्दवर्धकं कृष्णं भद्रं भुवनहर्षकम् ।	
भूभारं हर्तुं कामञ्च त्रिमूर्तिपिणमव्ययम् ॥	८
कुहनागोपवपुषं मेघश्याम पुरातनम् ।	
पाराशरिः परमर्षिः प्रतिष्ठाप्येह भूतले ॥	९

- व्यजिज्ञपत् सन्निधानं अत्र ब्रह्ममुनिः शुक्रः ।  
 ' वैकुण्ठे तु यथा वासः क्षीराम्भोधौ यथा विभो ! ॥ १०  
 वासो यथाऽन्तरादित्ये योगिनां हृदये यथा ।  
 तथा सदा कुरुष्वान्न सन्निधिं कमलेक्षण ! ॥ ' ११  
 इति विज्ञाप्य देवेशं दण्डवत्प्रणिपत्य च ।  
 स्निह्यता मनसा ध्यायन् वीक्षमाणः स्वचक्षुषा ॥ १२

### शुक्रस्य स्वपुराच्छेषाचलगमनम्

- आजगाम प्रसन्नात्मा स्वामिपुष्करिणीं प्रति ।  
 उपान्ते चोक्षशैलस्योपेत्य निर्मलनिर्झरम् ॥ १३  
 तत्र त्रिषवणस्नानं कृत्वा व्यासैरसौ मुनिः ।  
 उपत्यकायामासीनं उदयादित्यवर्चसम् ॥ १४  
 उपांशुमानसजपं उदारं दारसंयुतम् ।  
 महोत्पलनिभं व्यक्षं महोपनिषदङ्गकम् ॥ १५  
 अग्निज्वालाजटाजल्लसद्गङ्गेन्दुभोगिनम् ।  
 व्याघ्राजिनोत्तरासङ्गवाससं कृत्तिवाससम् ॥ १६  
 कालकूटस्फुरत्कण्ठनालं नलिनवक्त्रकम् ।  
 समीक्ष्य हृष्टमनसा नमस्कृत्य च तं हरम् ॥ १७  
 उषित्वा त्रिदिनं तत्रोपासकः पूर्णमानसः ।  
 द्रष्टुकामोऽखिलाश्चर्यं पुनरप्यञ्जनाचले ॥ १८  
 सिद्धैर्विद्याधरैः सार्द्धं योगिभिः कन्दरस्थितैः ।  
 शनैःशनैः सञ्चरंश्च निर्झरेषु कृताप्लवः ॥ १९  
 ध्यायन् ब्रह्मसभावृत्तं वृत्तान्तं तस्य वै गिरेः ।  
 स्वामिपुष्करिणीतीरमाससाद शुभास्पदम् ॥ २०

स्वामिपुष्करिणीतीरवर्णनम्

सुगन्धपुष्पवल्लीभिः वेष्टितैः वकुलैर्युतम् ।	
खर्जूरैः नारिकेलैश्च केतकैः स्वर्णकेतकैः ॥	२१
पटीरपाटलाशोककिंशुकासनचम्पकैः ।	
नक्तमालैश्च पनसैः मधूकैः सरलैः धवैः ॥	२२
पुन्नागसुरपुन्नागशिशुपुन्नागपूगकैः ।	
कदलीकृष्णकदलीमहाकदलिकागणैः ॥	२३
हरिद्राभिः शृङ्गबेरैः कस्तूरीरजनीकुलैः ।	
मल्लिकामालतीभिश्च माधवीभिः मधूकटैः ॥	२४
यूथिभिः शतपत्नीभिः जातिभिः वनजातिभिः ।	
नन्दावर्तादिसुमनःकक्षैः कुक्षिपथङ्गतैः ॥	२५
समन्ततः समाकीर्णं सान्द्रच्छायासमञ्जसैः ।	
सौगन्धिकैः सुगन्धाढ्यैः तुलसीभिः सुमोदितम् ॥	२६
दयनीभिः पुष्पगन्धगर्भपुष्पलताशतैः ।	
अतिमृष्टामोदपुष्पामोदिताशावकाशकम् ॥	२७
तापसैः तरुणादित्यवर्चोभिः अभितो वृतम् ।	
वराहसिंहशार्दूलमातङ्गकुलसङ्कुलम् ॥	२८
सितासितैः सारमेयगणैः दुर्वारगर्वकैः ।	
सेवितो नातिभीमेन क्षेत्रपालेन पालितम् ॥	२९
विचरन्नत्र विपिने मुनिः विगततृट् शुचिः ।	
परमां मुदमापन्नो मुकुन्दानन्दकन्दधीः ॥	३०

स्वामिपुष्करिणीवर्णनम्

स्वामिपुष्करिणीं पुण्यां ददर्श विमलोदकाम् ।	
काञ्चनाम्बुजकल्हारकमलैः श्वेतपङ्कजैः ॥	३१

नीलोत्पलैः उत्पलैश्च फुल्लैः कुवलयैरपि ।	
कैरवरपि कीर्णान्तामुद्गिरत् पुण्यगन्धकैः ॥	३२
तरङ्गान्तरसञ्चारैः मत्तैः काण्डवैरपि ।	
ताराभिश्च तरन्तीभिः अन्यैः जलपतत्रिभिः ॥	३३
कलहंसकलालपैः वाचालितदिगन्तराम् ।	
तस्यास्तीरसमुल्लासिसमग्राभीष्टसन्ततेः ॥	३४
तीर्थं तोयमुपस्पृश्य लक्ष्म्या सञ्चिन्तयन् विभुम् ।	
प्रसन्नमानसोल्लसः चक्रे तत्राघमर्षणम् ॥	३५
बद्धपद्मासनासीनोऽभितटं योगमेयिव न् ।	
परमैकान्तिमि सार्धं ब्रह्मवित् ब्रह्मदर्शनः ॥	३६
तत्रैव सुचिरं कालं उवास परमर्षिभिः ।	
रहस्यन्योन्यसंज्ञापस्वान्तान्तेवासिसन्ततैः ॥	३७

### श्रीनिवासाविर्भावः

कदाचित् भगवान् विष्णुः कारुण्यागण्यपुण्यधीः ।	
दर्शयन् सकललौकिकान् साक्षादक्षिपथं गतः ॥	३८
“ दिव्यानन्दमयाकारैः गरुत्मच्छेषसैनिकैः ।	
पञ्चायुधैः परिकरैः गणैस्तु कुमुदादिभिः ॥	३९
परिबर्हाभूषणान्यजिनवस्त्रांशुकानि च ।	
आयुधान्यप्रमेयानि दधानैः ब्रह्मशक्तिभिः ॥	४०
शक्तिभिः शाङ्करीभिश्च सेव्यमानो मुदान्वितः ।	
श्रीभूमिनीलपूर्वाभिः अपूर्वाकल्पभूतिभिः ॥	४१
महिषीभिः मुदानन्दं आवहन्तीभिरीशितुः ।	
मुमोद सह सर्वात्मा क्रीडाडम्बरडाम्भिकः ॥	४२

लीलाविभूतिविहितविधानन्दवेषभाक् ।	
कालकादम्बिनीकान्ताकुञ्चितालकबन्धनः ॥	४३
उद्यद्द्युमणिबिम्बश्रीः शिखामणिमहामहः ।	
अष्टमीन्दुकलाकारललाटस्थोर्ध्वपुण्ड्रकः ॥	४४
सौवर्णपद्मकल्हारपुष्पकर्णावतंसकः ।	
सेवान्तररसाशासिशार्ङ्गभ्रूमण्डलद्वयः ॥	४५
अतिसूक्ष्मस्फुरत्ताराकर्णपूर्णारुणेक्षणः ।	
करुणाब्धिसमुद्भूतलोलपद्मविलोचनः ॥	४६
तिलपुष्पसमाकारनासाकाण्डपुटद्वयः ।	
पद्मबिम्बफलाकाररमणीयोष्ठयुग्मकः ॥	४७
प्रभाविसारिशिखरिदशनावलिवक्रकः ।	
खाकारकर्णपाशात्तमुक्तामाणिक्यकर्णिकः ॥	४८
शरन्निर्मलपूर्णेन्दुमण्डलाननमण्डलः ।	
कम्बुकण्ठो वृषस्कन्धो भोगिभोगोल्लसद्भुजः ॥	४९
शार्ङ्गज्याहतिकर्कश्यरमणीयप्रकोष्ठकः ।	
विशालवक्षोविलसच्छ्रीवत्सः क्रौस्तुभोज्ज्वलः ॥	५०
शङ्खचक्रगदापद्मपरिष्कृतचतुर्भुजः ।	
निम्ननाभिसमुल्लासिमाणिक्योदरबन्धनः ॥	५१
मेखलालङ्कृतकटीतटीच्छुरिकयोद्भटः ।	
हस्तिहस्तसदृक्षोरुजानुमण्डलमण्डितः ॥	५२
क्रमवृत्तायताभोगजङ्घकाण्डसुपार्षिकः ।	
कूर्मपृष्ठप्रपदकः किङ्किणीहंसकाङ्घ्रिकः ॥	५३
शिञ्जन्माणिक्यमञ्जीरप्रभासितपदाम्बुजः ।	
नानासेवारसोद्भासिचन्द्रबिम्बनखावलिः ॥	५४

सुधासूतिगृहोदामस्फुरदङ्गुष्ठसौष्ठवः ।	
पङ्कजश्रीपरिचितान्योन्यतुल्याङ्घ्रिपङ्कजः ॥	५५
अतसीकुसुमज्योतिःप्रख्यविख्या विग्रहः ।	
संवीतविविधाश्चर्यतप्तचामीकराम्बरः ॥	५६
आंसादाप्रपदालम्बवनमालविराजितः ।	
विचित्ररत्नखचिततपनीयकिरीटकः ॥	५७
हारकेयूरकटककङ्कणाङ्गदभूषितः ।	
मणिकुण्डलताटङ्कवीरपट्टाङ्गुलीयकः ॥	५८
अंसलम्बसमायुक्तसौवर्णब्रह्मसूत्रकः ।	
त्रिपञ्चसप्तसरिभिः मुक्तादामनिरञ्जितः ॥	५९
सर्वान्नरणसंयुक्तः सर्वगन्धानुलेपनः ।	
सर्वर्तुः । लोत्थपुष्पदामोदामभुजान्तरः ॥ ”	६०
भक्तानुकम्पासहितः श्रीनिवासः परः पुमान् ।	
आविर्बभूव भगवान् स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	६१

### शुक्रब्रह्मर्षिकृतश्रीनिः । सस्तुतिः

व्यासात्मजो मुनिर्मुक्तः तं दृष्ट्वा हृष्टमानसः ।	
प्रणम्य दण्डवद्भूमौ अवाञ्जनसगोचरम् ।	
तुष्टव च हृषीकेशं केशवं क्लेशनाशनम् ॥	६२
“ जिः ते पुण्डरीकाक्ष वासुदेवामितद्युते ।	
रागादिदोषनिर्मुक्तसमग्रगुणमूर्तये ॥	६३
नाथ ! ज्ञानबलोत्कृष्ट नमस्ते विश्वभावन ! ।	
सङ्कर्षण ! विशालाक्ष ! सर्वज्ञ ! परमेश्वर ! ॥	६४

नमस्तेऽस्तु हृषीकेश ! सर्वेश्वर ! जगन्मय ! ।	
देव ! ऐश्वर्यवीर्यात्मन् ! प्रद्युम्न ! जगतां पते ! ॥	६५
स्थित्युत्पत्तिलयत्राणहेतवे शक्तितेजसे ।	
जयानिरुद्ध भगवन् ! महापुरुषपूर्वज ! ॥	६६
जितं ते पुण्डरीकाक्ष ! नमस्ते विश्वभावन ! ।	
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश ! महापुरुषपूर्वज ! ॥	६७
श्रीनिवास ! जगन्नाथ ! नारायण ! दयानिधे ! ।	
कृतार्थोऽहं कृतार्थोऽहं कृतार्थाः सर्वजन्तवः ॥	६८
प्रसीद भगवन् विष्णो ! प्रसीद पुरुषोत्तम ! ।	
प्रसीद पुण्डरीकाक्ष ! प्रसादादात्मसात्कुरु ॥ ”	६९
इति स्तुवन्तमागत्य महर्षिं फुल्ललोचनम् ।	
आनन्दनिर्भरापूर्णमानसं श्रीशुकं मुनिम् ॥	७०
समीक्ष्य सुप्रसन्नं तं प्रसादप्रणयान्वितः ।	
दिव्यैः परिजनैः सार्धं श्रीनिवासः तिरोदधे ॥	७१
मुनिः पुनः प्रणम्यात्र दण्डवच्च मुहुर्मुहुः ।	
परमैकान्तिभिः योगिवर्यैः आर्यैः सहापरैः ॥	७२
आर्चावतारविभवपरव्यूहान्तरादिकान् ।	
आविर्भावान् स्मरन् विष्णोः ययौ मेरुगिरिं प्रति ॥	७३

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
शुकमुनिकृतशुकपुराष्टोत्तरशतविप्रगृहनिर्माणादिवर्णनं

नाम सप्तविंशोऽध्यायः ।





अथ अष्टाविंशोऽध्यायः



## श्रीवराहाविर्भाववृत्तान्तः

देवलः—

सिंहसानुमतः कुक्षौ स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
श्वेतस्य पोत्रिपोतस्य प्रादुर्भावः कथं विभो ! ॥ १

देवदर्शनः—

चराचरगुरोरस्य चारित्रं चारुपोत्रिणः ।  
शृणु विद्वन् ! विशेषेण व्याचक्षेऽहं विचक्षण ! ॥ २

असुरोपद्रवमसहमानाया घरायाः पातालगमनम्

पुरा धर्मच्छिदो दृष्टा दैत्याः स्वेच्छाविहारिणः ।  
छायां स्वकीयामपि च हन्तुकामा मदोद्धताः ॥ ३  
मुनिभिः गौतमाद्यैः ये शप्ता भूमिं गता इति ।  
तेऽभिजाते कुले जाता राजामाज्ञाविलङ्घिनः ॥ ४  
पापिष्ठा ह्यसुरश्रेष्ठा नृपश्रेष्ठवपुर्धराः ।  
नक्तन्दिवं हि बाधन्ते त्रिलोकीधूमकेतवः ॥ ५  
क्षोभं महीक्षितामेवं दुर्दर्पबलशालिनाम् ।  
सर्वसहाऽसहमाना निममज्ज रसातले ॥ ६

पातालगतभूम्युद्धरणोद्युक्तवराहवर्णनम्

भूतधात्र्यां निमग्नायां अधोभुवनसद्गनि ।  
संरक्षकः सर्वसाक्षी करुणावान् अधोक्षजः ॥ ७

समुद्धर्तुमनास्तूर्णं पातलनिलयां भुवम् ।	
महावराहो भगवान् बभूव परमः पुमान् ॥	८
यत्किरीटस्थरत्नानि सत्यलोकनिवासिनः ।	
अक्वण्डोदितमार्तण्डप्रचण्डामलमण्डलम् ॥	९
पञ्चोपनिषदात्मनः सिद्धा मुक्ताश्च मेनिरे ।	
यस्य श्रोत्रैकदेशस्थं स्वपदं शब्दमात्रकम् ॥	१०
तेजांसि निममज्जुश्च नेत्रयोः विवरान्तरे ।	
नासाग्रे च समायुक्तो मातरिश्वा बभूव ह ॥	११
बभूव पारावारोदो पादपङ्कजपङ्कदः ।	
खुरोदरे कणकणाः सुराद्रिश्च कुलद्रयः ॥	१२
दशोत्तरैरावरणैः लोकलोकाचलः स्थितः ।	
बभूव बाह्यावयवभावनाशेषवेषभाक् ॥	१३
पोत्रिपादैकरोमान्तर्विवरस्थां वसुन्धराम् ।	
सपत्नीं पद्मवासिन्याः सर्वभूतनिवासिनीम् ॥	१४
मुस्ताभिः पूर्णपङ्काङ्कां मार्गमाणो बभूव ह ।	
तां दृष्ट्वा वेपमानाङ्गीं लज्जालोलविलोचनाम् ॥	१५
पोत्रिरोमान्तरासीनां पावनीं परमेश्वरीम् ।	
वैकुण्ठोऽकुण्ठितोदन्तः कण्ठमूलमधोक्षजः ॥	१६
रहस्यस्याः समाग्राय वराहवपुरात्मभूः ।	

### पातलगतधरणीवराहयोर्नर्मव्यापारादिः

गाढाङ्गपालीकबलीभूतगूढाङ्गपालिकाम् ॥	१७
सत्यसन्धो हि मुमुदे नवोढां च वधूमिव ।	
शरत्प्रत्यग्रपङ्केजाभिनवाभोगलीलया ॥	१८

स्नेहकामनया दृष्ट्या अभिवीक्ष्य विगतज्वरः ।

तां बभाषे सुरसया सुधाक्लोललीलया ॥ १९

नर्मभावनया वाचा श्रीमात्रलिनलोचनः ।

‘ वसुधे देवि ! भद्रं ते भद्रे भद्राणि पश्यसि ॥ २०

स्थापयाखिलभूतानि स्वस्था स्वस्थानमास्थिता ! ’

एवं वराहवपुषा पुसा भूमिः सुभाषिता ॥ २१

स्नेहसागरपूर्णेन व्रीडालोलविलोकिना ।

नेत्राञ्चलेन स्वपतिं वीक्ष्य कोलाननं विभुम् ॥ २२

स्नेहसन्दर्भगर्भेण माधुरीमहितात्मना ।

त्रिस्थानस्थेन वचसा धर्मश्रवणतत्परा ॥ २३

बभाषे पुरुषश्रेष्ठं पौत्रिवक्तं पुरातनम् ।

वराहं प्रति धरण्युक्तिः

“ भगवन् ! देवदेवेश ! दैत्यामित्र ! दयानिधे ! ॥ २४

दैत्यदानवदुर्धर्ष ! भारात् मग्नां रसातले ।

रक्ष मां पक्षिराड्बुह ! सर्वभारक्षमाक्षमाम् ॥ २५

आधारशक्तये तुभ्यं अनन्तशिरसे नमः ।

अव्याजसुहृदे भूयो नमोऽनन्तविभूतये ॥ ” २६

एवं वसुधया देव्या वेपमानाखिलाङ्गया ।

विज्ञापितो विश्वरक्षादीक्षितः प्रत्युवाच ताम् ॥ २७

“ साधु देवि त्वया पृष्टं शृणु वक्ष्ये वसुन्धरे ! ।

सर्वसहा विश्रुता त्वं तथ्यनामा भव प्रिये ! ॥ ” २८

धरण्या साकं पातालाद्वराहस्य शेषाचलागमनम्

वराहरूपी भगवान् एवमुक्त्वा वसुन्धराम् ।

देवीमशिक्षयद्धर्मं स्वभारभरणक्षमम् ॥ २९

शिक्षिता वसुधा देवी तेन शुद्धमना धरा ।	
बभूव महिता तेन स्वभारभरणक्षमा ॥	३०
तदाप्रभृति देवेशो वराहवपु अर्जितः ।	
पाताललोकात् लोकेऽस्मिन् कौतूहलसमाकुलः ॥	३१
स्वामिपुष्करणीकूले पश्चिमेऽस्मिन् धरातले ।	
बल्मीकबिलमासाद्य तद्द्वारा विजिहीर्षया ॥	३२
गमनागमनं कुर्वन् तदधो भुवनं प्रति ।	
भूत्वा श्वेतः पोत्रिपोतः सञ्चरन् आत्मनायकः ॥	३३
दिव्यैर्गणैः सेव्यमानः कदाचित् अनपायिभिः ।	
भूषणैः पारिवर्हैः स्वैः आयुधैः चेतनात्मभिः ॥	३४
अव्याजमित्तोऽल पोली वर्तते दिव्यगात्रभृत् ।	
ह्लादयन् आत्मनः सर्वान् ज्ञानानन्दमयान् सुरान् ॥	३५
परावराणां भूतानां अन्तर्यामिणि शार्ङ्गिणि ।	
एवं हि वर्तमानेऽल पवित्रे चित्रपोत्रिणि ॥	३६
कदाचित् स्वाश्रमे पुण्ये दुर्वासाः कोपनो मुनिः ।	
क्रीडन्तौ काममोहेन दृष्ट्वा किन्नरदम्पती ॥	३७
शाशप निर्झरे पुण्ये सिंहनाम्नि महीधरे ।	
‘कैरातं मिथुनं स्यातं वन्याहारौ युवामिति ॥’	३८

दुर्वाससः शापात् किन्नरदम्पत्योः कैरातरूपप्राप्तिः

ततः किन्नरदम्पत्योः निर्विण्णमनसोः सतोः ।	
शापमोचनमाचख्यौ कृपया स च तापसः ॥	३९
“तत्र स्वामिसरस्तीरे सञ्चरन् श्वेतसूकरः ।	
शापान्मदीर्घ्याविहितान् मोचयिष्यति तौ युवाम् ॥”	४०

तथेति दीनमनसौ उक्त्वा किन्नरदम्पती ।

तुर्णं तं देशमागत्य जज्ञाते व्याधदम्पती ॥

४१

कैरातदम्पत्योः शेषाचले पुत्रप्राप्तिप्रियङ्गुकृषीकरणादीनि

शाकमूलफलाहारैः दुष्टसत्त्वनिवर्हणौ ।

आसाते सुचिरं कालं अस्मिन् सिंहशिलोच्चये ॥

४२

ऋक्षशार्दूलशरभसिंहेभ्यश्चालदुर्गमे ।

अरण्येऽगव्यपुण्यौघे भीषणे रोमहर्षणे ॥

४३

वसत् किरातमिथुनं पुष्पासवमदोद्धतम् ।

असूत पुत्रं चित्राङ्गं चिरकालसमीप्सितम् ॥

४४

प्रसूतं तं समीक्ष्याथ सुकुमारं सुतं तदा ।

शबरः शबरी चैतौ आस्तां सम्पूर्णमानसौ ॥

४५

स्तन्यैः वन्यरसैरन्यैः तमापञ्चवर्षकम् ।

ताववर्धयतां पुत्रं चित्तावयवमर्भकम् ॥

४६

सिंहहस्तनखत्रोटीनिशातशतधारतः ।

विभिन्नमत्तमातङ्गकुम्भोद्भिन्नोस्मौक्तिकैः ॥

४७

दण्डशेखरवासोभिः बहैः बर्हिपतलिणाम् ।

त्रिमदोद्विक्तमातङ्गमदपङ्कद्रवैरपि ॥

४८

श्रेयसः सरसां स्वामिसरसः श्वेतमृत्स्त्रया ।

अलञ्चक्रतुरन्योन्यं पितरौ सुतरां सुतम् ॥

४९

कदाचित् पर्यटंस्तत्र विपिने स वनेचरः ।

कस्यचिद्वटवृक्षस्य समीक्ष्य स्कन्धकोटरे ॥

५०

पक्वं कार्तस्वरनिभं प्रियङ्गु प्रियदर्शनम् ।

गृहीत्वा शबरः सर्वं गृहिण्यै तत् समर्पयत् ॥

५१

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः २३९

साऽपि प्रैयङ्गवं धान्यं उच्छोष्य च समाचिनोत् ।  
ततः सस्यं चक्रतुश्च प्रैयङ्गवमतन्द्रितौ ॥ ५२  
वृत्तिभिः गोपयन्तौ तौ शुश्रूषाभिः समन्ततः ।  
आपक्कफल्माकाङ्क्षन् मिथुनं तद्वभूव ह ॥ ५३  
गोपनार्थं हि तस्यैव पुत्रं प्रेषितवान् स्वयम् ।  
तुष्टो बभूव च क्षेत्रं वीक्ष्य पक्कफलोद्धतम् ॥ ५४

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
श्रीवराहाविर्भाववृत्तान्तवर्णनं नाम अष्टाविंशोऽध्यायः ।

अथ एकोनत्रिंशोऽध्यायः

प्रियङ्गुगोप्तकिरातसमीपं प्रति वराहागमनम्

देवदर्शनः—

प्रियङ्गावभितो गुप्ते वाभ्राभिः वृत्तिभिस्ततः ।  
तसचामीकराभोरुपक्कधान्यभरानते ॥ १  
शबरस्तं समीक्ष्याथ मध्ये कृत्वा तु मञ्चिकाम् ।  
तद्रक्षणार्थं तलैव अतिष्ठन्नक्तन्दिवं स्वयम् ॥ २  
कदाचित् भगवान् श्वेतः पोत्रिपोतो बुभुक्षया ।  
वल्मीकरन्ध्रात् निर्गत्य क्षेत्रमध्यं विवेश ह ॥ ३  
तं दृष्ट्वा बहुशः सोऽपि शबरो विस्मयं ययौ ।  
ततस्तन्मण्डलेशाय राज्ञे विज्ञापितुं द्रुतम् ॥ ४  
राजधानीं प्रविश्यास्याऽऽवेदयन्चक्रवर्तिनः ।  
तच्छ्रुत्वा सार्वभौमस्तु राजा कौतूहलान्वितः ॥ ५

## श्रीवाराहदर्शनार्थं शेषाचलं प्रति नृपागमनम्

मृगयावेषभृन् भूत्वा पदातिः उपनिष्क्रमन् ।	
एकाकी तेन सार्द्धं हि जगाम जगतां हितः ॥	६
स्वामिपुष्करिणीं पुण्यां विगाह्य विगतक्लमः ।	
दण्डवत्तां प्रणम्याथ व्याधवाक्यविचित्रताम् ॥	७
मनसाऽऽलोचयन् सम्यक् सन्त्यक्तान्यपराक्रमः ।	
प्रियङ्गोः क्षेत्रमासाद्य प्रियङ्गुप्रियदर्शनः ॥	८
चतुस्तम्भसमायुक्तां चतुरश्रां समुच्छ्रिताम् ।	
मृदुपल्लवसंस्तीर्णां उपास्तीर्णमृदुत्वचम् ॥	९
आदाय सशरं चापं तुङ्गशृङ्गविनिर्मिताम् ।	
मञ्चिकामारुरोहैतां तेन सार्धं नराधिपः ॥	१०
शबरः सार्वभौमश्च जाग्रतौ निश्यतिष्ठताम् ।	
वल्मीकविवराच्चित्रसूकरो निर्जगाम ह ॥	११

## नृपस्य वल्मीकविवरागतवराहदर्शनम्

वृत्तिं विलङ्घ्य बाघ्राभिः पाशैरप्यतिदुर्गमाम् ।	
क्षेत्रमध्यञ्च धावन्तं सूकरं सुभगाङ्गकम् ॥	१२
आत्ताभिलाषमाहारे दंष्ट्रादीधितिसञ्चयैः ।	
ध्वान्तं शकल्यन्तञ्च भास्वद्विव्याङ्गसङ्गतैः ॥	१३
राजा तं वीक्ष्य सहसा विस्रयं परमं गतः ।	
सज्ये धनुषि सन्धाय सायकं साधुविक्रमः ॥	१४
तूर्णमाकर्णमाकृष्य चल्लक्ष्यप्रवेधिनम् ।	
ग्रहीतुकामो नृपतिः तेन सार्धं तमन्वगात् ॥	१५

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः २४१

सूकरो वीक्ष्य धावन्तं चापहस्तं महीपतिम् ।	
झटिति क्षणमात्रेण वल्मीकविवरं ययौ ॥	१६
व्यर्थप्रतिज्ञो नृपतिः प्राज्ञः प्रख्यातविक्रमः ।	
वल्मीकमूलमागत्य द्रष्टुं सूकरमत्वरः ॥	१७
शिश्ये च दर्भशय्यायां स्वप्नं काङ्क्षन् क्षितीश्वरः ।	
प्रबुद्धः प्राकृतः प्रातः अदृष्ट्वा स्वप्नदर्शनम् ॥	१८
किंकर्तव्यत्वशून्यात्मा चिन्तयन् कायशोधनम् ।	
महदाश्चर्यमाहर्तुं स्नात्वा स्वामिसरोजले ॥	१९
तपोवेषं समास्थाय ध्यायन् सूकरमीश्वरम् ।	
कर्तुं प्रवृत्ते वीरः ततः प्रायोपवेशनम् ॥	२०
निर्द्विन्द्वोऽवन्ध्यनिष्ठश्च निष्ठावान् अस्य दर्शने ।	
एवं हि वर्तमानेऽस्मिन् नृपतौ नियतात्मनि ॥	२१
शबरेण शबर्या च परिष्कृतसपर्यके ।	
वृत्तं विष्णुपदे वाक्यं विशुद्धममृतोपमम् ॥	२२

### नृपं प्रत्यशरीर्युक्तिः

‘द्रष्टुकामो यदि भवान् साधुवृत्त ! महीपते ! ।	
तपसाऽलं सर्गवेण सूकरार्भकदर्शने ॥	२३
यतस्व वृत्तं तच्चर्तुं यद्वक्ष्यामि च सुव्रत ।	
सवत्साऽसितगोक्षीरधाराभिः अभिषेचय ॥	२४
अच्छिन्नसन्तताभिश्च वल्मीकस्थं वराहकम् ।	
एवं सिक्तः स भगवान् पोलिवक्त्रः पुरातनः ॥	२५
प्रादुर्भविष्यति ततो वल्मीकविवरात् त्रिभुः ।’	
एवमुक्त्वा तु वाक्यं तत् पुनर्नोवाच किञ्चन ॥	२६



नृपतिः तं निशम्याऽऽशु विस्मयो विस्मयं गतः ।	
तं प्रयत्नं प्रवृत्ते प्रयतोऽप्राकृतात्मनः ॥	२७
अस्य नारायणगिरेः लक्ष्मीनारायणेशितुः ।	
वसतेर्दक्षिणे भागे द्वियोजननियोजिते ॥	२८
तीरे स्वर्णमुख्याश्च दक्षिणे दक्षिणक्रमे ।	
प्राग्भागे गण्डशैलस्य सर्वोपकरणान्विते ॥	२९
ग्रामे सङ्ग्रामविजयी समाहितमनास्ततः ।	
संचिन्त्य सर्वान् संभारान् तस्मादाहृत्य सत्वरः ॥	३०
तं बराहञ्च बल्मीकमभिषेक्तुमना मनाक् ।	
विशुद्धवासा निष्णातो वैष्णवः पूर्णमानसः ॥	३१
निष्णातः तत्सपर्यायां बभूव वसुधाधिपः ।	
सावधानः सहामात्यः सापत्यः शबरान्वितः ॥	३२
अतन्द्रितः साधु सान्द्रं अशरीरिवचः स्मरन् ।	
गोक्षीरैः हेमकुम्भस्थैः बल्मीकविवरोदरम् ॥	३३
अनुस्यूतौच्छिन्नधारैः अभिषेक्तुं प्रचक्रमे ।	

क्षीराभिषेकाद्वराहस्य बल्मीकादाविर्भावः

क्रियमाणेऽभिषेके तु बल्मीकविवरान्तरात् ॥	३४
आविर्बभूव भगवान् वराहवपुरीश्वरः ।	
कोटीरकोटिविलसन्मणिमण्डलमण्डितः ॥	३५
अमृतांशुकल्यकल्पदंष्ट्रादन्तुरपोत्रकः ।	
ललाटपट्टघटितवेणुपत्रोर्ध्वपुण्ड्रकः ॥	३६
कम्बुबिम्बसदृक्कण्ठो मांसलस्कन्धमण्डलः ।	
सुपारिजातविटपविडम्बितचतुर्भुजः ॥	३७

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः २४३

- शङ्खचक्रधरो वाम ऊरुपीठे स्थितां महीम् ।  
देवीं त्रपागोपिताङ्गीं लोलाविलविलोचनाम् ॥ ३८
- सर्वात्मसम्भृतदयाकायिनीं हर्षदायिनीम् ।  
गाढंगाढं समालिङ्गान् अस्या अङ्गं पदद्वयम् ॥ ३९
- गृह्णानः सान्द्रहर्षेणा लोक्यन् वक्तूपङ्कजम् ।  
विशालवक्षाः श्रीवत्सकौस्तुभाभ्याञ्च लाल्छितः ॥ ४०
- यज्ञोपवीतोत्तरीयदृढबन्धनबन्धुरः ।  
हारकेयूरकटकरम्यहीराङ्गुलीयभृत् ॥ ४१
- समभ्युत्थितवामाङ्घ्रिशिञ्जन्मञ्जीरहंसकः ।  
नवरत्नान्तरप्रोतमुक्ताहारभुजान्तरः ॥ ४२
- अप्रमेयैरभिनवैः आकल्पैः आत्महारिभिः ।  
तपनीयैश्चित्रवस्त्रैः चित्रैश्चीनांशुकैरपि ॥ ४३
- मालाभिरमलामोदमालाभिः मधुसूतिभिः ।  
अष्टात्मगर्भसन्दर्भैः अपारैश्च परिष्कृतः ॥ ४४
- आजानु चाविर्भवति पुरुषे सूकरात्मनि ।  
विच्छिन्ना क्षीरधाराऽभूत् धाराला तु प्रमादतः ॥ ४५
- तावान् प्रत्यक्षदृष्टः स तदधो न दृष्टश्यत ।  
पश्चादनेकविधया राजाऽपि द्रष्टुमक्षमः ॥ ४६
- प्रयत्नादप्रतीकारोऽतिष्ठत् तूष्णीं सतृष्णाधीः ।  
शुष्कजिह्वाकण्ठसृक्पिण्डोष्ठः सोष्णं विनिश्वसन् ॥ ४७
- विदीर्णमानसो मानी विविर्णाङ्गो विघूर्णितः ।  
एवं वृत्ते राज्ञि तदा भगवान् भूतभावनः ॥ ४८
- वराहरूपविभवः पुराणपुरुषोत्तमः ।  
उवाच वचनं श्रीमान् करुणापरिणामभूः ॥ ४९

## राज्ञानं प्रति भगवदुक्तिः

राजन् ! अलमलं व्यर्थप्रयत्नेनातिभूयसा ।

‘ एतावांस्तव दृश्योऽहं तदधो न नृपाधिप ! ॥ ५०

एतद्रूपं प्रतिष्ठाप्य शुद्धया शिल्या नृप ! ।

तस्मै देहखिलान् भोगान् पूर्णो भूत्वा सुपुष्कलान् ॥ ५१

अप्राकृताङ्गो विरजाः सात्त्विकोऽयमिति स्मरन् ।

वैखानसैर्महर्षिभिः अर्चय त्वं नराधिप ! ॥ ५२

पश्चान्मामप्नुयाः गच्छ साधु शाधि वसुन्धराम् । ’

एवमुक्त्वा कोलवपुः राज्ञोऽमूं काल्यापनाम् ॥ ५३

## श्रीवराहकृतकिन्नरमिथुनस्य किरातत्वनिर्मुक्तिः

किरातवपुषौ वीक्ष्य विष्णुः किन्नरदम्पती ।

मुनिशापान्मोचयित्वा ददौ ताभ्यां स्वकं पदम् ॥ ५४

## नृपस्य श्रीवराहप्रतिष्ठापूर्वकं स्वपुरगमनम्

ततश्चान्तर्दधे देवो वराहवपुरत वै ।

ततः पूर्णमना राजा दिव्यं त्वष्टारमाह्वयत् ॥ ५५

देवं निर्मापयामास मनसा विश्वकर्मणा ।

भूवराहशिशुं पूर्णं राजानं नाकवासिनाम् ॥ ५६

वाराहवपुषं शौरिं दण्डवत्प्रणिपत्य च ।

शिरस्यङ्गलिमाबध्नन् स्मरन्नाश्चर्यमीदृशम् ॥ ५७

जितेन्द्रियो जितक्रोधो जितप्रकृतिसंस्तरः ।

जितामित्रो जिताशेषो राजर्षिः स्वां पुरीं ययौ ॥ ५८

तदा प्रभृति देवेशो बराहवपुरात्मभूः ।

अनन्ताचलशृङ्गेऽन्तर्निक्षिप्ताङ्घ्रिसरोरुहः ॥

५०

देव्या वसुधया सार्धं स्वामिपुष्करिणीतटे ।

सुखमास्ते सुरेशानः सुखी रहसि सुन्दरः ॥

६०

### श्रीनिवामस्य स्वामितीर्थदक्षिणतीरवासवर्णनम्

श्रीनिवासोऽपि शेषाद्रौ ततः स्वामिसरस्तटे ।

निवसन्नात्मनः कुर्वन् अर्वाचीनान् सुखात्मनः ॥

६१

सच्चिदानन्दसन्दोहो वृद्धिक्षयविवर्जितः ।

कारुण्यपुण्यपदवीक्रमलकामुकः कविः ॥

६२

अभूमिरापदां भूमिः सम्पदां संविदुद्गमः ।

समस्तसामसङ्गीतसच्चरित्रः पवित्रहृत् ॥

६३

पुराणपुरुषो धाता पुरुषः तमसः परः ।

वैकुण्ठपूर्ववसतिं त्यक्त्वेदानीं हि तिष्ठति ॥

६४

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे

प्रियङ्गुगोप्तृकिरातसमीपं प्रति बराहागमन - श्रीबराहाविर्भावादिवर्णनं

नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ।



## अथ त्रिंशोऽध्यायः



## श्रीनृसिंहाचलस्थनीलकण्ठनपःक्षेत्रवर्णनम्

देवलः —

‘सञ्चस्करे सपर्यां क नीलकण्ठो महेश्वरः ।

वैकुण्ठस्यामुत्र गोत्रे नरकण्ठीरवाकृतेः ? ॥’

१

देवदर्शनः—

‘शृणु विप्र ! समाचक्षे पुरारातेः पुराविदः ।

चरितं चरितार्थानां योगिनां भोगसाधनम् ॥

२

अभीष्टफलदं रम्यं चतुर्वर्गफलप्रदम् ।

नरकेसरिणो विष्णोः परब्रह्मस्वरूपिणः ॥

३

प्रसादप्रसवप्राप्तिहेतुबन्धनिबन्धने ।

इत उत्तरभागे तु त्रिंशद्योजनसम्मिते ॥

४

प्रदेशे भीषणे रोमहर्षणे भूतभीषणे ।

कश्चित् क्षितिधरः कुक्षिकक्षक्षितिरुहोऽक्षयः ॥

५

त्र्यक्षाश्रमः पक्षियूथवासप्लक्षाक्षकोटरः ।

विशङ्कटतटारूढवृक्षगुल्मगुहा तमाः ॥

६

शृङ्गक्रोडगुहावासवैखानसवनेचरः ।

तुङ्गशृङ्गदरीनिर्यदोघनिर्मलनिर्झरः ॥

७

निर्झरापातपर्यन्तस्निग्धानोकह्वाटिकः ।

तप्तहाटकसङ्काशगैरिकाकीर्णकन्दरः ॥

८

भानूपलमुखोत्कीर्णचित्रभानुशिखाशतः ।

चन्द्रप्रभाभिन्नमुखचन्द्रकान्तसुधाद्रवः ॥

९

कण्ठीरवनखलुत्र्यत्कुञ्जरीकुम्भमौक्तिकः ।	
गलितैः मौक्तिकैः विष्वक् आकीर्णप्रस्थदुःस्थलः ॥	१०
माणिक्यधामन्यग्भूतरविमण्डलचण्डरुक् ।	
नानाविधमणित्रातमयूखोद्योतखस्थलः ॥	११
विद्रुमव्रततित्रातसंवृतान्तरकंदरः ।	
विकीर्णपद्मपाषाणपाटलस्थलकुट्टिमः ॥	१२
शृङ्गकोटीरसङ्गीतसंविवाद्यप्सरोगणः ।	
लताकुसुमसंकुप्तलीलालयनिवासिभिः ॥	१३
मिथुनैः किन्नराणां हि तालश्रुतिविकल्पनैः ।	
दिव्याविर्भावचरितं सङ्गायद्विरितस्ततः ॥	१४
अग्निष्ठितभृगुग्रान्तः प्रस्थगुञ्जाभिरञ्जितः ।	
गन्धर्वैः गर्वविभवैः गीतवाद्यविशारदैः ॥	१५
मन्द्रमध्योच्चमहितैः महितानेककन्दरः ।	
मार्तण्डमण्डलक्षिप्तस्फुरन्नयनमण्डलैः ॥	१६
पुण्डरीकसुहृच्चण्डमयूर्वर्मण्डलादिभिः ।	
तापसैः चण्डतेजोभिः मण्डितोच्छृङ्गकन्दरः ॥	१७
क्वचिद्भुमरुकोद्धूर्णत्करैर्योर्ध्वकेशकैः ।	
विघूर्णमाननयनैः मदस्वलितकायकैः ॥	१८
भैरवैः भैरवीभिश्च निविडाडम्बरैर्युतः ।	
देवानां पूर्वदेवानां सिद्धानां योगिनामपि ॥	१९
भूतानां योगिनीनाञ्च मातृणां यक्षरक्षसाम् ।	
अन्येषां देवयोनीनां आवासोपत्यकाश्रयः ॥	२०
ध्यायद्विश्च परं ब्रह्म क्वचित् योगासनस्थितैः ।	
योगिवर्यैः आर्यभावैः योगाभ्यासविचक्षणैः ॥	२१

एकायनैः एकभावैः आलक्षितगुहाक्षयः ।	
कृष्णसारपुरोयायिहरिणीकुलसङ्कुलः ॥	१२
परस्परपरित्यक्तवैरैः भीमैः मृगैः वृतः ।	
अप्रमेयप्रभावो यः प्रसिद्धः पर्वतोत्तमः ॥	१३
तस्य पर्वतवर्यस्य पुण्यारण्यसमीपतः ।	
प्रत्यग्रप्लुवैः कीर्णसुबिल्ववनवाटिकैः ॥	१४
प्लक्षैः रुद्राक्षवृक्षैश्च श्लक्ष्णैः सुश्लक्ष्णपर्णकैः ।	
अभ्रंलिहोर्ध्वशाखाग्रैः अज्ञातज्ञातसंज्ञिकैः ॥	१५
यज्ञशाखिमिराकीर्णं सङ्कीर्णं यज्ञवाटकैः ।	
अनोकहैः अविरलैः सरलैः सर्वतो वृतम् ॥	१६
समाश्रितार्तिहरणसानुच्छायं समन्ततः ।	
अहिर्बुध्न्यतपक्षेत्रं क्षेत्रक्षेत्रज्ञबन्धहृत् ॥	१७
नरकण्ठीरवस्थानं कण्ठीरवरवोद्धतम् ।	
भैरवाभैरवाश्चर्यं भूरिभीषणभीषणम् ॥	१८

### नीलकण्ठाश्रमस्थपुण्यपुष्करिणीवर्णनम्

पवित्रमत्र विपिने वैडूर्यविमलोदका ।	
काञ्चनाम्बुजकल्हारकमलेन्दीवरोत्कटा ॥	२९
प्लवमानप्लवा मीनमकरग्राहमण्डिता ।	
मरालमल्लमहिता कारण्डवकुलाकुला ॥	३०
तारातरलकल्लोलमाललोलान्तरालका ।	
उत्फुल्लकैरवा फुल्लपुण्डरीकपुरस्कृता ॥	३१
मकरन्दरसास्वादमाद्यद्वनवयोगणा ।	
त्रिमदोन्मत्तमातङ्गमदवार्याविलाऽमला ॥	३२

देवर्षिभिः तपस्यद्भिः राजप्योधैः महात्मभिः ।	
उपान्तपर्यन्तभुवि निवसद्भिः समन्ततः ॥	३३
तपोविमलविश्वाङ्गैः विशङ्कटतटोत्कटा ।	
मन्त्रं षण्णवतीभेदं जपद्भिर्नारसिंहकम् ॥	३४
निष्कलं सकलं मिश्रमाश्रितावनविश्रुतम् ।	
श्रीवत्साङ्गं नारसिंहगर्भागर्भकम्द्रुतम् ॥	३५
ज्ञानानन्दमयं ज्ञानगम्यं वैराम्यभोग्यकम् ।	
ध्यायद्भिस्तत् परं ब्रह्म अतीन्द्रियं विजितेन्द्रियैः ॥	३६
ब्रह्मर्षिभिः सेव्यमाना ब्रह्मभूयंगतैः सदा ।	
पुरुजिच्चरणस्पर्शपूता पुरुषपावनी ॥	३७
पुराणपुण्यभवनं पुरुषोत्तमपूर्तिदा ।	
पूर्वसेवापुरस्कारिपुंमण्डलपुरस्कृता ॥	३८
पुण्यपुष्करिणी स्वामिपुष्करिण्यात्मभूमिका ।	
दर्शनात् स्पर्शनात् पानात् सर्वेषां सर्वकामदा ॥	३९

### अश्मन्यग्रोधमूलस्थनीलकण्ठाश्रमवर्णनम्

तस्यास्तीरे महान् अश्मन्यग्रोधो गिरिकन्दरे ।	
शाखाशतैः परिच्छन्नदशाशाचक्रवालकैः ॥	४०
संवर्धितान्धतमसा स्वान्तध्वान्तमलापहः ।	
तापत्रयार्तमनसां जन्तूनां आर्तिहारकः ॥	४१
कल्पवृक्षप्रतिनिधिः निधिः निगमवर्चसाम् ।	
नराणामाश्रितवतां महापातकनाशनः ॥	४२
तस्योपलवटाख्यस्य मूले शूलिन आश्रमम् ।	
हरिणैः हरिणीभिश्च नारसिंहविवर्धितैः ॥	४३



समाध्यासितपर्यन्तभूतलं वृषमूर्तिभिः ।	
चण्डक्रमैः पुण्डरीकैः मण्डिताशान्तमण्डलैः ॥	४४
वैश्वामित्रैः कुशैः मुञ्जैः काशैश्चापि समावृतम् ।	
मन्दारकुन्दमाकन्दहरिचन्दनचन्दनैः ॥	४५
पाटलाशोकतिलककृतमाल्तमालकैः ।	
नक्तमालैः नालिकेरैः पनसैरसनैः धवैः ॥	४६
पुन्नागपूगरुद्राक्षवकुलाक्षहरीतकैः ।	
समन्ततः समच्छायं वन्यैः अन्यैः अनोकहैः ॥	४७
नन्द्यावर्तैः जातियूथीकरवीरातिवीरकैः ।	
शतपत्रैः दमनकमाधवीमालतीन्दुभिः ॥	४८
तुलसीभिः गन्धलताजातिभिः परितो वृतम् ।	
पञ्चभिः पारिजातादिपादपैश्च परिष्कृतम् ॥	४९
पवित्रेऽस्मिन् हरिक्षेत्रे हरिं नरहरिं हरः ।	
अभ्यर्चितुमनाः स्थाणुः आजगाम जगन्मयः ॥	५०

### नीलकण्ठकृतनृसिंहाराधनसङ्कल्पः

स्नात्वाऽस्यां पुण्यपूर्वायां पुष्करिण्यां पुरान्तकः ।	
हरो दिव्याम्बरधरो हरिचन्दनचर्चितः ॥	५१
सर्वर्तुकालोत्थफलमालशतपरिष्कृतः ।	
दिव्यैराभरणैः मुक्ताफलरत्नप्रवालकैः ॥	५२
समलङ्कृतसर्वाङ्गः तुङ्गमङ्गलसंयुतः ।	
कल्याणवेषकलितैः नन्दिप्रमुखकैर्गणैः ॥	५३
सेवितो भूतततिभिः सेवारसविशारदैः ।	
सितासितैः सारमेयैः दुर्वारैः प्रमथैः सह ॥	५४

नरसिंहसपर्यायाः प्रत्यूहप्रतिघातिना ।	
सेवितः क्षेत्रपालेन सुप्रसन्नो महेश्वरम् ॥	५५
परावराणां भूतानां स्रष्टारं परमेश्वरम् ।	
संहर्तारञ्च पापानां निग्रहीतारमच्युतम् ॥	५६
अनुग्रहीतारमीशं ईशानस्य तपःफलम् ।	
सकलं निष्कलं मिश्रं परस्मात् परमव्ययम् ॥	५७
लक्ष्मीनृसिंहं संहारनृसिंहं दिव्यसिंहकम् ।	
अखिलार्तिहरं वीरं उग्रं प्रत्यग्रविग्रहम् ॥	५८
शब्दब्रह्ममयं शब्दातीतं शब्दविजृम्भणम् ।	
अर्धब्रह्मवपुः पूतं पुराणं पुण्यपूरणम् ॥	५९
अव्याजमितं शत्रुघ्नं शरण्यं शरणात्मकम् ।	
भक्तार्तिभञ्जनपरं आत्मनामभयप्रदम् ॥	६०
सच्चिदानन्दसन्दोहं वृद्धिक्षयविवर्जितम् ।	
पूर्णषाड्गुण्यविभवं त्रैगुण्यविभवास्पदम् ॥	६१
श्रीवत्सलक्षणं सर्वं सर्वलक्षणलक्षितम् ।	
अप्रपञ्चं प्रपञ्चात्मप्रपञ्चितपराक्रमम् ॥	६२
विश्वेशं तत्परं ब्रह्म ध्यायन्नेकाग्रमानसः ।	
वसानः कृत्तिवसनं पौण्डरीकोत्तरच्छदः ॥	६३
पाञ्चरात्रविधानेन पञ्चकालपरायणः ।	
तस्योपलवटस्याधो नरकेसरिणः स्वयम् ॥	६४
सर्वलोकहितार्थाय सर्वावासस्य शार्ङ्गिणः ।	
सपर्यां सुकृती कर्तुं अग्निरेताः प्रचक्रमे ॥	६५

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
श्रीनृसिंहाचलस्थनीलकण्ठतपः क्षेत्रादिवर्णनं नाम त्रिंशोऽध्यायः



## नीलकण्ठकृतनृसिंहाराधनविधिः

देवदर्शनः—

श्रीकण्ठः शङ्करः शान्तो नरकण्ठीरवं महः ।	
वैकुण्ठं वैजयन्त्यादयमकुण्ठितमनाः सरन् ॥	१
सर्वलोकहिताकाङ्क्षी स्थाणुः स्वस्थात्ममानसः ।	
अस्मिन् न्यग्रोधमूलस्य मूले वैयाघ्रचर्मणि ॥	२
अगर्भसाग्रदर्भाग्र्यसन्दर्भाक्षतनिर्मिते ।	
पद्मासने समासीनः संयमी समदर्शनः ॥	३
कारुण्यार्णवकलोलोललीलाकुलेक्षया ।	
त्रीक्षण्या वीक्षयन् विष्वक् त्रिलोकीं त्रिपदाङ्किताम् ॥	४
तरुणादित्यकिरणसहोदरजटासटः ।	
नीलकण्ठः पशुपतिः श्रीकण्ठः परमेश्वरः ॥	५
कर्पद्वज्जूटकलितकमलरिरकलालयः ।	
विलयोदन्तवीरश्रीः इन्द्रकोष्प्रितिलोचनः ॥	६
जटाटवीलसद्गङ्गाशिरोमालाभिमण्डनः ।	
अष्टमूर्तिरनन्तात्मा विशिष्टविभवेष्टभूः ॥	७
शरन्निर्मलपूर्णेन्दुमण्डलाननमण्डलः ।	
उद्यत्संवर्तमार्ताण्डचण्डरुच्यङ्गमण्डनः ॥	८
पवित्रिताङ्गोऽहिर्बुध्न्यः चिकीर्षन् विश्वरक्षणम् ।	
दक्षिणामूर्तिरव्यग्रः समग्रद्रव्यसाधनः ॥	९
शत्रुविध्वंसकं ब्रह्म नृकेसरिकिशोरकम् ।	
निष्कलं सकलीकृत्य नित्याभ्यर्चनकामुकः ॥	१०

कारुण्यपुण्यपदवीमृड कात्यायनीसखः ।

चराचराणां सर्वेषां अमीषां मित्रमात्मनाम् ॥

११

आनन्दकन्दमहिमा बभूव भुवनेश्वरः ।

नीलकण्ठप्रतिष्ठित श्रीनृसिंहवर्णनम्

नृसिंहगर्भं सकलं शत्रुसादकरं परम् ॥

१२

त्रीक्षणीकोणसन्निर्यत्कृष्णवर्त्मशिखाजटम् ।

दंष्ट्राकोटिविटङ्काग्रनिस्सरद्वहिकीलकम् ॥

१३

ऊरूपरि समुत्ताननिपातितहिरण्यकम् ।

नखत्पुटितदैत्येन्द्रवक्षोविवरगह्वरम् ॥

१४

असुरासृक्कण्ठशिरोलुण्ठकानेकबाहुकम् ।

अनेकशस्त्रास्त्रधरानेकबाहुसहस्रकम् ॥

१५

घोराट्टहासनिनदविपाटितवियत्तटम् ।

भवद्भ्रव्यात्मकं ब्रह्म भासकं भक्तवत्सलम् ॥

१६

अतिभूतिप्रदं देवं विभवानन्ददायकम् ।

देवानां पूर्वदेवानां सामान्यमधिदैवतम् ॥

१७

रत्नप्रतानप्रत्युत्किरीटमकुटोज्ज्वलम् ।

द्युमणिप्रतिकाशाभ्यां कुण्डलाभ्यां विराजितम् ॥

१८

नवरत्नान्तरप्रोतमौक्तिकत्रिसरान्वितम् ।

पञ्चसप्तसरीभिश्च मण्डितोरुभुजान्तरम् ॥

१९

स्फुरत्कटककेयूरकङ्कणाङ्गुलिभूषणम् ।

उत्तरीयब्रह्मसूत्रोदरबन्धनबन्धुरम् ॥

२०

घण्टानिनादलुण्ठाकघण्टिकादामनादकम् ।

प्रपदप्रस्फुरद्रोचिर्मणिमञ्जीरहंसकम् ॥

२१

छिन्नवीरुत्समायुक्तकिङ्किणीपादशोभितम् ।	
प्रत्यग्रोत्फुल्लरक्ताब्जप्रतिमाङ्घ्रिकरस्थलम् ॥	२२
विचित्ररत्नखचितपीतकौशेयवाससम् ।	
सर्वर्तुकामोदयुक्तप्रसूनस्रगलङ्कृतम् ॥	२३
दिव्यसद्गन्धसन्दर्भगर्भारुणविलेपनम् ।	
अनेकवीनांशुकस्रगालेपालङ्कृताङ्गकम् ॥	२४
सेव्यमानं सुरश्रेष्ठपुरुहूतपुरोगमैः ।	
वृन्दारकैश्च मन्दारपुष्पाञ्जलिलसत्करैः ॥	२५
समन्ततः सेव्यमानं सनन्दसनकादिभिः ।	
सप्ततन्त्रीनादगर्भाथर्वश्रुतिविलासिना ॥	२६
उपवीणयताऽनन्तापदानं भक्तितो मया ।	
संस्तूयमानं गन्धर्वैः तुम्बुरुप्रमुखैः मुदा ॥	२७
पक्षीन्द्रविष्वक्सेनाभ्यां गणैस्तु कुमुदादिभिः ।	
रहस्सदात्मपर्यन्ते संवृतं परिचारकैः ॥	२८
परिबर्हाभूषणानि हेतिमिङ्गितवेदिनीम् ।	
दधतीभिः वैष्णवीभिः शक्तिभिः वृतमन्तिके ॥	२९
रौद्रीभिः शक्तिभिश्चैव ब्राह्मीभिः परितो वृतम् ।	
परमात्मानमात्मीयमात्मनामभयप्रदम् ॥	३०
सेव्यमानं सिद्धसङ्घैः सप्तलोकनिवासिभिः ।	
नरसिंहात्मकं ब्रह्म प्रतिष्ठाप्येह भूतले ॥	३१
सन्निधिं प्रार्थ्य सर्वेषां दृष्टादृष्टफलप्रदम् ।	
उपचारैः समभ्यर्च्य संस्कारैः संस्कृतो भवान् ॥	३२
परावराणां भूतानामीश्वरः स महेश्वरः ।	
समतिष्ठत सर्वात्मा कुर्वन् नयनमात्मनि ॥	३३

धर्मं भागवतं तत्र चरन् भगवतीसखः ।

पुराणे सुखमास्तेऽस्मिन् पुरारिः पुरुषः सदा ॥

२४

तस्मादयं नीलकण्ठः प्रसिद्धः सर्वतो महान् ।

जन्तूनामपि जीवातुः जङ्गमाजङ्गमात्मनाम् ॥

२५

श्रीनृसिंहमन्त्रिध्येन नीलकण्ठाश्रमस्याधिक्यवर्णनम्

पुण्यपुष्करिणी सेयं पुण्यापुण्यफलप्रदा ।

पुरुषार्थप्रदा पुंसां पुरारिप्रीतिपूरणी ॥

२६

नवमेतदहिर्बुध्यतपःक्षेत्रं पवित्रभूः ।

पुण्यारण्यं यत्र तप्तं तपः कोटिविधं भवेत् ॥

२७

असावत्रोपलब्धः पटुः पापविनाशने ।

सकृद्दर्शनमात्रेण सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥

२८

नरकण्ठीरवतनोः मन्दिरं त्विन्दिरापतेः ।

श्रीकण्ठार्चनतृप्तस्य वैकुण्ठस्य महात्मनः ॥

२९

सिंहाहार्यो हरः पापात् कृतशौचस्त्वहोबिले ।

नीलकण्ठाश्रम इति स्थानानि नृहरेः हंरेः ॥

४०

एतेषामपि पञ्चानां स्थानानां स्थानसोवितम् ।

स्थानमेतत् समुद्दिष्टं प्रथितं सुप्रतिष्ठितम् ॥

४१

नीलकण्ठाश्रमे सिंहमहीधरमहाह्वयम् ।

महिताश्चर्यमाहात्म्यभूमिः भूमिः निरागसाम् ॥

४२

पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम्

किञ्च वक्ष्यामि विप्रर्षे ! समाहितमनाः शृणु ।

प्राचीनबर्हिः हरिति श्रीनिवासगिरेः सरित् ॥

४३

प्रसृता प्रस्थतः स्वामिपुष्करिण्यविदूरतः ।	
विद्राविणी चावद्यानां निरवद्याऽतिभूमिदा ॥	४४
मायाविनो महाविष्णोः महामायासमाश्रयाः ।	
पुरा ज्ञातिवधं कृत्वा पाण्डवाः चण्डविक्रमाः ॥	४५
समेत्य यत्र तत्पापनुत्तये दीनमानसाः ।	
कालीयव्यालकालेन वासुदेवेन चोदिताः ॥	४६
सम्पूर्णमानसाश्चक्रुः आप्लवं निरुपप्लवाः ।	
मलप्रध्वंसिनीं मायां महिषासुरमर्दिनीम् ॥	४७
सम्पूज्य संस्तूयतेऽपि श्रीनिवासमधोक्षजम् ।	
अतीन्द्रियं समभ्यर्च्य स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	४८
निरेनसः शुद्धधियो ययुः तस्मात् यथागतम् ।	
विधिज्ञा विमलप्रज्ञा नानाज्ञानविलसिनः ॥	४९
अमूमुशान्ति सरितं तीर्थं पाण्डवमित्यतः ।	
पाश्चात् तस्याः पुष्करिण्या नारायणगिरिः महान् ॥	५०

### नागायणगिरिप्रभाववर्णनम्

यस्य दर्शनमात्रेण मुच्यन्ते जन्तवः स्वतः ।	
संवर्तोदितदुर्दर्शसहस्रविरणप्रभः ॥	५१
तेजः पुञ्जैरञ्जिताशः कञ्जविञ्जल्कपिञ्जरः ।	
पर्वताधिपतिस्तत्र सुखमास्ते सुरोत्तमः ॥	५२

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे  
नीलकण्ठाश्रमवर्णने नीलकण्ठकृतनृसिंहाराधनविध्यादिकवर्णनं  
नामैकत्रिंशोऽध्यायः

अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः

नारायणाद्रिस्थभैरवाख्यक्षेत्रपालकोदन्तः

देवः —

कुक्षायुक्षक्षितिभृतो दिव्यदेशस्य वैभवम् ।  
देवदर्शन ! माऽऽचक्ष्व वैष्णवं वैदिकर्षभ ! ॥ १

देवदर्शनः —

शृणु देव ! मेधाविन् समाहितमना मुने !  
कण्ठीरवगिरेर्वृत्तं वैकुण्ठवसतेरिदम् ॥ २  
वैकुण्ठादीन् दिव्यलोकान् सन्त्यज्य भगवान् स्वयम् ।  
मायावी तत्र रसिकः श्रीनिवासः परः पुमान् ॥ ३  
सर्वाऽऽवासः सहस्राक्षः परमात्मा सनातनः ।  
इच्छावृत्तप्रपञ्चोऽसौ हृषीकेशश्च केशवः ॥ ४  
तं देशं रक्षति सदा भैरवः परिचारकः ।  
असितैः सारमेयैश्च प्रमथैः मथितासुरैः ॥ ५  
काकोदरालङ्कृताङ्गस्फुरत्त्वङ्गकपालभृत् ।  
रवस्फूर्जद्भुमरुकत्रिशूलः शूलिभृत्यकः ॥ ६  
प्राचीने तस्य देशस्य स्थितोऽञ्जनगिरेस्तटे ।  
तरुणादित्यसङ्काशाऽखिलमीष्टफलप्रदा ॥ ७

गौर्या नारायणाद्रितपःकरणेन दुर्गात्वं - शिवार्धशरीरत्वप्राप्तिः

परिभूता पुरा गौरी दक्षयागे पुरारिणा ।  
अन्तर्हिताऽभूत् उद्वेगात् कपर्दी च तिरोदधे ॥ ८



आहर्तुकामा वामार्धं तनोस्तस्य हरस्य सा ।	
तपस्तप्तुमनास्तूर्णं आजगाम तटीमिमाम् ॥	९
समाहितमनास्तस्यां सा तेपे दुर्गमं तपः ।	
घोरेण तपसा तां तु “दुर्गे” त्यूचुर्महर्षयः ॥	१०
प्रीतः कपदीं दत्त्वाऽस्यै शरीरार्धं प्रसादतः ।	
अर्धनारीवपू रुद्रो ययौ सोऽपि यथागतम् ॥	११
पुरारिदयिता पुण्यपुरुषार्थफलप्रदा ।	
समीपे श्रीनिवासस्य सैषाऽञ्जनगिरेस्तटे ॥	१२

### अत्र्यादिपञ्चाशन्महर्षिप्रशंसितस्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम्

स्वामिपुष्करिणी तत्र पुराणी पुण्यपूरणी ।	
स्वर्भूपातालवासिन्याः त्रिस्रोतसः प्रसूतिभूः ॥	१३
त्रिविक्रमकृतो विष्णोः सपर्यायै यदात्मजा ।	
सुरज्येष्ठेन नियमात् कमण्डलुसमुद्भूता ॥	१४
यस्यास्तीरे च विन्दन्ति चतुर्वर्गान् अमीप्सितान् ।	
सुरा नराश्च तिर्यञ्चः प्रपञ्चीकृतकारणाः ॥	१५
माहात्म्यमूचिरे तस्याः परस्परमतीन्द्रियम् ।	
आप्नुता विमलप्रज्ञा मुनयो ब्रह्मवादिनः ॥	१६

अत्रिः —

जपं कुर्वन् अपां मध्ये ‘तद्विष्णोरि’ ति यः सकृत् ।	
स्वामिपुष्करिणीसातो मुच्यते पातकात्स तु ॥	१७

व्यासः —

अवगाह्य जले स्वामिपुष्करिण्याः समाहितः ।	
व्यापोह्य भ्रूणहत्याघमश्नुतेऽमीष्टसम्पदम् ॥	१८

वसिष्ठः—

यः स्नायाद्धारिणि स्वामिपुष्करिण्याः स्मरन् हरिम् ।  
सप्तजन्मकृतं पापं सहसा स व्यपोहति ॥ १९

पराशरः ---

यः करोत्याहुवं स्वामिसरसीजलमध्यतः ।  
सोऽतीत्य निरयं सर्वं ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ २०

गौतमः --

कीर्तयित्वा जलेऽन्यत्र 'स्वामिपुष्करिणी' ति यः ।  
स्नायाद्दद्यायन् श्रीनिवासं मुच्यते सोऽतिपातकात् ॥ २१

भरद्वाजः —

प्रातरुत्थाय ये प्राज्ञाः 'स्वामिपुष्करिणी' ति वै ।  
कीर्तयन्त्याहितात्मानः ते यान्ति परमं पदम् ॥ २२

मनुः —

स्वामिपुष्करिणीतीर्थजलं प्रीताः पिबन्ति ये ।  
तेऽपि निर्धूतपाप्मानो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ॥ २३

यमः —

स्वामिपुष्करिणीकूले नरा नक्तंदिवश्च ये ।  
वसन्त्यभोजनास्तेऽपि लभेरन् परमं पदम् ॥ २४

बाह्मवल्क्यः —

विगाह्य स्वामिसरसो जलं वीतक्लमा जनाः ।  
प्रार्थितं प्राप्नुयुः प्राज्ञाः प्रजापतिरुवाच ह ॥ २५

हारीतः —

हरिं स्मरन्तः कुर्वन्ति स्नानं स्वामिसरोजले ।  
वीतांहसो वीतनिद्रा विशन्ति विमलं पदम् ॥ २६

अङ्गिराः —

येऽनुतिष्ठन्त्यनुष्ठानं स्वामिपुष्करिणीजले ।  
अनेकजन्मजनितमेषामेनो विनश्यति ॥ २७

उशनाः—

उदीरयन्ति ये नित्यं ' स्वामिपुष्करिणी ' ति च ।

दुष्कर्मपङ्कं निर्धूयाऽऽनुवते तेऽपि सत्फलम् ॥ २८

संवर्तः—

ये कीर्तयन्ति सर्वत्र सदा स्वामिसरोवरम् ।

तेऽप्यवद्यं विनिर्धूय निरवद्या भवन्ति वै ॥ २९

अपस्तम्बः—

स्वामिपुष्करिणीतोये स्नानपानादिकर्म ये ।

कुर्वन्ति पापस्तम्भं ते परित्यज्याऽऽमुवन्ति सत् ॥ ३०

मरीचिः—

नारायणगिरेः प्रान्ते स्वामिपुष्करिणीतटे ।

यः किल्बिषी वसत्येकं दिनं निष्किल्बिषी भवेत् ॥ ३१

मृकण्डुः—

कण्ठीरवगिरेः कुक्षौ पक्षिराड्वाहहर्षके ।

यः सेवते स्वामिसरः स नरः सुरसङ्गतः ॥ ३२

पुलस्त्यः—

क्रोडे वेङ्कटशैलस्य सरः क्रोडाभिनन्दकम् ।

गायते यस्त्रिषवणं स नरः सर्वसम्मतः ॥ ३३

कालायनः—

वैकुण्ठस्य प्रीतिकरे कण्ठीरवगिरेस्तटे ।

स्वामिपुष्करिणीं योऽसौ सेवते स महान् भवेत् ॥ ३४

बृहस्पतिः—

कुञ्जेऽञ्जनगिरेः स्वामिपुष्करिण्यप्सु यो नरः ।

कृताह्वः सकृत् सत्यं कृतकृत्यो भवेन्नरः ॥ ३५

भृगुः—

प्रातरुत्थायानुदिनं स्वामिपुष्करिणीं स्मरन् ।

गोप्नो यो मासमासीत् गोप्रदानात् स शुद्ध्यति ॥ ३६

बाल्मीकिः ---

स्वामिपुष्करिणीतीरे यो वसत्युपपातकी ।  
मासं गोदानतः शुद्धो भवेत् नर इति श्रुतिः ॥ ३७

शङ्खनिःस्वतौ ---

पारे स्वामिसरो विद्वान् स्मार्तं श्रौतं करोति यः ।  
सहस्रधा कृतं तेनेत्युशान्ति ब्रह्मवादिनः ॥ ३८

शालातपः ---

हव्यकव्यात्मकं कर्म स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
वार्युषिः नास्तिको वाऽपि यः करोति स सत्फलः ॥ ३९

बाधायनः ---

स्वामिपुष्करिणीतीरनिवासी हरिमेघसः ।  
अश्वमेधादिकं यज्ञं यः करोति महेश्वरः ॥ ४०

मार्कण्डेयः ---

मृगराडद्रिकुहरे हरेरानन्ददायिनि ।  
कीर्तयन् स्वामिसरसीं नावसीदति मानवः ॥ ४१

माण्डव्यः ---

गोविन्दमन्दिरे स्वामिपुष्करिण्यास्तटे वसन् ।  
वासुदेवपरो मर्त्यो भवेद्वासवपूजितः ॥ ४२

शाण्डिल्यः ---

स्वामिपुष्करिणीतीरे पञ्चकालपरो वसन् ।  
अपञ्चत्वो भवेन्मुक्तः पञ्चोपनिषदात्मकः ॥ ४३

कश्यपः ---

यो नर स्वामिसरसि सरन् शौरिं कृताहवः ।  
कर्मनिर्मूलको धीरः कृतकृत्यो भवेत् स हि ॥ ४४

कण्वः ---

स्वामिपुष्करिणीतीर्थं यः पिबेत् चुलुकत्रयम् ।  
अहोरात्रकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥ ४५

अगस्त्यः —

इन्द्रियैः कर्मभिः ज्ञानैः मनसा सह यत्कृतम् ।  
आप्तवात् स्वामिसरसि तदेनः शुद्ध्यति क्षणात् ॥ ४६

दुर्वासाः —

कीर्तयेत् स्वामिसरसीं सह सर्वेन्द्रियैर्हि यः ।  
पूज्यते सिद्धसङ्घैः स सनन्दसनकादिभिः ॥

विश्वामित्रः —

पवित् स्वामिसरसि स्पृष्ट्वा तोयं निरेनसः ।  
विज्ञानसम्पदो विष्णुं द्रष्टुकामा भवन्ति हि ॥ ४८

शक्तिः —

पवित्रवन्तः परमाः पञ्चसन्मन्त्रविग्रहाः ।  
भवन्ति तेऽवगाहन्ते ये स्वामिसरसीजलम् ॥ ४९

शुकः —

स्वामिपुष्करिणी सैषा पुराणी पुण्यपूरणी ।  
सुरणाञ्च नराणाञ्च तिरश्चाञ्चात्मशोधिनी ॥ ५०

यस्यां कोलवपुर्भूत्वा श्रीनिवासः परः पुमान् ।  
देवीभिः शक्तिभिश्चैव क्रीडानुगुणभूतिभिः ॥ ५१

विचित्रविविधानेकशृङ्गयन्तधृतिक्रमैः ।  
जलक्रीडां वितनुते विश्वाप्यायकरीं सदा ॥ ५२

शौनकः —

सैषा हि स्वामिसरसी समञ्जसजगद्धिता ।  
कीर्तनस्नानपानैश्च तापत्रयनिवारिणी ॥ ५३

नारदः —

माधवानन्दजननी मदनज्वरमाधिनी ।  
मदयत्यात्मजातानि स्वामिपुष्करिणी ह्यसौ ॥ ५४

कतुः—

स्वामिपुष्करिणी सौम्या सोमपीथी सुरर्षभः ।  
यस्यामवभृथस्नानं कुरुतेऽद्यापि विश्वसूः ॥ ५५  
कुञ्जरारिगिरेः कुञ्जे व्यञ्जिताखिलभावनाः ।  
साधवः स्वामिसरसि स्नानात् संसारतारिताः ॥ ५६  
वेदप्रधाना विबुधा यस्यां स्नात्वा निरहंसः ।  
विष्णुं साक्षात्कर्तुंकामाः स्वामिपुष्करिणी हि सा ॥ ५७

मत्याषाढः—

आषाढानामाश्रमश्रीः आश्रमाचारशालिनाम् ।  
अन्येषां भूतिभूमिश्च सैषा स्वामिसरोऽभिधा ॥ ५८

कुण्डिनः—

कुहरे सिंहशैलस्य सरसी स्वामिपूर्विका ।  
शीलचारवतां नृणां अशीलनामपीष्टदा ॥ ५९

हारीतः—

जयन्ती चापदां भूमिः सम्पदां सर्वकामदा ।  
सरसी स्वाम्युपपदा सैषा विष्णुपदीजनिः ॥ ६०

जैमिनिः—

शिरस्यञ्जलिमाबध्नन् स्वामिपुष्करिणीं स्तुवन् ।  
स्मरन् हरिं स्वानुष्ठानं यः करोति स पुण्यभाक् ॥ ६१  
स्नानं सकृत् कुर्वते ये स्वामिपुष्करिणीजले ।  
हव्यकल्येषु ते योज्या नरा नारायणप्रियाः ॥ ६२

जाबालिः—

स्नानादन्येषु तोयेषु स्वामिपुष्करिणीं स्मरन् ।  
कृतकृत्यः कृतात्मा स मर्त्यः तत्फलमाप्नुयात् ॥ ६३

पितामहः—

स्वामिपुष्करिणीतीर्थपरिचर्यापरो हि यः ।  
समर्थो वैष्णवीं भूतिं मर्त्यत्वे समवाप्नुयात् ॥ ६४

सनकः—

यस्यास्तीरे निवसति श्रीनिवासः परात् परः ।

सा धन्या स्वामिसरसी सेवते तां य आत्मवान् ॥ ६५

सनन्दनः—

विष्णुपादोद्भवं ब्रह्मकरस्पर्शपवित्रितम् ।

पवित्रितेशानजटाजूटं स्वामिसरोजलम् ॥ ६६

सनत्कुमारः—

या पुनात्याप्लवात् सम्यग् भुवनानि चतुर्दश ।

स्वामिपुष्करिणी धन्या सा सर्वफलदायिनी ॥ ६७

षामदेवः—

सरांसि यानि दिव्यानि सन्ति त्रिजगतीतले ।

तेषामेषा स्वामिनी हि ' स्वामिपुष्करिणी ' त्यतः ॥ ६८

सनातनः—

ये नराः प्रातरुत्थाय तामिमां कीर्तयन्ति ते ।

स्वामिपुष्करिणीं भक्ता विशन्ति विमलं पदम् ॥ ६९

देवदर्शनः—

इत्यूचिवांसो विद्वांसः कृतकृत्या ह्यमर्षणाः ।

तस्यास्तीरे पुण्यभूमौ आसते मुनिपुङ्गवाः ॥ ७०

कचित् कदाचित् क्रीडार्थं दिव्यैः परिजनैः सह ।

शेषसेनेशगरुडप्रधानैः सेवितं शुभम् ॥ ७१

सेवमानाः श्रीनिवासं साक्षात् अक्षिपथं गतम् ।

चतुर्भुजमुदाराङ्गं अतसीगुच्छसच्छविम् ॥ ७२

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये देवलदेवदर्शनसंवादे

अव्यादिपञ्चाशन्महर्षिकृतस्वामिपुष्करिणीप्रशंसनं

नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः



दैत्योपद्रवज्ञापनार्थं ब्रह्मादीनां क्षीरमागरगमनम्

देवलः —

स्वामिपुष्करिणीकूले नारायणगिरेर्भृगौ ।  
आविर्भावः कथं विष्णोः श्रीनिवासस्य शार्ङ्गिणः ? ॥ १

देवदर्शनः —

शृणु ब्रह्मन् समाचक्षे समाहितमना मुने ! ।  
प्रश्नं सर्वाण्डगर्भस्य प्रादुर्भावात्मकं विभोः ॥ २  
पुरा दुर्मेधसा दैत्यप्रवरेणामरारिणा ।  
पीडिता रुद्रभक्तेन भृशं ब्रह्मादयः सुराः ॥ ३  
शान्ताग्निसदृशाः शुष्कवदनाः शोकविह्वलाः ।  
पराजिता जडात्मानः किंकर्तव्याविवेकिनः ॥ ४  
दैत्यारिं शरणं प्राप्तुं प्रयता यतमानसाः ।  
क्षीराब्धिं प्रापुरप्राप्तस्वावासाः तस्य शान्तये ॥ ५  
तुष्टुवुस्तल दैतेयविध्वंसनविचक्षणम् ।  
लक्ष्म्योपलक्षितं विष्णुं विश्वरक्षणदीक्षितम् ॥ ६

ब्रह्मादिकृतक्षीराब्धिर्शान्तयेस्तुतिः

देवाः —

ॐ नमो देवदेवाय पूर्वदेवाय खड्गिने ।  
श्रीवत्साङ्गाय च नमः परस्मै परमात्मने ॥ ७  
नमः परस्मै व्यूहोपव्यूहान्तरविभूतये ।  
विभवाय नमस्तस्मै विश्वान्तर्यामिणेऽणवे ॥ ८



अर्चावताराय नमोऽजन्मने जन्मभाजिने ।	
मायाविने जगत्स्रष्टे लक्ष्मीनारायणात्मने ॥	९
जगत्प्रत्यवरोहाय जगदानन्दिने नमः ।	
जगन्मङ्गलभूताय बाह्वीजनकाङ्घ्रये ॥	१०
जङ्गमाजङ्गमजगद्धातुः जननकारिणे ।	
जनार्दनाय जम्भारेः अनुजाय नमो नमः ॥	११
श्रियःपते ! नमस्तुभ्यं सभ्यसन्दोहसङ्गिने ।	
सदाविष्णो ! महाविष्णो ! विष्णोऽपारादिरूपिणे ॥	१२
नमो नलिननेत्राय नेत्रभूताय नाकिनाम् ।	
नारायणाय नाथाय नागभोगशयाय ते ॥	१३
विश्वेश्वराय विश्वाय विश्वातीताय ते नमः ।	
विश्वाध्यक्षाय वीशानवाहनायादिवेधसे ॥	१४
नित्याय निरवद्याय निराकाराय नीतये ।	
निस्सीमकल्याणगुणगणातीताय ते नमः ॥	१५
सच्चिदानन्दसन्दोह ! देहवृद्धिक्षयाक्षम ! ।	
अच्युतानन्त ! गोविन्द ! नमस्तुभ्यं महात्मने ॥	१६
अपारकरुणाम्बोधे ! निस्तरङ्गात्मनिश्चल ! ।	
लक्ष्मीविलक्षण ! विमो ! विचक्षण ! नमोऽस्तु ते ॥	१७
ऋत ! सत्य ! परब्रह्म ! कृष्ण ! पिङ्गलपूरुष ! ।	
ऊर्ध्वरेता ! विरूपाक्ष ! विश्वरूप ! नमोऽस्तु ते ॥	१८
नमो नमः कारणकारणाय नमो नमोऽनन्तमहाविभूतये ।	
नमो नमः शङ्करचापहारिणे नमो नमः शाश्वतशार्ङ्गधन्वने ॥	१९
नमोऽन्तरादित्यहिरण्यरूप ! नीरूप ! तुभ्यं पुरुषोत्तमाय ।	
नमो नमोभिः निगमान्तभूतैः कृतस्तुतप्रस्तुतभावनाय ॥	२०

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः २६७

प्रसीद पुण्डरीकाक्ष ! प्रसीद पुरुषोत्तम ! ।  
प्रसीद परमानन्द ! प्रसीद परमेश्वर ! ॥ २१  
प्रसीद कमलाकान्त ! प्रसीद करुणाकर ! ।  
प्रसीद भक्तातिहर ! प्रसीद विबुधर्षभ ! ॥ २२

ब्रह्मादीनां पुरतः क्षीरार्णवाल्लक्ष्मीसखीप्रादुर्भावः

देवदर्शनः—

देवमेवं स्तुतवतां देवानां महितात्मनाम् ।  
हिरण्यगर्भपूर्वाणां भविष्यद्भूतभाविनाम् ॥ २३  
प्रादुर्बभूव पुरतः क्षीराब्धेर्दुहितुः सखी ।  
पुण्डरीकनिभा सापि पुण्डरीकायतेक्षणा ॥ २४  
पुण्डरीकानना पुण्या पुण्डरीकाक्षशासनात् ।  
अखिलक्लेशहारिण्या व्याहारिण्यर्थसम्पदाम् ॥ २५  
सुधां स्रवन्त्या वाचा च बभाषे तान् दिवौकसः ।

लक्ष्मीसखीकथितभगवदावासज्ञापनपूर्वकाऽभयोक्तिः

‘स्वागतं भवतामस्तु कार्यसिद्धिश्च देवताः ! ॥ २६  
बाधा क्वचिदिदानीं किं ? सुरा दैत्यासुरैरपि ।  
तेषां तु निधनं कर्तुं ध्रुवमव्याजरक्षकः ॥ २७  
श्रीवत्सलक्षणः शार्ङ्गो दक्षिणो वश्च रक्षणे ।  
मा भैषीष्ट सुरा यूयं मा प्रत्यूहो भविष्यति ॥ २८  
अचिराद्भगवान् विष्णुः श्रीनिवासः स्वराड्विभुः ।  
प्रत्यक्षो भविता वश्च सर्वं सिद्धं समीहितम् ॥ २९  
आमोदादीन् दिव्यलोकान् सन्त्यज्य भगवान् हरिः ।  
इदानीं रमते लक्ष्म्या नारायणगिरेस्तटे ॥ ३०

स्वामिपुष्करिणीतीरे सर्वान्तर्याम्यधोजक्षः ।	
सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥	३१
तदितो दक्षिणं भागं भूमेर्गच्छत सत्वराः ।	
अविघ्नमस्तु वः कार्यं ब्रह्मेन्द्रत्रिदिवौकसः ! ॥ '	३२
इत्युक्त्वा तु सखी लक्ष्म्याः सहसाऽन्तर्दधेऽपि च ।	
तस्याः श्रुत्वा वचो विष्णुपत्नीसख्याः समाहिताः ॥	३३
प्रणम्य दण्डवद्देशं तं परीयुः प्रदक्षिणम् ।	
सम्प्रीतमानसा देवा सावधानाः ससम्भ्रमाः ।	
तस्मादक्षिणतो भूमिभागं गन्तुं प्रचक्रमुः ॥	३४

### ब्रह्मादीनां क्षीरार्णवाच्छ्रीनारायणाचलागमनम्

ततस्ते विबुधाः सर्वे परमेष्ठिपुरोगमाः ।	
भूयो नारायणगिरेः पादानाशिश्चिर्युर्मुदा ॥	३५
पुण्यातिपुण्यतोयानि सरांसि सरितश्च हि ।	
सेवमानाः कृतातिथ्याः सिद्धसङ्घैश्च तापसैः ॥	३६
मिथुनैः किन्नराणां हि लतागृहनिवासिभिः ।	
गीयमानानि गीतानि प्रादुर्भावात्मकानि च ॥	३७
मन्द्रमध्योच्चमहिममाधुरीधूर्वहाणि च ।	
शिलातलेषु शृण्वन्तः सर्पा येषु समाश्रिताः ॥	३८
सप्ततन्त्रीनादगर्भसप्तस्वरविभावनम् ।	
वेणुवीणामृदङ्गाढ्यं नवनाट्यरसान्वितम् ॥	३९
आविर्भावात्मकं कालश्रुतिकल्पितमूर्च्छनम् ।	
अप्सरोगणसङ्गीतं लोकयन्तोऽथ ते शनैः ।	
वीतक्लेशा वीतमोहाः विमलानन्दभावनाः ॥	४०

श्रीस्वामिपुष्करिणीतीर्ग्वर्णनम्

नारायणाद्रौ प्रापुश्च स्वामिपुष्करिणीतटम् ।	
क्रौञ्चैः कारण्डवैर्हंसैः सारसैः सरसस्वरैः ॥	४१
ताराभिश्च बलाकाभिः अन्यैर्वनवयोगणैः ।	
निबिडान्तरकल्लोलकोलाहलसमाकुलम् ।	४२
तमालैस्तिलकैः पूगैः नारिकेलैश्च पाटलैः ।	
केतकैः सुरपुत्रागैः पुत्रागैः पुत्रदीपकैः ॥	४३
जम्बीरैश्चम्पकैश्चूतैः लिकुचैः कुटजैर्वटैः ।	
मन्दारैः केसरैः श्वेतमन्दारैः हरिचन्दनैः ॥	४४
किंशुकाशोकसन्तानसालनीपहरीतकैः ।	
श्रीवृक्षैश्चन्दनैर्विल्वैः कदलीभिश्च दाडिमैः ॥	४५
मातुलङ्गैः कुरवकैः कुन्दैः आमलजम्बुभिः ।	
समन्ततः समाकीर्णं सान्द्रच्छायैश्च भूरुहैः ॥	४६
वीरुद्विर्दमनीभिश्च माधवीमालतीधवैः ।	
फलपुष्पद्रुमैः फुल्लैः मल्लिकावनजातिभिः ॥	४७
जातीभिः शतपत्रीभिः वराभिः विष्णुपर्णकैः ।	
तुलसी कृष्णतुलसी वलक्षतुलसीशतैः ॥	४८
नन्द्यावर्तैस्त्रिसन्दीभिः जपाभिः करवीरकैः ।	
शृङ्गबेरैर्हरिद्राभिः कर्पूरैः रजनीकुलैः ॥	४९
पनसैरार्द्रपनसैः अनेकैः कन्दजातिभिः ।	
पुण्यगन्धं विरन्तीभिः लताततिभिरावृतम् ॥	५०
कल्हारकमलानीकमधुमत्तमधुव्रतैः ।	
कूजद्भिः कोकिलैश्चापि मदान्धैः महितान्तरम् ॥	५१

समाश्रितार्तिहरणसान्द्रच्छायं समन्ततः ।

तत्र स्थित्वा मुहूर्तं ते ब्रह्माद्या देवतागणाः ॥

५२

**कमलान्युत्तथा ब्रह्मादिकृतश्रीनिवाससाक्षात्कारोद्योगः**

क्षीराब्धिकन्यासरल्यास्तु संस्मरन्तो वचः शुभम् ।

श्रियःश्रियं श्रीनिवासं श्रीवत्सकृतलक्षणम् ॥

५३

श्रीकण्ठकृतकैङ्कर्यं श्रीमहीमहितं हितम् ।

एकमेकायनविदमेकान्तहृदयालयम् ॥

५४

द्वितीयान्नायनिष्ठानामात्मनामात्मभूतिदम् ।

त्रिमूर्तिमन्निगुणकं त्रिविधात्मककालकम् ॥

५५

चतुर्भूतिधरं शान्तं चतुर्विंशतिमूर्तिकम् ।

चतुर्धाऽवस्थातिभूमिं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥

५६

पञ्चोपनिषदात्मानं पञ्चरात्रप्रवर्तकम् ।

पञ्चाथर्वशिरोरत्नं पञ्चमूर्तिधरं परम् ॥

५७

षडध्वमयचक्रस्थषट्कोटिगृहमेधिनम् ।

सप्तार्चिःपञ्चरावासहस्रं परमहंसकम् ॥

५८

अष्टाङ्गयोगवित्सिद्धसंघहृत्पद्मवासकम् ।

दशावतारचतुरं दशाननशिरच्छिदम् ॥

५९

चरमोपायसुगमं चराचरगुरुं हरिम् ।

गङ्गाजन्मगृहाङ्गुष्ठपादपङ्कजवैभवम् ॥

६०

प्रणतार्तिहरं प्राज्ञं प्रणवार्णप्रभावकम् ।

प्रसादमात्रप्रभवप्रमामात्रप्रमाणकम् ॥

६१

अव्याजमितं शत्रुघ्नं शरण्यं शरणार्थिनाम् ।

ज्ञानशक्तिबलैश्वर्यवीर्यतेजोविजृम्भितम् ॥

६२

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

२७१

रजस्तमस्सत्त्वसङ्घविमोहितजगत्त्रयम् ।

संसृष्टिस्थितिसंहारनिग्रहानुग्रहात्मकम् ॥

६३

भक्तानामप्यभक्तानां चिन्तनान्मोक्षकारणम् ।

नादान्तगगनावासं शुद्धं सूक्ष्मं निरञ्जनम् ॥

६४

निरवद्यं निराकारं निराबाधं निरामयम् ।

निराश्रयं निस्तरङ्गनीरराशिनिभं विभुम् ॥

६५

अतीन्द्रियं परं ब्रह्म चेन्द्रियैः स्पण्डुमिच्छवः ।

व्यूहात्मकमिदं सूक्तं सुपर्वाणः समुत्सुकाः ।

उदात्तमुच्चैरुच्चैरुः सम्प्लुतं निरुपप्लवाः ॥

६६

शेषाद्रौ श्रीनिवामसाक्षात्काराय ब्रह्मादिकृतस्तुतिः

“ जितं ते पुण्डरीकाक्ष ! नमस्ते विश्वभावन ! ।

नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ! ॥

६७

नमः श्रीधामनिलय ! नमः श्रीवत्सलक्षण ! ।

नमस्त्रिधात्मने तुभ्यं नमः श्रीधनमोहन ! ॥

६८

नाकौकः प्रत्यनीकारे नारायण नमोऽस्तु ते ।

नागपर्यङ्कशयन अनाथनाथ नमो नमः ॥

६९

विश्वस्रष्टे विश्वभर्ते विश्वत्रात्रे विचक्षण ।

विश्वान्तर्यामिणे तुभ्यं विश्वोत्तीर्ण विभो नमः ॥ ”

७०

स्वामिपुष्करिणीतीरे स्तुतिप्रसन्नभगवद्विमानाविर्भावः

एवमुच्चरतां तेषां हर्षोत्फुल्लास्यचक्षुषाम् ।

अग्रे सुधान्धसां व्यग्रमनसां सम्पदार्थिनाम् ॥

७१

न्यक्कृताविलतेजस्कं चक्षुर्हारि समीक्षितम् ।	
पश्चिमे स्वामिसरसस्तीरे प्रत्यग्रविग्रहम् ॥	७२
विमानमाविर्बभूव विमलानन्दकारकम् ।	
दिव्यदुन्दुभिनिर्घोषजयशब्दसमन्वितम् ॥	७३
द्योतयच्च दिशः सर्वाः पुष्पवृष्टिपुर सरम् ।	
तद्दीक्ष्यानिमिषाः सर्वे विमानं विस्मयान्विताः ।	
अभितुष्टुवुरात्मेशं श्रीनिवासं समञ्जसम् ॥	७४

ब्रह्मादिकृतविमानमध्यगतश्रीनिवासस्तुतिः

जय श्रियःपते विष्णो जय सत्याच्युतानिशम् ।	
जयाऽनिरुद्ध भगवन् जय पूरुषपूर्वज ॥	७५
जयेश सर्वजगतां जय श्रीकण्ठपूजित ।	
जयाऽऽत्मेश्वर जीवातो जय त्वमपराजित ॥	७६

श्री श्रीनिवासाविर्भावः

स्तुत्याऽनया प्रसन्नोऽस्मिन् विमाने परमः स्वराट् ।	
सहस्रादित्यसङ्काशः सहस्रेन्दुसमप्रभः ॥	७७
सहस्रहुतभुक्प्रसूयो विख्यातविभवोदयः ।	
चतुर्भुजः शङ्खचक्रवरावनतहस्तकः ॥	७८
श्रीवत्सकौस्तुभोरस्को वैजयन्त्या विराजितः ।	
उद्यत्प्रचण्डमार्ताण्डप्रतीकाशकिरीटकः ॥	७९
माणिक्यकण्ठहारश्रीवीरपट्टविराजितः ।	
कर्णपालीसमालम्बिमकराननकुण्डलः ॥	८०
हारकेयूरकटकङ्कणाङ्गदसुन्दरः ।	
अङ्गुलीयच्छन्नकरोदरबन्धनशोभितः ॥	८१

प्रबालमुक्ताप्रत्युत्तनवरत्नसुदामकः ।	
शृङ्खलाबद्धकौक्षेयकिङ्किणीककटिस्थलः ॥	८२
पीतकौशेयवसनो दीप्तमञ्जीरहंसकः ।	
किङ्किणीदामाङ्गुलीयविराजितपदाम्बुजः ॥	८३
सर्वाभरणसंयुक्तः सर्वावयवसुन्दरः ।	
पुण्डरीकविशालाक्षः पुष्पदामविराजितः ॥	८४
अष्टाङ्गैर्धूपकैर्दिव्याऽलेपनैः पुण्यगन्धिमिः ।	
सम्यक्स्थानाङ्कितः श्रीः पूर्णचन्द्रनिभाननः ॥	८५
अप्राकृताङ्गमहिमा प्राकृताङ्गविडम्बनः ।	
प्रादुर्बभूव भगवान् भक्तभावाऽत्मकः पुमान् ॥	८६

ब्रह्मादीन् प्रति भगवत्कृतकुशलप्रश्नः

ईषदुत्सयमानस्तु गीर्वाणान् वीक्ष्य विस्मितान् ।	
बभाषे च सुरश्रेष्ठः पूर्वान् पूर्वविदात्मभूः ॥	८७

श्रीभगवान्—

कच्चिद्देवाः स्वागतं वः सहस्राक्षपुरोगमाः ।	
पितामहं पुरस्कृत्य किमर्थं यूयमगाताः ॥	८८
कच्चित्प्रायेण बाध्यध्वे ध्रुवमव्याजशत्रुभिः ।	
एवमुक्ते हृषीकेशो केशवे केशिमर्दने ॥	८९

भगवते ब्रह्मकृतलोकोपद्रवकार्यसुरोदन्तविज्ञापनम्

प्रत्यूचे विबुधश्रेष्ठः प्रणिपत्य पितामहः ।	
जागरूकेऽत्र भवति भगवन् ! भक्तवत्सले ॥	९०
सर्वत्रारिष्टमापन्नं त्वदधीना वयं हि तत् ।	
किं वाऽकुशलमस्माकं जीवितं कञ्जलोचन ! ॥	९१



इन्द्रादयो लोकपाल विवर्णवदना इमे ।	
स्वपदप्रच्युता दुःस्थाः स्वस्था न प्रचकाशिरे ॥	९२
दैवतानाममीषां तु भीतिविह्वलचेतसाम् ।	
नक्तं दिवं न चेरुश्च विमानानि वियत्तले ॥	९३
एते हि द्वादशादित्याः तमोविध्वस्तदीप्तयः ।	
ग्रस्ता इव तमोभिस्तु न बभुः विगतप्रभाः ॥	९४
अष्टौ वसुगणाः प्रायो नासत्यौ द्वौ च नाकिनौ ।	
बभासिरे न वीताभाः प्रणष्टवसुका इव ॥	९५
मम लोके निवासश्च दुःस्थितोऽस्वस्थचेतसः ।	
कैलासवासो रुद्रस्य महाक्लेशकरोऽभवत् ॥	९६
स्वकृतिव्रीडया सोऽपि तलैव व्यवतिष्ठते ।	
कश्चिन्निदानमेतेषां तृणीकृतजगत्रयः ॥	९७
अमरारिरिति ख्यातो दैतेयेन्द्रो महेन्द्रजित् ।	
शिपिविष्टं समुद्दिश्य दुर्विनीतगणाधिपम् ॥	९८
घोराकारो घोरतरं चकारातिचिरं तपः ।	
तपसा तेन सन्तुष्टः पिनाकी स च तामसः ॥	९९
अजध्यत्वमवध्यत्वमरैरमराधिपैः ।	
अन्यैरतिबलैश्चैव तस्मै दुर्मेधसे ददौ ॥	१००
अमरारिर्दिविषदां अन्येषाञ्च सतामरिः ।	
दुष्टात्मा दुष्टचेताः स त्रिषु लोकेषु चेष्टते ॥	१०१
विशेषतो देववर्गान् दरिद्रान् दीनमानसान् ।	
दिवानिशं सदा क्रूरः तदाप्रभृति बाधते ॥	१०२
दैत्यारिर्देवतामित्रं शार्ङ्गं खड्गी च चक्रभृत् ।	
देवः प्रमाणं सर्वेषामन्तर्यामी भवान् स्वतः ॥	१०३

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

२७५

नमस्ते कमलकान्त नमः कमललोचन ! ।

नमः कारुण्यपुण्यश्रीः नमः कालात्मक ! प्रभो ! ॥

१०४

अर्दितानसुरेन्द्रेण दुर्हृदा चामरारिणा ।

अस्माननेकविधया भवान् रक्षतु रक्षतु ।

इति ब्रुवाणे गीर्वाणगणे श्रेयोभिः शंसिनि ॥

१०५

ब्रह्मादिप्रार्थनया भगवदुक्ताभयोक्तिः

शरत्प्रत्यग्रफुल्लाब्जवक्त्राभे परमेष्ठिनि ।

कारुण्यामृतवाराशिकलोलामृतलील्या ॥

१०६

वीक्षया वीक्ष्य विश्वात्मा विध्वस्तजरयाऽऽदरात् ।

उवाच भगवान् विष्णुः स्मयमानमुखाम्बुजः ॥

१०७

दन्तपङ्क्तिद्युतिज्योत्स्नास्रपिताऽशान्तरालकः ।

‘ मा बिभ्यतु भवन्तोऽहं करिष्ये तत्प्रतिक्रियाम् ॥

१०८

स्वस्मिन् स्वस्मिन् पदे यूयं स्थातारोऽनार्तमेव च ।

वध्य एव त्ववध्यत्वं प्राप्तवानपि शूलिनः ॥

१०९

रक्षोगणसंहाराय भगवत्कृतकुमुदाक्षनियोजनम्

अमरारिरमुष्यास्तु त्रिलोक्या दुष्टकण्टकः ।

इत्युक्त्वा तान् सुरगणान् सुप्रसन्नः सुरर्षभः ॥

११०

इङ्गिताकारचेष्टाङ्गमिन्दिरारमणः प्रभुः ।

कुमुदाक्षं गणाध्यक्षं गदापाणिमुदैक्षत ॥

१११

श्रीवत्सकौस्तुभाभ्याञ्च ऋते सारूप्यसम्पदम् ।

विष्वक्सेनाभिधानञ्च सेनापत्यं प्रदाय च ॥

११२

नियुज्य तं तस्य वधेऽमरारातेः गणाधिपम् ।

देवान् सम्भाष्य सहसा सर्वान् स्वपदकाङ्क्षिणः ॥

११३

- भगवनो ब्रह्मादिप्रेषणपूर्वकमन्तर्धानम्  
 कृत्वाऽभयप्रदानञ्च दत्त्वाऽऽशिषमनेकशः ।  
 सयमानमुखः श्रीमान् अच्युतस्तु तिरोदधे ॥ ११४
- ततो देवा देवदेवाभिहितं वचनं हितम् ।  
 श्रुत्वा प्रीत्या प्रणम्यैतं देशमुद्दिश्य चोर्जितम् ॥ ११५
- शिरस्यञ्जलिपुञ्जानप्याबघ्नन्तः सुधान्वसः ।  
 प्रदक्षिणं परिक्रम्य ययुः संहृष्टमानसाः ॥ ११६
- श्रीनिवासावासस्थलस्य सर्वफलप्रदत्ववर्णनम्  
 इति देवार्थमित्रस्य सर्वान्तर्यामिणो विभोः ।  
 आविर्भावो मयाऽऽख्यातः श्रीनिवासस्य देव ! ॥ ११७
- शृण्वतां पठताञ्चैव चतुर्वर्गफलप्रदः ।  
 एतद्वै वैष्णवं क्षेत्रं पवित्रं चित्रवैभवम् ॥ ११८
- अनायासेन जगतामभीष्टफलदायकम् ।  
 मुक्तिभाजां मुमुक्षूणां लक्ष्मीवैभवकाङ्क्षिणाम् ॥ ११९
- किन्नराणां नराणाञ्च सुराणां सुखशालिनाम् ।  
 भूतानां भूतयोनीनां भैरवानैरवात्मनाम् ॥ १२०
- परमैकान्तिनां पञ्चकालकल्मषितात्मनाम् ।  
 पञ्चशाखाथर्वविदां पञ्चोपनिषदात्मनाम् ॥ १२१
- नित्यानां नियमस्थानां निवासो योगिनामपि ।  
 माहात्म्यमस्य देशस्य वक्तुं वर्षशतैरपि ।  
 अशक्यं देव ! भवान् कृतकृत्यः शुचिश्रवाः ॥ १२२
- श्री श्रीनिवासावतारदेशकालनिर्णयः  
 इत्थमात्मभुवः कल्पे हार्दाम्भोजभुवो हरेः ।  
 आदौ कृतयुगे जम्बूद्वीपे भारतवर्षके ॥ १२३

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः २७७

गङ्गाया दक्षिणे भागे योजनानां शतद्वये ।	
पञ्चयोजनमात्रे तु पूर्वाम्भोधेस्तु पश्चिमे ॥	१२४
मासे भाद्रपदे विष्णुतिथौ विष्णुसमन्विते ।	
सिद्धयोगे सोमवारे गिरौ नारायणाऽह्वये ॥	१२५
स्वामिपुष्करिणीतीरे पश्चिमे भूत्यपश्चिमे ।	
वृन्दारकाणां वृन्दैस्तु प्रार्थितो लोकरक्षकः ॥	१२६
आविर्बभूव भगवान् श्रीनिवासः परः पुमान् ।	
श्रीनिवासाय महते निष्कलानिष्कलात्मने ।	
नमोऽस्तु पद्मनेत्राय पवित्रायादिवेधसे ॥	१२७

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीश्रीनिवासाविर्भाववर्णनं  
नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ।

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

पद्मसरोवरमाहात्म्यम्

देवल.

देवदर्शन ! भूयोऽपि श्रोतुं कौतूहलं हि मे ।	
पद्माख्यसरसो ब्रह्मन् ! माहात्म्यं जन्म मे वद ॥	१
यस्मिंस्तपस्यतो वैयासकेः सिद्धिरुपागता ।	
शुक्स्तु मुक्त इति वै प्रसिद्धिः जगतीतले ॥	२
ब्रह्मलोकादागतो यः शुकोऽन्यो वा वदस्व मे ।	
कृपां मयि कुरुष्वद्य वद सर्वज्ञ मे गुरो ! ॥	३

देवदर्शनः—

भृगुपादाहतिकुपिताया लक्ष्म्याः कपिलालयगमनम्

- शृणु पद्माख्यसरस उत्पत्तिं देवलाद्य भोः ! ।  
 भृगोः ख्यात्यां समुत्पन्ना श्रीः पूर्वं धर्मनायक ! ॥ ४  
 भृगुपादाहतस्यास्य विष्णोः वैकुण्ठवासिनः ।  
 विप्रपादरजःस्पृष्टा कुपिता कपिलाऽलयम् ॥ ५  
 गत्वा पातालमूलं सा मुनिना तेन पूजिता ।  
 श्रीमता सा हि तेनैव कपिलेन कृताऽलया ॥ ६  
 पूजिता च चिरं कालं तत्र वासं तदाऽकरोत् ।  
 धरणी सहितो विष्णुः लीलया धृतचामरः ॥ ७

लक्ष्म्यन्वेषणार्थं धरातलं प्रति भगवदागमनम्

- तं मुनिं पूजयित्वाऽथ भृगुं ब्रह्मर्षिसत्तमम् ।  
 नीलां निःक्षिप्य वैकुण्ठे भूदेव्या भूमिमागतः ॥ ८  
 शङ्खचक्रगदाकुन्तपाणिः पद्मदलेक्षणः ।  
 श्रीदेव्यन्वेषणं कुर्वन् नानारूपी जनार्दनः ॥ ९  
 षट्पञ्चाशत्सु देशेषु विचिन्वन् पुरुषोत्तमः ।  
 कोल्हापुरं समागम्य श्रियोऽधिष्ठानमुत्तमम् ॥ १०  
 तलाफश्यन्महालक्ष्मीं अर्चरूपेण राजतीम् ।  
 अगस्त्याराधितां पूर्वं प्रतिष्ठाप्याऽलयोत्तमे ॥ ११  
 तां दृष्ट्वा तत्र देवेशो महितां मुनिसत्तमैः ।  
 अर्चयंश्च स्वयं विष्णुः उवास दशवत्सरान् ॥ १२

श्रीकोल्हापुरवासिलक्ष्मीमर्चयन्तं भगवन्तं प्रत्यशरीरोक्तिः

- अथाब्रवीत्तदा विष्णुं अशरीरा सरस्वती ।  
 विष्णो ! प्रसीद भगवन् ! लक्ष्मीदर्शनलालसः ॥ १३

इतो दक्षिणतो गच्छ कृष्णावेप्योश्च दक्षिणे ।	
द्वाविंशद्योजने विष्णो ! सुवर्णमुखरी नदी ॥	१४
तीरमासाद्य तस्यास्त्वं उत्तरं मुनिसेवितम् ।	
कुन्तेनाऽहत्य तत्तीरे सरः कृत्वा तपः कुरु ॥	१५
आहत्य देवलोकान्त्वं सुवर्णकमलानि च ।	
संस्थाप्य तस्मिन् सरसि सर्वाणि कमलानि च ॥	१६
तत्तीरे पुष्पजातीश्च पुष्पवृक्षशतानि च ।	
पद्मारामे च सरसि पद्मायाः पद्मवल्लभ ! ॥	१७
जपन्नेकाक्षरमनुं सहस्राक्षरमेव वा ।	
अर्चयन् कमलैः पद्मां द्वादशाब्दं वस प्रभो ! ॥	१८
ततः प्रसन्ना सा देवी स्वयमाविर्भविष्यति ।	
सुवर्णकमले देव ! सुवर्णकमलाकृतिः ॥	१९
ऊनषोडशवर्षा सा श्रीः पद्मनयना तव ।	
गच्छ शीघ्रमितो विष्णो ! सुवर्णमुखरीतटम् ॥	२०

### शेषाचलाध्वना राजरूपस्य भगवतः सुवर्णमुखरीतीरागमनम्

इति सौम्यं वचः श्रुत्वा विष्णुराकाशसम्भवम् ।	
जगाम गरुडाऽरूढः सुवर्णमुखरीतटम् ॥	२१
पश्यंश्च विविधान् देशान् पर्वतांश्च वनानि च ।	
वराहाधिष्ठितं पुण्यं अञ्जनाद्रिं सुरारिहा ॥	२२
स्वामिपुष्करिणीं दृष्ट्वा भूवराहस्य सन्निधौ ।	
गरुडादवतीर्यासौ स्नात्वा स्वामिसरोजले ॥	२३
वैखानसैश्च मुनिभिः आतिथ्येन सुपूजितः ।	
न ज्ञातो राजरूपेण मुनिभिः पुरुषोत्तमः ॥	२४

ययौ प्रातः समुत्थाय मुनीनामन्त्यू तान् विभुः ।	
अश्वरूपन्तु गरुडमारुह्य पुरुषोत्तमः ॥	२५
गदाकुन्तधरो देवो गिरेर्दक्षिणतो व्रजन् ।	
सुवर्णपङ्कजाकीर्णा सुवर्णमुखरीं हरिः ॥	२६
दृष्ट्वा सविस्मयो भूत्वा गरुडादवरुह्य च ।	
तत्र पुण्ये समे देशे कुन्तेनाऽहृत्य भूतलम् ॥	२७

### भगवत्कृतपद्मसरोवरनिर्माणप्रकारः

गोकर्णमात्रविस्तारं चकार रुचिरं सरः ।	
स्मृत्वा वायुं समाहूय तमुवाच महामनाः ॥	२८
इन्द्रस्यानुमते वायो रुक्मपद्मानि चाह्र ।	
स्थापयिष्यामि सरसि लक्ष्मीपूजाविधौ मरुत् ! ॥	२९
तच्छ्रुत्वा वायुराहैनं अस्यां नद्यां हि सन्ति वै ।	
काञ्चनानि च पद्मानि किमर्थं सुरलोकतः ॥	३०

श्रीभगवान् —

कोल्हापुरे महावाणी ब्रह्मरीराऽब्रवीत्पुरा ।	
देवलोकात्समानीय काञ्चनाब्जानि चार्चय ॥	३१
इति मामब्रवीद्वायो ! तस्मादानय मेऽम्बुजम् ।	
गत्वा लोकं ततो वायुरिन्द्रलोकादुदारधीः ॥	३२
देवेन्द्रानुमतेः शीघ्रमानयामास तानि वै ।	
काञ्चनाब्जानि निःक्षिप्य तस्मिन् सरसि माधवः ॥	३३

### पद्मविकासनैरन्तर्याम्यं भगवत्कृतसूर्यनागयणप्रतिष्ठा

विष्णुः सूर्यं प्रतिष्ठाप्य प्राञ्जुखं सरसस्तटे ।	
अर्चयन् पङ्कजाधीशं कमलाऽऽवाप्तये विभुः ॥	३४

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः २८१

शक्तिपूर्वं श्रियो वीजं कामबीजमतः परम् ।  
आद्यन्तप्रणवोपेतमक्षरत्रयसम्पुटम् ॥ ३५

लक्ष्मीमन्त्रोपासनपूर्वकभगवन्कृततपोविधिः

त्रिसहस्रं जपन्नित्यं दशांशं तर्पयन् विभुः ।  
अर्चयन् पद्मसाहस्रैः दिव्यैः काञ्चनसम्भवैः ॥ ३६  
तर्पयन् पद्मसरसो रसेनोषसि माधवः ।  
क्षीराहारो यताहारो लक्ष्म्याराधनतत्परः ॥ ३७  
तद्भानुसन्निधौ तीरे पश्चिमाभिमुखो विभुः ।  
दीक्षां विवेश देवेशो द्वादशाब्दमनन्यधीः ॥ ३८

नृपशङ्कया भगवत्तपोभङ्गायेन्द्रादिकृतरम्भादिप्रेषणम्

एवं स्थिते महाविष्णौ श्रीकांक्षिणि समाहिते ।  
इन्द्रादिदेवाः संक्षुब्धा मायामोहसमन्विताः ॥ ३९  
भूपतेः पार्थिवेन्द्रस्य विष्णोर्मानुषरूपिणः ।  
विघ्नञ्च तपसः कर्तुं उद्यमं चक्रुरुद्धताः ॥ ४०  
आहूयाप्सरसः सर्वाः प्रोचुः सेन्द्रा दिवौकसः ।  
यूयं गच्छत भूलोकं अञ्जनोद्रेः समीपतः ॥ ४१  
सुवर्णमुखरी नाम नदी मुनिनिषेविता ।  
तस्या एवोत्तरे तीरे कुम्भयोनेः महाऽऽश्रमः ॥ ४२  
तदाश्रमात्पूर्वभागे कश्चिद्राजा तपस्यति ।  
कनकाब्जसरस्तीरे पुरस्ताद्भास्करस्य च ॥ ४३  
तैलोक्यलक्ष्मीमाकाङ्क्षन् मायावी स चतुर्भुजः ।  
क्षोभयध्वं नृत्यगीतैः अन्यैः शृङ्गारचेष्टितैः ॥ ४४



### राजवेषभृद्भगवत्तपोवनं प्रति इन्द्रप्रेषितरम्भाद्यागमनम्

इति देवैः समादिष्टाः सर्वा ह्यप्सरसां वराः ।	
वसन्तकामसहिता जम्मुः पद्मसरोवरम् ॥	४५
अवतीर्णो वसन्तस्तु जजृम्भे तद्वने भृशम् ।	
चूतकिंशुकमन्दारकर्णिकारासनोज्ज्वलैः ॥	४६
कोकिलैर्भृङ्गराजैश्च शोभितैः विविधैः खगैः ।	
रम्ये वने तपस्यन्तं पुरुषं सुमगाकृतिम् ॥	४७
दृष्ट्वा चतुर्भुजं चित्रं मोहिताश्चाप्सरोगणाः ।	
जगुः कलञ्च ननृतुः तदग्रे ता वराङ्गनाः ॥	४८
कल्हारशीतलो वायुः चाल्यन् पुष्पवाटिकाम् ।	
ववौ मलयसम्भूतो मलयन् वनवासिनः ॥	४९

### स्वाश्रमागताप्सरोगवञ्चनार्थं भगवत्कृतमायानिर्माणम्

एतस्मिन्नन्तरे विष्णुः किञ्चिदुन्मील्य चक्षुषी ।	
मायामन्यां विसृजे तासां सम्मोहनाय वै ॥	५०
तां विष्णुमायां वीक्ष्यैव विवशा विनताननाः ।	
स तु पद्मानि सञ्चिन्वन् चचार सरसीजले ॥	५१
यथापूर्वं पूजयंश्च निर्विकारो निरञ्जनः ।	
तं दृष्ट्वा निर्विकारं ता विकर्तुं पुरुषोत्तमम् ॥	५२
अशक्ता जम्पुराकाशं विष्णुमायाविमोहिताः ।	
तां मायां भगवानाह 'लोकपूज्या भविष्यसि ॥	५३
इक्षुचापासिचक्रवज्जपुष्पबाणधरा सती ।	
चतुर्वर्गप्रदा पुंसां पर्णक्षीरादिपूजिता ' ॥	५४

इत्यादिश्य च तां देवीं अर्चयामास पद्मिनीम् ।

एवं तपस्यतस्तस्य द्वादशाब्दा गता द्विज ॥

५५

### पद्मसरोवरात् लक्ष्मीप्रादुर्भावः

ततस्त्रयोदशे वर्षे कार्तिके शुक्लपक्षके ।

पञ्चम्यां शुक्रवारे च मुहूर्ते मन्त्रसंज्ञके ॥

५६

ववुः पुण्याः सुखा वाता उत्तराषाढतारके ।

प्रसन्नं सलिलं सर्वं त्रैलोक्यान्तर्गतं द्विज ॥

५७

सुप्रभो भानुमानासीत् प्रसन्नानि मनांसि च ।

ततःपद्मसरोमध्ये तेजोराशिः महानभूत् ॥

५८

बालभानुसहस्राभः सुवर्णसदृशच्छविः ।

तन्मध्ये काञ्चनैः पद्मैः निर्मितो रथ उत्तमः ॥

५९

पद्मिभिर्धृतपार्श्वश्च चतुर्भिर्मदगन्धिभिः ।

तन्मध्ये काञ्चने पद्मे सहस्रदलशोभिते ॥

६०

तत्पद्मकर्णिकामध्ये पद्माऽसनसमन्विता ।

पद्महस्ता पद्मनेत्री रक्तपद्मपदद्वया ॥

६१

सुवर्णपद्ममुकुलद्वयशोभिकुचानता ।

स्मेरपद्मरजोगन्धिसमुच्छ्वासमुखाम्बुजा ॥

६२

बिम्बाधरसुसंवृद्धस्मितशोभिसुधारसा ।

सम्पल्लक्ष्मीसमावासविशालनयनद्वया ॥

६३

सर्वरत्नसमुत्क्षिप्तजाम्बूनदविभूषणा ।

कर्णिकोत्पलताटङ्कमौक्तिकालकबन्धना ॥

६४

आमुक्तमुक्तामकुटकटकाङ्गदकङ्कणा ।

विद्युत्पुञ्जप्रतीकाशविचित्राम्बरचित्रिता ॥

६५

मन्दसिता मनोज्ञाङ्गी माधवं वीक्ष्य सादरम् ।	
कल्हारमालामादाय यक्षकर्दमलेपनाम् ॥	६६
सुगन्धितुलसीदूर्वामधूककमलोत्पलाम् ।	
स्थिता पद्मरथे देवी देवं वीक्ष्य चतुर्भुजम् ॥	६७
ततो देवगणाः सर्वे वादयन् देवदुन्दुभीः ।	
शङ्खानापूरयामासुः वीणाश्च मुमुचुः स्वरान् ॥	६८
षड्जादीन् समतालेन गन्धर्वा ललितं जगुः ।	
ननृतुर्दिव्याप्सरसः सुस्वरं गीतलालसाः ॥	६९
तूर्यघोषेण महता कृत्स्नमापूरितं जगत् ।	
तेन घोषेण विज्ञाय श्रियः प्रत्यक्षतां विधिः ॥	७०

### लक्ष्म्यवतारदर्शनार्थं पद्मसरस्तीरं प्रति ब्रह्माद्यागमनम्

हंसारूढः सहमुनिः ब्रह्मा तत्र समाययौ ।	
कैलासात् शङ्करश्चापि गौरीगणसमन्वितः ॥	७
इन्द्रः शच्या लोकपालैः श्रुत्वा शङ्खध्वनिं ययौ ।	
वसिष्ठाद्याश्च मुनयः सनकाद्याश्च योगिनः ॥	७२
काञ्चनाब्जसरस्तीरं पद्मनाभाश्रमं ययुः ।	
सर्वलोकेश्वरीं तत्र श्रियं पद्मरथस्थिताम् ॥	७३
दृष्ट्वा विद्याधराः सर्वे पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ।	
विस्मिताः सस्मिताः सर्वे देवास्तस्थुश्च सस्पृहाः ॥	७४
दैतेया दानवाश्चापि नागाः पातालवासिनः ।	
सामिल्येण रमां वीक्ष्य स्थिता मदनमोहिताः ॥	७५
मामाश्रयेन्मामाश्रयेत् प्रत्येकं मेनिरे हृदि ।	
इति तेषु सरस्त्वेव देवदानवभोगिषु ॥	७६

लक्ष्मीकृतमालार्पणपूर्वकभगवद्वरणम्

उत्थाय सस्मिता लक्ष्मीः आगत्य हरिमञ्जसा ।	
कल्हारमालामुन्मुच्य विष्णोः कण्ठे समर्प्य च ॥	७७
आलिङ्ग्य तं चतुर्बाहुं सर्वलोकान् व्यलोकयत् ।	
हरिवक्षःप्रतिष्ठायाः श्रियो दृष्ट्यञ्चलेक्षिताः ॥	७८
स्वस्वाधिकारान् सम्प्रापुः देवदानवयोगिनः ।	
श्रिया समेतो भगवान् कृतार्थः कमलापतिः ॥	७९

भगवतः पद्मसरोवरवरदानपूर्वकं शेषाचलगमनम्

पाद्मं सरः समीक्ष्याथ वरं तस्मै ददौ हरिः ।	
‘ हे सरस्तव ! तीरेऽस्मिन् पद्मकान्तस्य भास्वतः ॥	८०
तपः कुर्वन्नहं पद्माभासवानसि शाश्वतीम् ।	
तस्मात्त्वमद्यप्रभृति ‘ पद्मवापी ’ ति नामतः ॥	८१
‘ पाद्मं ’ ‘ पद्मसर ’ श्रेति पद्माप्रीतिकरं भुवि ।	
त्रिलोकीप्रथितं भूया हृद्देशकमलालयः ” ॥	८२
इत्युक्त्वा गरुडेशानमधिरुह्य रमासखः ।	
भोगिराजगिरिं गत्वा स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	८३

नारदाद्यष्टमहर्षिप्रशंसितपद्मसरोवरमाहात्म्यम्

रमते रमयैकान्ते रमणीये श्रियः पतिः ।	
तं दृष्ट्वा मुनयः सर्वे प्रशशंसुः सरोवरम् ॥	८४

नारदः—

यः पद्मसरसि स्नातः सप्तजन्माघनाशने ।	
श्रियमाप्नोति विमलं श्रियःपतिरिवामलः ॥	८५

वसिष्ठः—

रुक्माब्जसरसि स्नातो रुक्मनद्यास्तटोद्भवे ।  
कोटिजन्मकृतैः पापैः मुच्यते श्रियमाप्नुयात् ॥ ८६

मरीचिः—

सुवर्णमुखरीकूले स्नातः पद्मसरोवरे ।  
महापातकयुक्तो यः स मुच्येतांहसः क्षणात् ॥ ८७

अत्रिः—

अत्र पद्मसरः स्नातो यो रुक्मतटिनीतटे ।  
स सर्वपापनिर्मुक्तः श्रियमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ८८

अङ्गिराः—

अष्टराज्यस्तु यो राजा स्नात्यस्मिन् मण्डले यमी ।  
पद्माकराख्ये सरसि स राज्यं प्राप्नुयाच्छ्रियम् ॥ ८९

पुलस्त्यः—

विप्रो यः पद्मसरसि त्रात्यो मन्त्रविवर्जितः ।  
सोऽपि पूतस्त्रिषवणात् दिनेनैकेन शुध्यति ॥ ९०

पुलः—

वैश्यो यो वञ्चनाजीवी व्यवहारविशारदः ।  
स पद्मसरसि स्नात्वा राजा भवति धार्मिकः ॥ ९१

कटुः—

शूद्रस्त्वाचारविभ्रष्टो देवब्राह्मणदूषकः ।  
स पद्मसरसि स्नात्वा पूतो वैश्यो भविष्यति ॥ ९२

देवदर्शनः—

इति प्रस्तूय मुनयो ययुस्ते स्वाश्रमान्मुने ।  
उत्पत्तिः पद्मसरसस्तवोक्ता देवलामल ॥ ९३

### शुकचरित्रवर्णनम्

इतः परं शुकोत्पत्तिं वदामि शृणु देवल ! ।	
पुरा शुको ब्रह्मचारी साक्षाद्वैयासकिः महान् ॥	०४
लब्ध्वा ब्रह्मोपदेशन्तु रुद्रात् ज्ञानी बभूव ह ।	
तपःसिद्धो जगामैव पश्यन् ब्रह्मात्मकं जगत् ॥	०५
एवं जगौ च सततं ज्ञानोन्मत्तः स बालवत् ।	
ऊनषोडशवर्षोऽसौ साक्षात्कृष्ण इवोज्ज्वलः ॥	०६
माता च कमला देवी पिता देवो जनार्दनः ।	
बान्धवा विष्णुभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम् ॥	०७
इत्युक्त्वा व्यासमुन्मुच्य भानुं प्रति जगाम ह ।	
गच्छन्तं शुकमालोक्य तीव्रांशोश्च समीपतः ॥	०८
व्यासः पुत्रेति चुक्रोश पुत्रेति च पुनः पुनः ।	
आलोक्याथ शुकं भानुः उवाच प्रणयात् वदुम् ॥	०९
हे वटो ! गच्छ भूलोकमपुत्रस्त्वमवाकिञ्छराः ।	
मुक्तः पितृव्रणात्पुत्रं उत्पाद्याऽगच्छ शीघ्रतः ॥	१००
अपुत्रस्य गतिर्नास्ति तपः कृत्वाऽपि भूतले ।	
यज्ञं कृत्वाऽपि लोकार्थी स्वर्गं नैवाऽप्नुयात्पुमान् ॥	१०१

### छायाशुकोत्पत्तिः

इति भानुवचः श्रुत्वा शुको ध्यात्वा जनार्दनम् ।	
आत्मच्छायामधःशीर्षामसृजत्त्वात्मपूरुषम् ॥	१०२
छायाशुकश्च तं कृत्वा स्वात्मपुत्रमिवाऽत्मवान् ।	
‘पितुर्मे शोकनाशं त्वं कुरु पुत्रत्वमागतः’ ॥	१०३

इत्युक्त्वा भानुमालोक्य विवृतं तत्पथं गतः ।	
छायाशुकः समागत्य व्यासं क्रोशन्तमात्मजम् ॥	१०४
नमस्कृत्य पितुः पादौ श्रुत्वा भागवतं सुधीः ।	
कृत्वा वैवाहिकं कर्म पुत्रानुत्पाद्य पुण्यधीः ॥	१०५
पुराणं श्रीभागवतं प्रतिष्ठाप्यावनौ सुधीः ।	
कृष्णप्रसादात्स शुक ऋषित्वञ्च प्रपद्य च ॥	१०६
सशरीरो ब्रह्मलोकं गत्वा प्रीतो वसन् सुधीः ।	
श्रीवेङ्कटाद्रिमाहात्म्यं श्रुत्वा पद्मसरोवरम् ॥	१०७
प्राप्य कृत्वा तपस्तीव्रं सरोऽम्बुजदलैः सृजन् ।	
ससभ्यान्मानसान् पुद्गानष्टोत्तरशतं द्विजान् ॥	१०८
तानध्याप्य ब्रह्मविद्यां तैः सहाद्रिं गतो मुनिः ।	
मासि भाद्रपदे पुण्ये ब्रह्मणा निर्मितोत्सवे ॥	१०९
वर्तमाने श्रीनिवाससेवार्थं व्यासपुत्रकः ।	
उत्सवे वाहनान् कृत्वा शतमष्टोत्तरान् द्विजान् ॥	११०
उत्सवान्ते चावभृथे श्रवणक्षौ प्रसन्नधीः ।	
स्नात्वा च स्वामिसरसि तौर्द्विजैः कमलोद्भवैः ॥	१११
सभायां वेङ्कटेशस्य वाहकार्थं व्यजिज्ञपत् ।	
स्वनाम्ना यत्पुरं देव ! मया क्लृप्तं सुरेश्वर ॥	११२
तत्क्षेत्रसम्भवं सत्यं जीवितं श्रीपते ! कुरु ।	
सेवां कुर्वन्त्वाप्रलयं वाहका उत्सवेषु ते ॥	११३
श्रुत्वा मुनिवचो देवः श्रीनिवासस्तथाऽस्त्विति ।	
छायाशुकस्यात्मजानां सभ्यानां जीवमब्रवीत् ॥	११४
ब्रह्मलोकं जिगमिषुः पुनः छायाशुको मुनिः ।	
कृष्णञ्च बल्लभद्रञ्च भानुं पद्मसरोवरम् ॥	११५

श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः २८९

प्रदक्षिणीकृत्य शुकः स्थीयतामिति चात्मजान् ।

भरद्वाजादिषड्गोत्रान् शतमष्टोत्तरं सुधीः ।

सभ्यान् सभासदः पाद्मान् उक्त्वाऽऽकाशं जगाम ह ॥ ११६

देवदर्शनः—

उक्तं पद्मसरोजन्म छायाशुकमुनेरपि ।

सभार्हाणां द्विजातीनां शुकमानसजन्मनाम् ॥ ११७

देवलः—

देवदर्शन! सर्वज्ञ! कृतार्थोऽस्मि नतोऽस्मि ते ।

नास्ति श्रोतव्यमेतस्मात् संशयो विगतो मम ॥ ११८

हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीपाद्मपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

देवलदेवदर्शनसंवादे पद्मसरोवरमाहात्म्यादिवर्णनं

नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥

इति श्रीपाद्मपुराणान्तर्गत वेङ्कटाचलमाहात्म्यं

सम्पूर्णम् ॥



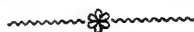


श्रीरस्तु

श्रीश्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः

श्रियै श्रीपद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्



( श्रीगारुडपुराणान्नर्गतम् )

— : \* : —

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।

श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

श्रीवेङ्कटाद्रिनिलयः कमलाकामुकः पुमान् ।

अभङ्गुरविभृतिर्नः तरङ्गयतु मङ्गलम् ॥

हरिः ॐ

त्रिषष्टितमोऽध्यायः



वसिष्ठं प्रति श्रीवेङ्कटाद्रिमाहात्म्यश्रवणेच्छुरुन्धतीप्रश्नः

श्रीगारुडः—

अरुन्धती समस्तानामङ्गनानां पतिव्रता ।

पतिं स्वं परिपप्रच्छ लोकानां हितकाम्यया ॥

१

अरुन्धती :—

‘ ब्रह्मात्मज ! नमस्तुभ्यमिदं विज्ञापनं शृणु ।

“ पतिशुश्रूषणादन्यः स्त्रीणां धर्मो न विद्यते ॥

२

न यागयोगौ न तपो न तीर्थं न सुरार्चनम् ।

सर्वधर्माधिकं स्त्रीणां पत्युरेव प्रहर्षणम् ” ॥

३

इति श्रुतं मया त्वत्तः ऋषिभ्योऽन्येभ्य एव च !	
तथाऽपि जायते प्रीतिः मम काचित् गरीयसी ॥	४
विष्णुक्षेत्रे क्वचित् पुण्ये तीर्थे सर्वातिशायिनि ।	
कञ्चित्कालं तपः कृत्वा विष्णुमुद्दिश्य यत्नतः ॥	५
विष्णोर्मुखेन सद्धर्मं वाचयित्वा जगत्कृते ।	
सर्वधर्मोत्तमं नृणां दर्शयामीति मे मतिः ॥	६
अनुज्ञया स्त्रियो भर्तुः धर्माचरणमुत्तमम् ।	
विष्णुक्षेत्रं तादृशं मे वद तीर्थोत्तमं तथा ' ॥	७

गरुडः —

अरुन्धत्या पृष्ठ इत्थं वसिष्ठो वाक्यमब्रवीत् ।	
' सम्यक् पृष्ठमिदं देवि ! सर्वलोकहितेच्छया ॥	८
तथा वदामि शृणु मे यथा हृत् संप्रहृष्यति ।	
श्रोतर्यप्रतिपत्तौ तु वक्तुर्वाक्यं तथा भवेत् ॥	९
यथाऽन्धे भर्तरि स्त्रीणां सौन्दर्यं सकलं वृथा ।	
सावधानमना भूत्वा शृणु तस्माद्वचो मम ॥	१०

### वसिष्ठवर्णिन श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

सुवर्णमुखरीतीरे कश्चिदस्ति महीधरः ।	
वेङ्कटाचलनामाऽसौ सर्वभूभृत्कुलोत्तमः ॥	११
अतिप्रीतिर्महाविष्णोः तत्र वेङ्कटभूधरे ।	
श्वेतद्वीपाच्च वैकुण्ठात् भानुमण्डलमध्यतः ॥	१२
यन्नाम कीर्तयित्वाऽपि सर्वपापक्षयो भवेत् ।	
समस्तश्रेयसां सिद्धिः तादृशो वेङ्कटाचलः ॥	१३

यस्मै वेङ्कटशैलाय नमस्कृत्यापि दूरतः ।	
सर्वपापैः प्रमुच्येत तत्पुण्यं क्षेत्रमुत्तमम् ॥	१४
तत्र स्वामिसरो नाम तीर्थमेकं विराजते ।	
तत्पश्चिमे भूमिकोलः तटे राजति देवराट् ॥	१५
श्रीमद्वराहदेवस्य वेङ्कटाचलवासिनः ।	
न मया शक्यते वक्तुं महिमा बहुहायनैः ॥	१६
दक्षिणे स्वामितीर्थस्य तीरे नीरजलोचनः ।	
श्रीवेङ्कटेशो भक्तानां वरदः श्रीनिकेतनः ॥	१७
निवसत्यच्युतो नित्यं सुलभः सर्वदेहिनाम् ।	
तस्य सेवामपेक्षन्ते ब्रह्मरुद्रादिदेवताः ॥	१८
तस्य वेङ्कटशैलस्य सन्ति नामान्यनेकशः ।	
कीर्तनात्पापहारीणि श्रेयोदानि शृणुष्व मे ॥	१९
“ अञ्जनाद्रिः शेषगिरिः वृषाद्रिः वृषभाचलः ।	
नारायणाद्रिः सिंहाद्रिः श्रीशैलः सिंहभूधरः ” ॥	२०
एवमादीनि नामानि यः कीर्तयति मानवः ।	
प्रातःकाले प्रतिदिनं तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥	२१
तस्मिन् श्रीवेङ्कटाधीशे भक्तिमन्तः कलौ युगे ।	
मनोरथान् प्राप्नुवन्ति मनुष्या भाग्यशालिनः ॥	२२

श्रीवेङ्कटाचलस्थ - आकाशगङ्गा - पापनाशन - तुम्बुतीर्थप्रशंसा

उत्तरे स्वामितीर्थस्य वियद्गङ्गा विराजते ।	
तस्या माहात्म्यमतुलं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥	२३
ततः पापविनाशाख्य उत्तरे तीर्थनायकः ।	
ज्ञानेन तत्र नश्यन्ति पापानि विविधान्यपि ॥	२४

तत उत्तर ऐशाने भागे गिरिवनान्तरे ।	
तुम्बुतीर्थमिति ख्यातः कश्चिदस्ति वरानने ॥	२५
अनेकवृक्षविततिसिंहशार्दूलसंयुतः ।	
निम्नोन्नतस्थले तत्र प्रकृष्टः तीर्थनायकः ॥	२६
देवगन्धर्वमुनयः तुम्बुतीर्थे कृतप्लवाः ।	
कृतार्था अभवन् पूर्वमिति मे ब्रह्मणः श्रुतम् ॥	२७
स्वामिपुष्करिणीं गत्वा स्नात्वा तत्र यथाविधि ।	
आदिपोत्रिणमालोक्य वेङ्कटेशे कृताऽऽनतिः ॥	२८
आकाशगङ्गातीर्थे च पापनाशे कृताऽऽप्लवा ।	
तत्र गत्वा तुम्बुतीर्थे स्नात्वा निर्मलमानसा ॥	२९
प्राञ्जुखी त्वं स्थिता भूत्वा तपः कु 'र्वित्यचोदयत् ।	
वसिष्ठेनाभ्यनुज्ञाताऽरुन्धती तं प्रणम्य च ॥	३०

वसिष्ठोत्तथा अरुन्धत्यास्तुम्बुतीर्थे तपःकरणाय शेषाचलागमनम्

आगत्य वेङ्कटाधस्तात् कपिलख्ये सरोवरे ।	
कृत्वा स्नानं तदाऽऽरुह्य वेङ्कटाद्रितटे शुभे ॥	३१
कृतस्नाना स्वामितीर्थे भूवराहं प्रणम्य च ।	
श्रीनिवासं वेङ्कटेशं नमस्कृत्यास्य सन्निधौ ॥	३२
प्रार्थयामास ' भगवन् ! परिपाल्य मां हरे ! ।	
तपः करोम्यहं तुम्बुतीर्थं गत्वा कृपानिधे ॥	३३
तत्र त्वं रमया सार्धं सन्निधेऽह्यचिरेण मे ' ।	
इति विज्ञाप्य गगनगङ्गां पापविनाशिनीम् ॥	३४
गत्वा तत्र निमज्ज्याशु तुम्बुतीर्थमुपागमत् ।	
स्मरन्ती भर्तृवचनं तत्र स्नात्वा विधानतः ॥	३५

पतिप्रोक्तं विष्णुमन्त्रं जपन्ती तपसि स्थिता ।	
वयस्या सुमतिर्नाम शुश्रूषामकरोत्सदा ॥	३६
द्वादशाब्दं तपश्चक्रे निराहारा यतव्रता ।	
देवगन्धर्वमुनयः तां दृष्ट्वा तपसि स्थिताम् ॥	३७
आश्चर्यमाश्चर्यमिति ब्रुवाणा मुदमाययुः ।	
तस्यास्तपस्सुप्रसन्नः प्रादुरासीत् परः पुमान् ॥	३८

### अरुन्धतीसमीपे भगवदाविर्भावः

फाल्गुने मासि पौर्णिम्यां मीने भास्वति भास्वति ।	
तदा ब्रह्मादयो देवा ऋषयो व्यासपूर्वकाः ॥	३९
सनन्दसनकाद्याश्च योगिनः सर्व एव हि ।	
मुनिपत्न्यो देवपत्न्यः समीयुः सङ्घशो मुने ॥	४०
अरुन्धती महाभागा लक्ष्म्याऽऽलिङ्गितवक्षसम् ।	
दृष्ट्वा हरिं वेङ्कटेशं प्रणनाम मुदाऽन्विता ॥	४१
तां दृष्ट्वा प्रणतां विष्णुः इदमाह दयानिधिः ।	
‘ उत्तिष्ठारुन्धतीदेवि ! तपसा क्लेशवत्यसि ॥	४२
तवेप्सितमहं दास्ये वरं वरय सुव्रते ’ ।	
सुप्रीतं तं विदित्वा सा तुष्टावाञ्जनशैलपम् ॥	४३

### अरुन्धतीकृतभगवत्स्तुतिः

अरुन्धती :—

‘ नमस्तुभ्यं महादेव ! नारायण ! कृपानिधे ! ।	
पाहि मां फणिशैलेश ! भक्तबन्धो ! दयानिधे ! ॥	४४
न जाने वेङ्कटाधीश लक्ष्मीनायक केशव ! ।	
त्वां विना सर्वलोकानां दृष्टादृष्टफलप्रदम् ॥	४५

यस्योरस्यनिशं विभाति जगती सौभाग्यधात्री रमा  
धत्ते यस्य पदावनेजनजलं मूर्ध्ना पुरारिः सदा ।

श्रीमद्वेङ्कटशैलनित्यनिलयं देवोत्तमं त्वां विना  
दृष्टादृष्टफलप्रदं किमपरं दृष्टं क्षितौ दैवतम् ' ॥ ४६

इति स्तुत्वा पुनः प्राह शेषशैलगिखामणिम् ।  
'यदि प्रीतिः मत्तपसा तव शेषाद्रिवैभवम् ॥ ४७

तुम्बुतीर्थस्य माहात्म्यं वद लोकोपकारकम् ।  
वसिष्ठपत्न्येति पृष्टः प्राह वेङ्कटवैभवम् ।  
शृण्वत्सु सर्वलोकेषु ब्रह्मादिषु सुरेषु च ॥ ४८

भगवद्वर्णितवेङ्कटाचलतुम्बुतीर्थमाहात्म्यानि

श्रीनिवासः -

'शृण्वरुन्धति ! मद्वाक्यं सर्वलोकोपकारकम् ।  
वेङ्कटाद्रौ स्वामितीर्थं वेङ्कटेशे च ये मयि ॥ ४९

भक्तिमन्तः प्रजैश्वर्याऽऽयुष्मन्तश्च भवन्ति ते ।  
वेङ्कटाद्रिस्वामितीर्थमन्नामानि च कुर्वते ॥ ५०

पुत्राणां ते पुनः सर्वसम्पदामेकभाजनम् ।  
'श्रीवेङ्कटेशे'ति सदा वाचि पञ्चाक्षरं यदि ॥ ५१

ब्रह्मादीनाञ्च सर्वेषां वन्द्या एव न संशयः ।  
ये तुम्बुतीर्थाभिषेकमाचरन्ति यदा तदा ॥ ५२

ते निष्पापा मत्कृपया लक्ष्म्याः पात्रं न संशयः ।  
फाल्गुन्यां पौर्णिमास्यान्तु प्रत्यक्षदिवसे मम ॥ ३५

स्नास्यन्ति भक्तिमन्तो ये तेषां शृणु फलोन्नतिम् ।  
यत्सर्वतीर्थस्नानेन तत्फलं भवति ध्रुवम् ॥ ५४

- ‘ फल्गुनीतीर्थ ’ मित्यस्य नाम लोके भविष्यति ।  
 ब्रह्मविदक्षलशूद्राणामपि स्त्रीणामरुन्धति ! ॥ ५५  
 अत्र स्नानेन दुरितं नश्यति श्रेय एति च ।  
 मनोवाक्कायविहितं पापं नश्यति सर्वथा ॥ ५६  
 यत्किञ्चिदर्थमुद्दिश्य पुरुषा वा स्त्रियोऽपि वा ।  
 स्नास्यन्त्यत्राऽऽप्नुवन्त्येवं तं तमर्थं न संशयः ॥ ५७  
 पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति धनार्थी लभते धनम् ।  
 आरोग्यकाम आरोग्यं अपत्यं पुत्रकामवान् ॥ ५८  
 नश्यन्त्यापद आश्वस्य सिद्धयो हस्तसङ्गताः ।  
 अत्र स्नात्वा तु दानानि कुर्वतां बहुलं फलम् ॥ ५९  
 ये चन्दनञ्च ताम्बूलं प्रयच्छन्त्यपि चोदकम् ।  
 ते मत्प्रियास्तु विज्ञेयाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ६०  
 अयं सर्वोत्तरो धर्म उक्तस्तव वरानने ! ।  
 पतिव्रतानां मुत्स्या च भव त्वञ्च सुपुत्रिणी ’ ॥ ६१  
 इति सर्वं वरं दत्त्वाऽन्तर्दधे वेङ्कटेश्वरः ।  
 य इदं पठति ध्यायन् शृणुयाच्च समाहितः ।  
 घोणतीर्थस्नानफलं प्राप्नोति हि न संशयः ॥ ६२

हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीगारुडपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यवर्णनं  
 नाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ।

इति श्री गारुडपुराणान्तर्गत श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यं  
 सम्पूर्णम् ॥

श्रीरस्तु  
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः  
श्रियै श्रीपद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

—: \* :—

( श्रीहरिवंशान्तर्गत—श्रीशेषधर्मघटकम् )

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

हरिः ॐ

अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः

नारदादीनां भगवत्सेवार्थं श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

युधिष्ठिरः—

‘देवव्रत ! महाभाग ! सुरसिन्धुसुत ! प्रभो ! ।

श्रीनिवासस्य माहात्म्यं वद नो वदतां वर ! ॥

१

वैकुण्ठवासी देवेशो विष्णुः सर्वगतः प्रभुः ।

कथं प्राप्तो वृषगिरिं तन्मे त्वं कृपया वद ’ ॥

२

श्रीभीष्मः—

‘पुरा वै नारदः श्रीमान् ब्रह्मपुत्रो महाद्युतिः ।

हरिं द्रष्टुमनास्तात ! वैकुण्ठं समुपागतः ॥

३

तत्रादृष्ट्वा हरिं पार्थ ! क्षीरोदध्युपकण्ठतः ।

आयान्तमृषयो दृष्ट्वा मुदमापुश्च नारदम् ॥

४



- अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे पाराशर्यपदानुगाः ।  
 अनुज्ञातो मुनिगणैः पाराशर्यो महाद्युतिः ॥ ५
- व्यासो वचनमङ्गीबं नारदं प्रत्युवाच ह ।  
 'कृतकृत्यो मुने ! ब्रह्मन् ! त्वमेको जगतीतले ॥ ६
- विष्णुभक्तोऽसि नान्योऽस्ति सदा कीर्तयसे यतः ।  
 अहो खलु मनुष्याणां मोक्षदो विष्णुरव्ययः ॥ ७
- स त्वया सेव्यते नित्यं कृतकृत्यो भवानतः ।  
 स्रष्टा पालयिता हन्ता ह्येक एव जनार्दनः ॥ ८
- स त्वया पूजितो नित्यं तस्मात् खलु कृती भवान् ।  
 योऽनन्तः सर्वभूतानां सेतुभूतो जगन्मयः ॥ ९
- संसारपाशविच्छेदी स त्वया पूजितो हरिः ।  
 एते वयं मुनिश्रेष्ठ ! द्रष्टुकामा जनार्दनम् ॥ १०
- तन्निवेशितचित्ता हि प्राप्ता परमधार्मिक ' ।  
 ईदृशं वचनं श्रुत्वा व्यासस्य जगतीपते ।  
 प्रोवाच नारदो धीमान् ऋषीन् वेदविदां वरः ॥ ११
- 'कृतकृत्योऽस्मि भद्रं वो यूयं भूतहिते रताः ।  
 शान्निर्धर्मैः सदा लोकान् भक्त्या रक्षितुमिच्छत ॥ १२
- वैकुण्ठलोके सम्भूता वार्ता परमपावनी ।  
 अश्रावि सा मया सन्तो वक्ष्ये शृण्वन्तु तां कथाम् ॥ १३
- "मायावी परमानन्दः त्यक्त्वा वैकुण्ठमुत्तमम् ।  
 स्वामिपुष्करिणीतीरे रमया सह मोदते " ॥ १४
- इत्यद्भुततमं वाक्यं श्रुत्वा सेन्द्रा मरुद्गणाः ।  
 तत्र सेवितुमुद्युक्ताः तदाऽहञ्च जगद्गुरुम् ॥ १५

किं करिष्यथ विप्रेन्द्रा ह्यत्र दुर्लभदर्शनम् ।  
 तस्मात्तत्र गमिष्याम ' इत्युक्त्वा खं समारुहम् ॥ १६  
 अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे ऋषयश्च तपोधनाः ।  
 जम्मुस्ते व्योममार्गेण यत्र धर्मगिरौ हरिः ॥ १७

श्रीवेङ्कटाचलवासिमहाजनचरित्रवर्णनम्

स्वामिपुष्करिणीतीरं गत्वा तमृषयः सुराः ।  
 स्नात्वा पीत्वा शुभं तोयं हरिं द्रष्टुं तदाऽऽचरन् ॥ १८  
 पश्चिमं भागमासाद्य मुनयो विष्णुतत्पराः ।  
 तत्रापश्यन्महद्भूतं मेरुमन्दरसन्निभम् ॥ १९  
 सहस्रादित्यसङ्काशं विद्युच्चञ्चललोचनम् ।  
 सर्वायुधधरं देवं दृष्ट्वा विस्मयमागताः ॥ २०  
 दक्षिणां दिशमाजम्मुः स्वामिपुष्करिणीतटात् ।  
 तत्वायुरान् दानवादीन् राक्षसान् पिशिताशनान् ॥ २१  
 नमस्यतो ध्यायतश्च जपतश्चापि तान् बहून् ।  
 दृष्ट्वा विस्मयमापन्ना पूर्वा दिशमुपाययुः ॥ २२  
 तत्राऽसीनं देवपतिं त्रिदशैरुपसेवितम् ।  
 यक्षकिन्नरगन्धर्वचारणाद्यैरभिष्टुतम् ॥ २३  
 सिद्धकिम्पुरुषाद्यैश्च ऋषिभिश्चाप्सरोगणैः ।  
 स्तूयमानं हरिं साक्षात् श्रीनिवासं जगत्पतिम् ॥ २४  
 " कदा द्रक्ष्यामि तद्रूपं योगिनामपि दुर्लभम् ।  
 कदा मे जन्मसाफल्यं भविष्यति सुरार्चित ! ॥ २५  
 देहि मे दर्शनं देव ! प्रणतार्तिप्रणाशन ! ।  
 त्वं गतिः सर्वभूतानां देवानामपि मोक्षदः ॥ २६

पाहि पाहि जगन्नाथ ! भूयो भूयो नमोऽस्तु ते ” ।  
 इति स्तुवन्तं देवेशं देवराजं पुरन्दरम् ॥ २७  
 वेङ्कटाद्रेः पुरोभागे स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
 देवताभिः समासीनं ध्यायन्तं पुरुषोत्तमम् ॥ २८  
 तं दृष्ट्वा विस्मिताः सर्वे ह्यगस्त्यप्रमुखा द्विजाः ।  
 कौबेरीं दिशमाजग्मुः द्रष्टुकामा जनार्दनम् ॥ २९  
 तत्रापश्यन् द्विजवरान् सप्तद्वीपनिवासिनः ।  
 राज्ञो मुनिगणांश्चैव भूसुरान् वेदवादिनः ॥ ३०  
 भूलोकवासिनश्चैव मनुजान् मनुजेश्वर ।  
 मुदमापुर्महात्मानो मुनयः शुद्धबुद्धयः ॥ ३१

स्तुवन्ति नृत्यन्ति नमन्ति केचित् आनन्दजाश्रूणि सृजन्ति केचित् ।  
 आप्लुत्य चाप्लुत्य नदन्ति केचित् गायन्ति गीतं परितो महान्तः ॥ ३२

‘ रात्र्यां शशी देहभृताश्च चक्षुः दीनार्तिहा नो दिनकृद्दिवा च ।  
 एकोऽपि विष्णुः बहुधा विभिन्नो धाता जनानां दिवि देवतानाम् ।  
 कृपानिधिस्तत्र बभूव लक्ष्यः सर्वस्य लोकस्य हिताय नूनम् ’ ॥ ३३

वन्यैः पुष्पफलैः केचित् स्तोत्रैश्च विविधैर्जपैः ।  
 वेदपारायणैः केचित् पूजयन्ति जनार्दनम् ॥ ३४  
 धूपदीपैः गन्धमाल्यैः अन्यैः सामादिकीर्तनैः ।  
 दीप्तहाटककुम्भैश्च तोरणैः ध्वजराशिभिः ॥ ३५  
 विचित्रकुसुमैः केचित् पूजयन्ति जनार्दनम् ।  
 तुलसीमञ्जरीभिश्च करवीरैश्च जातिभिः ॥ ३६  
 मल्लिकाकेतकीपुष्पैः चम्पकैः पूजयन्ति ते ।  
 भूसुरा ऋषयश्चैव कलशैः परिपूरितैः ॥ ३७

श्रीहरिवंशे श्रीशेषधर्मे अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ३०१

पुण्योदकैः मन्त्रपूतैः कमण्डलुगतैः शुभैः ।  
पत्रकुम्भाहतैः केचित् पूजयन्ति जनार्दनम् ॥ ३८  
पत्रशाकैर्मूलफलैः नैवेद्यं कल्पयन्ति च ।  
शुद्धोदकैर्मन्त्रपुष्पैः ध्यानैः स्तोत्रजपैः परे ॥ ३९  
एवं तेषां तु पूजाभिः पूजितो मधुसूदनः ।  
आस्ते तत्र जगन्नाथः स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ ४०

“ हरे ! मुरारे ! पुरुषोत्तमे ” ति वदन्ति केचित्परिरम्भयन्ति ।  
तूष्णीं तु तिष्ठन्ति हसन्ति केचित् ध्यायन्ति केचित् कलशं वहन्ति ॥ ४१  
पूर्णं मुरारेरभिषेकहेतोः पुष्पाणि सौरभ्ययुतानि गन्धैः ।  
कर्पूरकस्तूरिसुगन्धवासितानादाय सर्वे वृषभाद्रिनाथम् ।  
ते मार्गमाणा विचरन्ति तत्र देवा मनुष्या अपि योगिनश्च ॥ ४२

भाष्यः -

‘ एवं कृत्येषु देवेषु ऋषिगन्धर्वकोटिषु ।  
पुष्पवृष्टिः पपाताऽऽशु पर्वतोपरि सर्वतः ॥ ४३  
भेरीमृदङ्गपटङ्गैः निःसाणाद्यैश्च डिण्डिमैः ।  
शङ्खकाहलसन्नादैः सङ्कुलं समजायत ॥ ४४  
तस्मिन्नवसरे विष्णुः प्रादुरासीत्सरस्तटे ।  
मेरुमन्दरसङ्काशैः जाम्बूनदपरिष्कृतैः ॥ ४५  
नानारत्नचितैर्दिव्यैः विमानैरुपशोभितः ।  
कोटिसूर्यप्रतीकाशः चन्द्रकोटिसुशीतलः ॥ ४६  
स्वर्लोकात् भूमिपर्यन्तं प्रादुरासीच्छ्रूयःपतिः ।  
स्वामिपुष्करिणीतीरे रविमण्डलसन्निभे ।  
विमाने सेवितो देवैः श्रीनिवासोऽवसत्प्रभुः ॥ ४७

“ ब्रह्मा शिवश्चन्द्रदिवाकरौ स सेन्द्रौ यमाग्नी धनराट् च पाशी ।  
रक्षोऽनिलोऽसौ वसवश्च दस्रौ विरिञ्चिकोऽथो गणदेवताश्च ॥ ४८

पिता पितृणां जनकः सुराणां माता शिशूनां महतां महात्मा ।  
पतिः प्रियाणां तरणिर्जनानां निधिः कृशानामिव निर्धनानाम् ” ॥ ४९

आविर्बभूवात्र महोज्ज्वलाङ्गः प्रियायुतः श्रीवृषभाद्रिनाथः ।  
प्रसन्नभूर्तिर्जगदेकबन्धुः प्रसन्नधामाऽथ जगन्निवासः ॥ ५०

श्रीनिवाससेवार्थं श्रीभीष्मकृतयुधिष्ठिरप्रेरणम्

तस्मात्पूजयितुं राजन् ! श्रीनिवासं जगद्गुरुम् ।  
गच्छ सौम्य सदानन्दं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ५१

महापातकयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः ।  
यस्य स्मरणमालेण नरः पापैः प्रमुच्यते ॥ ५२

श्रीनिवासस्य सेवार्थं यो वा को वा व्रजेद्यादि ।  
तस्यैव वंशजाः सर्वे मुक्ता एव न संशयः ॥ ५३

यानि क्षेत्राणि पुण्यानि तीर्थान्यायतनानि च ।  
तानि सर्वाणि सेवन्ते श्रीनिवासं जगन्मयम् ॥ ५४

इदं ये पुण्यमाख्यानं शृण्वन्ति श्रद्धया नराः ।  
तेषां मुक्तिः करस्थैव गतानां किमु वैभवम् ॥ ५५

हरिः ॐ ॥ तत्सत् ॥

इति श्रीहरिवंशे श्रीशेषधर्मे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यवर्णनं

नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ।

इति श्रीहरिवंशे शेषधर्मे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यं

सम्पूर्णम् ॥

श्रीरस्तु  
श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः  
श्रियै पद्मावत्यै नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

—: ❀ :—

( ब्रह्माण्डपुराणान्तर्गतम् )

श्रियः कान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवामाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

हरिः ॐ

प्रथमोऽध्यायः

भृगुनारदसंवादात्मकसूतोक्त श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

ऋषयः—

- ‘कथितानि महाभाग ! पुण्यक्षेत्राप्यनेकशः ।  
प्रशस्तानि च तीर्थानि तानि तानि महीतले ॥ १  
तेभ्योऽधिकतमं क्षेत्रं तीर्थं पापविनाशनम् ।  
यच्चास्ति तादृशं तीर्थं तन्नो ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥ २  
यस्मिन् वसति सर्वात्मा माधवो भक्तवत्सलः ।  
विहरन् मुदितो नित्यं श्रिया भूम्या च नीलया ॥ ३  
यस्मिंश्च वसतिं प्राप्तो दुस्तरं भवसागरम् ।  
सुखेन जन्तुस्तरति प्राप्तवित्तः शुचं यथा ॥ ४  
तस्य क्षेत्रस्य माहात्म्यं विस्तराद्वक्तुमर्हसि ।  
न च तेऽविदितं किञ्चित् पश्यामो भुवनत्रये ॥’ ५

श्रीसूतः—

स्मारितोऽस्मि महाभागाः साम्प्रतं वचनेन वः ।  
 कथयिष्यामि मुनयः ! शृणुतैकाग्रमानसाः । ६  
 अमुमेवाधिकृत्यार्थं पुरा नारायणात्मकम् ।  
 अपृच्छं मुनिशार्दूलं व्यासं सत्यवतीसुतम् ॥ ७  
 अथ पृष्ठो मया प्राह व्यासः सत्यवतीसुतः ।

श्रीवेदव्यासः—

‘शृणु सूत ! पुरावृत्तमाख्यानं कथयामि ते ॥ ८  
 कदाचित् पर्यटन् भूमिं नारदो मुनिसत्तमः ।  
 आजगामाऽश्रमं पुण्यं भृगोः मुदितमानसः ॥ ९  
 शारदाभ्रनिभः श्रीमान् वीणाञ्च महतीं दधत् ।  
 उदतिष्ठद्भृगुः शिष्यैः दृष्ट्वा देवर्षिमागतम् ॥ १०  
 पूजयित्वा च तं हृष्टः पाद्याभ्यासनवन्दनैः ।  
 पृष्ट्वा च कुशलं भूयः पप्रच्छ मुनिपुङ्गवम् ॥ ११

भृगुः—

‘जगत्पर्यटितं सर्वं भगवन् ! नारद ! त्वया ।  
 तेन जानासि जगतां वृत्तान्तमखिलं मुने ! ॥ १२  
 क्षेत्राणामधिकं क्षेत्रं तीर्थानां तीर्थमुत्तमम् ।  
 यद्यस्ति भुवि विप्रेन्द्र ! तन्मे ब्रूहि तपोनिधे ! ॥ १३  
 आस्ते विष्णुरचिन्त्यात्मा विहरन् रमया सह ।  
 यत्र साक्षात्कृतो देवो वरदः सर्वदेहिनाम् ॥ १४  
 तपांसि यत्र सिद्ध्यन्ति न चिरेण तपस्विनाम् ।  
 यस्मिंश्च निवसन् जन्तुः अञ्जसा मोक्षमाप्नुयात् ॥ १५  
 एतदाचक्ष्व भगवन् विस्तरेण तपोनिधे ! ।  
 ज्ञातुमर्थमिमं ब्रह्मन् ! न त्वदन्योऽस्ति भूतले ॥ १६

वेङ्कटाचलस्यानेकनामानुवर्णनपूर्वकं माहात्म्यवर्णनम्

श्रीनारदः —

- ‘शृणुष्वैकमना ब्रह्मन् ! मत्तः कथयतो मुने ! ।  
 क्षेत्राणां क्षेत्रमुत्कृष्टं तीर्थानां तीर्थमुत्तमम् ॥ १७
- श्रीवेङ्कटगिरिर्नाम क्षेत्रं पुण्यं महीतले ।  
 सर्वपापप्रशमनं सर्वपुण्यविवर्धनम् ॥ १८
- वक्तुं न तस्य माहात्म्यं ब्रह्मणाऽपि सुरैरपि ।  
 शक्यते वा तथा स्मर्तुं मनसाऽपि महामुने ! ॥ १९
- आराध्यः सर्वदेवानां माधवो भक्तवत्सलः ।  
 विहाय स्वं परं धाम रमते रमया सह ॥ २०
- “अञ्जनाद्रिः वृषाद्रिश्च शेषाद्रिः गरुडाचलः ।  
 तीर्थाद्रिः श्रीनिवासाद्रिः चिन्तामणिगिरिस्तथा ॥ २१
- वृषभाद्रिः वराहाद्रिः ज्ञानाद्रिः कनकाचलः ।  
 आनन्दाद्रिश्च नीलाद्रिः सुमेरुशिखराचलः ॥ २२
- वैकुण्ठाद्रिः पुष्कराद्रिः ” इति नामानि विंशतिः ।  
 ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चैतरजातयः ।  
 तन्नामानि पठेयुर्ये मुच्यन्ते तेऽघबन्धनात् ॥ २३
- “ वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति विञ्चन ।  
 वेङ्कटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ ” २४
- तस्मिन् बहूनि तीर्थानि सुरसिद्धनिषेविते ।  
 रम्याणि सन्ति शतशः सर्वाधौघहराण्यपि ॥ २५
- सर्वतीर्थातिशायीनि सर्वाश्चर्यकराणि च ।  
 सर्वसिद्धयनुकारीणि सर्वमङ्गलदान्यपि ॥ २६



स्वामिपुष्करिणी नाम सरसी राजते शुभा ।  
यस्यास्तीरेऽरविन्दाक्षो वसति प्रीतमानसः । २७

भृगुः—

‘तस्मिन् गिरौ श्रिया सार्धं हित्वा वैकुण्ठमुत्तमम् ।  
किमर्थं वसति ब्रह्मन् ! साक्षान्नारायणः स्वयम् ?’ ॥ २८

नारदकृतक्षीराब्धिवासिभगवद्वर्णनम्

श्रीनारदः—

‘कथयिष्यामि ते सर्वं वैकुण्ठो येन हेतुना ।  
तस्मिन् गिरिवरे रम्ये चिरमास्ते श्रिया सह ॥ २९  
नारायणमहं द्रष्टुं कदाचित् क्षीरसागरम् ।  
गतवांस्तत्र चाद्राक्षं श्वेतद्वीपं महोच्छ्रितम् ॥ ३०  
तत्र कल्पद्रुमवने शातकुम्भमयं गृहम् ।  
नानारत्नसमाकीर्णं अनेकस्तम्भशोभितम् ॥ ३१  
सहस्रार्कप्रतीकाशं दीप्यमानमिव श्रिया ।  
दुष्प्रापमरेन्द्रैश्च सुप्रापं कृतभक्तिभिः ॥ ३२  
तत्तापश्यं सभां दिव्यां देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।  
अनन्तविहगाधीशसेनान्याद्यैरधिष्ठिताम् ॥ ३३  
तत्तापश्यं हृषीकेशं सर्वलोकैककारणम् ।  
सर्वाश्चर्यमयं देवं शयानं शेषतल्पके ॥ ३४  
द्विलक्षयोजनोपेतविग्रहं कामरूपिणम् ।  
रजताचलसंलीनतालजीमूतसन्निभम् ॥ ३५  
पुण्डरीकविशालक्षं पुराणपुरुषं शुभम् ।  
तथा सर्वाविनीतानां शासितारं सुरोत्तमम् ॥ ३६

संवाह्यमानचरणं श्रिया भूम्या च सादरम् ।	
श्रीवत्साङ्गमुदाराङ्गं शतपत्रनिभाननम् ॥	३७
युगपन्निर्गतादित्यसहस्रसदृशद्युतिम् ।	
शङ्खचक्रधरं देवं ज्वलच्चञ्चलकुण्डलम् ॥	३८
वैजयन्त्या च विपुले विभूषितमुर स्थले ।	
सौदामिनीशताधिक्यज्वलत्पीताम्बरोज्ज्वलम् ॥	३९
लवण्यामृतसन्दोहं भवसन्तापनाशकम् ।	
युगान्तार्कसहस्राभमुकुटोज्ज्वलमस्तकम् ॥	४०
अचलं मेघसङ्काशमतीव प्रियदर्शनम् ।	
कर्णभृषोज्ज्वलं दीप्तं कण्ठिकोद्योतिकौस्तुभम् ॥	४१
अर्काभमणिरत्नाद्यैः ज्वलच्चञ्चलकुण्डलम् ।	
प्रत्युज्ज्वलितहारञ्च वनमालाविभूषितम् ॥	४२
स्फुरता ब्रह्मसूत्रेण प्रोद्धासितमुजान्तरम् ।	
अनेकसूर्यसङ्काशकेयूरमणिकान्तकम् ॥	४३
मणिकाञ्चनमुक्ताढ्यैः कटकैरुपशोभितम् ।	
अङ्गुल्याभरणैः सर्वैः नवरत्नैरलङ्कृतम् ॥	४४
कर्पूरगन्धितास्याब्जं सुरक्ताधरपल्लवम् ।	
तडिच्छतसहस्राभपीतनिर्मलवाससम् ॥	४५
नूपुरैः कटिसूत्रेण तडिन्मालाम्बुदोपमम् ।	
बालसूर्यसहस्राभनाभिपङ्कजं अद्भुतम् ॥	४६
मार्कण्डेयभरद्वाजपुण्डरीकशुकादिभिः ।	
याज्ञवल्क्याम्बरीषाद्यैरन्यैश्च मुनिपुङ्गवैः ॥	४७
चतुर्भुजैः स्वसदृशैः शङ्खचक्रगदाधरैः ।	
प्रह्लादप्रमुखैः भक्तैः स्तूयमानमनेकशः ॥	४८

सनन्दसनकाद्यैश्च योगिमुख्यैरभिष्टुतम् ।	
भुक्तिमुक्तिपदं नृणां सर्वाभीष्टप्रदायिनम् ॥	४९
सेवितं विधिरुद्राद्यैः दिक्पालैश्च भयान्वितैः ।	
प्रणम्य शिरसा देवं स्तुत्वा स्तुतिभिरीश्वरम् ॥	५०
भक्त्या चावनतो भूत्वा कृताञ्जलिरहं स्थितः ।	
स्वागतञ्चैव पृष्ट्वा मां बहुमेने गदाधरः ॥	५१
देवदेवोऽथ मां वीक्ष्य पौत्रस्नेहातिशीतलैः ।	
वीक्षणैः हृदयन्नित्यं बभाषे मधुसूदनः ॥	५२

नारदं प्रति धरातलविजिहीर्षुभगवदुक्तिः

श्रीभगवान्—

‘नारद ! श्रूयतां वत्स ! त्वया दृष्टं जगत्त्रयम् !	
ब्राह्मण्डे कुत्र वा वासो मम देशे भवेदिह ॥	५३
विहारयोग्यश्च तथा विश्रामस्थानमुत्तमम् ।	
कथय त्वं महाभाग ! यद्यस्ति भुवि तादृशम् ’ ॥	५४

नारदकृतभगवत्क्रीडार्हदेशप्रकाशनम्

नारदः—

न त्वया विदितं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते ।	
तथाऽप्ययं तव प्रश्नो मयि स्नेहवशात् प्रभो ! ॥	५५
त्वद्विहारोचितं स्थानं रमणीयं विलोक्यते ।	
आश्चर्यप्रभवं स्थानं तत्समं नास्ति भूतले ॥	५६
तव पादप्रभृताया गङ्गायाश्चैव दक्षिणे ।	
दिग्भागे दण्डकारण्ये द्विशतैः योजनैः मिते ॥	५७

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३०९

दक्षिणाम्बुनिधेश्चापि दक्षिणेतरभागके ।  
पूर्वाब्धेः पश्चिमे भागे पञ्चभिर्योजनैः मिते ॥ ५८  
रमणीयमिदं स्थानं क्रीडायोग्यं विभो ! तव ।  
तत्तत्याश्च जनाः सर्वे तपःस्वाध्यायवर्जिताः ॥ ५९  
आधिव्याधिहताश्चैव पश्यन्ति शरणं न च ।  
अनुग्रहाय वै तेषां स्यातव्यं भवता हरे ! ' ॥ ६०

श्रीभगवान्—

‘चोलराजसुतः कश्चित् कलौ खलु भविष्यति ।  
“चक्रवर्ती ” ति मद्भक्तस्तत्र मामर्चयिष्यति ।  
अनुग्रहाय तस्यापि तत्र स्थास्याम्यहं मुने ! ’ ॥ ६१

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवन्नारदसंवादे  
श्रीवेङ्कटाचलमहिमानुवर्णनं  
नाम प्रथमोऽध्यायः ।

अथ द्वितीयोऽध्यायः

अनन्तस्य भगवत्क्रीडाद्रित्वप्राप्तिः

अथाऽऽह भगवान् शेषमाह्वय पुरतः स्थितम् ।  
मेघगम्भीरया वाचा हर्षोत्फुल्लविलोचनः ॥ १

श्रीभगवान्—

‘अनन्त ! मत्प्रियो लोके न त्वदन्योऽस्ति कश्चन ।  
तस्मान्मम प्रियं किञ्चित् कर्तव्यं भवताऽनघ ! ॥ २  
श्रुतं हि भवता सर्वं नारदोदीरितं वचः ।  
क्रीडासमुचिते देशे वस्तव्यमिति मे मतिः ॥ ३

तत्र भूत्वा गिरिवरो भवान् वसतु भूतले ।  
त्वत्फणामण्डलभुवि स्थातव्यं रमया सह ॥ ४

शेषः—

‘अनन्तोऽहं महादेव ! स्थास्यामि गिरिरूपधृक् ।  
भवता रमया सार्धं मम सानुषु रम्यताम् ॥ ५  
गङ्गाद्याः सरितः पुण्याः तीर्थानि च सरांसि च ।  
वसन्तु सर्वदा तत्र ममोपरि तवाऽऽज्ञया ॥ ६  
ममोपरि प्रभूतानां जङ्गमस्थावरात्मनाम् ।  
यद्यदिष्टं हि तत्सर्वं तवानुग्रहहेतुना ।  
अस्ति ’ ति प्रार्थयामास शेषः सर्वहिताय वै ॥ ७

श्रीभगवान्—

‘सिद्धयत्वेवं फणीन्द्राऽद्य भवता यो वरो वृतः ।  
तपांसि तत्र सिद्धयन्तु निर्विघ्नानि तपस्विनाम् ॥ ८  
अहं हि सर्वजन्तूनां दृष्टिगोचरतां गतः ।  
वसिष्यामि श्रिया सार्धं दददिष्टानि देहिनाम् ’ ॥ ९

भगवतो लक्ष्म्यादिमहिषीपरिजनैः सह क्रीडाचलगमनम्

इत्युक्त्वाऽथ श्रियं प्राह भगवान् पार्श्ववर्तिनीम् ।  
भूमिं नीलं तथा देवीं प्रसन्नवदनाम्बुजाम् ॥ १०

श्रीभगवान्—

‘सखीभिः सहिता यूयं समागच्छत तत्र वै ।  
विहारयोग्यो देशोऽयं निर्दिष्टो मुनिनाऽमुना ’ ॥ ११  
इत्युक्त्वा भगवान् प्राह सेनापतिमरिन्दमम् ।  
‘त्वदीयानुचरैः सार्धं सर्वैः पारिषदैर्युतः ॥ १२

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३११

ब्रह्माद्यैः त्रिदशैः सार्धं यक्षरक्षोगणान्वितैः ।  
सिद्धविद्याधरैश्चापि किन्नरैश्च महोरगैः ॥ १३  
ऋषिसङ्घैर्युतः शीघ्रं याहि शेषाचलं प्रति ।  
वस्तव्यं तत्र हि मया रमया सहितेन वै ।  
अनुग्रहाय साधूनां नित्यञ्च प्रयतात्मनाम् ' ॥ १४  
इत्युक्त्वा भगवान् देवः श्रिया भूम्या च नीलया ।  
विनतासुतमारूढो यथा वहिमहीधरम् ॥ १५

अथाद्रिरूपधार्यनन्तस्य शिरःपुच्छप्रदेशवर्णनम्

भृगुः—

‘शेषः कथं गिरिवरो बभूव स महावपुः ।  
कुल पुच्छप्रदेशोऽस्य शिरःपक्षमुवौ तथा ’ ॥ १६

नारदः—

‘तस्य दक्षिणकैलासनामकं स्थानमुत्तमम् ।  
“कालहस्ती ” ति विख्यातं शिरोदेशः प्रकीर्तितः ॥ १७  
शिवस्य शिवदः पुण्यः शिरोदेशो विलोक्यते ।  
पुच्छस्तूत्तरतः प्रोक्तो महतोऽस्य महीभृतः ॥ १८  
प्रसिद्धः पुच्छदेशोऽयं “श्रीशैल ” इति विश्रुतः ।  
श्रीशैलस्य प्रदेशोऽस्मिन् नीलकण्ठाश्रमे शुभे ॥ १९

व्याघ्रपादवृत्तान्तः

व्याघ्रपादाभिधः कश्चित् तपस्वी नियतेन्द्रियः ।  
चिरकालं तपस्तप्त्वा नीलकण्ठमुमापतिम् ॥ २०  
तोषयामास नियमैः समग्रस्तं तपोनिधिः ।  
अथ केनापि कालेन नीलकण्ठो महाह्युतिः ॥ १२

परितुष्टः प्रादुरभूत् दास्यन् वरमभीष्टितम् । आलिङ्गितो गिरिजया गाढमाश्रितपार्श्वया ॥	२२
कैल्यसगौरमारुह्य वृषं गगनचारिणम् । प्रमथाद्यैः परिवृतो गणैः सम्प्रीतमानसैः ॥	२३
कपर्दविलसत्सिद्धसिन्धुवीचिभिराकुलैः । सिद्धगन्धर्वयक्षाद्यैः पन्नगैः परिवारितः । भक्तानुकम्पां परमां भृशमावेदयन्निव ॥	२४
व्याघ्रपादः प्रणम्यैनं भक्त्या परमयाऽन्वितः । स्तुतिभिः परितुष्टाव पुष्कलाभिः पुनः पुनः ॥	२५

व्याघ्रपादः—

“ भगवन् करुणासार ! सर्वलोकैककरण ! । प्रसीद त्वं प्रसन्नाक्ष ! विश्वाकार ! वृषध्वज ! ॥	२६
रथ्या वेदः त्रिपुरदहने वेदवक्ता च वेधाः सूतो यस्य स्वयमुपगतौ पुष्पवन्तौ रथाङ्गे । चापो मेरुः लिदशवसतिः वासुकिः चापमौर्वी बाणो विष्णुः त्रिदशवपुषे कुर्महे ते नमस्याम् ” ॥	२७
स्तुत्वैवं परया भक्त्या व्याघ्रपादः तपोनिधिः । तूष्णीं बभूव पुरतो मस्तके विहिताञ्जलिः ॥	२८
व्याघ्रपादं तपोनिष्ठं शान्तं धर्मपरायणम् । नीलकण्ठः समाहूय प्रहसन्निदमब्रवीत् ॥	२९

नीलकण्ठः—

‘ तपसा परितुष्टोऽस्मि कृतेनानेन सुव्रत ! । वरं वरय भद्रं ते वरदोऽहमिहागतः ’ ॥	३०
--	----

व्याघ्रपादः—

‘आश्रमेऽस्मिन् महादेव ! वस्तव्यं भवता सदा ।  
भवन्नाम्ना सरश्चेदं प्रसिद्धिमधिगच्छतु ॥ ३१  
अत्र स्नास्यति यो मर्त्यः तीरेऽस्मिन् सकृदाप्लुतः ।  
स सिद्धिं यातु शुद्धात्मा पुमर्थानामभीप्सया ’ ॥ ३२

नीलकण्ठः—

“तथैवास्ति”ति तं प्रोक्त्वा तत्रास्ते चन्द्रशेखरः ।  
चिरं गिरिजया सार्धं वरदः सर्वदेहिनाम् ॥ ३३

अथाद्रिरूपधार्यनन्तस्य पक्षप्रदेशवर्णनम्

अथ पक्षप्रदेशोऽस्य ब्रह्मोबिलमिति स्मृतः ।  
परं स्थानं नृसिंहस्य सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ ३४  
हिरण्यकशिपुं हन्तुं ब्रह्मरुद्रपुरस्कृतः ।  
प्रह्लादानुग्रहार्थाय ब्रह्मतीर्णोऽत्र वर्तते ॥ ३५  
न तत्समं भुवि स्थानं अस्ति लोकत्रयेऽपि वा ।  
अमृतत्वमाप्नोति जन्तुदर्शनमात्रतः ॥ ३६  
तस्मिन्नेकदिनं वाऽपि यो वा समधिगच्छति ।  
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ ३७

क्रीडाद्रित्वापन्नानन्तस्य फणामणिवर्णनम्

फणामणिप्रदेशोऽयं “वेङ्कटाद्रि”रिति स्मृतः ।  
“शेषाद्रिः, वृषभाद्रिश्च, नापायणगिरिः”स्तथा ॥ ३८  
न चास्य महिमा शक्यो वक्तुं वर्षशतैरपि ।  
ब्रह्मरुद्रपुरोगैश्च सनकाद्यैश्च योगिमिभिः ॥ ३९



अगस्त्याद्या मुनिवराः तपसः सिद्धयपेक्षया ।	
तपांसि सुचिरं तेषु तन्निर्झरसमाप्लुताः ॥	४०
विष्णोरपरदेहत्वात् आक्रामन् न पदैर्गिरिम् ।	
नारायणांशसम्भूतः शेषोऽहिः गिरिरूपधृक् ॥	४१
तस्योपरि प्रभूता ये तृणगुल्मलतादयः ।	
ते हि स्थावररूपेण वसन्तो योगिपूरुषाः ॥	४२
ब्रह्मरुद्रादिदेवेभ्यो योगिनोऽमिततेजसः ।	
सर्वदा यक्षगन्धर्वसिद्धकिन्नरचारणैः ॥	४३
विद्याधरगणैश्चापि महोरगगणैस्तथा ।	
ऋषिभिर्देववृन्दैश्च सेवावसरकाङ्क्षिभिः ।	
सेव्यतेऽहर्निशं प्रीत्या महागिरिवरो ह्ययम् ' ॥	४४

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भृगुनारदसंवादे  
श्रीवेङ्कटाचलविस्तारवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ।

अथ तृतीयोऽध्यायः

भगवत्क्रीडाचलवर्णनम्

भृगुः—

‘श्रीवेङ्कटगिरिं प्राप्य भगवान् पुरुषोत्तमः ।	
आवासमकरोत्तन्न ततः किमकरोत् स्वयम् ? ॥	१
उदन्तमिममाचक्ष्व विस्तरेणैव नारद ! ।	
न त्वदन्योऽस्ति विप्रेन्द ! रहस्यानां हि वेदिता ’ ॥	२

नारदः—

‘इदं रहस्यं वक्ष्येऽद्य विस्तरेणैव ते भृगो ! ।	
न त्वदन्योऽस्ति विप्रेन्द्र कथायाः श्रवणे रतः ॥	३
यदैव रमया सार्धं अनादिः पुरुषोत्तमः ।	
अवतीर्णो गिरिवरं नानाधातुविभूषितम् ॥	४
गिरिनिर्झरसंयुक्तं नदीप्रस्रवणैर्युतम् ।	
विविधैः वृक्षखण्डैश्च पुष्पितैरुपशोभितम् ॥	५
मालतीकुन्दकुटजैः सिन्धुवारैः कुरण्टकैः ।	
कदम्बार्जुनवंशैश्च चन्दनैः पनसैस्तथा ॥	६
अशोकवकुलैर्गुञ्जैस्तमालैः समलङ्कृतम् ।	
नानाविहगसङ्कुष्टं मयूरारावनादितम् ॥	७
तुष्टपुष्टमृगाकीर्णं सिंहशार्दूलशोभितम् ।	
विगलन्मदधारैश्च गजसङ्घैः सुशोभितम् ॥	८
गोत्रङ्गुलाणैश्चापि वानरैः मदगर्जितैः ।	
क्रीडाविलासनिरतैः मृगपक्षिभिरावृतम् ॥	९
नानारत्नसमाकीर्णं सानुभिर्मूषितं गिरिम् ।	
ब्रह्मणा च समादिष्टो नारायणदिदृक्षया ॥	१०

### नारायणाख्यविप्रवृत्तान्तः

नारायणाख्यो विप्रेन्द्रो गिरावस्मिन् शुभोत्तरे ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरे सुरसिद्धनिषेविते ॥	११
इन्द्रियाणि नियम्यान्तरास्थितो योगभावनाम् ।	
नारायणं त्रिजगतामधीशं भक्तवत्सलम् ॥	१२
श्रीभूमिनीलासहितं ध्यायन् हृदि शुभास्पदम् ।	
नासाग्रन्यस्तनयनो विशुद्धाऽत्मा चिरं द्विजः ॥	१३

तपश्चचार धर्मात्मा दुश्चरं दुष्टमानसैः ।	
विशुद्धात्मनि विप्रेन्द्रे तपस्थिति चिरं तदा ॥	१४
फलन्ति विविधा वृक्षाः तत्रत्याः समयं विना ।	
सत्त्वेषु बलवत्सत्त्वं बबाधे नैव दुर्बलम् ।	
तपस्यति द्विजे शान्ते शान्तं सर्वमभूद्वनम् ॥	१५

नारायणाख्यविप्रतपस्तुष्टस्य भगवत आविर्भावः

अथास्मिन्नन्तरे तस्य तपसा परितोषितः ।	
वासुदेवः प्रादुरभूत् वरदः सर्वदेहिनाम् ॥	१६
विनतासुतमारूढः सुमेरुशिखरोपमम् ।	
दयितामङ्गमारोप्य ज्वलत्काञ्चनमालिनीम् ॥	१७
युगपत्स्फुरितानेकतडित्सदृशवर्चसम् ।	
सहधर्मचरीं विष्णोरवतारानुकारिणीम् ॥	१८
भक्तानुकम्पाभरितैरपाङ्गैः शीतलैः सदा ।	
आह्लादयन्तीमसकृत् जगत् स्थावरजङ्गमम् ॥	१९
पद्मप्रियां पद्महस्तां पद्मालयनिवासिनीम् ।	
उन्निद्रपद्मनयनां पद्मनाभमनःप्रियाम् ॥	२०
नीलजीमूतसङ्काशः स्फुरत्पीताम्बरोज्ज्वलः ।	
तुलसीदामहृद्येन स्फुरच्छ्रीवत्सलक्ष्मणा ॥	२१
कौस्तुभद्युतिदीप्तेन वपुषा सुविराजितः ।	
निबद्धोदरबन्धेन तनुमध्येन शोभितः ॥	२२
विधातृगृहनालीकमुकुलोद्भवहेतुना ।	
नाभिहृदेन निम्नेन गम्भीरावर्तशोभिना ॥	२३
रम्भेभहस्तशोभाभ्यां ऊरुभ्यामुपशोभितः ।	
जङ्घाभ्यां चरुतूणीरसदृशीभ्यां विराजितः ॥	२४

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे तृतीयोऽध्यायः ३१७

प्रसन्नवदनाम्भोजः पद्मपत्रनिभेक्षणः ।  
ज्योतिर्मयेन वपुषा दीप्यमानोऽग्रतः स्थितः ॥ २५  
अथ नारायणं विप्रो हर्षपर्याकुलेक्षणः ।  
सर्वदाऽऽनन्दसन्दोहनयनाश्रुसमाप्लुतः ॥ २६  
आनन्दामृतसाराब्धौ मग्नः किञ्चिन्न बुध्यते ।  
प्रदक्षिणं तदा कृत्वा भगवन्तं दयानिधिम् ॥ २७  
भक्त्या परमयाऽऽविष्टो विवेदानन्तरं न सः ।  
किं कर्तव्यमजानानो मुहूर्तं सावतिष्ठते ।  
अथैनं परितुष्टाव वाग्भिरग्न्याभिराकुलः ॥ २८

### नारायणारूपविप्रकृतभगवत्स्तुतिः

विप्रः—

“ देवदेव ! जगन्नाथ ! प्रसीद पुरुषोत्तम ! ।  
परिपालय मां भक्तं शरणागतवत्सल ! ॥ २९  
काल्यभ ! करुणासार ! करीन्द्रवरद ! प्रभो ! ।  
अवलोक्य मां नाथ ! शीतलैः नयनाञ्चलैः ॥ ३०  
त्वमेव धाता सर्वस्य जगतोऽस्य जगन्मय ! ।  
रक्षिता च त्वमेवास्य संहर्ता च सुरेश्वर ! ॥ ३१  
प्रकृतिः पुरुषश्चैव सर्गकाले सुसङ्गतौ ।  
तवेक्षणवशेनैव सृजतो जगदव्ययम् ॥ ३२  
न त्वत्समोऽस्ति लोकेऽस्मिन् नाथ ! लोकत्रयेऽपि वा ।  
कुतस्त्वदधिकतस्मात् निःसमाभ्याधिको भवान् ॥ ३३  
वेत्ता त्वमसि वेद्यश्च वेदनोपाय एव च ।  
वेदनश्च फलं तस्य त्वद्वद्वेदो नास्ति किञ्चन ॥ ३४

पिता त्वमसि लोकस्य सर्वस्य जगतः पते ! ।	
माता स्वयं विशालाक्षी लक्ष्मीरेवानपायिनी ॥	३५
विधातृप्रमुखा देवाः सनकाद्याश्च योगिनः ।	
महता तपसा वाऽपि न त्वां जानन्ति तत्त्वतः ॥	३६
न वेदाध्ययनेन त्वां न यज्ञैः नियमैरपि ।	
न दानैश्च तपोयोगैः विना भक्त्या न दृश्यसे ॥	३७
मद्भाग्योपचयेन त्वं दृग्गोचरमुपागतः ।	
निजरूपश्च देवेश ! प्रदर्शय दयानिधे ! ॥	३८
धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽसि दर्शनेन तव प्रभो ! ।	
चक्षुषोः सफलं जन्म जातमद्य सुरेश्वर ! ॥	३९
न त्वां पश्यति यो मर्त्यो व्यर्थजन्मा स मे मतः ।	
दर्शनेनैव भवित्तमाप्नोत्युन्मत्ततुल्यताम् ” ॥	४०
एवं स्तुवति विप्रेन्द्रे भगवान् प्रीतमानसः ।	
तमुवाच प्रसन्नाक्षो मेघगम्भीरया गिरा ॥	४१

श्रीभगवान्—

‘तपश्चरसि विप्रेन्द्र ! कस्त्वमत्र जितेन्द्रियः ।	
विमर्त्यश्च वदाद्य त्वं दास्याम्यहमभीप्सितम् ’ ॥	४२

भगवन्तमुद्दिश्य विप्रकृतसर्वजनदृश्यत्वादिप्रार्थना

नारायणः—

‘वरदो यदि देवेश श्रीनिधे ! करुणानिधे ! ।	
वृणोमि वरमिष्टं मे शृणुष्व प्रीतमानसः ॥	४३
अहं नारायणो नाम भवदर्शनकाङ्क्षया ।	
भुवं सर्वां परिक्रम्य नापश्यं त्वामहं प्रभो ! ॥	४४

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे तृतीयोऽध्यायः ३१९

ब्रह्माणं तपसाऽऽराध्य तन्निर्दिष्टोऽहमागतः ।  
 स्वामिपुष्करिणीतीरे तपसाऽऽराधितो भवान् ॥ ४५  
 तपश्चरन् वसाम्यद्य चिरेण नियतेन्द्रियः ।  
 एवं विरु तपश्चर्तुमशक्यं भुवि मानवैः ॥ ४६  
 तेषामनुग्रहार्थाय सर्वप्रत्यक्षगोचरः ।  
 सर्वाभीष्टं ददन्नित्यं स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ ४७  
 अनन्तविहगेशानसेनापतिमुखैः सदा ।  
 सेव्यमानः श्रिया सार्धं विहरन् वस माधव ! ।  
 गिरिश्रायं हि मन्नाम्ना प्रसिद्धिमधिगच्छतु ' ॥ ४८

भगवत्कृतनागरायणाख्यविप्रप्रार्थनाभ्युपगमप्रकारः

श्रीभगवान्—

‘तथा भवतु विप्रेन्द्र ! वचनं तव सुव्रत ।  
 ब्राह्मणो यदि वा वैश्यः क्षत्रियः शूद्र एव वा ॥ ४९  
 सपापो यदि वाऽपापः स्वामिपुष्करिणीजले ।  
 स्नात्वा चात्र वसन्तं मां ये नमस्यन्ति मानवाः ॥ ५०  
 ददाम्याकल्पमेवाहं तेषां वासं त्रिविष्टपे ।  
 यः करोत्याप्लवं स्वामिसरसीजलमध्यतः ॥ ५१  
 सोऽतीत्य निरयं सर्वं ब्रह्मभूयाय कल्पते ।  
 भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।  
 इदं स्थानं सरश्चेदं नात्र कर्त्र्या विचारणा ॥ ५२  
 अद्यप्रभृति चैवायं गिरिस्त्वन्नामतः सदा ।  
 “नारायणाचल” इति प्रसिद्धो भवतु द्विज’ ॥ ५३

इति तस्मै वरं दत्त्वा स्वसायुज्यं ददौ हरिः ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरे स्वसङ्कल्पागते ततः ॥	५४
दिव्ये त्रिमाने सर्वेषां विलोचनपथं गतः ।	
श्रीभूमिनीलसहितः शङ्खचक्रगदाधरः ॥	५५
कोटिकन्दर्पलावण्यो नीलजीमूतसन्निभः ।	
दयापरवशो नित्यं वसति प्रीतमानसः ॥	५६

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
भगवदाविर्भाववर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः

### अथ चतुर्थोऽध्यायः

भगवतः क्रीडाद्रौ लीलार्थं मृगयाविहारः

भृगुः —

‘तत्र वासमुपेत्याथ देवः किमकरोत्ततः ? ।  
विस्तरेण समाख्याहि पृच्छतो मम सर्वशः ॥’ १

नारदः —

ततः कदाचिन्मृगयाविहाराकङ्क्षिमानसः ।  
सेनापतिमुवाचेदं प्रहसन्निव माधवः ॥ २

श्रीभगवान् —

‘सेनेश ! विपिनोद्देशे विहर्तुं मतिरस्ति मे ।  
सिंहव्यालसमाकीर्णे मत्तद्विषनिषेविते ॥ ३  
सज्जीभन्तु सैन्यानि निदेशाद्भवतोऽधुना ।  
चतुरङ्गसमेतास्व समरेष्वजितास्व वै ॥’ ४

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः

३२१

इत्युक्त्वा भगवांस्तूर्णं निर्ययौ मृगयामतिः ।

सेनापतिमुखाश्चापि तमेवानुययुस्तदा ॥

५

अथोत्तरगिरौ रम्ये विचचार स दैत्यहा ।

सिंहव्यालगणान् विद्वद्यन् शरैराशीविषोपमैः ॥

६

तत्रत्याः शबराधीशाः सोपहाराः समागताः ।

प्रणम्य देवदेवेशं अतिष्ठन् नम्रमौलयः ॥

७

निर्दिश्यमानमार्गस्तु तैस्तैः शबरपालकैः ।

विचचार बहून् देशान् मृगयाऽऽकृष्टमानसः ॥

८

**वृषभाख्यासुरवृत्तान्तः**

तस्मिन् काले शिवे भक्तो वृषभाख्यो महासुरः ।

श्रीशैलदक्षिणे देशे विचचार महामनाः ॥

९

ततो गिरिवरं दृष्ट्वा प्रादुर्भूतं सुविस्तृतम् ।

विस्मयाविष्टचेतास्तु चिन्तयामास कारणम् ॥

१०

‘अहो कोऽप्यस्य मायावी स्रष्टाऽद्रेरुपरि ध्रुवम् ।

तमन्वेष्टुं यतिष्येऽहं मायिनं गतभीरहम् ।

अन्विष्य सहसाऽनेन योत्स्यामि गतभीरहम् ’ ॥

११

इति सञ्चिन्त्य तत्रायं मृगयन्नपकारिणम् ।

बलगर्वसमाविष्टः तत्र तत्र चचार ह ॥

१२

**वृषभासुरशबरवेषधारिभगवतोः युद्धप्रकारः**

अथापश्यत् स देवेशं विहरन्तमभीतवत् ।

शार्ङ्गपाणिं ह्यारूढं शबराकृतिधारिणम् ॥

१३

तं दृष्ट्वा दैत्यराट् क्रुद्धः सोऽयमेवेति निश्चितः ।

अभ्यधावत् तं तूर्णं ‘तिष्ठ तिष्ठे’ति चाब्रवीत् ॥

१४



ततः समभवद्युद्धं घोररूपं भयानकम् ।	
शबराधिपतिं दैत्यः समाहूयाशपत्तदा ॥	१५
ततः स शबरः क्रुद्धः सर्वसन्नाहसंयुतः ।	
श्वगणैः स्वगणैश्चैव बाणैश्च निशितैस्तथा ॥	१६
प्रासैः खड्गैः गदाभिश्च शक्तिशूलपरश्वधैः ।	
कुन्तैः मुसलसङ्घैश्च वृक्षैः पाषाणराशिभिः ॥	१७
अयुद्धयत तदा तेन घोरं युद्धमभूद्धने ।	
ततस्तान् शबरान् सर्वान् विनिर्जित्याग्रतः परम् ॥	१८
आयान्तमसुरं दृष्ट्वा विष्वक्सेनं दिदेश सः ।	
सोऽपि गन्धर्वसङ्घैश्च सहितः प्रत्ययुध्यत ॥	१९
ततः सुतमुलं युद्धं बभूव भयदायकम् ।	
अस्त्रैः शस्त्रैः जघानाऽऽशु विष्वक्सेनः प्रतापवान् ॥	२०
दैत्यस्तं दुर्जयं ज्ञात्वा मायावी च मदोद्धतः ।	
ततः स्वमायामास्थाय दैत्यः परपुरञ्जयः ॥	२१
असृजद्राक्षसान् घोरान् शतशोऽथ सहस्रशः ।	
अस्त्राण्यपि च दिव्यानि शस्त्राणि विविधानि च ॥	२२
प्रायुङ्क्त दैत्यराट् क्रुद्धो नारायणजिघांसया ।	
यदनेन प्रयुक्तं वै शस्त्रमस्त्रमथापि वा ॥	२३
भस्मीकृतं च तत्सर्वं हरिणा निजमायया ।	
ततस्तमसुरो मत्वा दुर्जयं हरिमाहवे ॥	२४
मायां प्रयुज्य मायावी स्वयमन्तर्दधे ततः ।	
तां मायामायतीं दृष्ट्वा ततः सर्वेश्वरो हरिः ॥	२५
प्रेषयामास नाशाय ततश्चक्रं जनार्दनः ।	
नाशकं सर्वदुष्टानां सर्वदेवनमस्कृतम् ॥	२६

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ३२३

चक्रराजात्ततो ज्वालाः प्रादुर्भूताः सहस्रशः ।  
ताभिस्तत्सैन्यमत्युग्रं ज्वलितं काननं यथा ॥ २७  
ज्वलत्कञ्चुकिनो वीरा दग्धश्मश्रुशिरोरुहाः ।  
आयुधानि विचित्राणि दग्धान्यासम् हविर्भुजा ॥ २८  
तेन चक्रप्रभावेण ह्यसुरं बलमद्भुतम् ।  
न किञ्चित् दृश्यते तत्र पर्वते परमाद्भुते ॥ २९  
ततः समीक्ष्य दैत्यो वै मायां स्वीयां विनाशिताम् ।  
चिन्तयामास च मुने ! विस्मयाकुलमानसः ॥ ३०

भगवन्तं प्रतिसंहाराभ्युपगंतवृषभासुरप्रार्थना

निहनिष्यति माञ्चापि चक्रं नूनं तदीरितम् ।  
समयो मरणस्यापि संवृत्तो नैव संशयः ॥ ३१  
अमानुषमिमं मन्ये परब्रह्मस्वरूपिणम् ।  
स्रष्टारं सर्वलोकानां सर्वदेवनमस्कृतम् ॥ ३२  
अनेन निहतो नूनं विमुक्तः सर्वकिल्बिषात् ।  
संसारार्णवमुत्तीर्य गमिष्ये मुक्तिसम्पदम् ॥ ३३  
इति सञ्चिन्तयन् देवं वधात् संहृष्टमानसः ।  
प्रार्थयामास चाभीष्टं किञ्चिद्भृदयसंश्रितम् ॥ ३४

वृषभः —

“ देवदेव ! जगन्नाथ ! सर्वलोकैककारणम् ।  
शरणं त्वामनुप्राप्तः प्रणतार्तिहर ! प्रभो ! ॥ ३५  
त्वया ततमिदं सर्वं जगत् स्थावरजङ्गमम् ।  
त्वया विहीनं नो किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ ३६

ब्रह्माद्याः सकला देवाः त्वन्निदेशकरा मताः ।	
निदेशात् वाति ते वातः सूर्यश्चोदेति चान्वहम् ॥	३७
बहिर्ज्वलति ते भीतः शक्रः शासति शासनात् ।	
यमो धावति भीतस्ते इति वेदानुशासनम् ॥	३८
त्राहि त्राहि महादेव ! न जाने शरणं परम् ।	
योगिनो यं विचिन्वन्ति नियताः त्वां विमुक्तये ॥	३९
स त्वमद्य महाबाहो ! दृग्गोचरगतोऽसि मे ।	
क्षमस्व मत्कृतं सर्वमपकारं सुदुःसहम् ॥	४०
कृतागसां त्वादृशेषु प्रणामः खलु निष्कृतिः ।	
जीवितन्तु न याचेऽहं क्षुद्रं पापस्य कारणम् ॥	४१
अतो यास्यामि निहतः चक्रेण परमां गतिम् ।	
तस्मात् क्षमस्व भगवन् श्रीनिधे ! करुणानिधे ! ।	
त्रातारं नैव पश्यामि त्वां विना मधुसूदन ! ॥	४२

असुरप्रार्थनया क्रीडाद्रेः भगवद्वत्तवृषभनामधेयप्राप्तिः

“ अद्यप्रभृति चायं वै गिरिरुद्धितशेखरः ।	
मदास्त्यया प्रथां यातु ‘ वृषभाचल ’ इत्यपि ” ॥	४३
इत्येवं शोकस्तप्तमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ।	
वृषभं तमुवाचेदं प्रहसन् गरुडध्वजः ॥	४४

श्रीभगवान्—

‘ वृषभासुर ! मद्भक्त्या विमुक्तिं यास्यसि ध्रुवम् ।	
गिरिश्चायं भवन्नाम्ना प्रसिद्धिमधिगच्छतु ’ ॥	४५
इत्युक्तवति गोविन्दे दैत्येन्द्रः प्रीतमानसः ।	
चिन्तयामास निधनमनुग्रहमथो मुने ! ॥	४६

**वृषभासुरवधप्रकारः**

ततः सुदर्शनश्चापि ज्वालाजटिलविग्रहः ।	
जहार सुरशत्रोर्हि कण्ठनालात् शिरोऽम्बुजम् ॥	४७
ततो निपातिते भूमावसुरे युद्धदुर्मदे ।	
ववृषुः पुष्पवर्षाणि देवाः सम्प्रीतमानसाः ॥	४८
देवदुन्दुभथो नेदुः ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।	
दिशः प्रसेदुर्विमला वाताश्चैव सुखं ववुः ॥	४९
गोविन्दोऽपि दयासारो वरं दत्त्वाऽसुराय वै ।	
पुनरभ्येत्य शेषाद्रौ यथास्थानं स्थितो मुने ॥	५०

**अञ्जनादेव्युत्पत्तिक्रमः**

भृगुः—

‘भूयः कथय देवस्य चरितानि महात्मनः ।	
शृण्वतो नास्ति मे तृप्तिः अद्भुतानि महामुने !’ ॥	५१

नारदः—

शृणुष्वैकमना ब्रह्मन् ! मत्तः कथयतो मुने ! ।	
माहात्म्यं देवदेवस्य चित्रं हि मुनिकीर्तितम् ॥	५२
त्रेतायुगेऽसुरः कश्चित् ‘केसरी’ त्येव विश्रुतः ।	
पुत्रार्थी देवमुद्दिश्य तपस्तेपे महामनाः ॥	५३
नियतात्मा शुचिर्नित्यं निराहारो जितेन्द्रियः ।	
पञ्चाक्षरेण जप्येन तोषयामास शङ्करम् ॥	५४
प्रीतः प्रादुरभूदग्रे शङ्करो लोकशङ्करः ।	
भक्त्या तमानतं भूमावुवाच च हसन्निव ॥	५५

शङ्करः—

‘परितुष्टोऽसि भद्रं ते तपसाऽनेन सुव्रत ! ।  
वरं वृणीष्व दास्यामि मनसा यदिहेच्छसि ’ ॥ ५६

केसरी —

‘देवदेव ! महाप्राज्ञ ! परितुष्टोऽसि चेन्मम ।  
वरदो भव मेऽमीष्टं वरयामि सुनिश्चितम् ॥ ५७  
पुत्रमिच्छामि बलिनं समरेष्वनिवर्तिनम् ।  
महाधैर्यं महाप्राज्ञं त्वत्तः सन्तुष्टमानसात् ’ ॥ ५८

शङ्करः—

‘न पुत्रं दातुमिच्छामि परितुष्टोऽप्यहं तव ।  
यस्माच्च विधिना पूर्वं विहिता पुत्रहीनता ॥ ५९  
तथाऽपि दास्ये कन्यां वै रूपयौवनशालिनीम् ।  
तस्यामुत्पत्स्यते पुत्रः त्वदभीष्टोऽचिरात् ध्रुवम् ’ ॥ ६०  
इति सन्दिश्य भर्गोऽपि तलैवान्तरधीयत ।  
असुरेन्द्रोऽपि लब्ध्वाऽयं वरमिष्टं मुदं ययौ ॥ ६१  
ततस्तस्याभवत्कन्या लोकविस्मयकारिणी ।  
चकार नाम तस्या वै ‘बल्लने’ति स दैत्यराट् ॥ ६२  
क्रमेण ववृधे सेयमल्लना मञ्जुभाषिणी ।  
कलेव शशिनः पक्षे सिते नयननन्दिनी ॥ ६३  
पितुस्तस्याश्च ववृधे प्रमोदस्तु दिनेदिने ।  
पुत्रप्रीतिरभूत् तस्य तस्यामिति च नः श्रुतम् ॥ ६४  
प्रकान्तकन्दुकक्रीडामालिभिः सह कन्यकाम् ।  
वीक्ष्य वीक्ष्य ययौ तृप्तिं प्रहर्षोत्फुल्लोचनः ॥ ६५

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे पञ्चमोऽध्यायः

३२७

ततः कपिवरः कश्चित् ' केसरी ' ति भुवि श्रुतः ।

अभिगम्य यथाचे तां कन्यां यौवनशालिनीम् ॥ ६६

तस्मै तामञ्जनां प्रादात् दैत्यः सम्प्रीतमानसः ।

स चिक्रीड कपिश्चायं कन्यया कान्तरूपया ॥ ६७

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
वृषभाचलोत्पत्ति - अञ्जनादेव्युत्पत्तिवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ पञ्चमोऽध्यायः

अञ्जनायाः श्रीवेङ्कटाद्रौ तपःकरणेनाञ्जनेयाख्यसुतोत्पत्तिः

नारदः—

विहरन्ती चिरं तेन कपिना साधु कन्यका ।

न लेभे सदृशं पुत्रं चिन्ताशोकपरायणा ॥ १

'अहो मम पिता मां वै पुत्रस्नेहसमाकुलः ।

पोषयामास तस्याहमानृण्यं केन चाप्नुयाम् ॥ २

तस्या मे मन्दभाग्यायाः सन्ततिश्च विनाकृता ।

नारीणां पुत्रहीनानां न सुखं पारलौकिकम् ॥ ३

पुत्रेण मे विहीनायाः किन्न विश्रम्यते कुलम् ।

धन्याः खलु स्त्रियस्ता वै याः पश्यन्ति शुचिस्मितम् ॥ ४

मुखमङ्गे शयानानां पुत्राणां पुत्रवत्सलाः ।

इति सञ्चिन्त्य बहुधा पुत्रार्थं सा सुलोचना ॥ ५

द्विजानभ्यर्च्य विधिवदाशिषो वाचयन्त्यहो ।

ददावमीप्सितं तेभ्यः सर्वदैव यशस्विनी ॥ ६

निमित्तज्ञांश्च पृच्छन्ती तानुवाच तदाऽञ्जना ।	
व्रतेषु चाप्यनेकेषु नियता चावसत् स्वयम् ॥	७
आस्तीर्य मुसलांश्चापि गोष्ठेषु नियतेन्द्रिया ।	
उपवासपरा भूत्वा तुष्टाव जगदीश्वरम् ॥	८
एवंविधान्यनेकानि कृत्वा नियतमानसा ।	
चरन्ती नैव लेभे सा पुत्रजन्मकृतं सुखम् ॥	९
कस्य चित्त्वथ कालस्य दयया धर्मदेवता ।	
बिभ्रती पुल्कसीरूपं धृत्वा वेत्रञ्च पुत्रिकाम् ॥	१०
‘पृच्छध्वं चे’ त्यनुपदं भाषमाणा गतश्रमा ।	
पश्यन्ती बालिशान् पाणौ वदन्ती लक्षणान्यथ ॥	११
अञ्जनायाः समीपं वै प्रयाता धर्मदेवता ।	
अञ्जना तां समाहूय विनिवेक्ष्य वरासने ॥	१२
शूर्पे स्वर्णमये मुक्तातण्डुलान् प्रणिधाय वै ।	
तर्पयित्वा निमित्तज्ञां पर्यपृच्छदनाकुला ॥	१३

अञ्जना —

‘निमित्तज्ञे ! कथं ब्रूहि मम पुत्रोऽस्ति वा न वा ? ।	
सत्येन वद धर्मज्ञे ! पृच्छन्त्या मम सर्वशः ॥	१४
यद्यहं प्राप्नुयां पुत्रमिष्टं बलिनमञ्जसा ।	
दास्यामि तव तत्सर्वं यद्यदिच्छसि चेतसा ’ ॥	१५

पुल्कसी —

‘अभीष्टस्तव पुत्रो वै भविष्यति न संशयः ।	
मा शोकं कुरु कल्याणि ! धर्मेण मम ते शपे ॥	१६
श्रीवेङ्कटागिरौ सप्तसाहसं वत्सरान् पुनः ।	
तपः कुरु ततः पुत्रमवाप्स्यसि सुशोभनम् ’ ॥	१७

इत्युक्त्वा सा निमित्तज्ञा यथागतमथो ययौ ।	
अञ्जना चिन्तयन्ती तद्वाक्यं तस्या मनोरमम् ॥	१८
प्रचक्रमे तपश्चर्तुं श्रीवेङ्कटगिरेस्तटे ।	
आकाशगङ्गानिकटे सिद्धसङ्घनिषेविते ॥	१९
वाय्वाहारा च वायुं वै समुद्दिश्य सुदारुणम् ।	
तपश्चचार दान्तेयं प्रीणयन्ती व्रतैरिमम् ॥	२०
ततः प्रीतमना वायुः फलमेकं दिनेदिने ।	
भक्षणार्थं ददौ तस्यै दृग्गोचरमुपागतः ॥	२१
अतीते सप्तसाहस्रे वत्सराणामनन्तरम् ।	
पार्वतीसहितः शम्भुः तदाश्रममुपागमत् ॥	२२
विजहार च तत्रायं तत्रतत्र वनान्तरे ।	
तस्मिन्नवसरे तत्र विलासार्थमुपागतम् ॥	२३
चिक्रीड वानरद्वन्द्वं तदद्भुतमिवाभवत् ।	
पार्वत्यै दर्शयामास ' पश्य पश्ये ' ति धूर्जटिः ॥	२४
सा च दृष्ट्वा कपिद्वन्द्वं क्रीडितं व्रीडिता शनैः ।	
अथ तस्या मनश्चासी ' दावां कपितनूधरौ ॥	२५
विहरिष्याव ' इति हि लोकस्य रुचिरीदृशी ।	
ततः कपियुगं भूत्वा पार्वतीपरमेश्वरौ ॥	२६
चिक्रीडतुः वनान्तेऽस्मिन् उभौ मुदितमानसौ ।	
तयोर्वीर्यं तदा वायुरथ पत्रपुटान्तरे ॥	२७
आहृत्य प्रददौ तस्या अञ्जनायाः करान्तरे ।	
मन्वाना भक्ष्यमित्येव तद्भक्षितवती ह्यसौ ॥	२८
दधौ दोहदचिह्नानि क्रमेण नियतेन्द्रिया ।	
अञ्जना कञ्जनयना प्रफुल्लनलिनानना ॥	२९



- चिन्तयन्ती किमेतन्मे निर्दोषायाः समागतम् ।  
अथवा विधिवैरूप्यमहो मे मन्दभाग्यता ॥ ३०
- केन दोषेण चाहं वा ईदृशं रूपमागता ।  
चिन्तयन्ती चिरं सा वै व्रीडिता दुःखिता स्थिता ॥ ३१
- आश्वासयन्ती तां प्राह दिवि वागशरीरिणी ।  
'मा विषादं गमः पुत्रि ! भवितव्यमिदं तव ॥ ३२
- दुष्टात्मा रावणो नाम राक्षसो लोककण्टकः ।  
स तु देवस्त्रियः सर्वा बन्दिग्राहं ग्रहीष्यति ॥ ३३
- त्रिलोकीमपि यस्माद्वै रावयिष्यति कर्मणा ।  
तस्मा 'द्रावण' इत्येव प्रसिद्धिमधियास्यति ॥ ३४
- ततस्तन्निग्रहार्थाय हरिः प्रत्यर्थितः सुरैः ।  
आगमिष्यति भूलोके रघूणामन्वये शुभे ॥ ३५
- ततस्तस्य सहायार्थमसह्यबलविक्रमः ।  
शौर्यधैर्यगुणोपेतो बलीयान् विजितेन्द्रियः ॥ ३६
- अप्रमेयगुणोपेतः पुत्रस्तव भविष्यति ।  
इमामाकाशगां वाचं श्रुत्वा सम्प्रीतमानसा ॥ ३७
- पित्रे न्यवेदयत्सर्वं चरितञ्च नभस्वनः ।  
तच्छ्रुत्वा च पिता तस्याः प्रययौ परमां मुदम् ॥ ३८
- सुतोत्पत्तिमथाकाङ्क्षन् तस्या निभृतमुन्मनाः ।  
आपाण्डरीकृता तस्या रराज तनुवल्लरी ॥ ३९
- कलङ्कहीना चन्द्रस्य लेखेवासितपक्षके ।  
विनीलचूचुकं रेजे कुचमण्डलमुन्नतम् ॥ ४०

पद्मकोशस्य संलीनभ्रमरस्य श्रियं दधत् ।  
न शशाक भुवं गन्तुं गर्भस्यातिभरात्ततः ।  
इत्थं प्रववृधे तस्या गर्भः प्रीतिविवर्धनः ॥

४१

आञ्जनेयोत्पत्तिमामदिवसनक्षत्रनिर्णयः

ततो वै दशमे मासि सम्प्राप्ते नलिनेक्षणा ।  
असूत पुत्रं बलिनमुदयत्यहिमत्विषि ॥  
श्रावणे मासि नक्षत्रे श्रवणे हरिवासरे ।  
कुण्डलोद्भासिगण्डान्तमुपवीतिनमुज्ज्वलम् ॥  
कौपीनोद्भासितश्चैव दीप्यमानमिव श्रिया ।  
बिभ्राणं वानराणां वै रूपमत्यद्भुतं महत् ॥  
रक्तास्यपुच्छमूलन्तु सुवर्णसदृशद्युतिम् ।  
अतोऽयं जातमात्रोऽपि नितरां तु बुभुक्षितः ॥

४२

४३

४४

४५

आञ्जनेयस्य फलबुद्ध्या रविमण्डलं प्रत्युत्पतनम्

उदयाचलसंरूढं ददर्श रविमण्डलम् ।  
नितान्तरक्तवर्णेन फलबुद्धिरभूत्तदा ॥  
फलमित्येव मन्वानो रविं भक्षितुमुद्यतः ।  
ग्रहिष्यामीति निश्चित्य श्रीवेङ्कटगिरेस्तदात् ॥  
उदतिष्ठन्महावेगादुदयाचलशेखरम् ।  
ग्रहीतुमुद्यते तस्मिन् बिम्बं सूर्यस्य वै बलात् ॥  
हाहाकृतमभूत्सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।  
ततश्चतुर्मुखो ब्रह्मा स्वयमागत्य वेगतः ॥  
ब्राह्ममखं युयोजासौ कुपितः तज्जिघांसया ।  
तदाऽस्त्रमागतं दृष्ट्वा बालः क्रीडन्निव क्षणात् ॥

४६

४७

४८

४९

५०

निरस्य पुच्छप्रान्तेन बभूव विगतज्वरः ।	
प्रत्याख्यातं ततो दृष्ट्वा तदस्त्रं ब्रह्मणोरितम् ॥	५१
विसिष्मिये सुराणां वै गणः किमिदमित्यपि ।	
कथमाकाशयानं वै कथं सूर्याभिधावनम् ॥	५२
प्रत्याख्यानं कथञ्चासीदित्यूचुर्विस्मितास्तदा ।	
ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् ॥	५३
भुवनं विस्मयं प्राप कर्म दृष्ट्वाऽद्भुतं कपेः ।	
हनूमानपि तं दृष्ट्वा सूर्यं निर्विण्णमानसः ॥	५४
भूमौ पपात तेजस्वी ब्राह्मेणास्त्रेण ताडितः ।	
अथाञ्जना समागत्य शोकपर्याकुला स्वयम् ।	
अश्रुपूर्णाक्षिपक्ष्माग्रा बभाषे सुरसत्तमान् ॥	५५

अञ्जना —

‘भवन्तो निर्घृणा देवा जातमात्रे शिशौ कथम् ।	
ब्राह्ममस्त्रं प्रयुज्याशु कृतार्था इव सम्प्रति ॥	५६
ईदृशा भवतां पुत्रा न सन्ति किमु देवताः ।	
प्रारब्धमीदृशं कर्म कथं घोरतरं महत्’ ॥	५७

आञ्जनेयस्य ब्रह्मादिदत्तसर्वावध्यन्ववरप्राप्तिः

वदन्तीं परुषं वाक्यमञ्जनामित्थमञ्जसा ।	
सान्त्वयन्तः सुराः सर्वे वीर्यजातमुमापतेः ।	
देवकार्यञ्च संवीक्ष्य वाचमूचुरिमां तदा ॥	५८

देवाः—

‘अञ्जने ! मा विषीद त्वं तव पुत्रस्य धीमतः ।	
दास्यामो दुर्लभानस्य वरान् वयममानुषान् ॥	५९

ससुरासुरगन्धर्वैः यक्षरक्षोगणैस्तथा ।

पिशाचैः गुह्यकैः सोऽयमवध्यो भवतु ध्रुवम् ॥

६०

तथा च शस्त्रसङ्घैश्च बाणैश्च विविधैरपि ।

अवध्यत्वमवाप्नोति शासनान्नः तवाऽऽत्मजः ॥

६१

बलेन प्रज्ञया चापि यातु सर्वातिशायिताम् ।

शत्रूणामपि दुर्धर्षः पुत्रस्तव भविष्यति ' ॥

६२

इति दत्त्वा वरं देवगणेषु विरतेष्वथ ।

चतुर्मुखः समाहूय चाञ्जनामिदमब्रवीत् ॥

६३

क्रीडाद्रेरञ्जनाचलनामधेयप्राप्तिः

ब्रह्मा —

“ अञ्जने ! त्वं हि शेषाद्रौ तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ।

पुत्रं सूतवती यस्मात् लोकत्रयहिताय वै ॥

६४

प्रसिद्धिं यातु शैलोऽयमञ्जने ! नामतस्तव ।

‘ अञ्जनाचल ’ इत्येव नाम कार्या विचारणा ” ॥

६५

इति तस्यै वरं दत्त्वा देवा ब्रह्मपुरोगमाः ।

स्वं स्वं स्थानं समुद्दिश्य यथागतमथो ययुः ॥

६६

अञ्जना पुत्रमादाय श्रीवेङ्कटगिरेस्तटम् ।

पुनरागम्य सामोदमलञ्चके निजाश्रमम् ॥

६७

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे भृगुनारदसंवादे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

अञ्जनाचलाभिधानहेतुवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ।



अथ षष्ठोऽध्यायः

— : \* : —

क्रीडाद्रेः श्रीवेङ्कटाभिधानो गेढातः

भृगुः -

‘अयं शिलोच्चयः केन ‘वेङ्कटाचल’ इत्यपि ।  
मुनीन्द्र भुवि विख्यातः ? तद्वदस्व सहेतुकम्’ ॥ १

नारदः—

अत्रापि कारणं वक्ष्ये शैलोऽयं येन हेतुना ।  
वेङ्कटाद्रिरिति ख्यातः शृणुष्वैकमना मुने ! ॥ २  
श्रीगिरेः पश्चिमे भागे पुरं नन्दनसंज्ञकम् ।  
हस्त्यश्वरथसम्बाधं बभूव भुवि विश्रुतम् ॥ ३  
पुरन्दराभिधः कश्चित् सोमयाजी द्विजोत्तमः ।  
उवास तस्मिन् नगरे याजको वेदपारगः ॥ ४  
तस्य जज्ञेऽतिमतिमान् पुत्रो माधवसंज्ञकः ।  
कालक्रमेण ववृधे वेदाध्ययनतत्परः ॥ ५  
यो गुणैः पितरं सर्वैः अत्यक्रामदिवाञ्जसा ।  
क्रमेण मांसलौ बाहू बभार द्विजपुत्रकः ॥ ६  
यौवने समनुप्राप्ते वक्षस्यतिविशालताम् ।  
तस्यासीच्चन्द्रलेखाख्या पत्नी कमललोचना ॥ ७  
सर्वलक्षणसम्पन्ना दिव्यनारीव भामिनी ।  
स तस्यामनुरक्तोऽभूद् भृशं द्विजकुमारकः ॥ ८  
तन्व्या हृतो यौवनेन रूपेणाप्रतिमेन च ।  
विहरन् मुदितो नित्यमास्तेस सह भार्यया ॥ ९

विहारयोग्ये देशे च वनोद्देशे मनोहरे ।	
अथास्मिन्नन्तरे काले वसन्तः प्रादुरास ह ॥	१०
उपदेष्टुमिव क्रीडाविशेषांस्तु द्विजन्मनः ।	
पुंस्कोकिलाः चुक्कजुर्वै चूतवृक्षसमाश्रिताः ॥	११
वियोगिमानसेष्वन्तः जनयन्तः परां रुजम् ।	
अशोककुसुमं लोकान् मदनस्य दिधक्षतः ॥	१२
प्रतप्तमिव नाराचं व्यरोचत मनोहरम् ।	
प्रसूनापचयं कर्तुं निर्गतः चन्द्रलेखया ॥	१३
विलासविपिनोद्देशे सर्वपुष्पमनोरमे ।	
आरामे विहरंस्तस्मिन् तत्र तत्र स भार्यया ॥	१४
सरसीं सत्त्वसम्पन्नां ददर्श विमलोदकाम् ।	
पद्मखण्डैश्च सम्पूर्णाभिन्दीवरवनाकुलाम् ॥	१५
सुगन्धिभिः प्रसूनैश्च पूरितां तटभूरूहाम् ।	
तन्व्या च सञ्चरंस्तीरे स्निग्धच्छायासमावृते ॥	१६
चण्डालकन्यकां तन्वीं ददर्श सुमनोहराम् ।	
इन्दीवरदलश्यामां प्रफुल्लकमलेक्षणाम् ॥	१७
पीनोन्नतकुचां तन्वीं पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ।	
मूर्तामिवाऽज्ञां मारस्य सुस्निग्धकुटिलालकाम् ॥	१८
तनुमध्यां वरारोहां 'मालिनीं' नाम नामतः ।	
तां दृष्ट्वा विस्मयाऽऽविष्टश्चिन्तयामास वै द्विजः ॥	१९
जातेरननुरूपां तां मत्वा द्विजकुमारकः ।	
'अत्यद्भुतमिदं रूपं विधिना केन निर्मितम् ॥	२०
मन्ये द्रष्टुमशक्यं वै विधेर्वा रूपमीदृशम् ।	
अन्धः खलु जगत्स्रष्टा विधाता रूपमीदृशम् ॥	२१

यतश्चकार वै व्यर्थमभोग्यमपि मादृशाम् ।	
अथ वा किमु रत्नस्य व्यर्थया जातिचिन्तया ॥	२२
केनेदमद्भुतं रूपं लभ्यते सुकृतं विना ।	
अथैनानुपसर्पामि सोऽहं स्पृश्येतरामपि ॥	२३
चण्डालवाटिकादृष्टं किं रत्नं दुष्यतेऽथ वा ' ।	
इति सञ्चित्य वै तस्याः समीपमुपजग्मिवान् ॥	२४
अनुरागवती चास्मिन् विप्रे चण्डालकन्यका ।	
तयोर्विद्धमभूच्चैतः शितैः मदनसायकैः ॥	२५
प्रापयित्वा गृहं भार्या चन्द्ररेखां द्विजोत्तमः ।	
शनैः शनैः समीपं वै तस्याः स्वयमुपागमत् ॥	२६
अथैनां वरयामास हृष्टो द्विजकुमारकः ।	
अविचार्य महत्पापं तत्सङ्गमसमुद्भवम् ॥	२७
' मा भैषीस्त्वं वरारोहे द्विजोऽयमिति भामिनि ! ।	
स्त्रीरत्नं दुष्कुलाच्चापि ब्राह्ममित्यनुशासनम् ॥	२८
अतोऽहं भवतीं याचे वाचा मधुरपूरया ।	
मम चानुमतिं दातुं त्वया रन्तुमिहार्हसि ' ॥	२९
इत्युक्त्वा पाणिमस्या वै स्विन्नं जग्राह पाणिना ।	
सङ्गतः सोऽथ मालिन्या तया द्विजकुमारः ॥	३०
तदीयमेव मांसादिमाहारं रोचयन् सदा ।	
सुरामपि पिबिन्नित्यं चिक्रीड चिरमुन्मनाः ॥	३१
चिरकाले व्यतीते तु दरिद्रश्चाभवद् द्विजः ।	
विधाय चौर्यहत्यादिपापानि धनमर्जयन् ॥	३२
तच्च तस्यै ददद्विचित्रं किञ्चित्कालं निनाय सः ।	
ततस्तत्राप्यशक्तोऽयं तदीयैश्च निराकृतः ॥	३३

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे षष्ठोऽध्यायः ३३७

चचार भुवने भ्रान्तो न वासं प्राप्य कुत्रचित् ।  
 आजगाम चरन् सोऽयं समीपं शेषभूभृतः ॥ ३४  
 आरुरोह गिरिं चापि कथञ्चिद्दीनचेतसा ।  
 तस्मिन्नेव क्षणे तस्य शरीरमभितस्तदा ॥ ३५  
 आपादचूडं जज्वाल तदद्भुतमिवाभवत् ।  
 तत्तस्य पापजातञ्च भस्मीभूय क्षणान्तरात् ॥ ३६  
 कृत्वा चटचटारावं पतितं धरणीतले ।  
 जाज्वल्यमानो विप्रोऽपि ब्रह्मतेजोभिरञ्जसा ॥ ३७  
 राराज विगतैनस्कः शरदीव दिवाकरः ।  
 तं दृष्ट्वा विस्मिताः सर्वे मुनयस्तत्र सङ्गताः ॥ ३८  
 पप्रच्छुस्तं महाभागा द्विजपुत्रं महर्षयः ।  
 'किमिदं वद विप्रेन्द्र ! न परो विस्मयो महान् ॥ ३९  
 आचक्ष्वास्माकमामूल्यत् वृत्तान्तमिह सर्वतः ' ।  
 इति तेषां वचः श्रुत्वा माधवो विस्मितो द्विजः ॥ ४०  
 आदितः प्रभृति प्राह वृत्तान्तं निजमञ्जसा ।  
 तच्छ्रुत्वा मुनयः सर्वे विस्मयं परमं गताः ।  
 उच्युर्वचनमकिलष्टं वृषशैलाश्रितं महत् ॥ ४१

ऋषयः -

अनेन पापजातं वै यस्माद्गन्धं द्विजन्मनः ।  
 'वेङ्कटाचल' इत्यस्य प्रसिद्धिर्भुवि वर्तताम् ॥ ४२  
 "सर्वपापानि वै प्राहुः कटस्तद्वाह उच्यते ।  
 सर्वपापदहो यस्मात् वेङ्कटाचल इत्यभूत्" ॥ ४३



इत्युक्त्वा मुनयः सर्वे यथागतमथो ययुः ।

द्विजोऽपि शान्तचित्तोऽस्मिन् अचले संयतेन्द्रियः ।

दुश्चरं वै तपः कृत्वा तेन कैवल्यमाप्तवात् ॥

४४

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलनामधेयहेतुवर्णनं

नाम षष्ठोऽध्यायः ॥

— —

अथ सप्तमोऽध्यायः

— —

श्रीवेङ्कटेशाराधकचोलराजसु तोत्पत्तिक्रमः

भृगुः —

“ चोलराजसुतः कश्चित्कलौ खलु भविष्यति ।

‘चक्रवर्त्ति’ स शेषाद्रौ वैकुण्ठं ह्यर्चयिष्यति ” ॥

१

इत्येवं कथितं पूर्वं त्वया मे मुनिसत्तम ! ।

तन्ममाचक्ष्व विप्रेन्द्र विस्तरेणैव नारद ॥

२

चोलराजसुतः कोऽयं कुत्र देशे वसिष्यति ? ।

कथं वा शेषशैलेन्द्रमर्चयिष्यति भक्तितः ? ॥

३

तस्य वा कीदृशी भक्तिः भविष्यति रमापतौ ? ।

न त्वदन्योऽस्ति भूलोके वेदिता भाविनां कश्चित् ।

मय्यनुग्रहबुद्ध्या त्वं कथयस्व कथामिमाम् ’ ॥

४

श्रीनारदः —

कलौ चोलनृपः कश्चित् बभूव भुवि विश्रुतः ।

धार्मिको नीतिशास्त्रज्ञः शशास पृथिवीमिमाम् ॥

५

स कदाचिद्वने रन्तुमाखेटेन महीपतिः ।

किङ्करान् वनपालांश्च व्यादिदेश महामनाः ॥

६

स्वयं विनिर्ययौ तूर्णं हयमारुह्य रंहसा ।

शेषाचलवनोद्देशे विचचार मृगन्तकः ॥

७

अश्वानाञ्च गजानाञ्च श्रुत्वा घोरं महारवम् ।

गुहाभ्यः प्रनिनिर्याताः सिंहव्याघ्रमुखा मृगाः ॥

८

‘इतः सिंहा इतो व्याघ्रा इतश्च वनवारणाः’ ।

इति निर्दिश्यमानान् वै जघान मृगयूथपान् ॥

९

सङ्घशश्च वराहाणां यूथानि निशितैः शरैः ।

खड्गान् खड्गेन नृपतिः विव्याध विपिनान्तरे ।

मृगयाऽऽकृष्टचित्तोऽयं विचरन् कानने मुहुः ॥

१०

**चोलराजस्य मृगयाविहारकाले नागकन्यकादर्शनादिः**

न लेभे विश्रमं राजा यथेन्द्रियवशं गतः ।

ततस्तेन नरेन्द्रेण कन्या काञ्चनरूपिणी ॥

११

नलिनोत्फुल्लनयना चन्द्रबिम्बनिभानना ।

विश्वविस्मयलवण्या श्यामा पीनपयोधरा ॥

१२

राजहंसी चरन्तीव दृष्टा यौवनशालिनी ।

ततः प्रसूनापचयं कुर्वन्ती सा मनोरमम् ॥

१३

जहार चेतः तस्येयं नदीव पुलिनं जलैः ।

प्रसूनान्यपचिन्वन्त्याः सन्नमध्यबलित्रयम् ॥

१४

उन्नमत्कुचमालोक्य वपुस्तस्या भृशोत्सुकः ।

न शशाक वनोद्देशात् पदात्पदमपि स्वयम् ॥

१५

चलितुं नृपतिस्तत्र व्याधविद्धो मृगो यथा ।

निर्जितः स्मरबाणेन सोऽयं मर्मसु भेदिना ॥

१६

विसृज्य सर्वसैन्यानि तत्समीपं ययौ नृपः ।	
ततः सा च वरारोहा विलोक्य नृपतिं तदा ॥	१७
मनोज्ञवेषं सम्प्राप्तं न्यस्तचापमिव स्मरम् ।	
विद्धा मन्मथबाणेन बभूवाऽऽयतलोचना ॥	१८
अपचेतुं न पुष्पाणि शक्ता तद्गतमानसा ।	
मुहुर्विलोकयन्त्येनं राजानं सा मनःस्वनी ॥	१९
करेण पुष्पापचयं दृग्भ्यां राजावलोकनम् ।	
कुर्वती तन्मनास्तन्वी तथा च स्मरविभ्रमान् ॥	२०
दर्शयन्ती तथा तन्वी नातिक्रान्ता च दृक्पथम् ।	
ततो राजा समागम्य पृष्ठवान् मञ्जुभाषिणीम् ।	
कुलं वृत्तञ्च शीलञ्च तस्याः स्वयमनिन्दितम् ॥	२१

राजा —

‘का त्वं चरसि कल्याणि ! वने विगतभीः कथम् ।	
पिता को जननी का वा कुत्र वा वसतिस्तव ॥	२२
परिग्रहोऽसि कस्य त्वं न वा पाणिग्रहस्तव ? ।	
पाणिग्रहणकालोऽयं वर्तते तव शोभने ॥	२३
न चेत्परिग्रहोऽन्यस्य वराङ्गि वरये तदा !	
स्वायत्तीकर्तुमात्मानं जीवितञ्च त्वमर्हसि ’ ॥	२४

कन्यका —

‘धनञ्जयाभिधानस्य सर्पराजस्य धीमतः ।	
पुत्री वसामि पाताले लालिता पितुरन्तिके ॥	२५
भोगानमानुषांश्चापि मुञ्चाना तत्प्रसादतः ।	
क्रीडन्ती च वयस्याभिः पाताले न्यवसं चिरम् ॥	२६

पाणिग्रहणकाले वै सम्प्राप्तेऽपि पिता मम ।	
चिन्तयामास को वास्या भविता सदृशो वरः ? ॥	२७
पित्रा नानुमता चाहमभिलाषं तव प्रभो ! ।	
बन्धुभिश्च तनोऽभीष्टैः नानुमन्तुमिहोत्सहे ॥	२८
पितरं मम पृच्छस्व गत्वा पातालमञ्जसा ।	
दास्यत्यनुमतिं नूनं गुणतः शीलतस्तव ॥	२९
विनयं रक्ष कल्याण ! कथञ्चिदपि चानघ ।	
चन्द्रोदयविवृद्धोऽब्धिः किं वेलामतिलङ्घ्यते ? ' ॥	३०

‘नायं व्यतिक्रमः सुभ्रूः ! नाधर्मश्चात्र विद्यते ।	
गान्धर्वोऽयं विवाहोऽपि मुनिभिः परिकीर्तितः ॥	३१
परस्परानुरागेण सङ्गता राजकन्यकाः ।	
श्रूयन्ते बहवश्चापि न विहातुमिहार्हसि ॥	३२
अयं विवाहो धर्म्यश्च स्वर्ग्यश्च नलिनेक्षणे ।	
अस्मिन्नर्थे विशालाक्षि प्रत्यवायो न विद्यते ॥	३३
अतस्त्वय्यनुरक्तं मां कृतार्थयितुमर्हसि ।	
जीवितं वा सुखं वापि त्वां विहाय न रोचते' ॥	३४
इति ब्रुवति भूपाले कन्या कामवशंवदा ।	
लज्जानतमुखी भूमिं लिखन्ती नखरेण सा ॥	३५
वक्तुकामेव संरब्धा संहता लज्जया मुहुः ।	
अङ्गीचकार चोद्वाहं राज्ञा नागस्य कन्यका ॥	३६
जोषमास्थाय विपुलं मुहूर्तं स्मावतिष्ठते ।	
अथानया समागत्य लतामण्डपसंश्रितः ॥	३७

अन्वभूत्सुरतं तस्या भूयो रागविवर्धनम् ।	
यामवशेषेऽथ दिने गन्तुकामा कृतत्वरा ॥	३८
आमन्त्रयामास नृपं कथञ्चिद्विरहाकुला ।	
नृपश्च दुःखितोऽत्यर्थमाश्लिष्याश्लिष्य भामिनीम् ॥	३९
कथाञ्चिदनुमन्तुं वै शशाक गमनं तदा ।	
नृपेणानुमता साऽथ सङ्गमश्रमविह्वला ॥	४०
निमीलिताधनयनानिर्गता वरवर्णिनी ।	
ततः पातालमाविश्य गत्वा च पितुरन्तिकम् ॥	४१
चोलराजस्य चरितं कथयामास सर्वतः ।	
नागराजोऽपि तां श्रुत्वा कथितां कन्यया कथाम् ॥	४२
प्रदूर्षमत्तुलं लेभे सदृशोऽयमिति ब्रुवन् ।	
निर्गत्य नृपतिश्चापि लतामण्डपसंश्रयात् ॥	४३
भावयन् विभ्रमांस्तस्या जगाम मृगयंश्चमूम् ।	
पश्चिमाचलशृङ्गाग्रे लम्बमाने दिवाकरे ॥	४४
व्यलोकत महाराजः सेनामनुगतां तदा ।	
अपरां दिशमासाद्य ह्यन्वरज्यत भास्करः ॥	४५
बिभ्रती कुङ्कुमारक्तं पयोधरभरं तदा ।	
बभौ सन्ध्यारुणं व्योम स्फुरत्तारकमण्डलम् ॥	४६
प्रवालरक्तो मुक्ताभी रञ्जितो वारिधिर्यथा ।	
जगाहे जगदण्डान्तस्तिमिरञ्च शनैःशनैः ॥	४७
हृदयं विषयासक्तमविद्यातिमिरं तथा ।	
स च सैन्यान्वितस्तावत् प्रययौ निजमास्पदम् ।	
स्मारंस्मारं विशालक्षीं सुरतश्रमविह्वलाम् ॥	४८

**चोलराजस्य नागरुन्यायां सार्वभौमलक्ष्मणोपेतमुतोत्पत्तिः**

आपन्नसत्त्वा ददृशे नागराजस्य कन्यका ।	
सर्वलक्षणसम्पन्ना पितुर्विदधती मुदम् ॥	४९
तामथालोक्य दैवज्ञा इदमूचुर्वचस्तदा ।	
‘अस्यामुत्पत्स्यते पुत्रः चक्रवर्ती महाद्युतिः ॥	५०
पृथिवीं सागरोपेतां सशैलवनकाननाम् ।	
पालयिष्यति धर्मेण महेन्द्रसदृशः प्रभुः ’ ॥	५१
अथ सा दशमे मासि पुत्रं प्राप्तुं सुन्दरम् ।	
सर्वलक्षणसम्पन्नं सार्वभौमपदोचितम् ॥	५२

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
चोलराजसुतोत्पत्तिवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः

अथ अष्टमोऽध्यायः

**चोलराजसुतरस्य पातालात् स्वपितृन्तिके आगमनम्**

नारदः --

पुत्रस्य मुखलावण्ये पुत्रिकाया धनञ्जयः ।	
तृप्तिं न विन्दति स्मायं प्रीत्युफुल्लेन चक्षुषा ॥	१
ववृधे नागराजस्य परितोषेण वै शिशुः ।	
चन्द्रमा इव कृष्णान्यपक्षे सति दिने दिने ॥	२
कस्य चित्त्वथ कालस्य पोषितो मातुरन्तिके ।	
पप्रच्छ मातरं बालः ‘पितरं दर्शयेति’ हा ॥	३

तच्छ्रुत्वा पूर्ववृत्तान्तं सा माताऽस्मै न्यवेदयत् ।	
तदाकर्ण्य च बालोऽयं पुनः प्रपच्छ मातरम् ॥	४
‘पितरं वीक्षितुं शीघ्रं क्षोणीतलनिवासिनम् ।	
वर्तते ह्यभिलषो मे महान् मनसि संप्रति ॥	५
भूलोकगमने योग्यं मार्गमावेदयस्व मे ।	
येनाहं पितुरुत्सङ्गं गमिष्यामि मुदाऽन्वितः ’ ॥	६
इति तस्य वचः श्रुत्वा प्रहृष्टा नागकन्यका ।	
भूलोकगमने योग्यं बिलश्चादर्शयत्तदा ॥	७
सोऽपि तेनैव मार्गेण प्राप्याऽऽशु धरणीतलम् ।	
चोलराजमुपागम्य वन्दे पादयोस्तदा ॥	८
प्रपच्छ प्रणतं भूमौ ‘कस्त्वम् ?’ इत्यवनीपतिः ।	
पृष्ठः प्राह स बालोऽयं वृत्तान्तमखिलं मुने ! ॥	९
वृत्तान्तमखिलं राजा श्रुत्वा तु तदुदीरितम् ।	
ग्रहणे बालकस्यास्य संशयं परमं ययौ ॥	१०
संशयाविष्टचित्तोऽयं जोषमास्थाय भूपतिः ।	
मुहूर्तमिव भूयोऽपि तमेवालोकयन् स्थितः ॥	११

चोलराजसुतस्याशरीर्युक्त्या पितृकृतगज्याभिषेकक्रमः

ततश्चाकाशगा वाणी नृपं संशयितं मुहुः ।	
आश्वासयन्ती वचनैः उच्चचार न वीक्षिता ॥	१२
‘मा विचारय राजेन्द्र ! पुत्रोऽयं ते न संशयः ।	
चक्रवर्ती महाराजो भविष्यत्यसमो भुवि ॥	१३
अतीव विष्णुभक्तश्च भविष्यति महामतिः ।	
शेषाद्रौ च स्वयं व्यक्तं विष्णुमभ्यर्चयिष्यति ॥	१४

प्रीतश्चापि महादेवो ह्यर्च्यभावमतिक्रमन् ।	
सल्लापं तेन सुचिरं करिष्यति दिने दिने ॥	१५
अभिषेचय राजेन्द्र ! पुत्रं राज्येऽविचारतः ।	
इति राजा समाकर्ण्य नानृतं सुरभाषितम् ॥	१६
श्रद्धे पुत्रमित्येनं जयन्तं वासवो यथा ।	
ततो राजा समागम्य संवृतो यत्न सङ्गमः ॥	१७
आत्मनस्तस्य मानुश्च त देशं सुमनोरमम् ।	
तत्र निर्माय विपुलं पुरं पुत्रस्य नामतः ॥	१८
तत्ताभ्यषेचयच्चैनमाधिराज्ये समागतः ।	
ततः स 'चक्रवर्ती' ति प्रथितो भुवि पार्थिवः ।	
शशास पृथिवीं कृत्स्नां समुद्रवसनान्विताम् ॥	१९

चक्रवर्तिनं प्रति गोपालनिवेदिनवेङ्कटाचलवल्मीकीदन्तः

ततः कदाचित् गोपालाः तदाज्ञापरिपालकाः ।	
समागम्य महीपालमिदं वचनमब्रुवन् ॥	२०

गोपालाः—

'शेषाचले वयं राजन् ! विहरामो गवां व्रजात् ।	
क्षीरं निदेशाद्देवस्य भाण्डेषु निहितं सदा ॥	२१
तदानयनकाले वै दृश्यते महद्भुतम् ।	
विवृद्धं तत्र वल्मीकमेकं वसति भूधरे ॥	२२
आगच्छामो हि मार्गेण वयं तेन महीपते ! ।	
आदाय भाण्डं क्षीराणां सर्वं तत्र हि भज्यते ॥	२३
सावधाना अपि वयं न पश्यामोऽत्र कारणम् ।	
विचारय महीपाल ! किमेतदिति सम्प्रति ॥	२४



राजा दैविकमेवेति स निश्चित्य सुविस्मितः ।  
 सायं ध्यायन् हृषीकेशं तद्गतेनान्तरात्मना ॥ २५  
 शुचिर्भूतश्च सुष्वाप यतवाक्कायमानसः ।  
 ददर्श स्वप्नमेकञ्च नृपस्तस्मिन्निशान्तरे ॥ २६

चक्रवर्त्तिनो भगवत्प्रकाशितस्वप्नदर्शनम्  
 प्रातरुत्थाय विधिवत् संध्यामन्वास्य भूपतिः ।  
 आहूय मन्त्रिप्रवरानिदं वचनमब्रवीत् ॥ २७

राजा—

‘मन्त्रिणः शृणुतास्यां वै निशायां स्वप्नमद्भुतम् ।  
 अदृष्टपूर्वञ्चान्येन गुह्याद्गुह्यतरं महत् ॥ २८  
 कालमेघनिभः कश्चिदतिसुन्दरमूर्तिमान् ।  
 अद्भुतः पुरुषो दृष्टः पुण्डरीकायतेक्षणः ॥ २९  
 अपृच्छं पुरुषं चाहं ‘कुत्रत्यः को भवा’ निनि ।  
 विमर्थं चागनोऽस्यद्य तव किं करवाण्यहम् ? ॥ ३०  
 इति पृष्टो मया प्राह “देवेन गिरिवासिना ।  
 प्रेषितोऽहं नरव्याघ्र ! श्रीनिवासेन धीमता ॥ ३१  
 अहं वसामि शेषाद्रेः सदा तस्यान्तिके मुदा ।  
 ‘श्रीवेङ्कटगिरिरस्य प्रभावं तु महाद्भुतम् ॥ ३२  
 निवेदये’ति देवेन प्रेषितोऽस्मि तवान्तिकम् ।  
 शिलोच्चयेऽत्र वै शङ्खचक्रावनतहस्तकः ॥ ३३  
 श्रीभूमिसहितो नित्यं विहरन् राजतेतराम् ।  
 अद्वेर्दक्षिणतस्तस्य राजधानी विराजते ॥ ३४  
 गजवाजिरथोपेता सर्वाद्वुतमयी सदा ।  
 तस्मिन् गिरौ त्रयस्त्रिंशत्कोटिसङ्ख्याश्च देवताः ॥ ३५

सर्वे महर्षयश्चापि सिद्धा योगिवरास्तथा ।	
वसन्ति सर्वतीर्थानि तस्मिन् गिरिवरे शुभे ॥	३६
अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा ।	
प्राप्तिः प्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्टभूतयः ॥	३७
तस्याद्रेः पूर्वभागे वै चरन्ति विपुलं तपः ।	
पूर्वस्यां दिशि तस्याद्रेः ' कालहस्ती ' ति विश्रुतम् ॥	३८
पुरे तस्मिन् महादेवो वसति स्वयमादरात् ।	
कालहस्त्युत्तरे भागे सुवर्णमुखरी नदी ॥	३९
सर्वपापप्रशमनी दृश्यते मुनिसेविता ।	
शुकादयो मुनिवरा तस्यास्तीरे यतेन्द्रियाः ॥	४०
शेषशैलेशमुद्दिश्य तपस्तप्यन्ति दारुणम् ।	
तस्याद्रेः परितः सप्तयोजनान्तःस्थिता जनाः ॥	४१
सर्वपापविनिर्मुक्ता विष्णुलोकं प्रयान्ति वै ।	
अष्टार्णं मनुराजं तं जप्त्वा तु किमुत प्रभो ! ॥	४२
तं द्रष्टुं देवदेवेशं द्रष्टुं सन्न च शोभनम् ।	
एहि शेषाचलं शीघ्रम् ' ' इत्थमाहूतवान् स माम् ॥	४३
अथ तेनैव पुंसाऽहं शेषाचलमुपागमम् ।	
व्योमान्तर्विततोदारशृङ्गान्तः स्तम्भितद्रुमम् ॥	४४
तत्र गत्वा स पुरुषो ज्वलत्काञ्चनशोभितम् ।	
दिव्यं प्रदर्शयामास विमानं रत्नशोभितम् ॥	४५
स्वयमन्तर्दधे सोऽयं पश्यतो मम पूरुषः ।	
अन्तर्दधे विमानञ्च तस्मिन्नेव क्षणान्तरे ॥ '	४६
इति स्वप्नो मया दृष्टो ह्यद्भुतो रोमहर्षणः ।	
अदृष्टपूर्वश्चान्येन किमेतदिति चिन्त्यताम् ॥	४७

मन्त्रिणः—

‘देवेन त्वयि कारुण्यात् दर्शितं राजसत्तम ! ।	
स वल्मीकस्थान एव देवस्तिष्ठत्यसंशयम् ॥	४८
क्षीरभाण्डञ्च गोपाला भग्नमावेदयंस्तव ।	
गोपालैः यत्समादिष्टं वल्मीकस्थानमुत्तमम् ।	
तत्र क्षीराभिषेकेण देवो व्यक्तिं गमिष्यति ’ ॥	४९

नृपनिकटं प्रति शेषाचलोदन्तज्ञापनाय शबरगगनम्

इति सञ्चिन्त्यमाने वै शबरः कश्चिदाययौ ।	
कालमेघनिभो धन्वी खङ्गतूणीरभूषितः ॥	५०
बर्हिपिच्छान्वितशिरा कृतापल्लवभूषितः ।	
तूर्णमागत्य राजानं प्रणम्य शिरसा ततः ॥	५१
व्यजिज्ञपच्च राजानं प्रणतः प्राञ्जलिः स्थितः ।	
‘स्वामिन् ! वसामि शेषाद्रौ प्रियङ्गुकृषिमाचरन् ॥	५२
तेन जीवामि सततं सपुत्रः सहबान्धवः ।	
कश्चिच्छेतो वराहो वै तत्राऽऽगत्य दिने दिने ॥	५३
प्रियङ्गुं भक्षयत्येव निःशेषं मिषताञ्च नः ।	
तदर्थं रक्षणे तस्य नियुज्य मम पुत्रकम् ॥	५४
प्रियं प्रियङ्गुं देवाय निवेदयितुमुद्यतः ।	
मन्वर्थमगम सोऽहं सुदूरं तत्र पर्वते ॥	५५
तस्मिन्नवसरे पुत्रः प्रियङ्गुं लोलुपः करे ।	
सम्पद्य भक्षयित्वाऽऽस्ते तदपश्यं समागतः ॥	५६
देवानिवेदिते प्रीतिर्मम नासीत् कदाचन ।	
ततः क्रुद्धो रुदन्तं वै पुत्रं हन्तुं समुद्यतः ॥	५७

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे नवमोऽध्यायः ३४९.

तदा ह्याकाशगा वाणी मामवोचत् सुदारुणम् ।  
'मा वधीः पुत्रमेनं वै प्रियङ्गुमनिवेदितम् ॥ ५८  
देवः स्वीकृतवानेव त्वद्वृत्तेनैव तोषितः ।  
चक्रवर्तिसमीपञ्च गत्वा स्वप्नञ्च दर्शितम् ॥ ५९  
अभिज्ञानतया चोक्त्वा तमागच्छेति वै वद' ।  
इति तेन समाख्यातं वाचा व्योमगया तदा ॥ ६०  
वचः श्रुत्वा विचार्यार्थ 'किमेत'दिति मन्त्रिभिः ।  
राजाऽथ गोपवाक्यञ्च स्वप्नं शबरभाषितम् ॥ ६१  
एकीकृत्य सहानेन निर्ययौ शबरेण सः ।  
आदिश्य मन्त्रिणश्चैव गोसहस्रभवं भुवि ।  
क्षीरमानयतेत्येतत् शेषाचलतटं ययौ ॥ ६२

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
चोलराजस्वप्नवृत्तान्तवर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः

अथ नवमोऽध्यायः

चक्रवर्तिनः शबरेण सह वराहदर्शनार्थं शेषाचलगमनम्

नारदः—

निर्गत्य राजा शबरेण सार्धं प्रियं प्रियङ्गुं प्रति भक्षयन्तम् ।  
श्वेतं वराहं शबरोपदिष्टं दिव्यं विमानञ्च दिदृक्षुरत ॥ १  
विलोक्यन् श्वेतवराहमेकं प्रियङ्गुसस्यं किल भक्षयन्तम् ।  
गर्जन्तमायान्तमितस्ततोऽपि धोणारवं भीमपराक्रमञ्च ॥ २

दिव्यं विमानञ्च ददर्श तत्र नृपस्तदा रत्नविभूषितं तत् ।  
 अनेकसाहस्ररविप्रकाशं स्वप्नेऽद्भुतं दृष्टमदृष्टपूर्वम् ॥ ३  
 ततो वराहः सहसा प्रियङ्गुं व्याधस्य दृष्टः तमथोपभुज्य ।  
 दृग्गोचरं तस्य समीपजातं वल्मीकमेष प्रविवेश भूयः ॥ ४  
 न तद्विमानञ्च ददर्श भूयः तस्मिन् क्षणे विस्मितचित्त एषः ।  
 पप्रच्छ तं शाबरमेव ' तस्य हेतुं वद ' स्वेति स राजपुत्रः ॥ ५

चक्रवर्तिकृतक्षीराभिषेकेण वल्मीकात् श्रीनिवासाविर्भावः

स शाबरस्तस्य च तेन हेतुं तत्त्वेन पृष्टः स जगाद तस्मै ।  
 ' अयं वराहो न वराहमालं देवः स्वयं यो धरणीं बभार ॥ ६  
 इदं विमानञ्च तदीयमेव दिव्यं त्वया दृष्टमदृष्टपूर्वम् ।  
 वासोऽस्य वल्मीकमिदं महात्मन् ! महत्तरं नूनमितस्तु हेतोः ॥ ७  
 वल्मीकतोऽस्माच्च विनिर्गतोऽसौ भूयोऽपि तत्रैव विलीन आस्ते ।  
 अतोऽत्र राजन् ! निशितैः खनित्रैः वल्मीकमेतत् प्रविदार्य सद्यः ॥ ८  
 विलोक्यतां नूनमिहैव देवो वसिष्यतीति प्रतिभाति मेऽद्य ' ।  
 श्रुत्वा च तत् शबरवाक्यमेष वल्मीकमेतत् न विभेद भीतः ॥ ९  
 अथाभ्यषिञ्चत् स तमेव भक्त्या गोपाहतैः क्षीरघटैरनेकैः ।  
 स तत्र वाचां मनसामभूमिं ददर्श रत्नोज्ज्वलमद्भुतञ्च ।  
 दिव्यं विमानोत्तममाशु दृष्ट्वा हृष्टश्च मूर्ध्ना प्रणनाम भूयः ॥ १०  
 तन्मध्येऽसौ " नीलजीमूतकल्पं पाद्मवासं संश्रितत्राणहेतुम् ।  
 श्रीवत्साङ्गं पुण्डरीकायताक्षं शङ्खं चक्रं धारयन्तं कराभ्याम् ॥ ११  
 दातारं तं पाणिना वै वराणामन्येनाङ्गं विभ्रतं आजमानम् ।  
 पीतं वस्त्रं विभ्रतं राजमानं कोटिरान्तप्रोतरत्नोपशोभम् ।  
 शान्ताकारं शाश्वतं श्रीनिवासं सेव्यं देवैः " वासुदेवं ददर्श ॥ १२

स राजपुत्रो दृष्ट्वाऽथ देवेशं भक्तवत्सलम् ।

प्रादुर्भूतं प्रणम्यैन तुष्टाव स्तुतिभिः स्वयम् ॥

१३

### चक्रवर्तिकुः श्रीनिवासस्तुतिः

राजपुत्रः—

“ ब्रह्मा रुद्रो वासवो ये च साध्या विश्वेदेवा मरुतः सप्त पूर्वे ।

एते चान्ये देवमुख्या नियोगं पश्यन्तस्ते दिष्टपान् वर्तयन्ते ॥ १४

नाकारं वा रूपमत्यद्भुतं ते पश्यन्त्येते योगिमुख्याः पुराणाः ।

इत्थं भूते मादृशाऽनुग्रहार्थं प्रत्यक्षं ते रूपमेतद्वभूव ॥ १५

होतव्यं त्वं पावकान्तस्तु होत्रं होता च त्वं पावकोऽपि त्वमेव ।

उद्देशस्त्वं सिद्धिरस्य त्वमेव त्वत्तः किञ्चिन्नान्यदत्रास्ति देव ! ॥ १६

सदैवैकस्त्वं परं ब्रह्म पूर्वं यस्मान्नान्यं प्रादुरेतत्प्रपञ्चम् ।

यत्सङ्कल्पात् प्राकृतः सर्व आदौ यच्चान्तःस्थं शासि सर्वात्मनेमम् ॥ १७

न ब्रह्माऽसीत् पूर्वमीशो न चाऽसीत् नेमे व्याप्ते रोदसी वाऽप्यभूताम् ।

एकस्त्वं वै जागरूकस्तु शेषे शेषे तल्पे चारु सृष्ट्वा तदाऽऽपः ॥ १८

नो लोकस्त्वां वेद वेत्थ त्वमेनं नाऽदिर्मध्यं विद्यते तेऽथवान्तः ।

सत्यं रूपं ते श्रुतिः कीर्तयन्ती ज्ञानाकारं यत्तदेतन्नमामि ॥ १९

कालोऽसि त्वं लोकसंहारहेतुः सृष्ट्वा चादौ रक्षकश्च त्वमेव ।

संहार्यस्त्वं सृज्यवस्तु त्वमेव प्रायो रक्ष्यं त्वं हि कर्ता च कर्म ॥ २०

त्वं यज्ञो दीक्षितस्त्वञ्च स्वाहाऽसौ त्वं हुताशनः ।

त्वया व्याप्तमिमं लोकमनुव्याप्ता रमा तव ॥

२१

सोऽहं त्वां शरणं प्राप्तः पद्मासखमजं विभुम् ।

शेषिणं सर्वजगतां प्रणतार्तिहरं शुभम् ॥ ”

२२

श्रीनिवासस्य चक्रवर्तिप्रार्थनया सर्वजनदृश्यत्वाभ्युपगमः

स्तुत्वेति भूपः प्रणतः पृथिव्यां तुष्टाव भूयः प्रणनाम भूयः ।  
अथास्य भक्तिं स विलोक्य देवो नृपात्मजं प्रीतमना जगाद ।  
गुहासु बद्धैः प्रतिशब्दजातैः मुहुस्तिरस्कृत्य पयोधिघोषम् ॥ २३

श्रीभगवान्—

‘प्रीतोऽसि राजेन्द्र ! परं तवाहं भक्त्याऽनया चान्यसुदुर्लभञ्च ।  
वरं वृणीष्वद्य यदिच्छसि त्वं दास्यामि सर्वं तव मा विपादः’ ॥ २४

राजपुत्रः—

‘यत्तद्रूपं दुर्लभं योगिवर्यैः रम्यं भूयादीदृशं सर्वदृश्यम् ।  
अतैव त्वं सर्वदा वासमीयाः सर्वेषां वै मानवानां हिताय’ ॥ २५  
‘ओ’ मित्युक्त्वाऽथापरं प्राह वाक्यं ‘मद्वक्तृत्वं नास्ति तुल्यस्त्वयाऽन्यः ।  
संतुष्टोऽहं मत्सखित्वं प्रदास्ये वेत्थ त्वं मां सुहृदं भक्तवश्यम्’ ॥ २६  
इत्युचिवान् माधवो राजपुत्रं भूयः प्राहास्मै स्मेरवक्त्रारविन्दः ।  
‘सेवां राजन् अन्वहं मे त्विसन्ध्यं कर्तुं भूयः शासनान्मेऽर्हसि त्वम्’ ॥ २७  
एतच्छ्रुत्वा राजपुत्रः स धीमान् सेवां नित्यं नो जहौ प्रीतचित्तः ।  
सेवां कुर्वन् वेङ्कटेशस्य राजा तस्मिन् वासं पत्तने स्म प्रयाति ॥ २८  
सेवाकालेषु तस्यायं राज्ञो वै भक्तवत्सलः ।  
अर्चाभावमतिक्रम्य हितार्थानप्युपादिशत् ॥ २९

श्री श्रीनिवासमहोत्सवसेवार्थं ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्

स कदाचित् ध्वजारोहमहोत्सवमतन्द्रितः ।  
अकारयच्च धर्मेण कन्यां यानि दिवाकरे ॥ ३०  
ध्वजं निर्माय विधिवत् गरुडाधिष्ठितं शुभम् ।  
आरोपयत् समभ्यर्च्य ध्वजस्तम्भमनुत्तमम् ॥ ३१

- ब्रह्माणमीशं सगणं कृतक्रतुं ये वैवान्ये सन्ति दिक्पालमुत्थाः ।  
तानञ्जसा मन्त्रवर्यैः द्विजाश्च सेवार्थं वै स्वैरमाहृतदन्तः ॥ ३२
- ततो हंसं समासृज्य प्राञ्जलिः कमलसनः ।  
आगतो मुनिभिः सार्धं काङ्क्षन् मेवां रमापनेः ॥ ३३
- शङ्करोऽपि वृषारूढः सेवार्यै गिरिजान्वितः ।  
प्रमथाद्यैः पारिपदैरन्वितः प्रययौ सुदा ॥ ३४
- इन्द्रोऽपि सान्द्रसिन्दूरप्रस्तुरत्कुम्भमण्डलम् ।  
आसृज्यैरावतं नागं द्रष्टुं यात्रोत्सवं ययौ ॥ ३५
- अन्ये चापि दिशापालाः स्वं स्वं वाहनमास्थिताः ।  
शेषाचलतटीदेशमगमन् आहतोत्सवाः ॥ ३६
- नारदोऽपि हरिनामसहस्रं कलयन् विमृशन्महतीञ्च मुहुः ।  
आययौ हृदि च भास्वरभूतं कलयन् विवृणन्निगमादिमपि ॥ ३७
- अथाययुर्द्रष्टुकामा महान्तं क्षोणीपालाः प्राणिनः सर्वे एव ।  
पुत्रं नेत्रं प्रार्थयानाश्च भूयो नानादिग्भ्यो नम्रशीर्षाः तदानीम् ॥ ३८
- तस्य चोत्सवयात्रायां शेषाचलपतेस्तदा ।  
वेङ्कटेशं प्रार्थयन्तो नानादिग्भ्यः समागताः ॥ ३९
- किङ्कराश्चैव गायन्ति कीर्तिं तस्य महात्मनः ।  
इत्थं प्रववृधे तस्य दिव्यः शौरिर्महोत्सवः ॥ ४०
- अदृष्टपूर्वः सर्वेषां विस्मयं व्यतनोत् भृशम् ।  
पङ्क्तवो जवना आसन्, काणा वै दूरदर्शनाः ।  
बभूवुः वाग्मिनो मूका जनास्तस्मिन् महोत्सवे ॥ ४१
- तदाप्रभृति यस्मिन् वै वर्षे वर्षे महोत्सवे ।  
नमस्यति हरिं तत्र स वृद्धिं यास्यति ध्रुवम् ॥ ४२



तस्य चोत्सवयात्रायां शेषाचलपतेस्तदा ।

पयोदा विरजीचक्रुः प्रतोलीर्वासवाऽऽज्ञया ॥

४३

श्री श्रीनिवासस्य रथोत्सवावभृथोत्सवप्रकारः

सौवर्णं कल्पयामास रथं रत्नपरिष्कृतम् ।

तस्मिन् रथवरे रम्ये दीव्यति स्माष्टमे दिने ॥

४४

अथाष्टसु व्यतीतेषु दिवसेषु महोत्सवे ।

श्रवणे विष्णुनक्षत्रे मुहूर्ते तु शुभे तदा ॥

४५

चक्रं भगवताऽऽज्ञप्तं स्वामिपुष्करिणीजले ।

चकारावभृथस्नानं मखेऽस्मिंश्च समापिते ॥

४६

अथास्यां विधिवद्रात्रौ ध्वजस्याप्यवरोहणम् ।

चक्रुर्विप्रवरास्तत्र महानैवेद्यमेव च ॥

४७

अथान्यस्मिन् दिने देवमानर्चं विधिवत्तदा ।

प्रसूनैर्विविधैश्चापि सुगन्धैः सुमनोहरैः ॥

४८

हरिर्विसर्जयामास देवान् सेवार्थमागतान् ।

ब्रह्मरुद्रपुरोगांश्च प्रणम्रशिरसस्तदा ॥

४९

इत्थं स राजा वृषशैलभर्तुः महोत्सवं दिव्यमिमं समाप्य ।

हृष्टः कृतार्थं बहुमन्यमानो ह्यात्मानमावासमियाय भूयः ॥ ५०

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

श्री श्रीनिवासाविर्भावादिवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ।

अथ दशमोऽध्यायः

— : \* : —

चक्रवर्तिसमीपागतकृष्णशर्माण्यविप्रोदन्तः

नारदः—

उत्सवान्ते द्विजः कश्चित् आजगाम तदन्तिकम् ।  
 भार्यया सहितश्चैव तदैवाचिरसूतया ॥ १  
 द्विजं तमागतं राजा पाद्यार्घ्यासनवन्दनैः ।  
 अभिपूज्य यथान्यायं दृष्ट्वा कुशलमब्रवीत् ॥ २

राजा :—

‘ कस्ते देशो द्विजश्रेष्ठ ! किमर्थमित आगतः ।  
 वदस्व किमहं वा ते करवाणि निदेशकृत् ? ’ ॥ ३

विप्रः—

‘ दक्षिणाम्भोनिधेस्तीरे श्रुता चन्द्रपुरी शुभा ।  
 तस्यां वसति धर्मज्ञः कूर्मो नाम द्विजोत्तमः ॥ ४  
 तस्याहं वै सुतो राजन् कृष्णशर्मेति विश्रुतः ।  
 भार्या सुधर्मिणी नाम्ना ममेयं पुत्रिणी शुभा ॥ ५  
 काशीक्षेत्रमहं द्रष्टुं प्रयास्ये मुक्तिसाधनम् ।  
 अस्याः शिशुस्त्रिमासोऽयं दुर्बला चैव भामिनी ॥ ६  
 प्रवासायोग्यतामस्या दुर्बलायाश्च मन्त्रयन् ।  
 त्वत्सकाशमहं राजन् ! सम्प्राप्तस्त्वं हि रक्षिता ॥ ७  
 विलोक्य काशीमायास्ये सेयं तावन्मनस्विनी ।  
 समीपे तव राजेन्द्र ! वासं यात्विति मे मतिः ’ ॥ ८  
 ‘ ओ ’ मित्युक्तोऽथ भूपेन त्यक्त्वा भार्या सुतान्विताम् ।  
 आमन्त्र्य च महीपालं ययौ काशीं प्रति द्विजः ॥ ९

- राजा च तस्या वासार्थं गृहमेकं प्रकल्प्य सः ।  
 धान्यं षण्मासपर्याप्तं दापयामास च स्वयम् ॥ १०  
 'न निर्गच्छ गृहा' चेति शशास द्विजभामिनीम् ।  
 स्वव्यापारे स्थितो राजा नैव सस्मार तां ततः ॥ ११  
 कृष्णशर्मा ततो विप्रो गत्वा प्रस्थानमुत्तमम् ।  
 पुनरागत्य भूपालमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १२

कृष्णशर्मा :—

- 'आगतः कृष्णशर्माऽहं गङ्गां दृष्ट्वा सुशोभनाम् ।  
 न्यस्ता तवान्तिके भार्या दीयतां विरहातुरा' ॥ १३  
 इत्युक्तो भूपतिस्तेन चिन्तयामास दुःखितः ।  
 'अहो ! मया प्रमत्तेन विषयाऽऽसक्तचेतसा ॥ १४  
 न चिन्तिता महाभागा भामिनी तु द्विजन्मनः ।  
 धान्यं षण्मासपर्याप्तं दत्तमस्यै पुरा मया ॥ १५  
 स कालस्तु व्यतीतोऽद्य किं करोतु द्विजन्मजा ।  
 गृहान्निर्गमनं चास्याः प्रतिषिद्धं मया तदा ॥' १६  
 इत्थं सञ्चिन्त्य राजाऽसौ प्रेषयामास पूरुषम् ।  
 द्रष्टुं स्वनिर्मिते गोहे सपुत्रां द्विजभामिनीम् ॥ १७  
 स विलोक्यागतस्तूर्णं राजानं तं व्यजिज्ञपत् ।  
 'शिशुना सह भार्याऽस्य कालधर्ममुपागता ॥ १८  
 शरीरे चानयोः शुष्के वर्तते चिरकालतः ।'  
 इति तस्य वचः श्रुत्वा स राजा भृशदुःखितः ॥ १९  
 द्विजमाहूय सम्भ्रान्तमिदं वचनमब्रवीत् ।

राजा :—

- 'तव भार्या द्विजश्रेष्ठ ! मामनुज्ञाप्य भामिनी ॥ २०

- देवदेवस्य सेवार्थमिदानीमेव निर्गता ।  
 श्व आनेप्यामि भद्रं ते गतां सेवार्थमञ्जसा ॥ २१
- दिनमेकं च विश्रम्य तनो यास्यसि भार्यया ।  
 इत्युक्त्वाऽथ द्विजश्रेष्ठं नृपः शङ्कितमानसः ॥ २२
- गृहान्निर्गत्य शेषाद्रिमारुरोह क्षणान्तरात् ।  
 देवस्यावसरं वीक्ष्य प्राञ्जलिः प्रयतः स्थितः ॥ २३
- स मुहूर्तं विनिश्चस्य सखेदं च व्यजिज्ञपत् ।  
 “स्वामिन् ! विज्ञापनामद्य शृणुष्वैकमना मन ॥ २४
- सोऽहं हि भवता रक्ष्यः शरणं गत इत्यपि ।  
 अप्रबुद्धेन मत्तेन मया वै दुष्कृतं कृतम् ॥ २५
- न्यासीकृतां महाभागां द्विजवर्येण धीमता ।  
 न व्यचारयमासक्तो विषयेषु यशस्विनीम् ॥ २६
- इदानीमागते विप्रे पूर्ववृत्तमनुस्मरन् ।  
 किमेतदिति भीतोऽहं तदुदन्तं विचारयन् ॥ २७
- श्रुत्वा मृतां निराहारां सपुत्रां शुष्कदेहिनीम् ।  
 परं निर्विण्णचित्तोऽहमवदं द्विजमग्रतः ॥ २८
- गता सा देवसेवार्थं श्व आनेप्यामि तां प्रियाम् ।  
 सपुत्रां तव भार्या वै मा भैषीद्विजसत्तम ! ॥ २९
- भविष्यति कथं चेति भृशं चिन्तामुपागतः ।  
 त्वामेव शरणं देव ! प्रणतार्तिहरं गतः ॥ ३०
- यथा पापं न विन्देयं चरितार्थो यथा द्विजः ।  
 देवदेव ! तथा कर्तुं शक्तो नान्यस्त्वया विना ॥ ३१
- त्वाहि मां शरणं प्राप्तमितस्त्वं दुःखसागरात् ।  
 गतिस्त्वमेव चास्माकं नान्योऽस्ति जगतीपते ॥” ३२

इति प्रणम्य देवेशं स्थितस्तूष्णीं नृपोत्तमः ।

सान्त्वयन् मधुरैर्वाक्यैः उवाच मधुसूदनः ॥ ३३

श्रीभगवान्

‘ मा ते व्यथा भूद्राजर्षे ! मा भैषीस्त्वं कदाचन ।

तवोपायमहं वक्ष्ये द्विजभार्याप्रजीवने ॥ ३४

विप्रः काशीं प्रयास्यन्मां दृष्ट्वाऽनुज्ञाप्य वै गतः ।

सुधर्मिणी च मद्भक्ता साध्वी मद्गतमानसा ॥ ३५

ततस्तदीया प्राणा वै यमाय किल नार्पिताः ।

शरीरे मम राजेन्द्र ! स्थापितास्तु प्रियासवः ’ ॥ ३६

इत्युक्त्वाऽऽश्वास्य भूपालं विष्वक्सेनमभाषत ।

प्राञ्जलिं विनयानम्रं वेल्लपाणिं पुरःस्थितम् ।

“ विष्वक्सेन ! महाभाग मदीयाज्ञामिमां शृणु ॥ ३७

अस्थिकूटाभिधसरोऽरमाहात्म्यम्

इत ईशानदिग्भागे त्वस्थिकूटाभिधं शुभम् ।

तीर्थमस्ति ततस्तोयं समाहृत्य सुपावनम् ॥ ३८

सुधर्मिण्याः सुतस्यापि शरीरमभिषेचय ।

सपुत्रा सा प्रसुप्तेव तत उत्थास्यति ध्रुवम् ॥ ” ३९

विष्वक्सेनस्तथेत्युक्त्वा तोयमाहृत्य तीर्थतः ।

सुधर्मिण्याः शरीरं तदभ्यषिञ्चत्सुतस्य च ॥ ४०

उत्थिता ससुता साध्वी द्विजभार्या सुधर्मिणी ।

अथ राजानमाहूय प्रोवाच मधुसूदनः ॥ ४१

‘ दृष्टो गिरिवरस्यायं महिमा भवतानघ ! ।

प्रभावमचलस्यास्य सनकाद्याश्च योगिनः ॥ ४२

- ब्रह्माद्याः सकला देवा न जानन्ति यथा मम ।  
यद्यदिच्छति वै जन्तुर्मनसाऽभीप्सितं नृप ! ॥ ४३
- तथा सिद्धयति तत्सर्वं गिरेरस्य प्रभावतः । '  
अथ विप्रं समाहूय भार्या चास्य सुवर्मिणीम् ॥ ४४
- द्विजभार्यामथापृच्छत् 'वद् ते किमभीप्सितम् ? ' ।  
सा तथोक्ता तु देवेन वरयामास माधवम् ॥ ४५
- ' त्वद्भक्तिश्च दृढा चास्तु मम देवेश ! नित्यशः ' ।  
एवं संप्रार्थितो देवो ददौ तस्या अभीप्सितम् ॥ ४६
- ततो विधिशिवाद्याश्च सनकाद्याश्च योगिनः ।  
वृषाद्रिमगमन् सर्वे द्रष्टुकामास्तदद्भुतम् ॥ ४७
- कृष्णशर्मा च सन्तुष्टो विस्मितश्च महामुने ।  
प्रणम्य स्तोत्रयामास देवदेवं रमापतिम् ॥ ४८
- देवदेवो नृपं प्राह न चास्य सदृशो भुवि ।  
विप्रस्य मयि भक्तस्य तथैव नियतात्मनः ॥ ४९
- असौ जन्मान्तरे राजंस्त्रय्यन्तार्थप्रवर्तकः ।  
भविष्यति तदन्ते च मत्सायुज्यमवाप्स्यति ॥ ५०
- राजा च विप्रमाहूय सभार्यं पुरुषर्षभम् ।  
स्वाऽऽवासं प्रेषयामास प्रहृष्टेनान्तरात्मना ॥ ५१
- तदनु च नृपतिर्वृषाचलं तं स्वयमधिगम्य दिने दिने महात्मा ।  
विरचितदृढभक्तिरस्य कुर्वन् विविधमनोरथकिङ्करत्वमासीत् ॥ ५२
- कथितं भाविवृत्तान्तं देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।  
अर्चितश्च कलौ भक्तैरद्भुतानि प्रदर्शयन् ॥ ५३
- विहरन् रमया चैव साकं तत्र महीधरे ।  
वसिष्यति च हृष्टात्मा सुरसिद्धनिषेवितः ॥ ५४

इत्येवं भृगवे तस्मै कथयामास नारदः ।

वेङ्कटाचलमाहात्म्यं परं व्यासेन कीर्तितम् ॥

५५

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
अस्थिकूटतीर्थमाहात्म्यवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ।

अथ एकादशोऽध्यायः

सिंहादाख्यासुरवृत्तान्तः

भृगुः—

‘नमो नमस्ते देवर्षे ! सर्वज्ञ करुणानिधे ।

वेङ्कटाचलमाहात्म्यं भूतं भावि च मे श्रुतम् ॥

१

केनाकारेण भगवान् आकल्पं निवसिष्यति ।

किं करिष्यति वा देवः श्रीमान्वेङ्कटनायकः ? ॥

२

एतत्सर्वं सङ्गृहेण ब्रूहि मे मुनिसत्तम ! ।

यस्य श्रवणमात्रेण श्रोतव्यं नावशिष्यते ’ ॥

३

नारदः—

श्रूयतामिदमाख्यास्ये चरितं वेङ्कटेशितुः ।

सम्भाषितमगस्त्येन भाविवृत्ते प्रसङ्गतः ॥

४

चक्रवर्ती च भूपालः शासिष्यति वसुन्धराम् ।

भविष्यति तदा दैत्यः सिंहादो नाम वीर्यवान् ॥

५

स दुरात्मा तपस्तेपे निध्यायन् परमेष्ठिनम् ।

उत्तरे पापनाशस्य सार्धयोजनदूरतः ॥

६

सरस्यधविनाशाख्ये कुर्वन् स्निपवण'प्लवम् ।

“ प्रजापते ! त्वदन्यो न विश्वोपरि बभूव ह ॥

७

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे एकादशोऽध्यायः ३६१

वयं श्रेयस्विनः न्याम सोऽस्तु यो नो मनोरथः " ।  
इति मन्त्रं जपन्नित्यं आरराध चतुर्मुखम् ॥ ८  
वर्षं पूर्णं स भगवान् हंसारूढः सरोजभूः ।  
आविर्भव पुरतः सिंहादस्य तपस्विनः ॥ ९

ब्रह्मा :—

‘उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते सिंहाद ! कुशली भव ।  
तपसा तव तुष्टोऽस्मि वरं वरय मुव्रत ! ’ ॥ १०

सिंहादः—

“ नमो नमस्ते विश्वेश ! सर्वकारणकारण ।  
यदि प्रीतोऽसि भगवन् ! देहि मे वरमुत्तमम् ॥ ११  
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः ।  
वशे तु मम वर्तन्तां तेभ्यो न च भयं मम ” ॥ १२  
सिंहादवचनं श्रुत्वा “ तथाऽस्तिव ” ति विरिञ्चनः ।  
आभाष्यान्तर्दधे साकं योगीशैरस्य पश्यतः ॥ १३  
तदाप्रभृति दुष्टात्मा बबाधे देवतागणान् ।  
क्षत्रियैः सह देवांशैर्मुनीनन्यांश्च मानवान् ॥ १४

सिंहादभीतदेवानां श्रीनिवाससमीपागमनम्

एवं तेनार्दिता देवा मुनयश्च तपोधनाः ।  
शरण्यं शरणं जम्बुवैङ्कटेशं यथा निधिम् ॥ १५

देवाः—

‘दैत्यारे ! देवदेवेश ! शरणागतवत्सल ! ।  
त्वाहि नः पुण्डरीकाक्ष ! सिंहादादसुराधमात् ॥ १६



त्रिलोकीं बाधते नित्यमनुभुङ्क्ते च रूपिणीम् ।	
सिंहादः क्रूरचारितः पापः प्राप्तवरो विधेः ।	१७
इति तेषां वचः श्रुत्वा भगवान् भूतभावनः ।	
मेघध्वनिगभीरेण वचसाऽन्वग्रहीत् सुरान् ॥	१८

### अभयागतदेवानां चक्रवर्तिनिकटगमनाय भगवदाज्ञा

श्रीभगवान् —

‘अभयं ब्रह्मणा दत्तं देवेभ्यः सुरसत्तमाः ।	
न दानवाश्च तं घ्नन्ति नासुरा न च पन्नगाः ॥	१९
नैव शक्तिर्मनुष्याणां संहारेऽस्य दुरात्मनः ।	
सहायास्तस्य बहवः सन्ति दैत्यांशसंभवाः ॥	२०
खरः कडारः पिङ्गाक्षः कनकः कद्रुकः कपिः ।	
एते हिरण्डाकुलजाः पङ्क्ता बाणस्यात्र सन्ति हि ॥	२१
प्रह्लादाय वरो दत्तः पुरा प्रीतिजुषा मया ।	
तद्वंश्या नैव हन्तव्याः सत्यपि त्रिजगत्क्षये ॥	२२
ततोपायं प्रवक्ष्यामि सिंहादक्षपणाय वः ।	
चक्रवर्ती वसत्यत्र कालहस्तिरसमीपतः ॥	२३
सुवर्णमुखरीतीरे पश्चिमे पुण्यधामनि ।	
समाप्याययत स्वांशैर्मद्वक्तं चक्रवर्तिनम् ॥	२४
सिंहादं सुमहाबाहुं महाबलपराक्रमम् ।	
स संहरेष्यति बली राक्षसानिव राघवः ॥	२५
स्वस्था भवत देवेशाः ! सर्वं भद्रं भविष्यति ।	
इत्युक्त्वा भगवान् विष्णुः सर्वभूतात्मभावनः ।	
विसर्जयामास सुरान् विमानं चाविशत् प्रभुः ॥	२६

## भगवदाज्ञया देवानां द्विजवेपेण चक्रवर्तिनिकटगमनम्

ततो देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ।	
अनुग्रहीतुकामास्तमाजम्मुश्चक्रवर्तिनम् ॥	२७
ब्राह्मणाकारमालम्ब्य देवगन्धर्वतापसाः ।	
शुभाशिषं प्रयुञ्जाना राजानमुपतस्थिरे ॥	२८
आगतांस्तान् महाभागः पूजयित्वा यथाविधि ।	
पप्रच्छ कुशलं सर्वान् अभिवादनपूर्वकम् ॥	२९
पूजितास्तेन भूपेन देवा ब्राह्मणविग्रहाः ।	
अब्रुवन्नेककंठास्ते राजानं प्रश्रयाननम् ॥	३०

## सिंहादवधाय चक्रवर्तिनं प्रति देवकृतचोदना

ब्राह्मणाः —

‘ राजन्! कुशलमस्माकं त्वयि शासति मेदिनीम् ।	
न हि सूर्ये प्रतपति लोके सम्पद्यते तमः ॥	३१
सिंहादो नाम दैत्येन्द्रो बाधते ब्राह्मणानिह ।	
न यज्ञाः सम्प्रवर्तन्ते न होमा न च सक्तियाः ॥	३२
उत्तरे पापनाशस्य सार्धयोजनदूरतः ।	
स वसत्यसदाचारः खलो ब्राह्मणहिंसकः ॥	३३
तं संहर दुरात्मानं सर्वलोकैककण्टकम् ।	
कृतस्तेऽनुग्रहोऽस्माभिः सर्वदेवात्मभिर्नृप ! ॥	३४

चक्रवर्ती : —

‘ अनुग्रहेण युष्माकं संहारामि न संशयः ।	
सिंहादः कीदृशस्तस्य ब्रूत किं वा बलं बुधाः ॥ ’	३५

ब्राह्मणाः—

- ‘विरिञ्चिना दत्तवरः सिंहादः क्रूरविक्रमः ।  
 अवध्यः सर्वदेवानां देवस्य च रथाङ्गिणः ॥ ३६  
 त्वमेव तस्य राजेन्द्र! संहर्ता न च संशयः ।  
 देवाः कुर्वन्तु सर्वेऽपि सन्निधानं त्वयि प्रभो ! ॥’ ३७  
 इत्युक्त्वा ब्राह्मणाः सर्वे सम्प्रयुज्य जयाऽऽशिषः ।  
 अन्तर्धानं गतास्तत्र तदद्भुतमिवाभवत् ॥ ३८

सिंहादवधोपायवेदनाय भगवत्संनिधिं प्रति चक्रवर्तिगमनम्

- अथ राजा महातेजाश्चक्रवर्ती स धार्मिकः ।  
 मन्त्रिभिर्मन्त्रयामास वधोपायं दुरात्मनः ॥ ३९  
 निश्चित्य कृत्यवित् कृत्यं मन्त्रिभिः सह मन्त्रवित् ।  
 जगाम वेङ्कटेशस्य सन्निधिं परया मुदा ॥ ४०  
 स्वर्णपत्रैः स्वर्णपुष्पैः तुलसीदलसंयुतैः ।  
 अर्चयित्वा यथापूर्वं वेङ्कटेशं नृपोऽवदत् ॥ ४१  
 ‘ब्राह्मणप्रवराः स्वामिन् सिंहादेन निपीडिताः ।  
 तत्संहारनियोगं मे प्रददुः किं करोम्यहम् ? ॥’ ४२

चक्रवर्तिकृतासुरवधार्थकभगवद्त्तपश्चायुधधारणम्

श्रीभगवान्—

- ‘शङ्खचक्रे प्रदास्यामि भाविषायुज्यसूचके ।  
 तथा कौमोदकीं शार्ङ्गं नन्दकञ्च महामते ! ॥ ४३  
 पञ्चायुधधरो भूत्वा दुरात्मानं सुरद्रुहम् ।  
 सबन्धुवर्गं सामात्यं जहि सङ्ग्राममण्डले ॥’ ४४

इत्युक्त्वा प्रददौ तस्मै शुचये चक्रवर्तिने ।

शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गानि मधुमूदनः ॥

४५

सिंहादेन सह युद्धाय किंगनरूपेण चक्रवर्तिगमनम्

ततः स राजतनयः पुनश्च स्वपुरं गतः ।

सेनां संयोजयामास देवतेजस्समेधिताम् ॥

४६

सर्वदैवततेजोभिरुपवृंहितविग्रहः ।

कैरातं वपुरास्थाय प्रतस्थं सहसैनिकः ॥

४७

किरातवपुषः सर्वे सहिता विश्वकटुभिः ।

समेतं मृगयासक्तं चक्रवर्तिनमन्वयुः ॥

४८

घ्नन्तो व्याघ्रान् वृकान् सिंहान् तरक्षून् शल्यकान् किटीन् ।

प्रतीरं पापनाशस्य प्रापू राजेन्द्रसद्भटाः ॥

४९

चोलराजकुमारस्य वाहिनी बलगर्विता ।

मन्दं मन्दं प्रतीयाय घोरसिंहादकाननम् ॥

५०

वनदुर्गाद्वनिष्क्रम्य सिंहादो दैत्यभूपतिः ।

अवैक्षत किरातांस्तान् निर्विषादः स्मिताननः ॥

५१

‘ न देवा न च दैतेया न गन्धर्वा न दानवाः ।

न चक्रवर्तिनः सैन्यं किमर्थं नो भयाढ्यता ? ’ ॥

५२

इति निश्चित्य धीरात्मा निर्गतः सैनिकैः सह ।

सिंहादः सिंहमारुह्य प्रतीयाय प्रभोर्वल्गुम् ॥

५३

कोट्या शतसहस्रेण खरसैन्येन निर्ययौ ।

सर्वतः सहितः सैन्यैः कडारः षष्टिकोटिभिः ॥

५४

पिङ्गाक्षः सप्तकोटीभिः कनको दशकोटिभिः ।

कद्रुकोऽन्योऽर्बुदानीकः कपिः पद्मासुरावृतः ॥

५५

अन्ये च दैत्यपतयः स्वस्वसैन्यसमावृताः ।

आगताः सर्व एवैते मिलित्वाऽक्षौहिणीशतम् ॥

५६

पापनाशनतीर्थममीपप्रवृत्तचक्रवर्तिमिहादयुद्धक्रमः

त्रिदशक्षौहिणीनाथः चक्रवर्ती महाबलः ।

सिंहादेन समं युद्धं चकार भगवत्प्रियः ॥

५७

सेनयोरुभयोश्चाथ सिंहादहरिभक्तयोः ।

समरः सुमहानासीत् गङ्गायमुनयोर्यथा ॥

५८

विमानरत्नान्यारुह्य प्रवीरवरणोत्सुकम् ।

आगतं देवगाणिक्यं मध्येगगनमण्डलम् ॥

५९

आगता देवताः सर्वाः परमेष्ठिपुरोगमाः ।

द्रष्टुकामा महायुद्धं दैत्यराजाधिराजयोः ॥

६०

ततो युद्धं समभवत् सिंहादनृपसेनयोः ।

वरार्थं कलहं चक्रुः देव्यश्चाप्सरसो मिथः ॥

६१

सेनासु क्षीयमाणासु चक्रवर्ती धृताग्रहः ।

शाङ्गं धनुरुपादाय सन्दधे निशितान् शरान् ॥

६२

बाणेनैकेन राजेन्द्रो जघान दशविंशतिम् ।

शतं सहस्रमयुतं नियुतं प्रयुतं तथा ॥

६३

तस्य विक्रममालोक्य सिंहादः सिंहवाहनः ।

गदया राजराजाश्वं निजघानातिरंहसा ॥

६४

निहते तुरगे राजा गजमैरावतोपमम् ।

आरुह्य मधवेवान्यो गदां कौमोदकीं दधौ ॥

६५

सा विसृष्टा नृपेन्द्रेण हत्वा सिंहादवाहनम् ।

ममर्दक्षौहिणीषष्टिं पुनः राजानमाश्रिता ॥

६६

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थस्वण्डे एकादशोऽध्यायः ३६७

मायामास्थाय सिंहादः प्रभृताश्च क्षणान्तरे ।  
पुनरुर्जीवयामास सेनां कौमोदकीहताम् ॥ ६७  
सैनिकोजीवनं दृष्ट्वा सिंहादस्य महौजसः ।  
विस्मिताः सस्मिताश्चासान् दिवि देवाश्च तापसाः ॥ ६८  
अर्धचन्द्रेण त्राणेन शार्ङ्गमादाय वीर्यवान् ।  
शतवारं च चिच्छेद सिंहादन्य शिरो नृपः ॥ ६९  
कृतं कृतं पुनः कृतं पुनर्जनं पुनःपुनः ।  
वीक्षमाणाः शिरो देवा विषादं प्रणिपेदिरे ॥ ७०  
अस्त्रं सन्धाय गान्धर्वं शार्ङ्गं श्रीपतिवल्लभः ।  
प्रायुङ्क्त वैरिसेनायां रामो नृलवले यथा ॥ ७१  
खादन्तः प्रहरन्तश्च दैतेयास्ते परस्परम् ।  
उन्मत्ता इव भूतेन ग्रस्ता इव च वज्रमुः ॥ ७२

समरसमये चक्रवर्तिने वायुकृतसुदर्शनमन्त्रोपदेशः

विरिञ्चेनाभ्यनुज्ञातो वायुः ब्राह्मणरूपधृत् ।  
जजाप नृपतेः कर्णे सौदर्शनषडक्षरम् ॥ ७३  
'गोब्राह्मणहितार्थाय चक्रेण नृपनन्दन ! ।  
हर दैत्यशिरः शीघ्र ' मित्युक्त्वाऽन्तर्दधे च सः ॥ ७४

चक्रायुधेन चक्रवर्तिकृतसिंहादवधप्रकारः

ब्राह्मणस्य वचः श्रुत्वा चक्रवर्ती महामनाः ।  
सुदर्शनं सहस्रारमादधे भगवानिव ॥ ७५  
चक्रपाणिं नृपं वीक्ष्य मत्वा चक्रधरं हरिम् ।  
भयविभ्रान्तचित्तस्य सिंहादस्य शिरस्तदा ।  
सुदर्शनेन चिच्छेद चक्रवर्त्यपुनर्भवम् ॥ ७६

अन्ये तु तस्यानुचरा दैत्यवीराः ससैनिकाः ।	
गान्धर्वमोहितास्तस्थुः तत्रैव रणमण्डले ॥	७७
तस्योपरि नरेन्द्रस्य पुष्पवर्षाणि जज्ञिरे ।	
अथ चामरवाद्यानि वाद्यन्ते स्म समन्ततः ॥	७८
अशरीरिगिरं श्रुत्वा चोलराजस्य नन्दनः ।	
अस्त्रस्य मोहनस्यास्य न चक्रे प्रतिसंहतिम् ॥	७९

नारदः—

एवमुक्तमगस्त्येन यथोक्तं भवतो मया ।	
अन्यच्च किञ्चिद्वक्तव्यमुच्यते चरितं मया ॥	८०
कलौ युगे नराः सर्वे तत्राऽऽयोधनमण्डले ।	
श्रोष्यन्ति दैत्यवीराणां रात्रौ कोलाहलं सदा ॥	८१
क्षेत्रपालज्ञया सर्वे सिंहादासुरसैनिकाः ।	
नयनागोचरा नृणां भ्रमिष्यन्ति ततस्ततः ॥	८२
ततः सिंहादसंहारी चक्रवर्ती महीपतिः ।	
व्यजिज्ञप्त् स्ववृत्तान्तं वेङ्कटेशाय सर्वतः ॥	८३
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गनन्दकान् नृपनन्दनः ।	
अर्पयामास हरये वेङ्कटाद्रिनिवासिने ॥	८४

### भगवत्कृतपञ्चायुधकृत्यनिर्णयः

राजानञ्च तथा पञ्चायुधान्यपि च माधवः ।	
उवाच मेघनिर्घोषगम्भीरिमभृता गिरा ॥	८५
‘राजन्! यदेच्छसि जयमजय्ये साम्परायके ।	
तदेमान्यायुधान्युच्चैः साहाय्यं कुर्वतां तव ॥	८६

श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे एकादशोऽध्यायः ३६९

हे शङ्ख ! चक्र ! शार्ङ्ग ! असे ! कौमोदकि ! महागदे ! ।	
राज्ञोऽस्य कामदाः काले स्वस्वतीर्थेषु तिष्ठत ॥	८७
स्नातानां स्वस्वतीर्थेषु मम सायुज्यभोगदाः ।	
विहरध्वं यथाक्रमं मयि ध्यानपरायणाः ॥	८८
दत्तैर्युष्माभिरेतस्य सायुज्यं यदिहादिशम् ।	
तन्न व्याहन्यतां सद्यः पुनरागमनेन वः ॥	८९
मानसा मे स्त सद्योऽहं प्रत्यक्षविगतायुधः ।	
कञ्चिन् कालं वसिष्यामि ततः केनापि हेतुना ॥	९०
कलौ कश्चिन्महाभागः शङ्खचक्रे तु कृत्रिमे ।	
कारयित्वा स्थापयिता विमानदींश्च मे पुनः ॥	९१
ततस्तद्भक्तिवशगः सर्वप्रत्यक्षगोचरः ।	
आकल्पं निवसिष्यामि वराभयदहस्तकः ॥	९२
ऊर्वाभ्यामपि चान्याभ्यां हस्ताभ्यामतिसुन्दरे ।	
दधानः शंखचक्रे च कल्पिते लोकतुष्टये ॥	९३
दत्तं हि मम सायुज्यं मया ते राजनन्दन ! ।	
गच्छ प्रशाधि राज्यञ्च मां सेवस्व दिवानिशम् ' ॥	९४
इत्याज्ञप्ता भगवता शङ्खचक्रगदासयः ।	
शार्ङ्गञ्च स्वस्वतीर्थानि पुण्यानि प्रतिपेदिरे ॥	९५
पुत्रोऽपि चोलराजस्य देवताशास्यवैभवः ।	
जगाम नगरीं स्वीयां मघवेवामरावतीम् ॥	९६
इत्थं नारदवाक्यानि श्रुत्वा भृगुरुदारधीः ।	
वेङ्कटेशे परां प्रीतिमविन्दत महामनाः ॥	९७



भृगुरपि वृषभाचलप्रभावं

मुनिवरसङ्कथितं निशम्य भूयः ।

तदनु स च विलोकितुं रमेशं

स्थिरमतिना मनसा ययौ गिरीन्द्रम् ॥

९८

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

चक्रवर्तिपराक्रमवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ।

॥ हरिः ॐ । ॐ तत्सत् ॥



श्रीवेङ्कटेश्वरचरणारविन्दार्पणमस्तु ।

इत्थं श्रीब्रह्माण्डपुराणे तीर्थखण्डे भृगुनारदसंवादे आदित एकादशपर्यन्तस्य

एकादशाध्यायात्मकस्य श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यस्य विषयो भागः

समाप्तिमगमत् ॥



श्रीरस्तु

श्रीं श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः

श्रियै पद्मावत्यै नमः

श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

( श्रीमार्कण्डेयपुराणान्तर्गतम् )

—: ❁ :—

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।

श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

प्रथमोऽध्यायः

~~~~~

तीर्थयात्रेच्छया पितृनिकटे मार्कण्डेयविज्ञप्तिः

ऋषयः—

‘सूत ! सर्वार्थतत्त्वज्ञ ! वेदवेदान्तपारग ! ।

वेङ्कटाचलमाहात्म्यं वदस्व मुनिपुङ्गव ! ॥’

१

श्रीसूतः—

पुरा मृकण्डुतनयः पुरुषोत्तमसेवया ।

दीर्घमायुरवाप्याथ मुदा परमया मुनिः ॥

२

स्वमाश्रमपदं गत्वा तपस्विजनसन्निधौ ।

मातुः पितुः स मतिमान् प्रणाममकरोद्भुवि ॥

३

- अतस्ताभ्यां यथावृत्तमाख्याय मुनिपुङ्गवः ।  
 श्रेयस्करं किञ्चिदिच्छन् कर्तुं वै वाक्यमब्रवीत् ॥ ४
- ‘मातः पितर्ममेष्टं यत् शृणुतं ब्रुवतो मम ।  
 देवतानुग्रहादायुः परिपूर्णमभूत् किल ॥ ५
- पुण्यस्थलेषु तीर्थेषु चरितुं विद्यते मतिः ।  
 ‘सुखं गच्छे’ ति कृपया मां प्रस्थापयतं युवाम् ॥ ६
- लौकिके वैदिके कार्ये पित्रनुज्ञा विशिष्यते ।  
 अथाब्रवीन्मृकण्डुस्तु स्वपुत्रं पुत्रवत्सलः ॥ ७
- ‘पालितोऽहं त्वया पुत्र कुलञ्च मम पालितम् ।  
 पुण्यस्थले पुण्यतीर्थे चलनेच्छा यतस्तव ॥ ८
- तस्मात्तव मतिः सौम्य ! सम्यगेवेति मे मतिः ।  
 त्वां प्रस्थापयितुं पुत्र कथं भवति मानसम् ॥ ९
- पुत्रमात्रस्य पित्रोस्तु विरहो दुःसहो भवेत् ।  
 लोके सर्वत्र विदितं सत्पुत्रस्य तु किं पुनः ? ॥ १०
- उत्तमोत्तमपुत्रस्त्वं वियोगस्तेऽतिदुःसहः ।  
 सत्पुत्रलक्षणं सद्भिरुच्यते तत्तथैव हि ॥ ११
- यः प्रीणयेत् स्वचरितैः पितरं स पुत्रो,  
 यद्भर्तुरेव हितमिच्छति तत्कलत्रम् ।  
 तन्मित्रमापदि सुखे च समक्रियं यत्,  
 एतत्तयं जगति पुण्यकृतो लभन्ते ॥ १२
- आवयोः प्रियकृत्त्वं तु मतिमानास्तिकोऽप्यसि ।  
 कथं त्वद्विरहः सखो भविष्यति सुतावयोः ? ॥ १३
- आनन्देषु च सर्वेषु स एकानन्द उत्तमः ।  
 मातापित्रोः समीपे तु वर्तते तनयो यतः ॥ १४

तनयस्य स चानन्दस्तदेव सुकृतं महत् ।

पित्रोः शुश्रूषमाणस्तु सञ्चरेत समीपतः ॥

१५

अत आवां विहाय त्वं कथं गच्छसि तद्वद । '

श्रीसूतः—

मार्कण्डेयः स इत्युक्तः पितरौ वाक्यमब्रवीत् ॥

१६

‘मातः ! पितः ! मा च शोको युवयोर्मत्कृते क्वचित् ।

प्रत्यब्दं सर्वथाऽऽगत्य युवां पश्यामि सर्वदा ॥

१७

पुण्यक्षेत्राऽभिगमने पुण्यतीर्थाऽवगाहने ।

यत्पुण्यं तत्कुलं सर्वं पावयेदिति हि श्रुतम् ॥

१८

कृत्वाऽऽशीर्वचनं भूयः प्रस्थापयतमंजसा ।

इत्युक्तवाक्ये तनये नयशालिनि तावुभौ ॥

१९

आलिङ्ग्य तनयं गाढमाशीर्वादपरौ तदा ।

चिरं जीव सुपुत्र त्वं चिरमानन्दवान् भव ॥

२०

चिरं धर्मपरश्च त्वमावयोर्हर्षमावहन् ।

इत्युक्तस्तनयः कृत्वा प्रदक्षिणमुदारधीः ॥

२१

पित्रनुज्ञया मार्कण्डेयकृतपुण्यदंशतीर्थयात्राक्रमः

तीर्थयात्रां जिगमिषुः खेचरेण जगाम ह ।

काशीस्थलेऽवरुद्धासौ स्नात्वा गङ्गाजले शुचिः ॥

२२

तीरमारुह्य विश्वेशं नत्वा कचिदवस्थितः ।

तत्राऽऽकाशे चरन्तं तं ददर्श स्वगपुङ्गवम् ।

वैष्णवाग्रेसरं श्रीमद्गरुडं पृष्ठवानसौ ॥

२३

मार्कण्डेयः—

‘विष्णुवाह ! नमस्तुभ्यं क्व गच्छसि महामते ! ।

पुण्यस्थलं पुण्यतीर्थमिच्छन्नहमिहागतः ॥

२४

अतीव पुण्यं किं किं यत् तन्मे वद स्वगेश्वर ! । '

मार्कण्डेयं प्रति गरुडोपदिष्टश्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

श्रीसूतः -

इत्युक्तो गरुडस्तस्मै रहस्यमुपदिष्टवान् ॥

२५

गरुडः —

‘मार्कण्डेय ! मुनिश्रेष्ठ ! शृणु तत्त्वं वदामि ते ।

तीर्थानामधिकं तीर्थं स्थलानामपि चोत्तमम् ॥

२६

सर्वेष्वपि च तीर्थेषु शृणुष्व गदतो मम ।

इतो दक्षिणदिग्भागे सुवर्णमुखरीतटे ॥

२७

अस्ति श्रीमान् वेङ्कटाख्यो नगेन्द्रः स्वस्ति प्राप्तुं शक्यते तत्र सर्वैः ।

वस्तु द्रष्टुं परमं योगिवर्याः स्तोतुं वासं सर्वदा कुर्वतेऽत्र ॥

२८

नामानि सन्ति सुबहूनि हि तस्य लोके तानि ब्रवीमि शृणु पुण्यतमानि तत्र ।

श्रीवेङ्कटाद्रिरिति शेषमहीधरेति नारायणाद्रिरिति चाञ्जनभूधरेति ।

स्वर्णाचलेत्यपि च रत्नमहीधरेति भूयांसि सन्ति भुवनोत्तमपावनानि ॥ २९

तत्कीर्तनं सकलपापहरं मुनीन्द्र ! तद्वन्दनं सकलसौख्यदमेव लोके ।

यात्राऽपि तं प्रति सुरैरपि पूजनीया तादृज्जहान् भवति वेङ्कटशैलमुख्यः ॥ ३०

तस्यानुभावं प्रवदामि भूयः समस्ततीर्थानि भवन्ति तत्र ।

एवं समस्तेषु च मुख्यतीर्थं श्रीस्वामिनाम्नाऽस्ति सरोवरं तत् ॥ ३१

माहात्म्यमेतस्य मयोच्यते कथं यत्पश्चिमे रोधसि भूवराहः ।

आलिङ्ग्य कान्तामतिशैव्यमूर्तिः विराजते विश्वजनोपकारी ॥ ३२

तद्दक्षिणतटे रम्ये वैकुण्ठपुरवल्लभः ।

आलिङ्गितवर्पुर्लक्ष्म्या वरदो वर्तते चिरम् ॥

३३

कुर्वन्त एव तत्सेवां वर्तन्ते सर्वनिर्जराः ।

त्वं वेङ्कटाचलं गत्वा स्नात्वा स्वामिसरोजले ॥

३४

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थस्वण्डे द्वितीयोऽध्यायः ३७५

विलोक्य वेङ्कटार्धाशमानन्दात्मा भविष्यसि ।  
अहञ्च तत्र गच्छामि सेवितुं वेङ्कटेश्वरम् ॥ ३५  
विष्वक्सेनश्च शेषश्च सेवेते तं दिवानिशम् ।  
पुण्यदेशो वेङ्कटाद्रेः तुल्यो नैव महीतले ।  
स्वामिपुष्करिणीतीर्थतुल्यं भुवि न विद्यते ॥ ' ३६

श्रीसूतः —

इत्युक्त्वा गरुडस्तत्र वेङ्कटाचलमागतः ।  
स मुनिर्गारुडगिरा विस्रयाऽऽविष्टमानसः ॥ ३७  
अहो ! श्रुतं महापुण्यस्थलं तीर्थं गरुत्मता ।  
इति मत्वाऽद्विसेवायामभवच्चाभिलाषवान् ॥ ३८

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये गरुडमार्कण्डेयसंवादो  
नाम प्रथमोऽध्यायः

अथ द्वितीयोऽध्यायः

~~~~~

मार्कण्डेयस्य शुद्धाख्यागस्त्यशिष्येण सह श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

श्रीसूतः —

मार्कण्डेयोऽथ मतिमान् सुवर्णमुखरीं गतः ।  
तत उत्तरदिग्भागे दृष्टवान् शेषभूधरम् ॥ १  
दैवादगस्त्यशिष्योऽपि शेषाद्रिनिकटं गतः ।  
वेङ्कटाद्रेरधोभागे तीर्थं किञ्चित् समागतः ॥ २  
यत्तीर्थं क्वापिलं चापि चक्रतीर्थं विदुर्बुधाः ।  
तस्योपरि क्रमात्सन्ति तीर्थानि कतिचिद्गिरौ ॥ ३

- इन्द्रस्य विष्वक्सेनस्य चक्रादीनाञ्च पञ्चकम् ।  
 अग्नितीर्थं ब्रह्मतीर्थं सप्तर्षीणां क्रमेण च ॥ ४
- आगत्य शिष्यसहितो मार्कण्डेयो महामुनिः ।  
 चक्रादिसप्तदशसु तीर्थेषु स्नानकृत् शुचिः ॥ ५
- तत्पश्चिमे च तीर्थानि विद्यन्ते वेङ्कटाचले ।  
 ब्रह्मक्षत्रविडन्त्यानामवरोहक्रमेण तु ॥ ६
- स्नात्वा तेष्वपि शुद्धेनागस्त्यशिष्येण संयुतः ।  
 आरुह्य वेङ्कटं शलं मध्येमार्गं ददर्श सः ।  
 नारसिंहगुहास्थानं लोके विख्यातवैभवम् ॥ ७
- “ लक्ष्मीनृसिंह ! प्रह्लादवरदानन्दवैभव ! ।  
 दासानुदासं देवेश ! मां पाहि मधुसूदन ! ॥ ” ८

मार्कण्डेयस्य स्वामितीर्थस्नानपूर्वक श्रीवराहसेवाप्राप्तिः

- इति प्रणम्य शुद्धेन स्वामिपुष्करिणीं गतः ।  
 तत्र स्नात्वा महातीर्थे सङ्कल्प्य त्रिधिपूर्वकम् ॥ ९
- तत्पश्चिमतटे श्वेतसूकरं वसुधाधरम् ।  
 साष्टाङ्गञ्च प्रणम्याथ स्तोतुं समुपचक्रमे ॥ १०

मार्कण्डेयः—

- “ जलौघमग्ना सचराचरा धरा विषाणकोट्याऽखिलविश्वमूर्तिना ।  
 समुद्धृता येन वराहरूपिणा स मे स्वयम्भूर्भगवान् प्रसीदतु ॥ ११
- पोत्रिरूप ! नमस्तुभ्यं पुरुषोत्तम ! ते नमः ।  
 स्वामिपुष्करिणीतीरवासिने वरदाच्युत ! ॥ १२
- श्रीवेङ्कटवराहाय विश्वमङ्गलकारिणे ।  
 भक्तानां रक्षिणे तुभ्यं भगवन् ! सततं नमः ॥ ” १३

श्रीमार्कण्डेयकृत श्रीश्रीनिवास्तुतिः

- इति स्तुत्वाऽथ पीत्वा च तत्पादसलिलं मुदा ।  
 निर्गत्य दक्षिणे तीरे जगाम हरिमन्दिरम् ॥ १४
- नमस्कृत्य विमानान्तः प्रविश्यासौ ददर्श ह ।  
 शङ्खचक्रधरं देवं वरदं वारिजेक्षणम् ।  
 वेङ्कटेशं प्रणम्यासौ चकार स्तुतिमुत्तमम् ॥ १५
- “भास्वच्चन्द्रसमे यदीयनयने भार्या यदीया रमा  
 यस्माद्विश्वसृडप्यभूद्यमिकुलं यद्वचनयुक्तं सदा !  
 नाथो यो जगतां नगेन्द्रदुहितुर्नाथोऽपि यद्वक्तिमान्  
 तातो यो मदनस्य यो दुरितहा तं वेङ्कटेशं भजे ॥ १६
- पाहि मां वेङ्कटाधीश प्रणतार्तिप्रभञ्जन ! ।  
 आत्मबन्धो कृपासिन्धो ! सततं ते नमोनमः ॥ १७
- नारायणाद्रिकृतवास ! हरे ! नमस्ते  
 नारायणाखिलजगत्पतये नमस्ते ।  
 कारुण्यपूर्ण ! कमलापतये नमस्ते  
 कञ्जाक्ष रक्ष कमनीयतनो नमस्ते ॥ १८
- विना वेङ्कटेशं न नाथो न नाथः ; सदा वेङ्कटेशं स्मरामि स्मरामि ।  
 हरे ! वेङ्कटेश ! प्रसीद प्रसीद ; प्रियं वेङ्कटेश ! प्रयच्छ प्रयच्छ ॥ १९
- अहं दूरतस्ते पदाम्भोजयुग्मप्रणामेच्छयाऽऽगत्य सेवां करोमि ।  
 सकृत्सेवया नित्यसेवाफलं त्वं प्रयच्छ प्रयच्छ प्रभो वेङ्कटेश ! ॥ २०
- अज्ञानिना मया दोषानरोषान् विहितान् हरे ! ।  
 क्षमस्व त्वं क्षमस्व त्वं शेषशैलशिखामणे ! ॥ ” २१



मार्कण्डेयः—

- इति स्तुत्वा तु भावेन शुद्धेन सह सादरम् ।  
 तूष्णीं बभूव पुरतो मस्तके विहिताञ्जलिः ॥ २२
- मार्कण्डेयस्य भगवद्भक्त्यनुरक्त्यवरप्राप्तिः  
 तमाह वेङ्कटाधीशो मार्कण्डेयं महामुनिम् ।  
 'मार्कण्डेय ! महाबुद्धे ! प्रसन्नोऽस्मि तवानघ ! ॥ २३
- श्रुत्वा गरुडवाक्यं तदागतो यत् वृषाचलम् ।  
 स्तुतिर्हि विहिता सम्यक् तस्मादिष्टं ददामि ते ॥ ' २४
- इत्युक्तः स मुनिः प्राह 'ममेष्टं किं जनार्दन ! ।  
 यथा तव स्मृतिर्भूयात् सततं वेङ्कटेश्वर ! ॥ २५
- तथा मां पाहि देवेश ! भक्तवत्सल ! ते नमः ।'  
 तथाऽस्विति कृपां कृत्वा हरिः शुद्धमुवाच ह ॥ २६

शुद्धाख्यागस्त्यशिष्यस्य भगवदनुग्रहेण निष्पापत्वप्राप्तिः

- 'शुद्ध ! शुद्ध दुरन्तानि पापानि विहितानि ते ।  
 तानि सर्वाणि शान्तानि सेवया मे न संशयः ॥ २७
- गुर्वाश्रममितो गत्वा धर्मतन्त्रं समाचर ।  
 प्रदक्षिणं मद्धिमानं कुरुतादिति चोक्तवान् ॥ ' २८
- प्रदक्षिणं ततः कृत्वा विमानं सम्प्रणम्य च ।  
 त्रिरावृत्त्या कचित्तिष्ठन् शुद्धं मुनिरथाब्रवीत् ॥ २९
- 'कुतस्त्वमागतः शुद्धः ! को गुरुः कुत्र वाऽऽश्रमः ।  
 त आसन् कानि पापानि शान्तानि हरिसेवया ? ॥ ३०
- मार्कण्डेयं प्रति शुद्धकृतस्वोदन्तज्ञापनम्  
 एतत्सर्वं वद क्षिप्रं सखे ! मयि दया यदि ।'  
 इति पृष्टोऽगस्त्यशिष्यः सखे ! शृण्वति चाब्रवीत् ॥ ३१

- “ यथार्थं शृणु मत्तस्त्वं मार्कण्डेय मुनीश्वर ! ।  
 काञ्चीदेशे मध्यराष्ट्रे द्विजो बहुकुटुम्ब्यहम् ॥ ३२
- कुटुम्बभरणार्थाय दुर्दानानि गृहीतवान् ।  
 वसनासनहीनत्वात् भ्रमामि जगतीतले ॥ ३३
- एकोद्दिष्टं षोडशानि बहु भक्तानि पापिना ।  
 धनं धनमिति भ्रान्तं भ्रान्तचित्तेन केवलम् ॥ ३४
- स्नानं सन्ध्या जपो होमो देवार्चाऽतिथिकर्म च ।  
 वैश्वदेवं ब्रह्मयज्ञो न कदाचित् कृतं मया ॥ ३५
- पापिनं मां समालोक्य सर्वे ग्रामे महाजनाः ।  
 “ महाब्राह्मण ” इत्येव शपन्तौ नाम चक्रिरे ॥ ३६
- रेवती नाम मे भार्या मामवोचन्मनीषिणी ।  
 ‘ बहूनि पातकान्यत्र कुटुम्बभरणेच्छया ॥ ३७
- कुर्वन्नपि धनं किञ्चित् न प्राप्तोषि क्वचिद्विज ! ।  
 प्रेतोद्देशकृता गावो गृहीताः प्रेतभोजनम् ॥ ३८
- प्रेतवासांसि बहुशो निन्द्यं कर्म सदा कृतम् ।  
 एवं कृतेषु पापेषु गृहे किञ्चिन्न दृश्यते ॥ ३९
- अद्याऽऽहारो नैव गृहे क्षुधिताः पुत्रबालिकाः ।  
 तव मे बालकानाञ्च च्छादनं नैव विद्यते ॥ ४०
- अतीव दीनोऽहमिति निश्चयं नाधिगच्छसि ।  
 “ आयुरारोग्यमैश्वर्यं दातुं सर्वमनोरथम् ॥ ४१
- सकृदप्यानतिकृतां शक्तो वेङ्कटनायकः । ”  
 इति प्राज्ञा वदन्तीह तत्प्रयाणं कुरु द्विज ! ॥ ४२
- उत्तरस्यां दिशि नदी सुवर्णमुखरीति वै ।  
 तत्तीरे वेङ्कटो नाम हरिक्षेत्रं महीधरः ॥ ४३

तत्र वेङ्कटनाथस्य सेवां कर्तुमितो ब्रज ।  
 लक्ष्म्यंशा योषितः सर्वा इति विद्वद्भिरीरितम् ।  
 प्रमाणीकृत्य मद्वाक्यं शीघ्रं गच्छ सुखाय वै ॥ ” ४४

शुद्धः—

आकर्ण्य प्रेयसीवाक्यं पञ्चभिर्दिवसैरहम् ।  
 सुवर्णमुखरीं प्राप्य अगस्त्याश्रममुपेयिवान् ॥ ४५  
 सुवर्णमुखरीतीरे तपस्यन्तं शिवाग्रतः ।  
 प्रणाममाचरं दृष्ट्वा ‘ नमस्तुभ्य ’ मिति ब्रुवन् ॥ ४६  
 कुम्भोद्भवोऽथ मां दृष्ट्वा कृपालुः ऋषिसत्तमः ।  
 ‘ कुतस्त्वं केन दुःखित्वं किं कार्यम् ? ’ इति पृष्ठवान् ॥ ४७

शुद्धः—

‘ मां पाहि करुणासिन्धो पापिनामपि पापिनम् ॥ ४८  
 मत्कृत्यं तपसा सर्वं त्वमेव ज्ञातुमर्हसि ।  
 काञ्चीप्रदेशे मद्ग्रामः तद्ग्रामस्य महाजनाः ॥ ४९  
 पापीति कृत्वा मां सर्वे ‘ महाब्राह्मण ’ मब्रुवन् ।  
 तस्मादहं दुःखितः सन् वेङ्कटाद्रीच्छयाऽऽगतः ॥ ५०  
 मत्पुण्येन भवान् मध्ये मार्गे दृष्टोऽसि केवलम् ।  
 पूर्वपुण्यविपाकेन दृश्यन्ते खलु सज्जनाः ॥ ५१  
 प्रतिगृह्णीष्व मां शिष्यं तव शिष्योऽस्मि साम्प्रतम् ।  
 पापोऽहं पापकर्माणं पावनीकुरु मां मुने ! ॥ ’ ५२  
 इति वादिनमालोक्य मामुवाच महामुनिः ।  
 ‘ बहु त्वया कृतं पापं विदितं तपसा मम ॥ ५३  
 बुद्धिर्वेङ्कटयात्रायां यतः शुद्धोऽसि साम्प्रतम् ।  
 ‘ अयं शुद्धोऽस्ति ’ ति ब्रूत सर्वे विप्रा इति ब्रुवन् ॥ ५४

मामाह त्वरितं गत्वा वेङ्कटाह्वयभूधरम् ।  
 भूवराहश्च लक्ष्मीशं सेवित्वा पुनराव्रज ॥ ५५  
 नष्टपापस्य ते पश्चात् श्रेयो दास्यामि मा चिरम् ।'  
 इत्येवमुक्त्वा भगवान् अगस्त्यः सेवाक्रमं चापि ममोपदिश्य ।  
 प्रस्थापयामास तदाऽऽगतोऽहं मार्गे भवन्तं खलु दृष्टवान् मुदा ॥ ५६  
 एवं त्वगस्त्यशिष्योऽहं शुद्धनामाऽसि साम्प्रतम् ।  
 याम्याश्रमं नदीतीरे ह्यगस्त्यस्य दयानिधेः ॥ ५७  
 वेङ्कटाचलमाहात्म्यविदामग्रेसरं मुनिम् ।  
 द्रष्टुं मया सह त्वञ्च विन्मायासि वदाधुना ॥ ५८

**मार्कण्डेयस्य शुद्धेन सह सुवर्णमुखरीतीरस्थागस्त्याश्रमगमनम्**

इति ब्रुवन्तं तं शुद्धं मार्कण्डेयोऽब्रवीद्वचः ।  
 'अहमप्यागमिष्यामि द्रष्टुं तं मुनिपुङ्गवम् ॥ ५९  
 सुवर्णमुखरीतीरे मां नयस्व तदाश्रमम् ।'  
 इत्युक्त्वा सहितौ विप्राववरुह्य गिरेरधः ॥ ६०  
 सुवर्णमुखरीतीरे त्वगस्त्याश्रममीयतुः ।  
 तत्राऽऽश्रमे महर्षिभिः सेव्यमानमनेकशः ॥ ६१  
 वेङ्कटेशकथाव्याख्यातत्परं तमपश्यताम् ।  
 तेभ्यो नमस्कृत्य तदा तं प्रणम्य विशेषतः ॥ ६२  
 तपोधनेनागस्त्येन बहुमानेन पूजितौ ।  
 मार्कण्डेयश्च शुद्धश्च तस्मिन् सदसि तस्थतुः ॥ ६३

**अगस्त्यवर्णित श्रीवेङ्कटाचलवैभवम्**

विप्रा वेङ्कटमाहात्म्यं शृणुतेति प्रसन्नधीः ।  
 उवाचानन्दभरितो लोपासुद्रापतिस्तदा ॥ ६४

अगस्त्यः—

‘सुवर्णमुखरीतीरद्वयनित्यनिवासिनः ।

वेङ्कटाचलमाहात्म्यं श्रोतव्यं पापनाशनम् ॥

६५

श्रीवेङ्कटाचलो नाम पुण्यक्षेत्रं महीतले ।

शेषाद्रिः वृषशैलश्च गरुडाचल इत्यपि ।

पुण्यानि सन्ति नामानि पुनरन्यानि कानिचित् ॥

६६

वैकुण्ठलोकात् गरुडेन विष्णोः क्रीडाचलो वेङ्कटनामधेयः ।

आनीय च स्वर्णमुखीसमीपे संस्थापितो विष्णुनिवासहेतोः ॥ ६७

तत्राचले वसन् विष्णुः कमलालयया सह ।

आनन्दनिलये चैव वर्तते लोकरक्षकः ॥

६८

श्रीनिवाससेवार्थं ब्रह्मरुद्रादीनां श्रीवेङ्कटाचलगमनवर्णनम्

पुरा कदाचित् कतिचित्समेता वयं हरिं सर्वजगच्छरण्यम् ।

अन्विष्य वैकुण्ठपुरेऽप्यदृष्ट्वा समागता ब्रह्मागिरा वृषाद्रिम् ॥ ६९

समागतास्तत्र तपो विधातुं समाः शतं सर्वतपस्विसङ्घाः ।

श्रीस्वामितीर्थस्य जले पवित्रे स्नानादि सर्वं कृतवन्त एव ॥ ७०

तत्राऽऽगता ब्रह्ममुखाः समस्ताः तत्राऽऽगता जिष्णुमुखाः सुराश्च ।

तत्राऽऽगतास्ते सनकादियोगिनः सेवापरास्ते वृषशैलभर्तुः ॥ ७१

गणैश्च सर्वैः सह शम्भुरागतः क्षीराब्धिवासा अपि सिद्धसङ्घाः ।

बृहस्पतिश्चैव गुरुश्च शुक्रो वसुश्च राजा हरिभक्तमुख्यः ॥ ७२

देवाश्च ऋषयः सिद्धाः चारणा वसुकिन्नराः ।

सर्वे च स्वामिसरसि स्नात्वा प्रयतमानसाः ।

ध्यायन्तो देवदेवेशमवतस्थुश्च तत्तटे ॥

७३

श्रीभगवत्प्रादुर्भाववर्णनम्

प्रादुर्भूतं ततस्तेज एकमत्यद्भुतं तदा ।  
 विमानमेकं तन्मध्ये ददृशे दिव्यमङ्गलम् ॥ ७४  
 तन्मध्यस्थं दिव्यमूर्तिं वरेण्यं शङ्खं चक्रं धारयन्नं कराभ्याम् ।  
 सेव्यत्वेन स्वं पदाम्भोजयुग्मं सर्वेषां सन्दर्शयन्तं करेण ॥ ७५  
 स्वाङ्घ्रिद्वन्द्वं संश्रितानां जनानां संसाराब्धिर्जानुदन्नः किलेति ।  
 न्यस्तेनोरौ वामतो दर्शयन्तं सव्येनान्येनापि हस्तेन सम्यक् ॥ ७६  
 सर्वाभीष्टं दातुमुद्युक्तहेतिं भक्तानां श्रीवासवक्षःस्थलञ्च ।  
 मन्दस्मेरश्रीमुखं भूषणाढ्यं सर्वे श्रीमद्वेङ्कटेशं ह्यपश्यन् ॥ ७७

ब्रह्मरुद्रादिकृत श्रीश्रीनिवासस्तुतिः

कृतप्रणामास्ते सर्वे स्तोत्रयामासुरीश्वरम् ।  
 “जय देव ! जगन्नाथ ! सर्वलोकैकवन्दित ! ॥ ७८  
 जय वेङ्कटशैलेश ! करुणाकर ! पाहि नः ।  
 त्वां नमामो वयं विष्णो ! वेङ्कटाचलनायक ! ॥ ७९  
 अस्माकं वाञ्छितं दत्त्वा पाहि पाहि जगद्गुरो ।”  
 इति स्तुतः श्रीनिवासो देवैः सिद्धैश्च चारणैः ॥ ८०  
 मुनिभिर्वसुमुख्यैश्च ब्रह्माद्यैः शङ्करेण च ।  
 सर्वान् विलोक्य तानाह करुणापयसां निधिः ॥ ८१  
 ‘सर्वेषामपि युष्माकं प्रसन्नोऽस्मि सुरेश्वराः ! ।  
 युष्माकं यद्यदिष्टं स्यात् तत्तद्दत्तं मयाऽनघाः ॥’ ८२  
 इति तेभ्यो वरं प्रादात् सर्वेभ्यो वेङ्कटेश्वरः ।  
 अथ ते मुनयः सर्वे ब्रह्माद्याः किञ्चिदब्रुवन् ॥ ८३

“ कृपानिधे ! नमस्तुभ्यं वरदाय नमो नमः ।  
 वेङ्कटाधीश ! विश्वेश ! शतकृत्वो नमोनमः ॥ ८४  
 विज्ञाप्यं किञ्चिदस्तीह शृणुष्व करुणाकर ! ।  
 अनुगृह्यन्नशेषांस्त्वं दददिष्टानि सर्वशः ॥ ८५  
 मानवानामपि सहन् अपराधानशेषतः ।  
 दयालुत्वं प्रकटयन् इह त्वं तिष्ठ केशव ! ॥ ८६  
 दृगोचरं त्वामालोक्य वेङ्कटाद्रिशिरोमणे ! ।  
 कलौ युगे मनुष्याश्च भूयासुः वीतकल्मषाः ॥ ८७  
 एवं सर्वोपकारार्थं अत्र स्वामिसरस्तटे ।  
 रमासमेतः सन्तिष्ठस्वैतन्नः प्रार्थितं हरे । ”  
 इति सम्प्रार्थितः सर्वैः तल्लैवाऽऽस्ते कृपानिधिः ॥ ’ ८८

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये श्रीश्रीनिवासाविर्भाववर्णनं  
 नाम द्वितीयोऽध्यायः

— —

अथ तृतीयोऽध्यायः

~~~~~

अगस्त्यकृत श्रीस्वामितीर्थमाहात्म्यभगवद्विषयोत्सवयोर्वर्णनम्

अगस्त्यः —

एतादृशो वेङ्कटाद्रिः सर्वलोकेषु विश्रुतः ।  
 गङ्गादिकानि तीर्थानि तत्र सन्ति बहून्यपि ॥ १  
 तानि वक्तुं न शक्नोमि बहुत्वात् ऋषिसत्तमाः ।  
 राजते सर्वतीर्थानां स्वामि स्वामिसरोवरम् ॥ २  
 तत्र स्नातुं समायान्ति प्रतिवर्षं जना भुवि ।  
 धनुर्मासे शुक्लपक्षे द्वादश्यामरणोदये ॥ ३

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| आयान्ति सर्वतीर्थानि तत्र स्नाता निरेनसः ।       |    |
| तस्य श्रीवेङ्कटेशस्य ब्रह्मा लोकपितामहः ॥        | ४  |
| चकार कन्यामासे तु ध्वजारोहमहोत्सवम् ।            |    |
| प्रतिवर्षञ्च तत्सेवानिमित्तं सर्वमानवाः ॥        | ५  |
| अङ्गकोसलकर्णाटकाशीगुर्जरदेशगाः ।                 |    |
| चोलकेरलपाण्ड्यादिसर्वदेशसमुद्भवाः ॥              | ६  |
| सकुटुम्बाश्च सेवार्थं आयान्ति प्रतिवत्सरम् ।     |    |
| देवाश्च ऋषयः सिद्धा योगिनः सनकादयः ॥             | ७  |
| ये भाद्रपदमासे तु वेङ्कटेशमहोत्सवे ।             |    |
| सेवां कुर्वन्ति ते सर्वे निष्पापा उत्तमोत्तमाः ॥ | ८  |
| पुनस्त्वहं प्रवक्ष्यामि तीर्थवैभवमद्भुतम् ।      |    |
| तच्छृणुध्वं सावधानं श्रवणेऽपि महाफलम् ॥          | ९  |
| उत्तरे स्वामितीर्थस्य पापनाशनसंज्ञकम् ।          |    |
| तीर्थं महत्सर्वपापविनिर्मोचनसाधनम् ॥             | १० |

### कुमारधाराभाहात्म्यम्

|                                                 |    |
|-------------------------------------------------|----|
| ततो वायव्यदिग्भागे कौमारं तीर्थमुत्तमम् ।       |    |
| ‘कुमारधारिका’ चेति नाम लोके प्रशस्यते ॥         | ११ |
| अद्भुतं तस्य माहात्म्यं शृणुत द्विजपुङ्गवाः ! । |    |
| पुरा कश्चित् द्विजो वृद्धो दारिद्रेण च पीडितः ॥ | १२ |
| कुटुम्बभरणायोग्यो विललाप दिवानिशम् ।            |    |
| ‘इह लोके परे लोके सौख्यहेतुर्धनं किल ॥          | १३ |
| तन्नास्ति मम पापेन पूर्वजन्मकृतेन च ।           |    |
| परलोकहितं भर्माचरणेन हि साध्यते ॥               | १४ |



शक्तिस्तदस्ति कर्तुं न वृद्धत्वाद् दुर्बलस्य मे ।  
 वृथा जन्म ममैतद्धि कर्तव्यं विमतः परम् ॥ १५  
 इति निन्दापरो भूत्वा पुत्रदारान् विहाय च ।  
 आगत्य दुःखितः सोऽथ स्वर्णमुख्याः समीपतः ॥ १६

दारिद्र्यदुःखासहमानवृद्धद्विजकृतभृगुपतनयतः

अहं शेषादिशिखरात् पतिष्ये इति निश्चितः ।  
 आरुह्य वेङ्कटं शैलं भृगोःपातसमीहया ॥ १७  
 उच्चैःस्वरेण चुक्रोश तत्र स्थित्वा स भूसुरः ।  
 'ब्रह्मविष्णुमहेशानाः ! चन्द्रसूर्यौ तथाऽधिनौ ! ॥ १८  
 सर्वभूतानि शृण्वन्तु दुःखितस्य वचो मम ।  
 दारिद्र्यात् वृद्धभावाच्च जन्मव्यर्थमभूदिति ॥ १९  
 पतिष्येऽहं पतिष्येऽहं पतिष्येऽहं न संशयः ' ।  
 इत्याक्रोशन्तमागत्य वेङ्कटेशो ददर्श ह ॥ २०  
 मृगयारसिकस्तत्र सञ्चरन् मुनिपुङ्गवम् ।  
 अधस्तात् पर्वतप्रान्ते राजपुत्राकृतिं दधत् ॥ २१  
 हस्तमुद्धृत्य तं पश्यन् उवाचेदं द्विजं तदा ।

भृगुपतनोद्युक्तं वृद्धं प्रति मगवदुक्तिः

'विप्र ! विप्रावरोह त्वं मा साहसमिदं कुरु ॥ २२  
 विप्रस्य तु भृगोः पातः शास्त्रेषु न हि निश्चितः ।  
 तस्मात् प्रेत्य च दुखाय मा साहसमिदं कुरु ॥ २३  
 मयोच्यते तव हितं अवरुह्य शृणुष्व तत् ' ।  
 श्रुत्वेति तं नृपाकारं दृष्ट्वा वृद्धो महीसुरः ॥ २४

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे तृतीयोऽध्यायः ३८७

अवरुद्ध तमाहेदं पुण्यात् शैलोत्तमात् तदा ।  
'पुत्रदारांश्च मां रक्ष महैश्वर्यप्रदो भव' ॥ २५  
इत्युक्तवति विप्रेऽस्मिन् माधवो वाक्यमब्रवीत् ।  
'सर्वं ददामि हस्तं त्वमवलम्ब्यानुयाहि माम्' ॥ २६  
इत्युक्तस्तत्करालम्बं कृत्वा मन्दं ययौ द्विजः ।

वृद्धस्य कुमारधारास्नानेन कौमारसम्प्रतप्राप्तिः

तमादाय हरिः श्रीमद्वेङ्कटाचलनायकः ॥ २७  
पापनाशादुत्तरतः एतत्तीर्थं निनाय तम् ।  
उवाच खिन्नं स भृशं खेदशान्त्यर्थमत्र वै ॥ २८  
'स्नानं कुरु ततः खेदशान्तिस्तत्र भविष्यति' ।  
इत्युक्ते तत्र तत्तीर्थे स्नात्वोत्थाय युवाऽभवत् ॥ २९  
मनः प्रसन्नतां यातं कुमारश्च तदाऽभवत् ।  
तीरं तु सर्वतः पश्यन् तमदृष्ट्वाऽन्वतप्यत ॥ ३०  
मदिष्टदेवो मामत्र त्यक्त्वा कुत्र गतो नु किम्' ।  
अन्तर्हितः स भगवानाकशस्थोऽब्रवीदिदम् ॥ ३१

कुमारधारास्नानप्राप्तयौवनवृद्धं प्रति अन्तर्हितभगवदुक्तिः

'अयं तु वेङ्कयश्रीशः तव स्वामी न संशयः ।  
दत्तं तव कुमारत्वं तीर्थस्नानेन भूसुर ! ॥ ३२  
वेङ्कटेशेन ते दत्तमैश्वर्यमिह भूसुर ! ।  
त्वद्देशं गच्छ शीघ्रं वै स्त्रीबालसहितो भव ॥ ३३  
शरीरे च बलं जातं शरीरं धर्ममाचर ।  
दानानि दिश विप्रेभ्यो बन्धुभ्यश्च धनं दिश ॥ ३४

- भोजनं दिश विप्रेभ्यः स्वयं भुङ्क्ष्व यथासुखम् ।  
 अनिषिद्धसुखत्यागी पशुरेव न संशयः ॥ ३५
- निषिद्धसुखभोक्ता च पशुरेव न संशयः ।  
 श्रीवेङ्कटेशः प्रीयतामित्येव सकलं कुरु ॥ ३६
- स्त्रीत्यागभोगाकरणे निन्दमेव विदुर्बुधाः ।  
 इत्युक्ते सर्वदेवाश्च समागत्याब्रुवन् वचः ॥ ३७
- ‘अस्य तीर्थस्य महिमा ब्रह्मो वाचामगोचरः ।  
 कुमारत्वं धनित्वञ्च सद्य एव द्विजोऽभवत् ॥ ३८
- यातः कुमारतां यातः सद्यो वृद्धमहीसुरः ।  
 तस्मात् ‘कुमारधा’ रेति लोके ख्यातिं गमिष्यति ॥ ३९
- कुमारतीर्थे यः स्नातो निष्पापः स सुखी भवेत् ।  
 इत्युक्त्वा सर्वदेवेषु गतेषु त्रिदिवं द्विजः ॥ ४०
- यातः स्वदेशं सन्तोषात् महदैश्वर्यमाप्तवान् ।  
 पुत्रदारादिसहितो बहु धर्मं चकार ह ॥ ४१
- “श्रीवेङ्कटेशः प्रीयता” मित्येव कथयन् सदा ।  
 दृष्टं फलमवाप्यान्ते विष्णुलोकं जगाम ह ।  
 कुमारधारिकेत्येव विष्णुनाऽप्येकदोदितम् ॥ ४२

ऋषयः —

- तत्कदाऽऽगत्य देवेन विष्णुना प्रभविष्णुना ।  
 कुमारधारिकेत्येतदुक्तं तद्विस्ताराद्ब्रह्म ॥ ४३

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटचलमाहात्म्ये कुमारधारामाहात्म्यवर्णनं

नाम तृतीयोऽध्यायः

अथ चतुर्थोऽध्यायः



स्कन्दस्य कुमारधारातीर्थे तपःकरणेन तारकवधोत्थ

ब्रह्महत्याविमुक्तिः

अगस्त्यः—

- कुमारधारिकास्यानं वेङ्कटेशकथाऽन्वितम् ।  
 सर्वे शृणुत विप्रेन्द्राः ! वाजपेयफलाधिकम् ॥ १
- कदाचिच्छङ्करसुतः तारकाख्यं महासुरम् ।  
 हत्वा तत्कर्मपाकेन ब्रह्महत्यामवाप्तवान् ॥ २
- शम्भोः सकाशमागत्य दुःस्वितस्तारकान्तकः ।  
 उवाच पितरं 'स्वामिन् ! मत्पापं शृणु मे पितः ! ॥ ३
- देवानामुपकारार्थं तारको निहतो मया ।  
 तेन तस्य वधेनैव हत्या मां बाधतेऽधिकम् ॥ ४
- तत्प्रायश्चित्तमधुना प्रब्रूहि मम शङ्कर ! ' ।  
 सर्वज्ञः शङ्करः प्राह पुत्रं देवहितावहम् ॥ ५
- 'सकृत् नारायणेत्युक्त्वा पुमान् कल्पशतत्रयम् ।  
 गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्नातो भवति पुत्रक ! ॥ ६
- एतत्प्राह रहस्यं वै सदा मनसि तिष्ठतु ।  
 अन्यच्च किञ्चित्ते वक्ष्ये प्रायश्चित्तमनुत्तमम् ॥ ७
- सुवर्णमुखरीतीरे लक्ष्मीपतिनिवासम् ।  
 वेङ्कटाद्रिरिति ख्यातः सर्वलोकेषु वर्तते ॥ ८
- तत्र तीर्थान्यनन्तानि तेषु किञ्चिद्ब्रूदामि ते ।  
 चक्रतीर्थं स्वामितीर्थं मत्स्यपाण्डवतीर्थकम् ॥ ९

- नागतीर्थं बिल्वतीर्थं जाबालेस्तीर्थमेव च ।  
 आकाशगङ्गातीर्थञ्च पापनाशनमेव च ॥ १०
- तुम्बुवामनतीर्थे च कौमारं मुख्यमेव च ।  
 वेङ्कटाचलतीर्थानि यः कीर्तयति सर्वदा ॥ ११
- अनेकजन्मपापानि नश्यन्त्येव न संशयः ।  
 स्वामितीर्थस्य तीरे तु श्रीनिवासः परात्परः ॥ १२
- नित्यं वसति सर्वेषां लोकानां हितकाम्यया ।  
 तत्र वेङ्कटशैलेशं वेङ्कटेशेति सर्वदा ॥ १३
- यो वै स्मरति तं नित्यं तस्य विष्णुः प्रसीदति ।  
 गत्वा तच्च प्रणम्य त्वं कौमारं ब्रज तीर्थकम् ॥ १४
- तत्र स्नात्वा तीर्थवर्ये त्रिकालं विजितेन्द्रियः ।  
 “श्रीवेङ्कटेशाय नमः” एवं प्रणवपूर्वकम् ॥ १५
- मन्त्रं जपन् महाबुद्धे ! तपः कुर्वित्यचोदयत् ।  
 पितृवाक्यं ततः श्रुत्वा देवसेनापतिस्तदा ॥ १६
- चक्रतीर्थे कृतस्नानः स्वामिपुष्करिणीं ययौ ।  
 वेङ्कटाद्रेः क्रोशमात्रे क्रोशन्ती विस्वरं स्थिता ॥ १७
- ब्रह्महत्या तस्य गिरेः माहात्म्यं वर्ण्यते कथम् ! ।  
 प्रयातः स्वामिसरसि स्नात्वा सूनुरुमापतेः ॥ १८
- वेङ्कटेशं प्रणम्याथ कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ।  
 ‘ब्रह्मरुद्रादिवन्द्यं त्वां भजे वेङ्कटनायकम् ॥ १९
- निवारयन् अनिष्टानि साधयेष्टानि माधव ’ ।  
 इति स्तुत्वा वेङ्कटेशं पापनाशनमाययौ ॥ २०
- तत्र स्नानेन सर्वाणि पापानि विलयं ययुः ।  
 ततो वायव्यदिग्भागे काञ्चिद्द्वारां जगाम सः ॥ २१

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ३९१

- धारारूपेण पतितां अत्यन्तगिरिगह्वरे ।  
चूतमन्दारपनसकुटजैश्चापि चार्जुनैः ॥ २२
- नयनानन्दजननैः बहुशाखिभिरावृते ।  
सिंहशार्दूलशरभैः हरिणादिमृगान्वते ॥ २३
- तापसैः नियताहारैः तपोनिष्ठैः समन्विते ।  
तस्मिंस्तीर्थे कृतस्नानः कृतदेवर्षितर्पणः ॥ २४
- वसानो वाससी शुद्धे यतवाक्कायमानसः ।  
प्राङ्मुखः सुखमासीनो वेङ्कटेशमनुस्मरन् ॥ २५
- लक्ष्मीमहीभ्यां सहितं भूषणोत्तमभूषितम् ।  
स्मेराननाम्बुजं पीतवाससं तमधोक्षजम् ॥ २६
- महादेवोक्तमन्त्रेण जपं कुर्वन् दिवानिशम् ।  
फलाहारो जलाहारो निराहारस्ततः स्थितः ॥ २७
- कुमारधारतीरे स्कन्दतपस्तुष्टभगवदाविर्भावः  
तपः कुर्वति शेषाद्रौ नीलकण्ठ्यत्मजे शुभे ।  
कुम्भमासे पौर्णमास्यां मघायां सौम्यवासरे ॥ २८
- मध्याह्ने प्रादुरभवत् यथा मनसि चिन्तितः ।  
“भो कुमार ! कुमारे” ति प्राह गम्भीरया गिरा ।  
उन्मील्य चक्षूंषि तदा षण्मुखोऽपश्यदन्तिके ॥ २९
- शङ्खं चक्रं धारयन्तं कराभ्यां फलप्रदश्चरुगवामहस्तम् ।  
प्राप्ये इमे इत्यपरेणपादौ सन्दर्शयन्तं करपङ्कजेन ॥ ३०
- लक्ष्मीमहीभ्यां ललिताकृतिभ्यां अशेषभूषणोत्तमभूषिताभ्याम् ।  
अतिप्रसन्नाननपङ्कजाभ्यां निषेव्यमाणं नितरां प्रहृष्टम् ॥ ३१
- दृष्ट्वात्थितो देववरः कुमारः प्रदक्षिणानां त्रितयं विधाय ।  
प्रणम्य साष्टाङ्गमनन्यचेताः कृताञ्जलिः स्तोत्रमथो चकार ॥ ३२

“ जय देव ! जगन्नाथ ! जय लक्ष्मीपते ! हरे ! ।

जय लोकेश ! सर्वेश ! दोषापह ! नमो नमः ” ॥ ३३

भगवत्सेवार्थं कुमारधाराम्प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्

सर्ववाद्यान्यवाद्यन्त शङ्खध्वनिरभून्महान् ।

तुम्बुरुर्नारदश्चैव वीणाहस्तौ समागतौ ।

ब्रह्मा च स्कन्दसान्निध्यं ज्ञात्वा सर्वैः समागतः ॥ ३४

पार्वतीसहितः शम्भुः पुत्रलेहादुपागतः ।

आरुह्य वृषभं विघ्नराजाद्यैः प्रमथैर्वृतः ॥ ३५

इन्द्रादयो लोकपालास्त्वशेषा अमृतान्धसः ।

वैखानसा वालखिल्या ऋषयो ये तपोधनाः ॥ ३६

गन्धर्वाप्सरसां सङ्घा नागविद्याधरादयः ।

ये देवयोनयः सन्ति तेऽपि सर्वे समागताः ॥ ३७

“ जय जय वेङ्कटशैलनाथ ! विष्णो !

मुनिजनसेवित ! शेषशैलवास ! ।

सकलजनहितावतीर्ण ! देव !

जय जय भक्तजनाभिराम ! पाहि ” ॥ ३८

इति स्तुत्वा प्रणम्याथ ददृशुर्वेङ्कटेश्वरम् ।

श्रीभूमिसहितं विष्णुं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥ ३९

शङ्खचक्रधरं देवं वनमालविभूषितम् ।

शेषेण पक्षिराजेन विष्वक्सेनेन पार्षदैः ॥ ४०

प्रत्यहं सेव्यमानञ्च प्रह्लादादिभिरेव च ।

शुकेन शुक्सन्तानैः छलचामरधारिभिः ।

प्रसन्नं वेङ्कटाधीशं प्रणम्य पुनरुत्थिताः ॥ ४१

श्रीमार्कण्डेयपुराणे तीर्थखण्डे चतुर्थोऽध्यायः

३९३

व्यासादयः प्रणम्याथ सर्वे तूर्णानि स्थितास्तदा ।

सर्वेषु शृण्वत्सु तदा हरसूनुस्तमब्रवीत् ॥

४२

स्कन्दकृत श्री श्रीनिवासस्तुतिः

“ नामाम्यहं वेङ्कटनाथ ! विष्णो !

नारायणाशेषजगन्निवास ! ।

भक्तार्तिहारिन् ! भगवन् ! मुरारे !

भान्विन्दुनेत्राखिललोकपूज्य ! ॥

४३

ब्रह्मरुद्रादिवन्ध्याय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये ।

नारायणगिरीशाय नमो नारायणाय ते ॥

४४

देवाधिदैवतपते ! सततं नमस्ते

सेवा परेषु सुतरां करुणाकराय ।

दावानलाय महते दनुजाटवीनां

श्रीवास ! वक्षसि धृतोत्तमकौस्तुभाय ॥

४५

पश्यन्ति त्वां भाग्यवन्तो हि लोके

विश्वत्राणायोद्यतं वेङ्कटेशम् ।

लक्ष्मीभूभ्यां पार्श्वयुग्मस्थिताभ्यां

द्वाभ्यां नित्यं सेवितं नित्यबन्धुम् ॥

४६

अहो ! भाग्यमहोभाग्यम् ! अहोभाग्यमहो महत् ।

वेङ्कटेशं कृपासिन्धुं दृष्टवानस्मि साम्प्रतम् ” ॥

४७

इत्युक्त्वा पार्वतीपुत्रः प्रेमावेशवशात्तदा ।

अशेषवदनैः विष्णुं आबभाषे घनध्वनिः ॥

४८

“ चक्षूंषि मे कृतार्थानि दर्शनाद्वेङ्कटेश ! ते ।

श्रीसूक्तामृतसेकेन कर्णानपि तथा कुरु ” ॥

४९



- इति वादिनि पुत्रे तु महादेवमुवाच ह ।  
 हरिः स्मेरमुखाम्भोजः शृण्वत्सु सकलेष्वपि ॥ ५०
- ‘ धन्योऽसि सुतरां शम्भो ! सत्पुत्रेणामुना त्वहो ! ।  
 अनेकजन्मतपसां फलं सत्पुत्रता खलु ॥ ५१
- अनेकजन्मपापानां फलं दुष्पुत्रता भुवि ’ ।  
 इत्युक्त्वा पुनरुच्ये तं तनयं शूलपाणिनः ॥ ५२
- ‘ धन्योऽसि कृतकृत्योऽसि वरं वरय साम्प्रतम् ।  
 तपसा तव सन्तुष्टिः स्तोत्रेण च ममाभवत् ॥ ५३
- प्रमाणीकृत्य वचनं पितुः प्रामाणिकोत्तम ।  
 द्वादशाब्दं तपः कृत्वा शान्तोऽसीह सुखी भव ’ ॥ ५४

स्कन्दः —

- अतः परं किं करणीयमास्ते  
 मयाऽद्य लब्धा तव देव सेवा ।  
 समस्तलोकैरपि वेङ्कटेश !  
 सम्प्रार्थ्यते तावकपादसेवा ॥ ५५
- अहो ! ह्यस्यापि भूभर्तुः महिमा सुतरां हरेः ।  
 ममाद्य तारकवधोद्धृता हत्या पृथक् स्थिता ।  
 श्रीनिवास दयाम्भोधे ! दुरितक्षयकारक ! ॥ ५६
- भगवद्वर्णितकुमारधारास्नानकालादिनिर्णयः

श्रीभगवान्—

- “ मदीयं मन्त्रमुच्चार्य सुखी भव महामते ।  
 एतत्पर्वतमारोढुं वाञ्छा यस्याविवेकिनः ॥ ५७
- पातकं दूरतो नश्येत् विष्णु भक्तिमतस्तव ।  
 तत्रापि स्वामिसरसि स्नानं कोऽप्यघनाशनम् ॥ ५८

शृण्वन्तु देवताः ! सर्वाः शृणु स्कन्द ! वचो मम ।

‘ कुमारधारिके ’ त्येव त्वन्नाम्नेदं भविष्यति ॥ ५९

तत्र स्नाति पुमान् स्त्री वाऽवश्यं कोऽपि तु मानवः ।

तस्य पापानि नश्यन्ति सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ६०

यो माघमासे वरपञ्चदश्यां

मघायुतायामथवाऽपि कश्चित् ।

स्नात्यत्र भक्त्या च कुमारधारिका-

तीर्थे स बन्धो विधिरुद्रजिष्णुभिः ॥ ६१

मदाविर्भावदिवसे यः स्नाति मनुजोत्तमः ।

तस्य पुण्यफलं वक्तुं शेषेणापि न शक्यते ॥ ६२

वर्षे वर्षे च दिवसे स्नातव्यमखिलैरपि ।

कुमारधारिकास्नानमशेषाघहरं विदुः ॥ ६३

तस्य पुण्यफलं वक्तुं शेषेणापि न शक्यते ।

तस्मिंस्तीर्थे स्वर्णदानं अणु मेरुसमं भवेत् ॥ ६४

वस्त्रदानञ्च गोदानं भूदानञ्च ततोऽधिकम् ।

यो वा ददाति मत्प्रीत्या तस्य लक्ष्मीः गृहे स्थिता ॥ ६५

अन्नं ददाति चैकस्मै तत्तीर्थदिवसे तु यः ।

फलं स लभते विप्रः सहस्रान्नप्रदानजम् ॥ ६६

प्रपां यः कुरुते मार्गे शीतलोदकपूरिताम् ।

तत्सन्ततिमहं सर्वा रक्षामि कृपयाऽनघ ! ॥ ६७

ताम्बूलं चन्दनं वापि ब्राह्मणानां ददाति यः ।

ते निष्पापा भवन्त्येव दशपूर्वैः दशापरैः ॥ ६८

कुम्भमासे पौर्णमास्यां प्रादुर्भावदिने हरेः ।

कुमारधारिकास्नानं कुलकोटिं समुद्धरेत् ” ॥ ६९

- इति मन्त्रं समुच्चार्य स्नात्वाऽनन्तफलं लभेत् ।  
 वर्षे वर्षे कुम्भमासे पौर्णमास्यां मघायुजि ॥ ७०
- देवा मनुष्याः सर्वे च स्नातुमायान्तु सर्वदा ।  
 पुण्यदेशेषु सर्वेषु वेङ्कटाद्रिः विशिष्यते ॥ ७१
- तत्र सर्वेषु तीर्थेषु स्वामिपुष्करिणी वरा ।  
 ततोऽप्येतद्वरं तीर्थं मदाविर्भाववासरे ॥ ७२
- इह शम्भुकुमार ! त्वं आकल्पं पूजयन् वस ।  
 एतत्तीर्थस्य माहात्म्यं बुद्ध्वा वै सर्वदेवताः ॥ ७३
- प्रतिवर्षं स्नातुमत्र मां द्रष्टुञ्च तपोधनाः ।  
 आयान्ति सावधानं वै ममाऽविर्भाववासरे ॥ ७४
- तस्माच्छम्भुकुमार ! त्वं सर्वदा वस पर्वते ।  
 इत्युक्त्वा तं तु हस्तेन पस्पर्श गुहमच्युतः ॥ ७५

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये कुमारधारास्नानेन स्कन्दस्य

तारकवधजनितब्रह्महत्याविनिर्मुक्तिवर्णनं

नाम चतुर्थोऽध्यायः

अथ पञ्चमोऽध्यायः

अगस्त्यादीनां कुमारधारातीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलागमनम्

अगस्त्यः—

- ‘ततस्तु देवा ऋषयश्च सर्वे गन्धर्वविद्याधरयक्षसिद्धाः ।  
 “आश्चर्यमाश्चर्य” मिति ब्रुवाणा दिव्यं हरेर्नाम च कीर्तयन्तः ।  
 कुमारधारां सततं स्तुवन्तो ययुः स्वधामानि मुदान्वितास्ते ॥ १

|                                                |   |
|------------------------------------------------|---|
| शिवात्मजोऽपि तत्रैव भजन् वेङ्कटनायकम् ।        |   |
| कुमारधारिकातीरे तिष्ठत्येव चिरं किल ॥          | २ |
| वर्षे वर्षे समायान्ति सिद्धगन्धर्वदानवाः ।     |   |
| ऋषयश्च तथा सर्वे भूलोके प्राणिनस्तथा ॥         | ३ |
| स्नातुं तस्मिन् महातीर्थे त्वहो वेङ्कटवैभवम् । |   |
| सुवर्णमुखरीतीरे लोपामुद्रापतिः स्वयम् ' ॥      | ४ |
| इत्युक्त्वा मुनिमुख्येभ्यः पुनरेवमुवाच ह ।     |   |
| ' पञ्चषेभ्यो दिनेभ्योऽथ सेयं पञ्चदशी शुभा ॥    | ५ |
| यूयं सर्वेऽपि मुनयो मार्कण्डेय ! महामुने ! ।   |   |
| शुद्धकाञ्चीप्रदेशीया ! सर्वे गच्छत वेङ्कटम् ॥  | ६ |
| पुनः स्वामिसरस्तीरे वेङ्कटेशं विलोक्य च ।      |   |
| तदुत्तरे पापनाशतीर्थे स्नानादिकारिणः ॥         | ७ |
| कुमारधारिकां गत्वा स्नानं कुरुत सत्तमाः ।      |   |
| ' सर्वपापविशुद्धयर्थं ऐश्वर्यसमवाप्तये ॥       | ८ |
| मार्कण्डेय ! महाभाग ! किं तीर्थाचरणेन ते ।     |   |
| सर्वतीर्थस्नानफलं अमुनैव भविष्यति ' ॥          | ९ |

श्रीसूतः—

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| इत्युक्त्वा सर्वे एवैते समारुह्य वृषाचलम् ।      |    |
| स्वामिपुष्करिणीस्नानं कृत्वा दृष्ट्वा च केशवम् ॥ | १० |
| पूर्णिमादिवसे माघे पापनाशे कृताऽऽप्लवाः ।        |    |
| कुमारधारिकातीर्थे स्नातुं सर्वे समागताः ॥        | ११ |
| सप्तदेशजान् मर्त्यान् सर्वान् देवान् ऋषीनपि ।    |    |
| योगिनः सनकाद्यांश्च सिद्धगन्धर्वकिन्नरान् ॥      | १२ |

- समागतान् स्वर्णमुखीतीरजान् ऋषिसत्तमान् ।  
 अगस्त्यशिष्यं शुद्धञ्च मार्कण्डेयमथाग्निजः ॥ १३
- दृष्ट्वा स स्नातुमायातान् प्रहृष्टहृदयोऽभवत् ।  
 सर्वे कुमारधारायां सन्तुः सङ्कल्पपूर्वकम् ॥ १४
- वेङ्कटेशर्पणं कृत्वा दानं चक्रुश्च केचन ।  
 गन्धर्वयक्षोरगसिद्धसाध्यदेवादिबृन्देष्वपि तीर्थवर्ये ।  
 स्नातेषु सर्वेषु मुदाऽन्वितोऽसौ सन्तौ स्वयं शङ्करनन्दनोऽपि ॥  
 विष्णोर्नुकञ्च श्रीसूक्तं भूसूक्तञ्च जपन् सदा ।  
 तीरमारुह्य विप्राणां नमश्चक्रे प्रसन्नधीः ॥ १६
- ‘नमो ब्रह्मण्यदेवाये’ त्युच्चरन् पार्वतीसुतः ।  
 तदा प्रादुरमूढेवो वरदः शङ्खचक्रधृक् ॥ १७
- पश्यन्तस्तं सिन्धुजाकाश्यपीभ्यां  
 युक्तं देवा ऋषयो मानुषाश्च ।  
 मार्कण्डेयः स्वर्णमुख्या द्विजाश्च  
 शुद्धाः तेनुः सर्वे एव प्रणामम् ॥ १८
- “लक्ष्मीमहीसेवित ! वेङ्कटेश !  
 कृपानिधे ! कृष्ण ! जगत्त्रयेश ! ।  
 मां पालयानाथमनाथबन्धो !  
 नमो नमस्ते चरणाम्बुजाय ” ॥ १९
- इति कृतनतीन् दृष्ट्वा देवः प्रसन्नमनास्तदा  
 विजितजल्दध्वानं वाक्यं स्वयं हरिरब्रवीत् ।  
 ‘इह विधिकृतं खानं दानं मम प्रियबुद्धितः  
 सकलदुरितं हत्वा दत्ते सुखान्यखिलान्यपि ॥ २०

- मार्कण्डेय ! महाबुद्धे ! सर्वतीर्थफलं तव ।  
 अनेन दत्तं शुश्रूषां मातापित्तोः कुरुष्व ह ॥ २१
- अगस्त्यशिष्य ! विप्रेन्द्र ! त्वत्पापान्यखिलान्यपि ।  
 गतान्यनेन दत्तानि श्रेयांसि बहुशो मया ॥ २२
- पुत्रदारादिसंयुक्तः सदाचाररतः सदा ।  
 दानानि बहु कुर्वाणः सुखी भव सुखी भव ' ॥ २३
- इति ब्रुवन् वेङ्कटेशो दृग्गोचरमथो ययौ ।  
 इत्थं देवस्वामिनोक्ते गतेष्वपि सुरेषु च ॥ २४
- शुद्धः स्वदेशमागत्य पुत्रदारसमन्वितः ।  
 स्नानं दानं जपं कुर्वन् 'वेङ्कटेश' इति ब्रुवन् ॥ २५
- इह लोके परत्रापि परं सौख्यमवाप्तवान् ।  
 मृकण्डोराश्रमं गत्वा मार्कण्डेयः प्रसन्नधीः ॥ २६
- पितरौ तु नमस्कृत्य वृत्तान्तं सर्वमब्रवीत् ।  
 वाक्यं गरुत्मतः पूर्वं वेङ्कटाचलवैभवम् ॥ २७
- अगस्त्यशिष्यवृत्तान्तं सुवर्णमुखरीस्थलम् ।  
 श्रीवेङ्कटेशसेवाञ्च स्वामिपुष्करिणीतटे ॥ २८
- कुमारधारिकातीर्थमाहात्म्यं स्कन्दवैभवम् ।  
 आविर्भावं तस्य हरेः वाक्यं तस्य सुधामयम् ॥ २९
- उक्त्वा स्वापित्रोः सकलं शुश्रूषामकरोत्तदा ।
- वेङ्कटेशस्य माहात्म्यं यः शृणोत्यपि वा सकृत् ॥ ३०
- सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वश्रेयो भविष्यति ।  
 वेङ्कटाद्रेस्तु माहात्म्यं कुमारसरसस्तथा ।  
 शृणोति वा पठति वा तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ ३१

कुमारधारिकातीर्थतीरे पठति यस्त्विदम् ।

शृणोति वा तस्य तस्य सर्वाभीष्टप्रदो हरिः ॥

३२

इति मार्कण्डेयपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यादीनां कुमारधारातीर्थ-

स्नानादिवर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ।

॥ हरिः ॐ । ॐ तत्सत् ॥



श्रीवेङ्कटेश चरणारविन्दार्पणमस्तु इत्थं श्रीमार्कण्डेय पुराणान्तर्गतः

प्रथमप्रभृतिपञ्चमपर्यन्त पञ्चाध्यायात्मकः श्रीवेङ्कटाचल-

माहात्म्यपरो भागः समाप्तिमगमत् ।



श्रीरस्तु

श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः

श्रियै पद्मावत्यै नमः

श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः

## श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

( श्रीवामनपुराणान्तर्गतम् )

—: ❁ :—

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।  
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम् ॥

विंशोऽध्यायः

~~~~~

प्रयागमाहात्म्यम्

हरिः ॐ

यच्छरीरं त्रयो वेदाः यच्चेष्टाऽऽथर्वणः स्मृतः ।

यदङ्गानि षडङ्गानि तस्मै वागात्मने नमः ॥

१

व्यासः—

कदाचित् दुःखितः प्राह जनको मिथिलधिपः ।

शतानन्दं महाभागं सर्वज्ञं तत्त्वदर्शिनम् ॥

२

सीतादिस्वसुताविवाहाद्यर्थं जनकनृःकृतानुतापक्रमः

ब्रह्मन् ! मां बाधते दुःखं सीतादर्शनजं महत् ।

केन दुःखमिदं त्यक्ष्ये क आराध्योऽघनाशनः ॥

३



दुष्टात्मा रावणो रक्षःपतिः वैश्रवणानुजः ।	
हरेदयोनिजां सीतां किन्तु न ज्ञायते मया ? ॥	४
कमाराध्य महाभाग ! लप्स्ये जामातरं वरम् ।	
समानोत्तमवंश्यश्च योग्यमस्या महामुने ! ॥	५
ममापि दुहिता चैषा ह्यूर्मिल नाम नामतः ।	
कुशध्वजस्य च सुते, कनिष्ठभ्रातुरेव मे ॥	६
माण्डवीश्रुतकीर्त्याख्ये सुशीले सुमनोहरे ।	
काऽसां चक्रे वरान् ब्रह्मन्निति चिन्ताकुलोऽस्म्यहम् ॥	७
परमध्यात्मविद्योगी दृष्टलोकपरावरः ।	
पुरोहितोऽस्य वंशस्य गतिर्मेऽस्तु भवानिह ॥	८
वेदशास्त्रपुराणज्ञः कालवित् कालधर्मवित् ।	
दुःखिनां दुःखहर्ता च सुखिनां समयनाशनः ॥	९
त्वं मे गतिश्च परमा भवदुःखविनाशन ! ।	
राजानो विषयासक्ताः कामक्रोधसमन्विताः ॥	१०
कन्यारत्ननिमित्तञ्च ह्यागमिष्यन्ति कोटिशः ।	
तेभ्यो युद्धं कथं दास्ये एकोऽहं ब्रह्मवित्तम ! ॥	११
एतावन्तमहं कालं सुखं राज्यमशासिषम् ।	
इदानीमस्मि दुःखार्तो वृद्धः पुत्री तपोधन ! ॥	१२
अजो विविक्तो विमलो विष्णुभक्तो ममात्मजाः ।	
चत्वार एते शिशवः शिखिनो नास्त्रकोविदाः ॥	१३
ममानुजस्य पुत्राश्च विचिकित्सो विकर्तनः ।	
प्रतर्दन इति त्वेते त्रयश्च शिशवस्तथा ॥	१४
वृद्धत्वादात्मनश्चैव पुत्राणाञ्चैव शैशवात् ।	
कन्यकानाञ्च रत्नत्वात् दुःखितोऽहं तपोधन ! ॥	१५

कस्मादस्मादहं मोहात् निर्गमिष्याम्युपायतः ।	
तं मे वद त्वं ब्रह्मर्षे ! गमिष्यामीह कां गतिम् ॥	१६
येन मन्वादयस्तीर्णाः संसाराख्यं महार्णवम् ।	
इह दुःखञ्च राजानः तन्मे ब्रूहि तपोधन ! ॥	१७
कं ध्यात्वा पुरुषो लोके भुक्तिं मुक्तिञ्च विन्दते ।	
आपद्रक्षाकरः को वा ? तं देवं ब्रूहि सत्तम ! ॥	१८

जनकनृपतापापनोदनार्थं शतानन्दोक्तपुगतनेतिहासः

शतानन्दः —

राजन् ! मनुष्या अपि यं प्रपन्नाः	
सन्त्यक्तदुःखाः सुखिनो भवन्ति ।	
वक्ष्यामि देवं वरदं रमेशं तं	
प्राप्य दुःखाम्बुनिधिं तरिष्यसि ॥	१९
पुराऽहं चम्पकारण्यात् तमसातीरमुत्तमम् ।	
वाल्मीकिं मुनिशार्दूलं द्रष्टुमस्मि गतो नृप ! ॥	२०
तेनागमनतुष्टेन प्रत्युद्यतो नृपोत्तम ! ।	
उपचारैश्च पाद्याद्यैरतिथिः पूजितोऽस्म्यहम् ॥	२१
अभिवन्द्य मुनिश्रेष्ठं तच्छिष्यैश्च नमस्कृतः ।	
क्रियां माद्यद्वितीयां कृत्वा भुक्त्वा वाल्मीकिना सह ॥	२२
अन्यैश्च मुनिभिः सार्धं भरद्वाजादिभिस्तदा ।	
वाल्मीकेराश्रमे रम्ये ह्यासं वाल्मीकिना सह ॥	२३
उक्त्वा कालोचिता वार्ताः कथाश्चात्र पुरातनीः ।	
हृष्टावन्योन्यसङ्गेन ह्यभूव परमं नृप ! ॥	२४
एतस्मिन्नन्तरे स्वर्गादाजगाम च नारदः ।	
शुद्धस्फटिकसङ्काशो महात्मा महतीं दधत् ॥	२५

- तं दृष्ट्वा मुनिशार्दूलमुदतिष्ठत्तदासनात् ।  
 सह शिष्यो मया सार्धं वाल्मीकिः भगवान् ऋषिः ॥ २६
- कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रीतिसंहृष्टमानसः ।  
 सशिष्यः कल्पयामास पूजां तस्य विधानतः ॥ २७
- “इदं पाद्यमिदं त्वर्घ्यं इदमासनमेव च ।  
 इदं मूलं फलं स्वादु भगवन् ! प्रतिगृह्यताम् ॥ २८
- आगतस्त्वं चिराद्ब्रह्मन् ! स्वागतं ते तपोधन ! ” ।

शतानन्दः—

- इति वाल्मीकिना शिष्यैः अभिवाद्य च पूजितः ॥ २९
- निषसाद च सुप्रीतो नारदो मृगचर्मणि ।  
 आस्वाद्य फलमूलानि श्रमं स्वमपनीय च ॥ ३०
- कुशलं परिपप्रच्छ वाल्मीकिं मुनिपुङ्गवम् ।  
 “निर्विघ्नं ते तपो ब्रह्मन् ! वर्धते त्रिविधं मुने ! ॥ ३१
- अवन्ध्यास्तरवः काले भवन्त्यपि तवाऽऽश्रमे ।  
 अपि क्रियार्थाः समिधः सुलभाश्च कुशा अपि ” ॥ ३२
- इति पृष्टस्तदा प्रीत्या प्राह नारदमुत्तरम् ।  
 “त्वत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठ ! सर्वं मङ्गलमेव मे ॥ ३३
- वर्धते च तपो ब्रह्मन् ! त्रिविधं कालवित्तम् ।  
 अकालेऽपि फलन्त्येव तरवो वासवाज्ञया ” ॥ ३४
- इत्युक्तो नारदस्तेन प्रसुमोद महाद्युतिः ।  
 कृताञ्जलिपुटः सर्वे परिवार्य च नारदम् ॥ ३५
- तदागमनसंहृष्टाः तस्थुः तद्वनवासिनः ।  
 नारदेनाभ्यनुज्ञातः प्राप्य कृष्णाजिनासनम् ॥ ३६

कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रहो वाक्यविशारदः ।	
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुङ्गवम् ॥	३७
“ त्रैलोक्ये वैष्णवं क्षेत्रं किं श्रेष्ठं भुवि नारद ! ।	
आब्रह्मलोकं सर्वं त्वं विशेषं दृष्टवानसि ॥	३८
यत्तीर्थे सर्वतीर्थानि सन्निधानं व्रजन्ति च ।	
यत्क्षेत्रवासिनां पुण्यमनन्तमिति कीर्त्यते ॥	३९
यत्ताऽऽस्ते भगवान् विष्णुः सश्रीभूः पुरुषोत्तमः ।	
तद्ब्रूहि मम देवर्षे ! क्षेत्रं त्रैलोक्यपावनम् ” ॥	४०

नारदः—

“ साधु पृष्ठं त्वया ब्रह्मन् ! सर्वेषां हितकाम्यया ।	
तत्ते वक्ष्यामि वाल्मीके ! समाहितमनाः शृणु ॥	४१
इममेव पुरा प्रश्नं पृष्ठः प्राह महेश्वरः ।	
पुत्रेण षण्मुखेनैव जिष्णुना हिमवद्भिरो ॥	४२

स्कन्दः—

‘ हत्वा देवासुरे युद्धे तारकाख्यं महासुरम् ।	
आगतोऽस्मि जयी तात ! पादमूलं त्रिलोचन ! ॥	४३
बुभुक्षा बाधते तीव्रा ब्रह्महत्यासमुद्भवा ।	
स्नात्वा भोक्ष्यामि यत्तीर्थं तत्तीर्थं तात ! मे वद ’ ॥	४४

स्कन्दं प्रति शंक्रोक्तब्रह्महत्याविमुक्तिहेतूपन्यासः

महेश्वरः—

‘ सकृन्नारायणेत्युक्त्वा पुमान् कल्पशतत्रयम् ।	
गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्नातो भवति पुत्रक ! ’ ॥	४५
श्रुत्वा परममित्युक्त्वा मुक्त्वा पित्रा सहोमया ।	
ततः पप्रच्छ पितरं शङ्करं लोकशङ्करम् ॥	४६

‘उक्तो नारायणो देवः त्वया सर्वाघनाशनः ।  
जनैराराधितः केन कर्मणा दृश्यते भुवि ॥ ४७  
स कुत्र सेव्यते देवः प्रियं तस्यापि किं पितः !’ ।

नारदः—

इति पृष्टः पुनस्तेन पुनं प्राहाऽथ शङ्करः ॥ ४८

‘यं योगिनो मुनिवरा हृदि सन्निषण्णं  
ज्येतिर्मयं प्रणवरूपमचिन्त्यरूपम् ।  
आदित्यमण्डलनिवासमनन्तमाद्यम्  
आराधयन्ति सततं तमुदीरयामि ॥ ४९

शङ्करः—

पुरा दक्षाध्वरे पुत्र ! तस्य शीर्षं मया हनम् ।  
तच्च हस्ततले लभं ब्रह्महत्या च सङ्गता ॥ ५०  
स्वर्गे कपाली भिक्षार्थी पर्यटन्नियतेन्द्रियः ।  
न मोक्षं ब्रह्महत्याया अपश्यं तत्र पुत्रक ! ॥ ५१  
मेरौ ब्रह्मसरस्तीरे तप उग्रमुपाश्रितः ।  
स्नातुमभ्यागतो ब्रह्मा मामपश्यच्चतुर्मुखः ॥ ५२  
तञ्च दृष्ट्वा प्रणम्याहमतिष्ठं पुरतस्तदा ।  
स मां कपालिनं दृष्ट्वा किमित्याह पितामहः ॥ ५३  
तच्छ्रुत्वा ब्रह्मणो वाक्यं ततो देवं व्यजिज्ञपम् ।  
“किं ब्रुवे तात ! शप्तोऽस्मि दक्षं हत्वा तु तेन ह ॥ ५४  
हत्यामोक्षं न पश्यामि कुत्र वा केन कर्मणा ।  
दृष्टो भवान् मया दिष्ट्या शापमोक्षं वदस्व मे ” ॥ ५५

इत्युक्तश्च मया पुत्र ! ब्रह्मा प्राह च मां तदा ।

ब्रह्मा :—

‘ मा विषीद महादेव ! हत्यामोक्षं वदामि ते ॥ ५६

पुरा शङ्कर ! गङ्गाया यमुनायाश्च सङ्गमे ।

धनुस्त्रिशतविस्तीर्णे पुण्यक्षेत्रे च माधवे ॥ ५७

प्रयागक्षेत्रस्य भगवद्वर्णितप्रयागाभिधाननिरुक्तिः

माधवप्रीतये तत्र यज्ञाः सर्वे मया कृताः ।

प्रादुरासीत्तदा वेद्यां माधवो भक्तवत्सलः ॥ ५८

शङ्खचक्रगदापाणिः श्रीवत्साङ्गश्चतुर्भुजः ।

प्राञ्जलिस्तं प्रणम्याहं प्रसीदेत्यस्तुवं तदा ॥ ५९

प्रसन्नो माधवः प्राह ‘ ब्रह्मन् ! प्रीतोऽस्मि तेऽध्वरैः ।

प्रकृष्टाश्च कृता यज्ञाः प्रीतोऽहञ्च त्वयाऽनघ ! ॥ ६०

यत्तद्ब्रह्मन्निदं क्षेत्रं प्रयागाख्यं गमिष्यति ।

अस्यां वेद्यामहं नित्यं सन्निधानं करोमि ते ’ ॥ ६१

इतः प्रभृति ये पापाः पुरुषा याः स्त्रियश्च वा ।

क्षेत्रेशं मां प्रपश्यन्ति मुक्ताः सर्वे भवन्तु ते ’ ॥ ६२

इति दत्त्वा वरं देवो ममामीष्टञ्च माधवः ।

आस्ते लक्ष्म्या महादेव ! प्रयागे पुण्यसत्तमे ॥ ६३

त्वञ्च हत्यासमायुक्तो मोक्षं तत्त गमिष्यसि ” ।

शङ्करः—

इत्युक्त्वा मां ततो ब्रह्मा सत्यलोकं जगाम ह ॥ ६४

शङ्करहस्तात् कपालविनिर्मुक्तिप्रकारः

ततः प्रीतो वरं लब्ध्वा पुण्यक्षेत्रं गतोऽस्मि तत् ।

क्षेत्रे प्रविष्टमात्रे तु मया हत्या पृथक् स्थिस्थिता ॥ ६५

पञ्चक्रोशाद्बहिर्भूता क्रोशन्ती विस्वरं गता ।  
 कपालश्च च्युतो हस्तात् प्रससाद मनो मम ॥ ६६  
 ततः स्नात्वा प्रयागेऽहं देवं नत्वा च माधवम् ।  
 अयाचं माधवं क्षेत्रं देहीदं मे जनार्दन ! ॥ ६७  
 इत्युक्तो माधवो दत्त्वा क्षेत्रं मे वरदः प्रभुः ।  
 श्रिया परमया युक्तः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ ६८  
 स्वं लोकञ्च ययौ 'देवः तपः कुर्वि' ति मां वदन् ।  
 तत्राहञ्च तपः कृत्वा ब्रह्महत्यां व्यपोह्य च ।  
 विहरन्नुमया सार्धं तत्रैव हि षडानन ! ॥ ६९  
 लक्ष्मीसहायं रमणीयवेषं अजं हरिं कालघनान्निरामम् ।  
 पीताम्बरं पाटलपाणिपादं ध्यात्वाऽर्चयंस्तत्र वसामि पुत्र ! ॥ ७०  
 इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये प्रयागमाहात्म्यवर्णनं  
 नाम विंशोऽध्यायः ।

अथ एकविंशोऽध्यायः

~~~~~

अथ स्कन्दं प्रति शंकरकृतं तपःसमुचितवेङ्कटाद्रिवर्णनम्

नारदः—

स्कन्दः श्रुत्वा पितुर्वाक्यं मङ्गलं पापनाशनम् ।  
 पुनः पप्रच्छ संहृष्टः पितरं तत्त्वदर्शिनम् ॥ १  
 'ममापि तपसो योग्यं क्षेत्रं ब्रूहि शुभान्वितम् ।  
 न विघ्नास्तपतो यत्र प्रभवन्ति मम प्रभो ! ॥ २  
 त्वयाऽऽज्ञप्तस्तपस्तपस्ये भवदुःखविनाशन ! ।  
 योगीन्द्रवन्द्यचरण द्वन्द्वानन्दैकलक्षण ! ॥ ३

|                                               |   |
|-----------------------------------------------|---|
| मम शङ्कर तद्ब्रूहि वैष्णवं क्षेत्रमुत्तमम् ।  |   |
| एवमुक्तस्ततः शम्भुः पुत्रेण प्राप्तकारिणा ॥   | ४ |
| ‘उमामालोक्य संहृष्टो ध्यात्वा चैनं बभाण ह ।   |   |
| ‘शृणु पुत्र महाभाग ! देवदुःखविनाशन ! ॥        | ५ |
| वृषो नाम महाशैलो वृषेणाराधितः पुरा ।          |   |
| तं गच्छ शिखिना पुत्र कुरु त्वं तत्र वै तपः’ ॥ | ६ |

नारदः -

|                                                  |    |
|--------------------------------------------------|----|
| इति प्रतिसमादिष्टः पुनराह च षण्मुखः ।            |    |
| ‘उक्तो यस्तत्र भवता वृषाभिल्यो महागिरिः ॥        | ७  |
| नायं कुलचलो नूनं कुत्राऽऽस्ते स महागिरिः ।       |    |
| विमर्शञ्च वृषस्तत्र तपस्तेपे महातपाः ॥           | ८  |
| वृषः किं वृषभो धर्मो मनुर्वा नीललोहित ! ।        |    |
| प्रोक्तः कोऽयं भगवता ब्रूहि मे पुत्रवत्सल !’ ॥   | ९  |
| इति पृष्टस्ततस्तेन प्राह तं वृषभध्वजः ।          |    |
| ‘नायं कुलचलः पुत्र ! मेरुपुत्रो महागिरिः ॥       | १० |
| अञ्जनो नाम नाम्ना च त्रिषु लोकेषु विश्रुतः ।     |    |
| शैलः स्वर्णमयो वत्स ! रत्नसानुः सुशोभनः ॥        | ११ |
| शेषमारुतसंवादे विधूतो दक्षिणां दिशम् ।           |    |
| नियुक्तोऽयं गिरिः पुत्र ! पूर्वमेव तु विष्णुना ॥ | १२ |
| सर्वतीर्थमयः पुण्यः पावनोऽञ्जनभूधरः ।            |    |
| सुदुर्लभो मनुष्याणां देवभूमौ वसन्निह ॥           | १३ |
| स्थातव्यं भवता शैलदक्षिणस्यां दिशीति वै’ ।       |    |
| एवमुक्तोऽपि हरिणा पितृस्नेहवशेन सः ॥             | १४ |



|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| पितुराज्ञामवेक्ष्यायं कञ्चित्कालमवर्तत ।           |    |
| शेषमारुतसंवादे प्रवृत्ते लोकभीषणे ॥                | १५ |
| मेरुणैवाऽभ्यनुज्ञातः प्रयातो दक्षिणां दिशम् ।      |    |
| आस्ते पूर्वोदधेः पश्चात् वत्सायं पञ्चयोजने ॥       | १६ |
| उत्तरे दक्षिणाब्धेस्तु षट्त्रिंशद्योजनान्तरे ।     |    |
| तीरे पुण्यतमे पुत्र ! रुक्मनद्यास्तथोत्तरे ॥       | १७ |
| क्रोशद्वयार्धमात्रे तु हरिचन्दनमण्डिते ।           |    |
| वने रम्यतमे वत्स ! नानापादपमण्डिते ॥               | १८ |
| सिद्धा मुनिगणास्तत्र तपः कुर्वन्ति नित्यशः ।       |    |
| चण्डालयवनाद्यैस्तु वेदबाह्वैश्च नास्तिकैः ॥        | १९ |
| नारोढुमपि यः शक्यः पावनः पर्वतोत्तमः ।             |    |
| शुकाद्या मुनयः केचित् भृग्वाद्याश्च तपोधनाः ॥      | २० |
| प्रह्लादप्रमुखाः पुण्याः अम्बरीषादयो नृपाः ।       |    |
| विष्णोरेवापरं देहं मन्वानाः तं नगोत्तमम् ॥         | २१ |
| पद्भ्यामाक्रमितुं भीताः पर्यन्तेष्वेव वर्तनाः ।    |    |
| तन्निर्गतनदीष्वेव कुर्वाणाः स्नानतर्पणे ॥          | २२ |
| तपः कुर्वन्ति बान्छन्तः साक्षात्कर्तुं जनार्दनम् । |    |
| एवंविधः स शैलेन्द्रो नित्यमत्यन्तपावनः ॥           | २३ |
| शिखरं यस्य दृष्ट्वैव सद्यः पापैः प्रमुच्यते ।      |    |
| तत्राऽऽस्ते कोलरूपी तु महाविष्णुः सनातनः ॥         | २४ |
| उद्धृतां धरणीं देवीमालिङ्ग्याङ्गे निधाय च ।        |    |
| आराधितो मुनिगणैः त्रिसन्ध्यं श्रद्धयाऽन्वितैः ॥    | २५ |
| तदा प्रभृति तत्पुण्यं वाराहं क्षेत्रमुच्यते ।      |    |
| तस्मिन् पुण्यतमे क्षेत्रे वाराहे वेङ्कटाचले ॥      | २६ |

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| सन्निधौ भूवराहस्य ये केचिन्नियतव्रताः ।           |    |
| शास्त्रोक्तेन विधानेन वाराहं मन्त्रमुत्तमम् ॥     | २७ |
| जपन्ति विजितात्मनो मासमेकं निरन्तरम् ।            |    |
| गृहक्षेत्रादिकं तेषां सद्यः सिद्ध्यति वाञ्छितम् ॥ | २८ |
| पृथिवीं ये च वाञ्छन्ति राजानः शासितुं चिरम् ।     |    |
| ये तु तत्र प्रकुर्वन्ति महादानानि षोडश ॥          | २९ |
| प्रीणयन्तो महीं देवीं दक्षिणाभिः तदुद्धृताम् ।    |    |
| तेषामादिवराहस्तु भगवान् भक्तवत्सलः ॥              | ३० |
| प्रयच्छति चिरं कालं महीं सागरमेखलाम् ।            |    |
| बुद्धजानपदोपेतां हतावग्रहकण्टकाम् ॥               | ३१ |
| अनादृत्य तु यस्तत्र वराहवदनं हरिम् ।              |    |
| धरणीञ्च तदङ्गस्थां पृथ्वीं शासितुमिच्छति ॥        | ३२ |
| तेन दोषेण तद्राज्यं पीडयतेऽवग्रहैः सदा ।          |    |
| दस्युभिः शत्रुभिश्चैव महारोगैस्तथैव च ॥           | ३३ |
| तस्मात् तत्र स्थितं देवं वराहं धरणीयुतम् ।        |    |
| सम्यगाराधयेद्राजा भक्तिश्रद्धासमन्वितः ॥          | ३४ |
| तस्याग्रे देवदेवस्य सरस्त्रैलोक्यपावनम् ।         |    |
| स्वामिपुष्करिणी नाम सरसां वरमस्ति वै ॥            | ३५ |
| त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि पावनान्यपि देहिनाम् ।    |    |
| पुष्करिण्यश्च नद्यो याः सन्ति ब्रह्माण्डगोचराः ॥  | ३६ |
| तानि सर्वाणि षड्भूत ! स्वात्मनां पावनाय वै ।      |    |
| वर्षेवर्षे समायान्ति तत्तीर्थे स्नातुमात्मज ! ॥   | ३७ |
| वैवस्वते मनौ पुत्र ! लोकं शासति चाऽज्ञया ।        |    |
| धर्मो मनुस्तपस्तेपे सोऽयं वृष इतीरितः ॥           | ३८ |

तपश्चरति तस्मिंस्तु ववृधे धर्म उत्तमः ।

ततः प्रसन्नो भगवान् महाकोलो महीयुतः ॥

३९

समक्षमब्रवीद्धर्म शरन्मेष इव स्थितः ।

“धर्म ! त्वया तपस्तप्तं वृषश्च ववृधे यतः ॥

४०

तस्मादयं गिरिवरो वृषाभिरुत्थां गमिष्यति ।

तवापि लोकपालत्वं यमात्पश्चाद्भविष्यति ” ॥

४१

इत्युक्त्वाऽन्तर्दधे देवो गिरिमूर्ध्नि षडानन ! ।

अथ लब्धवरो धर्मो जगाम च यथागतम् ॥

४२

इदानीञ्च महाभाग ! वायुरास्ते तपश्चरन् ।

जपन् सतारकं मन्त्रं गणयन्नक्षमालया ॥

४३

परात्परतरं राममर्चयन् विधिपूर्वकम् ।

श्रीभूमिसहितं देवं चतुर्बाहुं विरीटिनम् ॥

४४

शङ्खचक्रधनुर्बाणपाणिं नीलोत्पलद्युतिम् ।

देवदेवं जगन्नाथं अपरोक्षं निरीक्षितुम् ।

सर्वप्राणात्मको वायुः तपस्तीव्रं चरत्यहो ! ॥

४५

ब्रह्मादिदेवा अपि देवदेवं

वाञ्छन्ति यं सेवितुमात्तभावाः ।

तं वै वरेण्यं सकलान्तरस्थं द्रष्टुं

तपो वर्धयते स वायुः ’ ॥

४६

नारदः—

इत्युक्तो गुरुणा स्कन्दः पप्रच्छ पितरं पुनः ।

‘ममापि वैष्णवं मन्त्रं वैष्णवेष्वपि चोत्तमम् ॥

४७

मन्त्रेषु वरदं शम्भो ! ब्रूहि तत्प्राप्तिसाधनम् ’ ।

इति विज्ञापितः शम्भुः पुत्रेणाक्लिष्टकारिणा ॥

४८

तपःकरणाय स्कन्दस्य श्रीवेङ्कटाचलगमनम्

|                                                      |    |
|------------------------------------------------------|----|
| विधिनाऽऽशु ततः प्रादान्मन्त्रं तस्मै स तारकम् ।      |    |
| लब्ध्वा मन्त्रं महादेवात् स्कन्दः प्रीतोऽभवत्पितुः ॥ | ४९ |
| प्रह्वः प्रदक्षिणं कृत्वा पितरं सोऽभ्यवादयत् ।       |    |
| प्रणम्य मातरं पश्चात् प्रतस्थे शिखिवाहनः ॥           | ५० |
| तं प्रस्थितं ततो दृष्ट्वा देवास्त्विन्द्रपुरोगमाः ।  |    |
| अनुजम्मुर्मात्मानं देवसेनापतिं विभुम् ॥              | ५१ |
| तैर्देवैरन्वितो गच्छन् शिखिना वेगगामिना ।            |    |
| गिरिं स पादलक्षप्रस्रवणैरन्वितं ययौ ॥                | ५२ |
| अध्वश्रमहरे तस्मिन् निषण्णः समरुद्गणः ।              |    |
| अदृष्ट्वा तत्र पितरौ विषण्णोऽभूत् सुराग्रणीः ॥       | ५३ |

बृहस्पत्युक्तः स्कन्दोत्पत्तिक्रमः

|                                                   |    |
|---------------------------------------------------|----|
| तं विषण्णं ततो दृष्ट्वा गुरुः प्राहेन्द्रचेदितः । |    |
| ‘मा विषीद महाबाहो ! देवसेनापतेऽग्रणीः ॥           | ५४ |
| किं न स्मरसि चात्मानं वैष्णवं धाम शाश्वतम् ’ ।    |    |

नारदः—

|                                                     |    |
|-----------------------------------------------------|----|
| इत्युक्तो गुरुणा स्कन्दः प्रीतः प्राह बृहस्पतिम् ॥  | ५५ |
| ‘कोऽहं ब्रूहि गुरो ! नाऽहं जानाम्यात्मानमात्मना ’ । |    |
| एवमुक्तो गुरुश्चैनं वक्ष्यामीत्याह कारणम् ॥         | ५६ |
| ‘उपप्लुतैः तारकेण देवैः सेनापतीप्सुभिः ।            |    |
| याचितः प्राह भगवान् ब्रह्मा कारणवित् सुरान् ॥       | ५७ |

ब्रह्मा :—

‘सुरेन्द्र ! दक्षेण विमानिताऽथ सती यदा योगविसृष्टदेहा ।  
 तदा प्रतिज्ञां ह्यकरोन् त्रिनेत्रः सतीं विनाऽन्यां न भजामि चेति ॥ ५८  
 तपश्चचारातिमहत् सुघोरं दिगम्बरः स्थाणुवदूर्ध्वबाहुः ।  
 त्रिलोचनस्तम्भितवायुचारो विचिन्तयन्नात्मनि चात्मभावम् ॥ ५९  
 काले हि तस्मिन् असुरास्तपोऽचरन्मां प्रीणयन्नुग्रतपाः स तारकः ।  
 प्रीतस्ततोऽहं वरदस्तमब्रुवं वरं वृणीष्वेति मनोरथोऽप्यतम् ॥ ६०  
 अयाचतान्येन तदा ह्यवध्यतां विना च शम्भोस्तनयेन सोऽसुरः ।  
 तथाऽस्त्विति प्रत्तवरो मया ततो नाशोऽसुरस्यास्य परो न विद्यते ॥ ६१  
 सती च सा पर्वतराजकन्यका प्रवर्धते मेनकयोपललिता ।  
 तयैव संयोज्य च शङ्करं विभुं सुरेश्वरं प्रार्थय तारकान्तकम् ॥ ६२  
 विष्णोः कलांशो भविता भगवान् नः सुखावहः ।’

बृहस्पतिः—

एवमुक्तो विरिञ्चेन काममाहूय देवराट् ॥ ६३  
 रतिदेवीसमायुक्तं वसन्तसहितं तदा ।  
 अचोदयत्कर्मसिद्धयै देवानामेव शङ्करम् ॥ ६४  
 वशीकर्तुञ्च पार्वत्या संयोक्तुं कृतनिश्चयः ।  
 जगाम कामः स्थाणुं तं गिरिजायाश्च सन्निधौ ॥ ६५  
 जग्राहान्त्रं त्वभूद्दग्धः त्रिनेत्रेण तपोऽव्ययात् ।  
 कामं दग्ध्वा शिवस्तश्च जहावाश्रममुत्तमम् ॥ ६६  
 तपस्विनामयुक्तं हि सन्निधानं तु योषितः ।  
 जगाम कैलासगिरिरुत्तरे चाश्रमोत्तमम् ॥ ६७  
 ततश्चोमातपःशक्त्या वशीकृतपराक्रमः ।  
 उपयेमे तदा शम्भुरुमां काममजीवयत् ॥ ६८

कैल्यसशृङ्गे हिमवत्प्रदेशे कल्यधरः कामवशं प्रपन्नः ।

रेमे हि सम्प्राप्य मनोरथांस्तान् उमासमेतः शरदां शतं सः ॥ ६९

ततस्तमिन्द्रप्रमुखाश्च देवा ययाचिरे 'देहि सुतं भवेश ! ।

पापेन तारेण हि पीडिताः स्मः पापञ्च तं हन्तुमलं महान्तम् ' ॥ ७०

इति याचितो गिरिजापतिरेतानमरान्विजनो भवितेति बभाण ।

कुपितं गिरिशं मरुतो विदिताः सहसा विविशुः ककुभो हि दशैते ॥ ७१

विससर्ज तदा तेजः क्षुभितं गिरिजापतिः ।

तच्च तेजोमयं भूतमाववार हि मेदिनीम् ॥ ७२

तेन तेजोमयेनेयं विकीर्णां सर्वमेदिनी ।

धर्तुं तदक्षमा देवी तेजः प्राह मरुद्गणान् ॥ ७३

'अहो दग्धाऽस्मि मरुतः ! पान्तु मां भवतेजसः ' ।

ततो दृष्ट्वा तु देवास्ते मेदिनीं परितापिताम् ॥ ७४

इत्यृचुरग्निदेवं स्वे तेजस्तेजसि धारय ।

इत्यादिष्टो जातवेदास्तेज आवार्य शाम्भवम् ॥ ७५

ररक्ष मेदिनीं दीनामापदो हव्यवाहनः ।

तेजस्ततो धारयन्तं शाम्भवं जातवेदसम् ॥ ७६

प्रीताऽऽह पार्वती देवी 'त्वमग्ने पुत्रवान् भव ।

धृतं तेजस्त्वया यस्मात् तमात्त्वं सर्वजन्तुषु ॥ ७७

गर्भे गर्भधरो भूत्वा विहर त्वं ममाऽज्ञया ।

प्रीताऽस्मि ते त्वया ह्यग्ने ! स्कन्नं गर्भं धृतं यतः ॥ ७८

भक्त्या ये त्वां पूजयन्ति तेषां पुत्रा भवन्तु वै ' ।

इति तस्मै वरं दत्त्वा शशाप मरुतः शिवा ॥ ७९

'इतः प्रभृति युष्माकमप्रजाः सन्तु पत्नयः ' ।

उमा शशाप पृथ्वीञ्च 'पुत्रप्रीतिं न लप्स्यसे ॥ ८०

- मत्पुत्रो न धृतो यस्मात् बहुभार्या भविष्यसि ।  
 ततः प्रसन्ना सा देवी शङ्करेण समागता ॥ ८१
- तपस्तप्तुं जगामाऽऽशु भृगुप्रसवणं तदा ।  
 ततो विमनसो देवाः पुनरुचुः चतुर्मुखम् ॥ ८२
- ‘भवदाज्ञा कृताऽस्माभिः व्यर्था सा चागवत्प्रभो ! ।  
 शशाप सा तदास्मान्वै किं कुर्मो ब्रूहि का गतिः ’ ॥ ८३
- धाता विज्ञापितो देवैः आह तान् सा यथाऽब्रवीत् ।  
 ‘तद्वचः सत्यमेवास्तु तस्या वाङ् नानृता भवेत् ॥ ८४
- किञ्च वक्ष्याम्युपायं वो जातवेदाः प्रदास्यति ।  
 यूयं गङ्गां प्रार्थयध्वं सा गर्भं धारयिष्यति ’ ॥ ८५
- इति तस्य वचः श्रुत्वा देवा जग्मुर्यथागतम् ।  
 गङ्गां सम्प्रार्थयामासुः देवाः सर्वे समागताः ॥ ८६
- ततः सा प्रार्थिता देवैः विसृष्टं वह्निना विभो ! ।  
 त्वां दध्रे पार्वती गङ्गा तेजोराशिं महाद्युतिम् ॥ ८७
- सा च त्वां व्यसृजद्गङ्गा सन्तप्ता तेजसा तव ।  
 उमाऽऽश्रमप्रदेशे तत् जातरूपमभूद्वनम् ॥ ८८
- कुमारं त्वां तदा दृष्ट्वा जातं हृष्टा दिवौकसः ।  
 षट् कृत्याः प्रेषिता देवैः अदधुस्त्वां षडाननम् ॥ ८९

### बृहस्पतिकृतस्कंदस्तुतिः

- एवंप्रभावो बाल्ये त्वं कुमार ! सुरतापहन् ! ।  
 त्वां प्रपद्ये सुवर्णभ ! शङ्करात्मज ! शङ्कर ! ॥ ९०
- त्वं विष्णुस्त्वं विधाता च त्वं रुद्रः कालरूपधृक् ।  
 शिखिवाहन ! षडङ्ग ! कुमारस्तारकान्तकः ॥ ९१

सुब्रह्मण्यः शिखी स्कन्दः कुमारः षोडशाब्दकः ।

शरजन्मा शक्तिहस्तो गाङ्गेयोऽग्निसमुद्भवः ॥ ९२

एकवक्तो द्विबाहुश्च कुमारः पुरुषोत्तमः ।

मातृप्रीत्या च षड्वक्त्रः पार्वतीप्रीतिवर्धनः ॥ ९३

उज्ज्वलषड्द्वितयाक्षिविराजत्षण्मुख शङ्करनन्दन वीर ! ।

सर्वदिगीश्वरसैनिकनाथ ! शं दिश शक्तिधरेशकुमार ! ॥ ९४

द्वादशहस्तविराजित हे ते दुःखपरामरवैरिहरेश ! ।

द्वादशकोटिरविद्युतितेजः शं दिश शक्तिधरेशकुमार ! ॥ ९५

ये तव बालरविद्युतिराजत्फुल्लसरोरुहकान्तिपदाब्जम् ।

नो शिरसा प्रणमन्ति कुमार ! ते तनयं तु न हीह लभन्ते ॥ ९६

स्फुरन्तं चलन्तं तडित्कोटिकान्ति मयूराधिरूढं मनोहारिवेपम् ।

पुलिन्दापतिं त्वां प्रपद्ये कुमारं कुमारश्च मे देहि मृत्युञ्जय ! त्वम् ॥ ९७

नारदः—

प्रसन्नो बभूवाथ वाग्भिः स्तुतोऽसौ गुहं प्राह भूतेशपुत्रो महात्मा ।

सुब्रह्मण्यः—

वरं ते ददामीह पुत्तानभीष्टान् स्वमृत्युं जय त्वञ्च तारुण्यमेवम् ॥ ९८

स्तोत्रेणानेन यो मर्त्यः त्वयोक्तेन गुरो ! भुवि ।

आनन्दयति मां नित्यं त्रिसन्ध्यं मानवोत्तमः ॥ ९९

स पुत्रधनधान्यादिसम्पदो लभते ध्रुवम् ।

अपमृत्युजयं चापि सैभाग्यं राजपूज्यताम् ॥ १००

नारदः—

इति दत्त्वा वरं तस्मै देवान् सर्वान् विसृज्य च !

जगाम शिखिना तस्मात् कुमारो वृषभाचलम् ॥ १०१



तत्र रम्ये शुचौ देशे ददर्श सर उत्तमम् ।

स्नानार्थं देवपूजार्थं पद्मोत्पलसुशोभितम् ॥

१०२

स्कन्दस्य तपःकरणप्रकारः

कृतस्नानः सरस्तीरे कुमारः समुपाविशत् ।

दृष्ट्वा तपन्तं वायुञ्च तत्समीपे षडाननः ॥

१०३

त्रिसन्ध्यं देवदेवेशं नारायणमनुस्मरन् ।

आतिष्ठत्तप उग्रञ्च समाधिध्यानसंयुतः ।

ध्यायन्नारायणं देवं शङ्खचक्रधरं परम् ॥

१०४

पादद्वयालङ्कृतभूमिभागो भासा ज्वलत्काञ्चनतुल्यतेजाः ।

ध्यायन् परं ब्रह्म कुमार आस्ते परात्परं यन्महतो महत्तत् ॥ १०५

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये सुब्रह्मण्यस्य

वृषभाद्रिप्रासिवर्णनं नामैकविंशोऽध्यायः ।

— : \* : —

अथ द्वाविंशोऽध्यायः

~~~~~

शङ्करकथित श्रीनिवासाविर्भावहेतूपोद्घातः

ऋषयः—

ततः किमकरोदम्बा कुमारे वृषशैलगे ।

सा पुत्रवत्सल्य नूनं भवानी शिवसंयुता ॥

१

नारदः—

तपसोऽर्थे प्रयाते तु स्कन्दे काञ्चनतेजसि ।

देवसेनासमायुक्ते धनुःशक्तिधरे द्विजाः ! ॥

२

भर्तारं भक्तिनम्राऽथ पुत्रवात्सल्यचोदिता ।

पप्रच्छ पार्वती शम्भुं हरं चन्द्रार्धशेखरम् ॥

३

- ‘ किं करिष्यति ? पुत्रो मे तत्र बालस्त्रिलोचन ! ।  
 कथं द्रक्ष्यति तं देवमचिन्त्यो ब्रह्मणाऽपि यः ’ ॥ ४
- इति पृष्ठः स तां प्राह सोत्प्रासं परमेश्वरः ।  
 ‘ शृणु देवि ! परं गुह्यं भविष्यते मयोच्यते ॥ ५
- सर्वे च मुनयस्तस्मिन् आगमिष्यन्ति पर्वते ।  
 द्रष्टुकामाः परं ब्रह्म तपस्तप्तुमनुत्तमम् ॥ ६
- देवा मनुष्याः पितरो गन्धर्वा यक्षराक्षसाः ।  
 सिद्धाः साध्याश्च गरुडाः पन्नगा ऋषयस्तथा ॥ ७
- चरिष्यन्ति तपस्तस्मिन् गिरौ गिरिवरात्मजे ! ।  
 प्रत्यक्षं परमात्मानं द्रष्टुकामाः सनातनम् ॥ ८
- अर्चयिष्यन्ति मां केचित् केचिद् ब्रह्माणमेव च ।  
 केचित् स्कन्दं महात्मानं शक्रं केचित्तथाऽपरे ॥ ९
- योद्धुकामास्तथा केचित् अमरैरमरासयः ।  
 उग्रं तपः करिष्यन्ति प्रीणयन्तश्च नः परम् ॥ १०
- आवां तत्र गमिष्यावः कालेन महतां प्रिये ।  
 द्रष्टुं तत्परमं ब्रह्म तत्त्वं नारायणं परम् ॥ ११
- श्रीवेङ्कटाचले पुण्ये यत्तु प्रादुर्भविष्यति ।  
 तत्प्रादुर्भावहेतोर्वै कर्तुञ्चापि महत्तपः ॥ १२

### सुदर्शनस्य शङ्करसमीपप्राप्तिक्रमः

- आवाभ्यामपि गन्तव्यं तथाऽन्यैः दैवतर्षिभिः ।  
 यत्कालाख्यञ्च तच्चक्रं करिष्यति तपो महत् ॥ १३
- मदर्थं हिमवत्पुत्रि ! मद्द्वियोगैकदुःखितम् ।  
 विष्णुनैवाभ्यनुज्ञातं चक्रतीर्थे वसिष्यति ’ ॥ १४

नारदः—

श्रुत्वैतत्पार्वती देवी वाक्यं शङ्करमब्रवीत् ।  
 'आश्चर्यमुक्तं भवता विष्णुचक्रं प्रतीश्वर ! ॥ १५  
 तत्पविलं करे विष्णोः वसत्येव सदा प्रभो ! ।  
 त्वन्निमित्तं किमर्थं तत् तपस्तपस्यति शङ्कर ! ॥ १६  
 त्वयि स्नेहश्च कस्तस्य ब्रूहेतन्मे महाद्भुतम् ' ।

नारदः—

एतच्छ्रुत्वाऽम्बिकां प्राह शङ्करो लोकशङ्करः ॥ १७  
 'अनादिनिधनं दिव्यं अप्रमेयपराक्रमम् ।  
 सहस्रारसमायुक्तं कोटिसूर्यसमप्रभम् ॥ १८  
 सुदर्शनाख्यं तच्चक्रं विष्णोरेव तु पार्वति ! ।  
 धर्तुमन्यैर्न शक्यं तत् तं विना पुरुषोत्तमम् ॥ १९  
 तेन चक्रेण दिव्येन दग्धा वाराणसी पुरी ।  
 सा राजधानी मे दिव्या कृत्याहेतोः विनाशिता ॥ २०  
 कस्मिंश्चिदथं काले तु मयि प्रीतो जनार्दनः ।  
 किमिच्छसीति मां प्राह वरदानसमुद्यतः ॥ २१  
 एवमुक्ते मया तस्मात् याचितं वरमुत्तमम् ।  
 "येन चक्रेण मे दग्धा पुरी वाराणसी हरे ॥ २२  
 तद्यथा मद्रशं यायात् मम प्रेप्यञ्च माधव ! ।  
 तथा कुरु मयि प्रीतो नान्यं वरमहं वृणे " ॥ २३  
 एवं विज्ञापितो देवः प्रहस्य मधुसूदनः ।  
 हस्तेन मम हस्ताग्रं गृहीत्वेदमुवाच ह ॥ २४  
 "कथं सूर्यं परित्यज्य प्रभाऽन्यस्य भविष्यति ।  
 एवं श्रीः कौस्तुभं चक्रं गरुडः शार्ङ्गमेव च ॥ २५

एवमादीनि वस्तूनि नित्यसिद्धानि शङ्कर ! ।	
नैतेषां जन्मविलयौ नान्यस्तेषां व्यपाश्रयः ॥	२६
अशक्यमिदमत्यर्थं याचितं प्रमथाधिप ! ।	
न चाहमनृतं वक्ष्ये तथैवास्तु यथेप्सितम् ॥	२७
एतत्सुदर्शनं दिव्यं कुतश्चित्कारणान्तरात् ।	
ब्रह्मणा निर्मितं भूत्वा लेशेनावतरिष्यति ॥	२८
अवतीर्णन्तु तच्चक्रं त्वत्प्रेष्यत्वं गमिष्यति ।	
दिव्यं वर्षसहस्रं तु त्वत्समीपे वसिष्यति ॥	२९
त्वया प्रत्यर्पितं पश्चात् स्वं भावमुपयास्यति ” ।	
एवं विष्णुप्रसादेन वरदानसमागतम् ॥	३०
देवि चक्रं ममैतद्धि सहस्ररविसन्निभम् ।	
विष्णवे च पुरा दत्तं मया पुरविमर्दने ॥	३१
मन्त्रोपदेष्ट्रे कालाख्यं दक्षिणार्थं हि पार्वति ! ।	
चिरं मया धृतं चक्रं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥	३२
रक्षणाय च देवानां नाशार्थं सुरवैरिणाम् ।	
मया विहीनं यच्चक्रं मदर्थञ्चैव तप्स्यति ॥	३३

नारदः—

श्रुत्वैतत्पार्वती प्रीता पुनः पप्रच्छ शङ्करम् ।	
‘चक्रतीर्थमिति प्रोक्तं त्वया शङ्कर कुत्र तत् ॥	३४
ब्रूहि मे विस्तरात् शम्भो ! पावनं तीर्थमुत्तमम् ’ ।	
इति पृष्टुः पार्वत्या प्राहैनां शङ्करः पुनः ॥	३५
‘वृषाद्रेः दक्षिणे पार्श्वे बहुप्रसवणे तटे ।	
सन्त्याश्रमाः सप्तदश चक्रादीनां महात्मनाम् ॥	३६

तावन्ति चैव तीर्थानि तेषु पुण्यतमानि वै ।	
तत्ताद्यं चक्रतीर्थं यत् वज्रतीर्थादधःस्थितम् ॥	३७
कालचक्रतपःस्थानं कपिलोद्गमजं सरः ।	
तत्र स्नानेन नश्यन्ति सर्वपापानि वै नृणाम् ॥	३८
तद्वि विष्णोः परं क्षेत्रं महापुण्यतमं स्मृतम् ।	
इत्युक्त्वा पार्वती प्राह भर्तारं भक्तिमत्यथ ॥	३९
‘वज्रतीर्थमिति प्रोक्तं केनेदं हेतुना सरः ।	
यदूर्ध्वं चक्रतीर्थात्तु विद्यमानमुदीरितम् ’ ॥	४०

इन्द्रस्य सहस्राक्षन्वप्राप्तिप्रकारः

इति पृष्टस्तु पार्वत्या प्राहैनां शङ्करः पुनः ।	
‘पुरा शको महातेजा गौतमस्य स्त्रियं प्रियाम् ॥	४१
भामिनीं तां समाक्रम्य शशोऽभूच्च महर्षिणा ।	
तवैकामिच्छतो योनिं तत्सहस्रं भवत्विति ’ ॥	४२

शङ्करः—

‘इत्युक्तमात्रे मुनिना सर्वाङ्गे योनयोऽभवन् ।	
दृष्ट्वा सहस्रं योनीनां विषण्णोऽभूच्छचीपतिः ॥	४३
‘कष्टं मया वत कृतं युक्तं गन्तुं क्व वे’ति च ।	
इति सञ्चिन्त्य सहसा जगाम ब्रह्मणः सरः ॥	४४
तत्र पङ्कजनालेन निलीनोऽभूत्सुरेश्वरः ।	
ततो देवाः सगन्धर्वाः ससिद्धाश्चारणैः सह ॥	४५
द्रष्टुकामा महेन्द्रन्तं नापश्यन्मरालये ।	
अनिन्द्रं सुरसैन्यं तत् दीनं दृष्ट्वा सुरादयः ॥	४६
आक्रम्य देवलोकञ्च विविशुश्चामरावतीम् ।	
मरुतस्ते शचीं देवीं वाक्पतिप्रमुखा ययुः ॥	४७

- प्रणम्य तां महाभागां सर्वे प्राञ्जल्योऽब्रुवन् ।  
 ' क यातस्ते पतिर्भद्रे ! वयं शत्रुभिरर्दिताः ॥ ४८  
 अदृष्ट्वा रक्षितारं तं अस्माकं व्यथिता वयम् ' ।  
 इत्युक्ता सा शची देवी जगाद सुरसत्तमान् ॥ ४९  
 ' तेनाहं निशि शय्यायां भर्त्रा सुप्ता सुरोत्तमाः ! ।  
 क यातः स तु मायावी मया न ज्ञायते प्रभुः ॥ ५०  
 गुरुः सुराणामस्माकं नूनं जानाति वाक्पतिः ' ।

शङ्करः—

- इत्युक्तास्तेऽमराः सर्वे पुलोमसुतया तदा ॥ ५१  
 प्रणम्य च गुरुं भक्त्या ब्रह्माणमिव शाश्वतम् ।  
 ' अस्माकं ब्रूहि भगवन् ! इन्द्रः काऽऽस्ते महेश्वरः ' ॥ ५२  
 याचितः सोऽथ देवैस्तैः अपश्यद्योगवर्त्मना ।  
 विहस्य किञ्चिदमरान् प्राह वाचस्पतिस्तदा ॥ ५३  
 ' कृत्वाऽकृत्यमसौ तस्य फलं प्राप्य शचीपतिः ।  
 आस्ते लज्जासमाविष्टो मेरौ पङ्कजनालके ॥ ५४  
 गच्छामस्तत्सरो देवा द्रक्ष्यामस्तं सुरेश्वरम् ' ।  
 इत्युक्त्वा तान् सुरान् सर्वान् जगाम सह तैर्गुरुः ॥ ५५  
 तत्सरः प्राप्य तानाह ' गायञ्चं सुरसत्तमाः ' ।  
 इत्यादिष्टाः जगुः सर्वे गन्धर्वाप्सरसां गणाः ।  
 देवाश्च ऋषिभिः सार्द्धं तौर्यत्रिकसमन्वितम् ॥ ५६

' नाथ ! त्रयाणामपि विष्टपानामुपप्लुताः स्मः सुरवैरिभिः प्रभो ! ।

आगच्छ देवेन्द्र ! जगच्च रक्ष सरोजलीनोऽसि कृतञ्च किं त्वया ' ॥ ५७

शङ्करः—

श्रुत्वा गीतं सुरेशोऽथ ज्ञात्वा तानागतान् सुरान् । बहन् योनिशतं देवो दृश्योऽभूद्बलसूदनः ॥	५८
निर्गत्यास्मात् पद्मनाल्यत् स्वपदार्पितलोचनः । अवाङ्मुखो गुरोः पादौ जग्राह बलसूदनः ॥	५९
उवाच दीनया वाचा देवेन्द्रोऽङ्गिरसः सुतम् । 'आदित्यानां हितार्थाय तपोविघ्नं हि कुर्वता ॥	६०
मया फलमिदं प्राप्तं गौतमस्य महात्मनः ' । एतच्छ्रुत्वाऽथ विषणो विहस्य गिरिजेऽवदत् ॥	६१
'कृतमेतत्त्वया वज्रिन्! कामिना ज्ञातमेव मे । देवार्थं कर्म कृत्वैतत् फलं प्राप्तं भृगो रुषा ॥	६२
देवा यूयं प्रार्थयध्वमेता मेढ्रा भव' न्त्विति । गुरोरेतद्वचः श्रुत्वा देवाः सर्वे वरानने ॥	६३
'तावन्मेढ्रा भवन्त्वेता योनयश्चेन्द्रमाश्रिताः ' । इत्थमुक्तेषु देवेषु योनयो मेढ्रातां ययुः ॥	६४
अथ दृष्ट्वा सहस्रन्तु मेढ्राणामप्सरोगणाः । 'ऊचुरस्मानलं भोक्तुं बह्वैरेकक्षणादयम् ' ॥	६५
इति तासां वचः श्रुत्वा प्रीतोऽभूद्बलसूदनः । ततो विमानमारुह्य दंशनं चोद्वहन् महत् ॥	६६
गीतवादित्रनिर्घोषैः पूरयन्म्वरं दिशः । विवेश च पुरीमिन्द्रो निहत्यसुरवैरिणः ॥	६७
सुखमात्यन्तिकं भेजे बहुभिः सोऽप्सरोगणैः । विजहारैकवारेण विषयासक्तचेतनः ॥	६८

- एवं स विहरन् नक्तं दिवा च गिरिकन्यके ! ।  
 न तृप्तिमाययौ कामी कामभोगैः सुदुस्त्यजैः ॥ ६९
- “ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।  
 हविषा कृष्णवर्त्मैव भूय एवाभिवर्धते ” ॥ ७०
- देवेन्द्रो विहरन्नेवं अशक्तः सेतुमद्रिजे ! ।  
 मेहनानां सहस्रं तु तेषां मोक्षमचिन्तयत् ॥ ७१
- केनैतत्कर्मणा भोक्तुं शक्यं शिशुसहस्रकम् ।  
 ‘ नाशयिष्याम्यहं त्वेतत्तपसे ’ ति सुनिश्चितः ॥ ७२
- धिषणेनाभ्यनुज्ञातो विष्वक्सेनसरो ययौ ।  
 विसृज्य देवानिन्द्राण्या ह्यातिष्ठत्तपसे सह ॥ ७३
- विष्वक्सेनसरोधस्तात् वज्रेणाहत्य भूधरम् ।  
 स्नानार्थं देवगूजार्थं पातालात् जलमाददे ॥ ७४
- क्षीराहारो जितक्रोधो जितकामो जितेन्द्रियः ।  
 पादाङ्गुष्ठेन सम्पीड्य ह्यतिष्ठन्मेदिनीं शुभे ! ॥ ७५
- जपंश्च नियतं देवीं गायत्रीं वेदमातरम् ।  
 पूर्णं वर्षसहस्रन्तु ततः प्रीतोऽभवद्भरिः ॥ ७६
- वराहरूपो भगवान् धरण्या सह भूधरे ।  
 ग्राह्यं चेन्द्रं ‘ सुरेशाहं वरदस्ते समागतः ॥ ७७
- वृणीष्व यद्भीष्टं ते ददामि सुरसत्तम ! ’ ।  
 एवमुक्तोऽथ देवेन्द्रः प्रणम्य धरणीधरम् ॥ ७८
- प्रीतस्त्वमसि देवेश वरं देहि दयानिधे ।  
 सहस्रमेतच्छिशूनां विनैकं नश्यतां मम ॥ ७९
- एवमेव वरं देहि ममैतावद्धि काङ्क्षितम् ।  
 ततो वराहो देवाय वरं दत्त्वा यथेप्सितम् ॥ ८०



- तत्रैवान्तर्दधे देवो वृषभाद्रौ वरानने ! !  
 ततः शिक्षाः सहस्रं ते न्यपतन् वज्रिदेहतः ॥ ८१
- सद्यस्तेजोमया भूत्वा ब्राह्मणा वेदपारगाः ।  
 सहस्रमब्रुवन्निद्रं प्रीत्या परमया युताः ॥ ८२
- ‘शृणु देव ! वयं विप्राः पौलोमीसङ्गमेच्छया ।  
 तपः कृत्वा ततो भूमौ तवाङ्गे देवसत्तम ! ॥ ८३
- मेढ्राः सहस्रमेवैते गौतमस्य तपोबलात् ।  
 स्वर्गस्त्रियोऽनुभुक्ताश्च तथेन्द्राणी यथासुखम् ॥ ८४
- वरं ददाम ते प्रीता वृणीष्व बलसूदन ’ ।  
 इति तेषां वचः श्रुत्वा प्रीत्या वज्रघब्रवीद्वि तान् ॥ ८५
- ‘यदि प्रीताः स्थ मे विप्रा व्रणानां तु सहस्रकम् ।  
 भवन्तु चक्षूषि सदा भवतां तु प्रसादतः ’ ॥ ८६
- तथाऽस्त्विति ब्रुवन्तस्ते द्विजा जम्मुस्तपोधनाः ।  
 सहस्रदृक्च देवोऽथ जातोऽभूदद्भुताकृतिः ॥ ८७
- सह शच्या विशालाक्ष्या प्रविवेशमरावतीम् ।  
 दिव्यमङ्गलवाद्यैश्च हर्षयन् सर्वदेहिनः ॥ ८८
- लब्ध्वा वरं देववरो वृषाद्रौ तुङ्गं समारुह्य तुरङ्गयुक्तम् ।  
 वज्री रथं काञ्चनमप्सरोभिः सुगीयमानश्च ययौ स्वगेहम् ’ ॥ ८९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये स्कन्दकृततपः-

प्रकारादिवर्णनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ।

अथ त्रयोविंशोऽध्यायः

सुवर्चलायां श्रीविश्वक्सेनोत्पत्तिक्रमः

नारदः—

- श्रुत्वा चित्रां कथां देवी पुनः प्रीताऽऽह शङ्करम् ।  
 'विश्वक्सेनश्च को वाऽसौ किमर्थञ्च तपोऽचरत् ॥ १
- किं लेभे कुत चाऽस्तेऽसौ ब्रूहि मे तत्त्वदर्शन !' ।  
 श्रुत्वाऽथ पार्वतीवाक्यं प्रीतः प्राह महेश्वरः ॥ २
- 'पुरा कृतयुगे देवी कुन्तला नाम चाप्सराः ।  
 दुर्वासस्याऽऽश्रमं प्राप्य रम्यमिन्द्रेण चोदिता ॥ ३
- सा लस्यमकरोद्वाला महर्षेः भाविताऽत्मनः ।  
 अग्रतो रुचिरां दृष्ट्वा सोऽशपत् कोपनो मुनिः ॥ ४
- 'किराती भव दुर्बुद्धे कुन्तले नीलकुन्तले !' ।  
 सा शप्ता कुन्तला भीता प्राञ्जलिः प्रणताऽवदत् ॥ ५
- 'स्वाधीना नास्मि भगवन् ! क्षमस्व मम दुर्नयम्' ।  
 प्राञ्जलिं प्रणतां दृष्ट्वा दुर्वासा वाक्यमब्रवीत् ॥ ६
- 'नानृता वाक् च मे बाले ! शापमोक्षं वदामि ते ।  
 भीरु ! पुत्रमुखं दृष्ट्वा पुनः स्वर्गं गमिष्यसि' ॥ ७
- इत्युक्त्वा सा पुनः प्राह 'पुत्रं विष्णुपराक्रमम् ।  
 दीर्घायुषं तपोनिष्ठं सोताऽस्मि तव वैभवात्' ॥ ८
- इति नम्रां पुनस्तां तु 'तथाऽस्त्व' त्यब्रवीन्मुनिः ।  
 वीरबाहोः किरातस्य पत्न्यां जज्ञे सुवर्चला ॥ ९
- पुत्री ह्यपुत्रिणस्तस्य ववृधे प्रीतिवर्धनी ।  
 वरा सा रूपलावप्यगुणैः नारीगणेष्वभूत् ॥ १०

- धर्मपुत्राय भद्राय तां पिता प्रददौ तदा ।  
 पीनोन्नतस्तनी श्यामा सा बाला तनुमध्यमा ॥ ११  
 कदाचित् फाल्गुने मासि शुक्लपक्षे शुभे दिने ।  
 ऋतुस्नाता नर्मदायां स्थिता ऋक्षवतस्तटे ॥ १२  
 अपश्यत्तां तु वरुणः सङ्गम्य ह्यवदच्च ताम् ।  
 'प्रीतोऽहं सुभगे ! सुभ्रु वृणीष्व वरमीप्सितम्' ॥ १३

सुवर्चला.—

- 'प्रीतो यदि भवान् दद्याद्देव ! मे पुत्रमुत्तमम्' ।  
 वरुणस्त्वाह 'कल्याणि ! सुपुत्रा त्वं भविष्यसि' ॥ १४

शङ्करः—

- इति दत्त्वा वरं तस्यै ययौ जलपतिस्ततः ।  
 तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य प्रीता साऽभूत् सुवर्चला ॥ १५  
 साऽसूत पुत्रं तपनीयगात्रं पूर्णेन्दुवक्त्रं जलजाभनेत्रम् ।  
 शङ्खासिबाणासनकुम्भरेखासमुज्ज्वलद्रक्तकराङ्घ्रियुग्मम् ॥ १६  
 देवदुन्दुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिश्च खाच्च्युता ।  
 ववौ वायुः सुखस्पर्शः तज्जन्मदिवसे तदा ॥ १७  
 पुण्यक्षे कर्कटे जातः सुवर्चलसुतो बली ।  
 ववृधे वीर्यवांस्तत्र शुक्लपक्ष इवोडुराद् ॥ १८  
 पुत्रस्य दशमे वर्षे कालधर्मं ययौ च सा ।  
 ततस्त्यक्तश्च पित्राऽसौ काश्यपस्याश्रमं ययौ ॥ १९  
 आयान्तं तं मुनिर्दृष्ट्वा ज्ञात्वा तं वरुणात्मजम् ।  
 राजपुत्रं महात्मानं रूपलावण्यसंयुतम् ॥ २०  
 प्रीतो जग्राह तं शिष्यं मन्त्रं प्रादान्महामुनिः ।  
 लब्ध्वा मन्त्रं मुनिवराद्वेदान् साङ्गानधीत्य च ॥ २१

अनुज्ञातो ययौ तेन तपसे वृषभाचलम् ।	
तपस्तप्त्वा चिरं कालं तैस्तैश्च नियमैः सह ॥	२२
सम्पूर्णे द्वादशे वर्षे मासि चाश्वयुजे शुभे ।	
पूर्वाषाढे च पुण्यर्क्षे वरं लब्ध्वा जनार्दनात् ॥	२३
सारूप्यं श्रीपतेस्तस्य सैनापत्यमवाप्य च ।	
शङ्खचक्रगदापाणिः विष्णवाज्ञापरिपालकः ॥	२४
पञ्चायुधाश्रमाधःस्थात् ययौ स्वाश्रमतस्तटम् ।	
नारायणाद्रेर्गिरिजे ! गन्धर्वैः परिवारितः ॥	२५
चतुर्दशानां जगतामधीश्वरैः महाबलैः भूतगणैः महास्वनैः ।	
ज्वलच्छ्रैः उज्ज्वलहेतिभिर्वृतो नैर्ऋत्यकोणे त्ववसद्भिरेस्तटम् ॥	२६
विष्वक्सेनस्य यदिदं जन्म प्रोक्तं मया तव ।	
आश्रमाणां प्रसङ्गेन न तत्कर्मनिबन्धनम् ॥	२७
अवतीर्णस्तु देवोऽसौ देवैरभ्यर्थितः पुरा ।	
विष्णोराज्ञां पुरस्कृत्य विष्णुतुल्यपराक्रमः ॥	२८

### चक्रादिमप्तदशतीर्थमाहात्म्यम्

विष्वक्सेनाश्रमादूर्ध्वं सरस्यः पञ्च चोज्ज्वलाः ।	
पञ्चायुधैः भगवतो देवि ' नित्यमुपाश्रिताः ॥	२९
तत्तदाकारयुक्तास्ताः दृश्यन्तेऽद्यापि पर्वते ।	
तासामूर्ध्वं जातवेदाः तपस्तेपे सरोवरे ॥	३०
तत्सरस्तु दुरारोहमगाधं पापनाशनम् ।	
आग्नेयमिति विख्यातं तीर्थानामुत्तमोत्तमम् ॥	३१
ब्राह्मं सरस्ततश्चोर्ध्वं पावनं परिकीर्तितम् ।	
सप्तर्षीणां ततश्चोर्ध्वं आश्रमाश्च सरांसि च ॥	३२

एषां सप्तदशानाञ्च ह्येकैकं पापनाशनम् ।  
दर्शनात् कीर्तनाच्चापि स्नानात् पानाच्च पार्वति ! ॥ ३३

नारदः—

श्रुत्वैतत्पार्वती प्राह भर्तारं भक्तवत्सलम् ।  
'आदितः सरसामेषां माहात्म्यं वद शङ्कर ! ॥ ३४  
सर्वलोकहितार्थाय पावनं पुण्यवर्धनम् ' ।  
शंकरः प्राह 'पद्माक्षि ! शृणु दुर्वाससे पुरा ॥ ३५  
ब्रह्मणा पृच्छते प्रोक्तं कापिलं लिङ्गमुत्तमम् ।  
ऋषिणा कपिलस्येन पाताले पूजितं सदा ॥ ३६  
क्षीराभिषिक्तं सुरभेः उद्विद्य भुवमुद्गतम् ।  
कुपिता सुरभिस्तस्य मूध्न्याधायान्वशात् खुरम् ॥ ३७  
मा वर्धस्वेति लिङ्गन्तु नावर्धत खुराङ्कितम् ।  
आदौ रजतवर्णञ्च मध्ये स्वर्णप्रभं महत् ॥ ३८  
अग्रेऽरुणाभं सम्भूतं पञ्चवक्त्रं त्रियम्बकम् ।  
पञ्चवर्णं महाभीमं पातालाधिष्ठितं सदा ॥ ३९  
महर्षिणा कृते पूर्वं कपिलेन प्रपूजितम् ।  
'कपिलेश्वर' इत्येतत्कृते ख्यातं युगे पुरा ॥ ४०  
त्रेतायामग्निना पश्चात् 'आग्नेय' मिति कीर्तितम् ।  
अनाद्यन्तं महालिङ्गं द्वापरे चक्रपूजितम् ॥ ४१  
कलौ युगे भविष्यं तत् कपिलापूजितं शिवम् ।  
अग्रे कापिललिङ्गस्य सरोवरमनुत्तमम् ॥ ४२  
पातालादुद्गतस्यास्य कपिलस्य महात्मनः ।  
मार्गो हि तद्वलं गुह्यं कापिलं परिकीर्तितम् ॥ ४३

जलाभिपूरितं तत्तु सरोवरमनुत्तमम् ।	
दर्शनादेव तत्तीर्थं सर्वाधौघविनाशनम् ॥	४४
दर्शनात् स्वर्गदं पुंसां स्त्रीणामपि च पार्वति ! ।	
स्नाने पाने कृते तस्मिन् जरामरणनाशनम् ॥	४५
सकृत्स्नातस्य तु फलं जनस्य शृणु पार्वति ! ।	
वाजपेयाश्वमेधानां पुष्कलं फलमश्नुते ॥	४६
वाजपेयात्पुनर्जन्म सकृत्स्नातस्य न च्युतिः ।	
तदूर्ध्वसरसि स्नातो वज्रनीर्थमिति स्मृते ॥	४७
दशाधिकफलं लब्ध्वा शक्रलोकं स गच्छति ।	
वज्रतीर्थोर्ध्वतः कुण्डे विष्वक्सेनसरोवरे ॥	४८
स्नातस्तु यस्तस्य फलं शताधिकमितीरितम् ।	
एवं सप्तदशानां तु तीर्थानामधिकं फलम् ॥	४९

### कापिलाख्यचक्रतीर्थस्नानकालनिर्णयादिः

त्रैलोक्ये सर्वतीर्थानि कार्तिके मासि पर्वणि ।	
मध्याह्ने कापिले तीर्थे सान्निध्यं यान्ति पार्वति ! ॥	५०
तिष्ठन्ति प्राणिरक्षार्थं मध्याह्ने दश नाडिकाः ।	
तत्र स्नातास्तु ये पापाः पुरुषा योषितोऽमले ! ॥	५१
सर्वपापविनिर्मुक्ता ब्रह्मलोकं प्रयान्ति वै ।	
तत्र दानानि कुर्वन्ति ये नरास्तीर्थसन्निधौ ॥	५२
तिलमात्रहिरण्यन्तु दत्तं मेरुसमं भवेत् ।	
भिक्षामालं तथान्नस्य दानं कापिलसन्निधौ ॥	५३
कुर्वन्ति ये नरा देवि सोमलोकं व्रजन्ति ते ।	
कन्यागोभूषदातारो विद्यामन्त्रोपदेशकाः ॥	५४

स्वर्गकैलासवैकुण्ठब्रह्मलोकान् वजन्ति ते ।	
‘वर्षे वर्षे तु कार्तिक्यां पौर्णमास्यां महातिथौ ॥	५५
आयान्ति सर्वतीर्थानि मध्याह्ने कापिलं सरः ’ ।	
इमं मन्त्रं समुच्चार्य स्नातस्तत्फलमाप्नुयात् ॥	५६
स्नानं तु दुर्लभं तत्र तद्विष्णोः परमं पदम् ।	
इति ते कथितं सर्वतीर्थमाहात्म्यमुत्तमम् ।	
अतः परं प्रवक्ष्यामि पवनस्य तपो महत् ’ ॥	५७

इति श्रीवामनपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये चक्रादिसप्तदशतीर्थमाहात्म्यवर्णनं  
नाम त्रयोविंशोऽध्यायः

अथ-चतुर्विंशोऽध्यायः

भगवन्तमुद्दिश्य वाय्वादिकृततपःप्रकारः

शङ्करः—

‘वायोस्तपः प्रभावन्तु शृणु देवि ! ततः प्रिये ! ।	
ग्रीष्मे पञ्चतपा वायुः वर्षासु भुवि तिष्ठति ॥	१
हेमन्ते शिशिरे चापि शेते स्वामिसरोजले ।	
एवं वर्षसहस्रान्ते देवदेवो जनार्दनः ॥	२
प्रादुर्भविष्यति हरिः वायोः प्रियचिकीर्षया ।	
ततः पश्चात्तु शङ्खस्य राज्ञः प्रियचिकीर्षया ॥	३
विश्वविख्यातसुमहाप्रादुर्भावं करिष्यति ।	
सर्वलोकहितायैव शङ्खव्याजेन वै हरिः ॥	४
श्रीवेङ्कटाचले पुण्ये प्रादुर्भावं गमिष्यति ।	
तस्य हेतोस्ततः पूर्वं कर्तुञ्च सुमहत्तपः ॥	५

आवां तत्र गमिष्यावः चिरकालादनन्तरम् ।	
गमिष्यन्ति सुगः सर्वे सह सर्वैः महर्षिभिः ॥	६
तदा कुमारं द्रक्ष्यावो विष्णुभक्तिपरायणम् ।	
इत्युक्ता शङ्करेणाथ विरराम तदा सती ॥	७
ततः कालेन महता शङ्करो गमनेन्मुखः ।	
बभाषे पार्वतीं देवीं पुत्रदर्शनलालसाम् ॥	८

शङ्करः —

‘अयं स कालः सम्प्राप्तो यः पुरा ते मयोदितः ।	
श्रीवेङ्कटाह्वयं गन्तुं महापुण्यं नगोत्तमम्’ ॥	९
इति संस्मारिता देवी तदा पप्रच्छ शङ्करम् ।	

पार्वती —

‘किं नु वायोस्तपः पूर्णं ? प्रादुर्भूतः किमीश्वरः ? ॥	१०
कथं प्रत्यक्षतां यातो वायोः नारायणो हरिः ? ।	
किं नु तस्मै वरं प्रादात् ? तत्सर्वं शंस मे विभो ! ’ ॥	११
इति शृष्टो महादेवः पार्वतीमब्रवीत्तदा ।	

शङ्करः --

‘चचार खलु वै वायुः दारुणं सुमहत्तपः ॥	१२
---------------------------------------	----

प्रादुर्भूतं भगवन्तमुद्दिश्य वायुकृतविश्वरूपस्तुतिः

ततो वर्षसहस्रान्ते देवदेवो जनार्दनः ।	
प्रादुर्बभूव भगवान् परमात्मा सनातनः ॥	१३
श्रीभूमिसहितो देवो गरुडोपरि संस्थितः ।	
सशेषः शङ्खचक्राभ्यां अन्वितः शार्ङ्गबाणधृक् ॥	१४



- तं दृष्ट्वा विस्मितो भूत्वा वायुः सर्वात्मगोचरः ।  
 आसनादुदतिष्ठत्स मत्तोन्मत्त इव भ्रमन् ॥ १५
- सम्पतन्नुत्पतन् हर्षात् उद्भ्रमन् विभ्रमन्नपि ।  
 'अद्भुतं किमिदं दृष्टं वृषभाद्रौ मयाऽद्य वै' ॥ १६
- इत्युन्मादात् विसंज्ञोऽभूत् मुहूर्तं परमेश्वरि ! ।  
 उदतिष्ठत्ससंज्ञोऽथ ददर्श हरिमञ्जसा ॥ १७
- यो वेदैश्च तपोभिश्च योगिभिः मुनिभिस्तथा ।  
 द्रष्टुं शक्यो न देवस्तु तमपश्यत्सनातनम् ॥ १८
- प्रणनाम पुनश्चापि साष्टाङ्गं पुरुषोत्तमम् ।  
 वायुस्तुष्टाव गिरिजे ! भगवन्तं जनार्दनम् ।  
 तत्त्वार्थयुक्तया वाचा वेदवेद्यं सनातनम् ' ॥ १९
- “नमस्ते देवदेवेश ! पुराणपुरुषोत्तम ! ।  
 श्रीधराऽनन्त ! गोविन्द ! जिष्णवे विष्णवे नमः ॥ २०
- एकस्त्वं पुरुषः साक्षात् आदौ मायासमन्वितः ।  
 जगदेकार्णवीकृत्य शेषे सागरसम्प्लवे ॥ २१
- त्वन्नामिपङ्कजोद्भूतो ब्रह्मा ब्रह्मविदां वरः ।  
 येनेदं जगदुत्सृष्टं चराचरसमन्वितम् ॥ २२
- रजोगुणं समाश्रित्य जगत्सृष्टं त्वया विभो ! ।  
 सत्त्वं गुणं समाश्रित्य रक्ष्यते ह्यखिलं जगत् ॥ २३
- तमोगुणं समाश्रित्य ह्रियते च पुनस्त्वया ।  
 जातास्त्वयि ब्रह्मरूपे ते प्रजापतयो नव ॥ २४
- येभ्यः सम्भूतमेतत्तु देवमानुषराक्षसम् ।  
 मधुकैटभहन्ता त्वं सम्प्राप्ते ब्रह्मसङ्कटे ॥ २५

- ततोऽसुरं सोमकाख्यं हत्वा वेदञ्च तत्करात् ।  
 गृहीत्वा ब्रह्मणे प्रादात् मीनरूपी महेश्वरः ॥ २६
- निराधारे जगत्यस्मिन् निरालम्बे चराचरे ।  
 आधारः कूर्मरूपी त्वं पुरुषोत्तम ! तिष्ठसि ॥ २७
- गतामुद्धृत्य पातालं भुवं सगिरिकाननाम् ।  
 वोढाऽसि पोतिरूपेण त्वं महात्मा सनातनः ॥ २८
- पुनः कृतयुगादौ तु हिरण्यारूपेऽसुरे सति ।  
 सैर्हीं प्रह्लादरक्षार्थं नरार्धतनुमुद्वहन् ॥ २९
- स्तम्भात् कालायसाज्जातो विदार्याऽथ महासुरम् ।  
 लक्ष्मीमालिङ्ग्य भगवन् ! रक्षिता त्वं जगत्त्रयम् ॥ ३०
- अथ कालान्तरे विष्णो ! यागे वैरोचनेर्विभो ! ।  
 त्वमिन्द्रचोदितो देव ! वामनो वाग्मिनां वरः ॥ ३१
- पदानि त्रीणि याचित्वा प्रतिगृह्य महाबलेः ।  
 आक्रम्य भूर्भुवोलोकान् दत्त्वेन्द्राय जगत्त्रयम् ॥ ३२
- चन्द्रमण्डलमासाद्य पद्मासनगतो विभो ! ।  
 अमृताऽन्नाधिपो विष्णो ! जगत्पासि चराचरम् ॥ ३३
- जापदग्न्यो महाबाहो ! राक्षसान् राजरूपिणः ।  
 हत्वा तद्रक्तकुण्डेषु कृत्वा पितृजलक्रियाम् ॥ ३४
- महीं निःक्षत्रियां कृत्वा यज्ञं कृत्वाऽश्वमेधिकम् ।  
 दक्षिणार्थं महीं दत्त्वा काश्यपाय जगत्प्रभो ! ॥ ३५
- गत्वा महोदधिं तत्र समुद्रेण कृतालयः ।  
 सङ्खादौ रमणीये त्वं तपश्चरसि भार्गवः ॥ ३६
- रावणे राक्षसे देव ! सम्भूते देवकण्ठके ।  
 ततस्त्रेतायुगे जिष्णो ! रामो दाशरथिः स्वयम् ॥ ३७

लक्ष्मणानुचरो भूत्वा भार्याहर्तारमाहवे ।	
सपुत्रपौत्रं सगणं सामात्यं संहरिष्यसि ॥	३८
बलभद्रोऽथ कृष्णस्त्वं वासुदेवः सनातनः ।	
कल्यन्ते कल्किरूपी च भविताऽसि त्रिलोकधृक् ॥	३९
आदित्यानाञ्च विष्णुस्त्वं ज्योतिषां त्वं प्रभाकरः ।	
वसूनां पावकश्च त्वं रुद्राणां शम्भुरुत्तमः ॥	४०
ग्रहाणाञ्च बुधोऽसि त्वं देवानां बलमित् भवान् ।	
सिद्धानां कपिलोऽसि त्वं देवर्षिणाञ्च नारदः ॥	४१
यज्ञानां जपयज्ञोऽसि तपश्चासि तपस्विनाम् ।	
यक्षाणाञ्च धनेशस्त्वं यमः संयमतां भवान् ॥	४२
मत्स्यानां मङ्गरोऽसि त्वं वरुणो यादसां पतिः ।	
आपगानाञ्च गङ्गा त्वं सरसां सागरो भवान् ॥	४३
वायूनां प्राणवायुस्त्वं विधातॄणां चतुर्मुखः ।	
वर्णानां ब्राह्मणश्च त्वमाश्रमाणां गृही भवान् ॥	४४
तारकाणाञ्च चन्द्रस्त्वं इन्द्रियाणां मनो भवान् ।	
सिंहोऽसि त्वं मृगाणाञ्च गजेन्द्रोऽसि चतुष्पदाम् ॥	४५
द्विपदां ब्राह्मणश्चासि पक्षिणां गरुडो भवान् ।	
वासुकिस्त्वन्तु सर्पाणां विषाणां कालकूटकम् ॥	४६
नागानां त्वमनन्तोऽसि मेरुस्त्वं कुलभूभुताम् ।	
गिरीणां हिमवांश्च त्वं वेदानां सामरूपधृक् ॥	४७
छन्दसामपि गायत्री मन्त्राणां प्रणवो भवान् ।	
पशूनां सुरभिश्च त्वं हुतमुक् यज्ञभोजिनाम् ॥	४८
अचराणां गिरिश्च त्वं वृक्षाणां पिप्पलो भवान् ।	
सेनानीनां भवान् स्कन्दः क्षमा शौर्यवतां भवान् ॥	४९

बीजानामङ्कुरश्चासि प्राणिनां प्राणवृक् भवान् ।	
ब्रह्मर्षीणां वसिष्ठस्त्वं चरतां पवनो भवान् ॥	५०
महर्षीणां भृगुश्च त्वं व्यासो वेदविदां भवान् ।	
वाल्मीकिश्च कवीनां त्वं जनानां त्वं जनेश्वरः ॥	५१
यत्सत्त्वं सर्वलोकेषु तेजोबलसमन्वितम् ।	
तद्भवानिति विज्ञेयमिति ब्रह्मविदो विदुः ॥	५२
सहस्रशिरसे तुभ्यं पुरुषाय नमो नमः ।	
भुजासहस्रयुक्ताय ते सहस्रपदे नमः ॥	५३
नानाविधानि देव ! त्वदायुधानि सहस्रशः ।	
दीप्यमानानि सर्वाणि द्योतयन्ति दिशो दश ॥	५४
वक्त्राणि तव तीव्राणि दंष्ट्राप्रनिभयानि च ।	
बालार्कमण्डलाकारकुण्डलाभ्यां विभान्ति वै ॥	५५
त्वत्पादाम्भोरुहैरेतैः सहस्रैर्भाति ते पदम् ।	
बालार्कद्युतिसम्भिन्नरक्ताम्भोजैरिवाञ्चितम् ॥	५६
पृथिवी पूरिता पद्मिराकाशं मूर्धभिस्तव ।	
बाहुभिश्च दिशो व्याप्ता महाविष्णो ! नमोऽस्तु ते ॥	५७
वेदास्तवैव निःश्वासाः चन्द्रसूर्यौ तवाक्षिणी ।	
ज्योतिष्कणाश्च ताराणि जगद्रूप ! नमोऽस्तु ते ॥	५८
कलकाष्ठामुहूर्तादिदिनरात्रिशरीरिणे ।	
चतुर्युगाय कालाय नमोऽनन्ताय ते विभो ! ॥	५९
कालदृक् कालरूपी च कालाऽत्मा कालकारणम् ।	
कालविद्विरवेद्यस्त्वं विश्वमूर्ते ! नमोऽस्तु ते ॥	६०
आनादीनि च भूतानि महान्ति मधुसूदन ! ।	
तव मूर्तानि रूपाणि भूतभावन ! ते नमः ॥	६१

प्राणात्मा प्राणधृक् प्राणी साक्षी त्वं सर्वकर्मणाम् ।	
नित्यः सर्वगतः स्थाणुः अचलस्ते नमो नमः ॥	६२
शरीरभृत् शरीरी त्वं शरीरात्मा शरीरगः ।	
शरीरकर्मणा स्पृष्टः शुद्धमूर्ते ! नमोऽस्तु ते ॥	६३
अणीयसामणीयांस्त्वं महीयांश्च महीयसाम् ।	
बृहताञ्च बृहच्च त्वं विश्वमूर्ते नमोऽस्तु ते ॥	६४
खस्थस्त्वं खगुणश्चापि खगुणातीत एव च ।	
खमूर्तिः खगतिश्चासि खगेशारूढ ! ते नमः ॥	६५
ज्ञानात्मा ज्ञानदृग् ज्ञानी ज्ञानं ज्ञानवतां भवान् ।	
ज्ञानविद्विरविज्ञेयः तुभ्यं ज्ञेयाऽत्मने नमः ॥	६६
वेदात्मा वेदवित् वेद्यो वैद्यो वेदविदां वरः ।	
वेदान्तवेद्यरूपाय ब्रह्मरूपाय ते नमः ॥	६७
अक्षराय क्षराद्याय ह्यक्षराकारधारिणे ।	
क्षराक्षरविभक्तौ द्वावतीताय च ते नमः ॥	६८
नमो निरन्तरानन्दमूलकन्दाय जिष्णवे ।	
उष्णत्वमग्नौ शैत्यञ्च जले पृथ्व्याञ्च गन्धिता ॥	६९
स्पर्शित्वञ्च भवान्वायौ नैर्मल्यं खे नमोऽस्तु ते ।	
घनाः केशेषु नद्यस्ते भगवन् ! सर्वसन्धिषु ॥	७०
कुक्षौ च सिन्धवः सप्त नमस्ते जलमूर्तये ।	
स्तोत्रैः स्तुताय स्तोत्राय स्तोत्रकृत्प्रियकारिणे ॥	७१
स्तोत्रज्ञेयाय स्तुत्याय स्तोत्ररूपाय ते नमः ।	
अद्भुताकाररूपाय नमस्ते शार्ङ्गपाणये ॥	७२
भक्तप्रियाय शान्ताय भक्तचित्तानुवर्तिने ।	
भक्तपापविनाशाय नमस्ते शार्ङ्गपाणये ॥	७३

रक्षाकराय जगतां रक्षोघ्ने राक्षसारये ।

श्रीवत्सवक्षसे तुभ्यं शार्ङ्गपाणे ! नमो नमः ॥

७४

श्रिया सरोजकरया सरोजान्तरवर्णया ।

दिव्याभरणविद्योतिदेहया दिव्यवेषया ॥

७५

पलाशश्यामया देव्या धरिण्योत्पलहस्तया ।

संश्रितोभयपार्श्वाय नमस्ते शार्ङ्गपाणये ॥

७६

चराचराणि भूतानि भीतानि चलितानि वै ।

लभन्ते न स्थितिं देव ! भीमरूप ! नमोऽस्तु ते ॥

७७

युगान्तकालानलकोटितुल्य ! प्रभाभिरापूरितलोकजाल ! ।

रत्नाङ्गदालङ्कृतबाहुदण्ड ! नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रबाहो ! ॥

७८

नमोऽस्तु देवा अपि लोकपाल भूताविशेषेण विरूपनेत्र ! ।

विमानगास्ते प्रणमन्ति चैते प्रसीद देवेश ! जगन्निवास ! ॥

७९

पश्यामि देवेश तवैव देहे चराचराणीह गतागतानि ।

भूतानि चैतानि च भूतवास ! तपःप्रभावाच्च भवत्प्रसादात् ॥

८०

अनेकरत्नान्वितभूषणानां प्रभाभिरादीपितलोकजाल ! ।

तडिद्गुणालङ्कृतमेघकान्ते ! प्रसीद देवेश ! जगन्निवास ! ॥

८१

त्वदीयवक्त्राणि महाद्युतीनि कल्पान्तसूर्यानलसन्निभानि ।

दंष्ट्राकरालानि महास्वनानि बिभेमि पश्यन् भगवन् ! प्रसीद ॥

८२

ब्रह्मत्रिणेत्रप्रमुवांश्च देवान् सयक्षगन्धर्वमहोरगांश्च ।

पश्यामि सर्वास्तव देव ! देहे प्रसीद देवेश जगन्निवास ! ॥

८३

दिशो न जाने न लभे च शर्म सीदाम्यहो ! देववर ! प्रसीद ।

भक्तानुकम्पिन् ! परमार्थरूप ! प्रसीद विष्णो ! भगवन् ! प्रसीद ॥

८४

शङ्करः— “ प्रसीदे ” ति नमस्कृत्य वायुः प्राञ्जलिरास वै ।

प्रीतोऽथ भगवान् विष्णुः शङ्खचक्रगदाधरः ॥

८५

श्रीभूमिसहितो देवो वरदो वायुमब्रवीत् ।

‘वरं वृणीष्व भद्रं ते वायो ! यन्मनसेच्छसि ’ ॥ ८६

वायुः -

‘वरं न याचे देवेश ! श्रीनाथ ! परमेश्वर ! ।

त्वत्सान्निध्यं ममैवेदं नित्यमस्तु रमापते !’ ॥ ८७

वायुं प्रति भगवत्कृतानवरतस्वसान्निध्यवरप्रदानम्

शङ्करः —

एतच्छ्रुत्वा हरिः प्राह देवतानाञ्च सन्निधौ ।

श्रीभगवान्—

‘चतुःषष्टिं त्वयोक्तानां श्लोकानां यः पठेन्नरः ॥ ८८

भुक्तिं मुक्तिं स लभते मत्प्रसादात् न संशयः ।

त्रिसन्ध्यं यः पठेत् भक्त्या पूजयन् मामनन्यधीः ॥ ८९

षण्मासान्मम सान्निध्यं लभते स न संशयः ।

तवास्तु यद्यदिष्टं तत् देवानामपि दुर्लभम् ॥ ९०

अस्य स्कन्दकुमारस्य पूजनं मम नित्यशः ।

आकल्पान्तं मया दत्तं तथा सान्निध्यमत्र वै’ ॥ ९१

शङ्करः —

वायुर्लब्ध्वा वरान् विष्णोः यथावथ सुराऽलयम् ।

आस्ते वृषाचले देवः श्रीभूमिसहितोऽनघे ॥ ९२

अप्रत्यक्षाऽलयो दृश्यो विहरन् गिरिर्मूर्धनि ।

नानाद्रुमलताकीर्णे सर्वर्तुगणसंयुते ॥ ९३

स्वामिवापीसमीपे तु कोटिकन्दर्परूपवान् ।

आस्ते लक्ष्म्या च धरया रमन् षोडशवार्षिकः ॥ ९४

दृष्ट्वा गुह्योऽपि तं देवं चैत्रमासि शुभे तिथौ ।	
आराधयं स्त्रिसन्ध्यं वै देवगन्धर्वकिन्नरैः ॥	९५
नृत्यैरप्सरसाञ्चैव गीतवादिनैःस्वनैः ।	
रमयंश्च रमानाथं उत्तरे गह्वरे गिरेः ॥	९६
कुमारधारिका नाम तत्र निर्झरिणी शुभा ।	
मयूरवाहको देवि ! तस्यास्तीरे वसत्यहो ! ॥	९७
ब्रह्महत्या तु या तस्य दुःसहा धोरूपिणी ।	
सा वृषाचलशृङ्गाग्रे दृष्टमात्रे वहिः स्थिता ॥	९८
स कामयानः शेषाद्रौ नित्यसेवां हररसौ ।	
पुनरागमनं देवि ! पण्मुखो नाभिवाञ्छति ॥	९९
अथ काले गते देवि ! बहुवर्षगणायुते ।	
गरुत्मांस्तु वृषाद्रिं तं काञ्चनं रत्नमण्डितम् ॥	१००
उद्धृत्य 'अहं विष्णुलोकं गमिष्यामी' त्यचिन्तयत् ।	
तज्ज्ञात्वा भगवान् विष्णुर्गरुडं त्वाह सुस्मितः ॥	१०१

श्रीभगवान् -

'पक्षिराज ! महासत्त्व ! शृणु कारणमुत्तमम् ।	
गरुत्मन्निह सर्वे वै वसाम गिरिर्ध्वनि ॥	१०२
त्वं गिरेर्दक्षिणं सानुमासाद्य वस नित्यशः ।	
शेषाऽऽगच्छ वसेह त्वं ताक्ष्याधःशैलरूपधृक् ॥	१०३
तावन्नित्यं मम प्रीत्यै शैलमाश्रित्य सर्वतः ।	
आकल्पान्तं वसामीह जगत्पालनकारणात् ॥	१०४
युगे युगे गिरिरथं नामानि विविधानि वै ।	
गमिष्यति वराण्येव वरदोऽयं वृषाचलः ॥	१०५



कृते वृषाद्रिं वक्ष्यन्ति त्रेतायां गरुडाचलम् ।	
द्वापरे शेषशैलश्च वेङ्कटाद्रिं कलौ युगे ॥	१०६
वेङ्कारोऽमृतबीजन्तु कटमैश्वर्यमुच्यते ।	
अमृतैश्वर्यसङ्घत्वाद्वेङ्कटाद्रिरिति स्मृतः ॥	१०७
विविधा मुनयश्चैव मनुष्याश्च युगे युगे ।	
नारायणाद्रिं वक्ष्यन्ति नामभिः विविधैरमुम्' ॥	१०८
इत्याज्ञाप्य च तौ देवो रमया विहरन् सदा ।	
आस्ते सुरासुरैर्वन्द्यः स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	१०९
आवां गच्छाव तं शैलं गिरिजे ! गणसंयुतौ ।	
नित्यं वसाव तत्रैव पश्यन्तौ गुहमव्ययम् ।	
देवसेनापुलिन्दाभ्यां विहरन्तं वृषाचले' ॥	११०

देव्या सहागतस्य शम्भोः शेषाचलाग्नेयदिगवस्थानम्

नारदः—

इत्युक्त्वा वृषमारूढः पार्वत्या सह शङ्करः ।	
सगणश्च ययौ स्कन्दं द्रष्टुं तं वृषभाचलम् ॥	१११
उषित्वा वसतीस्तिस्रो मार्गे पर्वतमूर्धसु ।	
आराधितस्तदा तत्र देवैः सोमो वृषध्वजः ॥	११२
स जगामास्थिकूटाख्यं वृषभाद्रौ सरोवरम् ।	
मृतानामस्थिकूटानि प्रक्षिप्तानि सरोवरे ॥	११३
येषान्तु पूर्वरूपास्ते समुद्रच्छन्ति तज्जलात् ।	
तस्मात् तदस्थिकूटाख्यमागच्छ सर उत्तमम् ॥	११४
अवरुह्य च तत्तीरे वृषभादुमया सह ।	
स्नात्वा तीर्थे महादेवः पार्वत्या सह शूलभृत् ॥	११५

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ४४३

नत्वा श्रीशं वृषाद्रीशं दृष्ट्वा स्कन्दं ततः परम् ।  
 मयूरवाहनं बालं सोमः सोमकलाधरः ॥ ११६  
 आससाद् सरोमुख्यं शिवः स्वामिसरस्ततः ।  
 स्नात्वा श्रीशाभ्यनुज्ञातः पूर्वदक्षिणतो गिरेः ॥ ११७  
 कपिलस्य सरस्तीरे कापिलं लिङ्गमुत्तमम् ।  
 अपश्यद्गृध्रभारुढः चक्रपूजितमत्र वै ॥ ११८  
 प्रादुर्बभूव सगणः सुदर्शनपुरः शिवः ।

चक्रतीर्थे तपस्यन्तं सुदर्शनं प्रति शङ्करवचनम्

दृष्ट्वा सुदर्शनो देवो नत्वा बद्धाञ्जलिः स्थितः ॥ ११९  
 प्रीतोऽथ भगवानाह सुदर्शनमुमापतिः ।  
 'प्रीतस्ते तपसा चक्र ! यदभीष्टं वृणीष्व ते ॥ १२०  
 ददामि देवैरपि यत् प्रार्थितं दुर्लभञ्च तत् ' ।  
 सुदर्शनो वरं वरे ज्ञात्वा प्रीतञ्च शङ्करम् ॥ १२१  
 'यदि प्रीतो गिरीश ! त्वं अन्तरात्मनि मे वस ।  
 नित्यं भीमश्च सौम्यश्च वरदो मृत्युहा भव ' ॥ १२२

नारदः—

'गिरीशः प्राह सुप्रीतः कालचक्रमनुत्तमम् ।  
 'हेतिराज ! महाबाहो ! पर्याप्तं तपसा तव ॥ १२३  
 विष्णोः वरप्रसादेन स्नेहो मयि तवाधिकः ।  
 प्रागेव दर्शितः सम्यक् शाठ्यं तत्र न किञ्चन ॥ १२४  
 दृष्टवानहमद्य त्वां मां प्रीणयसि किं ! पुनः ।  
 तदलं तपसा देव नाऽवयोर्विद्यतेऽन्तरम् ॥ १२५

अन्तरात्मनि ते वासः प्रार्थितो यस्त्वयाऽनघ ! ।	
तदशक्यं महाचक्र ! विष्णोरन्यस्य कस्यचित् ॥	१२६
अन्तरात्मा हि सर्वेषामेको नारायणः प्रभुः ।	
स्नेहातिशयतस्त्वेवं भवानाहेति मे मतिः ॥	१२७
दक्षिणार्थं तु दत्तस्त्वं चिरमाकाङ्क्षितोऽपि यत् ।	
तल्लैवाशङ्कमानेन हरिणा त्वमुदीरितः ॥	१२८
‘प्रसादय पुनः शम्भु’ इत्याहूय महात्मना ।	
तदेतद्विदितं सर्वं मया योगबलेन वै ॥	१२९
उपायश्चात्र दृष्टो मे त्वयि वासो ममेप्सितः ।	
ममापि हि मतं तावत् त्वया निर्वर्त्यतां सखे ! ॥	१३०
शुद्धसत्त्वस्य तद्विष्णोः सर्वयज्ञमयं वपुः ।	
साक्षात् स्पृष्टुमहं भीतः तमे गुणसमाश्रयः ॥	१३१
वस्तव्यञ्च मया विष्णोः दिव्यमङ्गलविग्रहे ।	
त्वामेव तदहं नित्यं विष्णोः नित्यानपायिनम् ॥	१३२
अनुप्रविश्य तद्देहे वसिष्यामि सुदर्शन ! ।	
एवंसति ममाभीष्टं प्रार्थितं च तवाद्भुतम् ॥	१३३
उभयं प्रार्थ्यते तस्मात् कुरुष्व वचनं मम ।	
ज्वालामालावृतो नित्यं बह मां हृदये स्थितम् ॥	१३४
सुवर्णाभं शतभुजं अष्टाविंशतिहस्तकम् ।	
अथवा षोडशभुजं अष्टबाहुं चतुर्भुजम् ॥	१३५
ज्वालाकेशं त्रिनयनं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।	
अर्चयिष्यन्ति मां लोके वसन्तं त्वयि नित्यशः ॥	१३६
उपचारैः तथा साङ्गैः पीठे शैवे च वैष्णवे ।	
पुरुषा वा स्त्रियो वाऽपि भवन्तु फलभागिनः । ॥	१३७

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः

४४५

इति दत्त्वा वरं तस्मै वरदो वृषभध्वजः ।

आस्ते तत्रेश्वरो नित्यं अदृश्यः सगणस्तटे ॥

१३८

वरं लब्ध्वाऽथ चक्रोऽपि पञ्चायुधसरो ययौ ।

आसाद्य स्वं सरोऽदृश्यः तपश्चरति नित्यशः ' ॥

१३९

शतानन्दः —

‘श्रुत्वैतन्मुनयः प्रीता आख्यानं नारदेरितम् ।

सार्द्धं वाल्मीकिना सर्वे जग्मुस्त वृषभाचलम् ॥

१४०

अहं तैरभ्यनुज्ञातो मिथिलामागतो नृप ! ।

इति ते कथितं सर्वमाख्यानं तु यथाश्रुतम् ’ ॥

१४१

व्यासः —

‘श्रुत्वा सविस्तरं वाक्यं अद्भुतं रोमहर्षणम् ।

पुनः प्रीतोऽभवद् राजा शतानन्दं पुरोधसम् ॥

१४२

‘शृण्वतस्ते कथां ब्रह्मन् ! तृप्तिर्मे नोपजायते ।

भूयः कथय मे ब्रह्मन् ! वेङ्कटाद्रीश्वरं प्रति ’ ॥

१४३

व्यासः —

शतानन्दः पुनः प्राह जनकं मिथिलापतिम् ।

‘वक्ष्यामि विस्तरेणाऽहं सावधानमनाः शृणु ॥

१४४

वामदेवेन मुनिना कथितां जनकाय वै ।

निमिपुत्राय च पुरा कथां यज्ञान्तरे नृप ! ’ ॥

१४५

इति श्रीवामनपुराणे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये वायुं प्रति भगवत्सन्निध्य-

वरप्रदानादिवर्णनं नाम

चतुर्विंशोऽध्यायः ।

अथ पञ्चविंशोऽध्यायः



जनकं प्रति शतानन्दोक्तभगवदाविर्भावकथोपोद्धातः

शतानन्दः—

- पुरा तु जाह्नवीतीरे जनकं शंसितव्रतम् ।  
 अश्वमेधे महायज्ञे दीक्षितं मुनयोऽभ्ययुः ॥ १
- तानभ्यर्च्य मुनीन् सर्वान् राजा स ऋषिसत्तमान् ।  
 जनकः प्रीतिसंहृष्टो वाक्यमेतदुवाच ह ॥ २
- ‘अद्य मे सफलं जन्म सुतसञ्च महत्तपः ।  
 सङ्गम्य यूयमस्माकं यज्ञवाटमिहागताः ’ ॥ ३
- तेनैव मुनयः सर्वे संहृष्टाः परमां मुदम् ।  
 ययुस्तत्र निशामेकां अवसन् मुनिसत्तमाः ॥ ४
- बहु संभाषमाणानां अन्योन्यं वै महात्मनाम् ।  
 पर्यस्ता रजनी चापि प्रातःकालो ह्यवर्तत ॥ ५
- कृत्वा प्रातस्तर्नीं सन्ध्यां मुनयश्च समागताः ।  
 यज्ञवाटं महात्मानो जनको यत्र तिष्ठति ॥ ६
- नारायणकथाश्चापि कथयन्तः परस्परम् ।  
 आसीनास्तत्र ते सर्वे जनकेन महात्मना ॥ ७
- तस्मिन् काले महातेजाः पर्यटन् पृथिवीमिमाम् ।  
 ब्रह्मर्षिः वामदेवस्तु सङ्गतो मुनिसत्तमः ॥ ८
- अभ्युत्थितास्ततः सर्वे ऋषयो वेदपारगाः ।  
 पप्रच्छुः सङ्गताः सर्वे वामदेवं द्विजोत्तमम् ॥ ९
- ‘भूरियं वामदेवाद्य परिक्रान्ता त्वया विभो ! ।  
 श्रोतुमिच्छामहे त्वत्तो नारायणकथां शुभाम् ॥ १०

क वा वसति देवेशः श्रीनिवासो जगत्पतिः ? ।

उत्कण्ठा विद्यते चाऽस्य जनकस्य महात्मनः । ११

इति तैः परिपृष्टस्तु वामदेवस्तदाऽब्रवीत् ।

‘नारायणगिरिर्नाम भूधरेन्द्रो द्विजोत्तमाः ! ॥ १२

इतो दक्षिणतश्चापि द्विशते योजने पुनः ।

तत्र देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ॥ १३

वसन्ति नियताऽऽहारा वेङ्कटाह्वयभूधरे ।

अहमप्यागतस्तत्र भूधरेन्द्रे द्विजोत्तमाः ॥ १४

अगस्त्यं नारदञ्चैव पुलस्त्यं पुलहं तथा ।

ऋतुमाङ्गिरसञ्चैव दक्षं जाबालिमेव च ॥ १५

योगाभ्यासरतांस्तांस्तु दृष्ट्वाऽहं पुनरब्रुवम् ।

किमत्र संज्ञता यूयमासीनाः पर्वते द्विजाः ॥ १६

इति पृष्टास्तु ते सर्वे प्रत्यूचुर्मे न किञ्चन ।

अगस्त्यः परमर्षिस्तु मामाह्वय महायशाः ॥ १७

उवाच मुनिशार्दूलो निवासे तत्र कारणम् ।

‘भगवन्तमुपासीनो नारदो योगवित्तमः ॥ १८

वसन् गोदावरीतीरे न ददर्श श्रियःपतिम् ।

वैकुण्ठे तु परे लोके तेनोद्विग्नमना मुनिः ॥ १९

ब्रह्माणं समुपागम्य पर्यपृच्छत् सनातनम् ।

‘निवासः सर्वभूतानां परमात्मा सनातनः ॥ २०

क प्रयातः परो देवः ? तन्मे ब्रूहि पितामह ! ’ ।

इति पृष्टस्तदा तेन ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ २१

‘ध्यात्वा चिरमुवाचेदं नारदं प्राञ्जलिं स्थितम् ।

नारायणगिरिर्नाम भूमौ कापि महासुने ! ॥ २२

तस्मिन् हि रमया सार्धं 'रमते पुरुषोत्तमः ।	
प्रीतिः सुमहती जाता तस्मिंस्तु गिरिमूर्धनि ॥	२३
गच्छ नारद ! सर्वेशं द्रष्टुमिच्छसि चेत्प्रमुम् ।	
इति तेन समादिष्टो नारदो मुनिसत्तमः ॥	२४
ततस्तस्मादपाक्रम्य सशैलेन्द्रमुपागमत् ।	
आगच्छन्तं वयं सर्वे सङ्गताः पथि नारदम् ॥	२५
अस्माभिः सह सङ्गत्य पर्वतेन्द्रमुपागमत् ।	
ततश्चतुर्मुखश्चापि देवैः सह समागतः ॥	२६
अस्माभिः सहितः पूर्वं तस्मिन्पर्वतसत्तमे ।	
चचार भगवान् ब्रह्मा परमात्मानमव्ययम् ॥	२७
अदृष्ट्वा नारदं चास्मान् इत्युवाच पितामहः ।	
'यावत्यः सरितश्चास्मिन् सरांसि च महामुने ॥	२८
याश्च सन्ति महापुण्याः पुष्करिण्यः शुभोदकाः ।	
तटाकान्युदपानानि तथा प्रस्रवणानि च ॥	२९
वाप्यश्च सर्वदा पुण्या हृदाश्च मुनिसेविताः ।	
यानि सन्त्येवमादीनि पुण्येऽस्मिन् पर्वतोत्तमे ॥	३०
तानि सर्वाणि विप्रेन्द्र ! सेवमानः समन्ततः ।	
कुर्वन् प्रदक्षिणञ्चैव विचरस्व महीधरम् ॥	३१
यावता भगवान् देवः कालेन द्रक्ष्यते हरिः ।	
तावत्कालमिहैव त्वं विचरस्व महामुने !' ॥	३२
इत्युक्त्वा भगवान् देवो ब्रह्मा लोकपितामहः ।	
स्वानुगैः सह देवैश्च तत्तैवान्तरधीयत ॥	३३
वामदेवः— अगस्त्योऽथ महीपाल ! तैरेव मुनिभिः सह ।	
प्रणम्य तस्मै देवाय ब्रह्मणेऽव्यक्तजन्मने ॥	३४

चिन्तयन् वासुदेवाख्यं परब्रह्मस्वरूपिणम् ।

द्रष्टुकामश्च तं देवं वृषभाद्रिनिवासिनम् ॥

३५

अगस्त्यस्य शेषाचलवायव्यदिशि महाभूतविलोकनम्

अतीत्य पश्चिमं भागं पर्वतस्य महीयसः ।

उदीचीं दिशमभ्यायात् तपसा च समन्वितः ॥

३६

चिन्तयन् देवदेवेशं भूपाल ! हरिमीश्वरम् ।

संस्मरन् ब्रह्मणो वाक्यं विचचार ततस्ततः ॥

३७

ऋषिभिः सहितः सर्वैः तपसा भावितात्मभिः ।

आदित्यकल्पतेजोभिः जटामण्डलधारिभिः ॥

३८

संयुक्तो विचरंस्तत्र भूपते ! पर्वतोत्तमे ।

वायव्यां दिशि चाद्राक्षीत् इदमाश्चर्यमुत्तमम् ॥

३९

“ शुद्धस्फटिकसङ्काशा तत्राऽसीन्महती शिला ।

दर्शनीयतमा स्निग्धा विस्तीर्णा विमला शुभा ॥

४०

तस्यां शिलायामास्ते स्म समुच्छ्रिततनुः पुमान् ।

दीप्यमानः स्ववपुषा पर्वतेन्द्र इवापरः ॥

४१

महाबाहुः विशालाक्षो महादंष्ट्रो महाहनुः ।

रक्तमाल्याम्बरधरो रक्तगन्धानुलेपनः ॥

४२

बिभ्रद्रक्ते तथा दिव्यकुण्डले रत्नभूषिते ।

बिभ्रच्चन्द्रप्रतीकांश्च स्निग्धहेमविभूषितम् ” ॥

४३

अनेकरत्नसन्ध्यैः भूषणैः सुविभूषितम् ।

श्यामं नानाविधैः रत्नैः शोभमानकिरीटकम् ॥

४४

तमुपेत्य महाकायं महावीर्यं महाभुजम् ।

अगस्त्यो विस्रयाऽऽविष्टो भूयो भूयोऽन्ववैक्षत ॥

४५



ततस्तमृषिशार्दूलः प्राह चैवं वचो नृप ! ।

प्रणम्य तस्मै देवाय ज्वलद्वास्करतेजसे ॥ ४६

अगस्त्यः—

‘को भवान् सुमहावीर्य ! कस्य वा प्रियदर्शन ! ।

एतन्नस्त्वं तु तत्त्वेन पृच्छतां ब्रूहि नानृतम्’ ॥ ४७

वामदेवः—

एवमुक्ते ततस्तेन नरेन्द्र ! मुनिना तदा ।

शृण्वतां प्रीतिदायिन्या वाचा मधुरया गिरा ॥ ४८

महौजसं मुनीन्द्रं तं न किञ्चित्प्रत्यभाषत ।

स्तुवन्तञ्च तदाऽगस्त्यमुदैक्षत पुनः पुनः ॥ ४९

पश्यताञ्चैव सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् ।

अन्तर्दधे महातेजाः तदद्भुतमिवाभवत् ॥ ५०

ततस्ते मुनयः सर्वे विस्मयोत्कुललोचनाः ।

“अहो दृष्टम् ! अहो दृष्टम् आश्चर्य्य” मिति चाब्रुवन् ॥ ५१

‘दर्शयित्वा महाश्चर्य्यं रूपं भास्करसन्निभम् ।

मायया मोहयित्वाऽस्मान् सद्यो ह्यन्तरधीयत’ ॥ ५२

इति ब्रुवन्तस्ते सर्वे मुनयोऽद्भुततेजसः ।

प्रणम्य तस्मै देवाय व्यचरंस्तं महीधरम् ॥ ५३

संवृतो मुनिभिः सर्वैः अगस्त्यो भगवांस्तदा ।

तमेव देवदेवेशं द्रण्डुकामोऽनपायिनम् ॥ ५४

भागं परित्यज्य नरेन्द्र ! पश्चात् नारायणाद्रेः विमलं विशालम् ।

द्विजेन्द्रवर्यः सहसा महात्मा तस्योत्तरं भागमथ प्रपेदे ॥ ५५

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवदाविर्भाव-

उपोद्धातो नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ।



शेषाचलोत्तरदिशि अगस्त्यादिकृतभगवदन्वेपणप्रकारः

वामदेवः—

ततस्तस्मिन् महातेजाः विचरन् पर्वतोत्तमे ।	
उत्तरं भागमाश्चर्यं ददर्शद्वितदर्शनम् ॥	१
लम्बमानमहाशाखैः जम्बूवृक्षैश्च पाण्डुरैः ।	
शुद्धस्फटिकसङ्काशैः फलवद्भिः सुशोभितम् ॥	२
सरितः पुण्यदास्तत्र ददर्श विमलोदकाः ।	
सर्वपापहराः शुद्धाः शतशः शुभदर्शनाः ॥	३
सर्वासु तासु पुण्यासु सरित्सु विमलसु च ।	
मुनीन्द्रो मुनिभिः सार्धं कृतशौचो यथाविधि ॥	४
स्नानं चक्रे प्रयत्नेन प्रयतः सुसमाहितः ।	
चिन्तयन् वासुदेवाख्यं हृदि नारायणं हरिम् ॥	५
कृत्वा स्नानक्रियाः सर्वाः अर्चयामास केशवम् ।	
अर्चयित्वा जगन्नाथं जगाम सुसमाहितः ॥	६
नरेन्द्र ! मुनिभिः सार्द्धं द्रष्टुकामः सुरेश्वरम् ।	
विचरन् सर्वशस्तत्र मुनीन्द्रः पर्वतोत्तमे ॥	७
ददर्श चोत्तरं भागं शोभितं विविधैः द्रुमैः ।	
मेघैः शैलनिभैश्चापि शोभितं शुभदर्शनम् ॥	८
मृगसर्पमहाव्यालद्विजसङ्घनिषेवितम् ।	
बहुपुष्पलतान्निश्च सुसञ्चलमहीतलम् ॥	९
सुखवातानुचरितं शीतोदकतटाककम् ।	
अमरैः गीयमानञ्च पिबद्भिः पुष्पजं मधु ॥	१०

शैलकन्दरनिष्क्रान्तैः कोविलैः मधुरस्वनैः ।	
सुस्वरैर्गीयमानश्च गन्धर्वैस्तु निषेवितम् ॥	११
नृत्यद्विश्च महापक्षैः मयूरैरुपशोभितम् ।	
अश्वत्थप्लक्षविल्वैश्च शोभितं बहुशाखिभिः ॥	१२
तिलकैः पुष्पितैश्चापि कृतमालैश्च पुष्पितैः ।	
करञ्जैः कोविदारैश्च पाटलैश्चापि पुष्पितैः ॥	१३
अङ्गोलैः मातुलुङ्गैश्च शोभितं चित्रशाखिभिः ।	
शिरीषशिशिपोत्तालहिन्तलपनसैस्तथा ॥	१४
तिमिशैः नक्तमालैश्च स्यन्दनैः चन्दनैस्तथा ।	
बकुलैः पुष्पितैश्चापि राजद्विः रक्तचन्दनैः ॥	१५
एवं बहुविधैर्वृक्षैः नानाशाखोपशोभितैः ।	
शोभितं शुभगन्धाढ्यं नानाधातुसमन्वितम् ॥	१६
पर्वतस्योत्तरं भागं मणिप्रवरसेवितम् ।	
ददर्श नृपते ! धीमान् मुनिभिर्भगवांस्तदा ॥	१७
अथ तैर्मुनिभिः सार्वं विचरन् गिरिमूर्धनि ।	
ददर्श दिव्यामाश्चर्यात् पद्मिनीं पद्मशोभिताम् ॥	१८
उत्फुल्लैरुत्पलैश्चापि प्रफुल्लैः कुसुमैस्तथा ।	
शोभितां शुभगन्धाढ्यां प्रसन्नसलिलां शुभाम् ॥	१९
इन्दुस्फटिकसङ्काशां राजहंसनिषेविताम् ।	
सिंहव्याघ्रमुगैश्चापि निनदद्भिर्निषेविताम् ॥	२०
जलार्थिभिश्च मातङ्गैः शोभितां शुभदंष्ट्रिभिः ।	
क्रौञ्चैः प्लवङ्गैः वाराहैः शोभितां शुभदर्शनैः ॥	२१
अधिकं शोभमानां तां कूजद्विश्च विहङ्गमैः ।	
सेवितां देवगन्धर्वयक्षविद्याधरादिभिः ॥	२२

एवमत्यद्भुतां तां तु सर्वदुःखप्रणाशिनीम् ।

दृष्ट्वा स विस्मयाविष्टो मुनीन्द्रः प्राह तान् मुनीन् ॥ २३

अगस्त्यः — 'अस्यां स्नात्वाऽथ गच्छामो दिशं प्राचीं महागिरेः ।

लोकेऽस्मिन् श्रूयते चैषा पापहानिप्रदेति वै ॥ २४

सर्वपापहरा शुद्धा पद्मिनी लोकविश्रुता ।

सर्वदुःखहरा चापि सर्वतीर्थफलप्रदा ' ॥ २५

एवमुक्त्वा तु तैः सार्धं ऋषिभिः भावितात्मभिः ।

निवेश्य हृदि देवेशं ममज्ज सहसा जले ॥ २६

स्नानं कृत्वाऽथ देवेशं प्रणम्यात्मनि तं प्रति ।

अभ्यर्च्य च हृषीकेशं वासुदेवं सनातनम् ।

विचचार यथापूर्वं ऋषिभिः सहितो मुनिः ॥ २७

अगस्त्यादीनां सनत्कुमारविलोकनपूर्वकं पूर्वदिग्गमनम्

तस्या एवोत्तरे तीरे वृक्षमूलं समाश्रितान् ।

समाहितान् समासीनान् पद्मिन्याः सुमहौजसः ॥ २८

दक्षिणाभिमुखान् भूप ! योगीन्द्रान् स ददर्श ह ।

सनत्कुमारप्रमुखान् भगवन्न्यस्तमानसान् ॥ २९

भक्त्या परमया युक्तान् निमीलितविलोचनान् ।

तान् दृष्ट्वा सहसा हृष्टो योगीन्द्रान् योगपारगान् ॥ ३०

तेषां समीपमभ्यागात् अगस्त्योऽथ महामुनिः ।

तमायान्तं ततो दृष्ट्वा मुनीन्द्रं मुनिभिः सह ॥ ३१

सनत्कुमारप्रमुखाः योगीन्द्राः तमपूजयन् ।

सङ्गम्य सहिताः सर्वैः योगीन्द्रैः मुनिपुङ्गवैः ॥ ३२

सम्पूजितो यथान्यायं ततस्तैः मिथिलेश्वर ! ।

अथ तान् मधुरं वाक्यमुवाचेदं महामुनिः ॥ ३३

- अगस्त्यः— 'किमत्र दृष्टमाश्चर्यं? को वाऽत्र वसते पुमान्? ।  
 युष्माभिश्चिन्त्यमानः कः किं वा यूयं समागताः? ॥ ३४  
 एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं एतन्मे शंसताऽमलः! ।  
 एवं पृष्टास्तदा तेन मुनिना भावितात्मना ॥ ३५  
 सनत्कुमारप्रमुखाः योगीन्द्राः तमथाब्रुवन् ।  
 'सर्वात्मा भगवान् विष्णुः वसत्यस्मिन् महागिरौ ॥ ३६  
 चिन्तनीयः स एवैको मुनीन्द्र! पुरुषोत्तमः ।  
 तमचिन्त्यं विधातारं चिन्तयामोऽनपायिनम् ॥ ३७  
 नान्यं वयं जगन्नाथात् चिन्तयामो जनार्दनात् ।  
 द्रक्ष्यसे तं महात्मानं त्वं चापि पुरुषोत्तमम् ॥ ३८  
 अचिरेणैव कालेन ब्रह्मभूतं सनातनम् ।  
 नारायणं हरिं विष्णुं सर्वलोकपरायणम् ॥ ३९  
 दृष्टवन्तो वयं चापि सकृत्तममरार्चितम् ।  
 वेङ्कटाख्यगिरावस्मिन् पूर्वं पुण्यप्रदायिनि ॥ ४०  
 अस्त्यन्यादृष्टमाश्चर्यं प्राच्यां दिशि महामुने! ।  
 पर्वतस्यास्य दिव्यस्य शृणु तद्वदतां वर! ॥ ४१  
 शक्रश्च सहितो देवैः साक्षात् वज्रधरः स्वयम् ।  
 द्रष्टुं कामो गिरा वस्मिन् वसत्यव्यक्तरूपिणम् ॥ ४२  
 त्वं चापि सुरलोकेशं द्रक्ष्यसे तं शचीपतिम् ।  
 एतैः सार्धं मुनीन्द्रैस्त्वं प्राचीं गच्छ शुभां दिशम्' ॥ ४३  
 वामदेवः— इत्युक्त्वाऽन्तर्हिताः सर्वे मुनीन्द्रास्तं महौजसः ।  
 सनत्कुमारप्रमुखाः तद्भुतमिवाभवत् ॥ ४४  
 अन्तर्हितेषु सर्वेषु योगीन्द्रेषु महात्मसु ।  
 अगस्त्यो मुनिभिः सार्धं सर्वैस्तैः मुनिसत्तमः ॥ ४५

पराजितायामद्राक्षीत् आश्चर्यं दिशि भूपते ! ।	
तस्यां दिशि महावृक्षः इन्द्रकेतुरिवोच्छ्रितः ॥	४६
लम्बमानमहाशाखः पुष्पभारनिपीडितः ।	
आसीदाच्छादयन् सर्वं भूधरं छायाया नृप ! ॥	४७
तन्मूले तु समासीनाः आदित्यसमतेजसः ।	
सप्तर्षयो महात्मानो भगवन्न्यस्तमानसाः ॥	४८
तान् दृष्ट्वा स मुनिस्तेषां समीपमगमन् नृप ! ।	
अगस्त्यो मुनिभिः सार्धं तपसा भावितात्मभिः ॥	४९
तमायान्तं ततो दृष्ट्वा मुनयो यमिनां वरम् ।	
स्नेहान्विता यथान्यायं महात्मानमपूजयन् ॥	५०
ततोऽब्रवीन्महातेजाः अभिवाद्य च तान् मुनीन् ।	
अर्थवन्मधुरं वाक्यं प्रश्रयान्मृदुलाक्षरम् ॥	५१

अगरत्यः—

‘किमर्थमागता यूयं दिव्येऽस्मिन् पर्वतोत्तमे ? ।	
को वा ध्येयो महादेवो युष्माकं मुनिसत्तमाः ? ॥	५२
एतदाख्यात मे यूयं सर्वं सत्येन पृच्छतः ।	
पृच्छामि श्रोतुकामोऽहं कौतूहलसमन्वितम् ॥	५३

वामदेवः—

एवं पृष्टस्तदा तेन मुनिना मुनिपुङ्गवाः ।	
इदं प्रोचुर्महात्मानं ‘वक्ष्यामः श्रूयता’ मिति ॥	५४

ऋषयः—

‘वयमत्रागता ब्रह्मन् ! द्रष्टुं देवं जनार्दनम् ।	
नारायणं विशालक्षं जगत्तातारमीश्वरम् ॥	५५

स एव देवः सर्वात्मा ध्येयो नः पुरुषोत्तमः ।  
 न चान्यो विद्यते ध्येयः तमृते जगतां प्रतिम् ॥ ५६  
 तमजं सर्वलोकेशं कृष्णमच्युतमीश्वरम् ।  
 पूज्यं वरेण्यं वरदं चिन्तयिष्यामहे वयम् ॥ ५७  
 त्वं चापि सर्वलोकेशं द्रष्टाऽसि कमलेक्षणम् ।  
 सिंहाख्ये पर्वते ह्यस्मिन् गच्छ प्राचीं दिशं मुने' ॥ ५८

वामदेवः—

एवमुक्तो मुनिश्रेष्ठैः नृपश्रेष्ठ ! महामुनिः ।  
 अभ्यनुज्ञाय तान् सर्वान् जगाम मुनिसत्तमः ॥ ५९  
 चिन्तयन् मनसा देवं विश्वकर्तारमीश्वरम् ।  
 चिन्तयन् मनसा वाक्यं पितामहसमीरितम् ।  
 जगाम सहसा दिव्यां दिशं प्राचीं गिरेस्ततः ॥ ६०  
 नृपेन्द्र ! दृष्ट्वा भगवानगस्त्यः तस्योत्तरं भागमदृष्टपूर्वम् ।  
 तत्राऽप्यदृष्ट्वा भगवन्तमाद्यं द्रष्टुं तदा पूर्वमथ प्रपेदे ॥ ६१  
 इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यादीनां  
 सनत्कुमारादिदर्शनपूर्वकं भगवदन्वेषणप्रकारादिवर्णनं  
 नाम षड्विंशोऽध्यायः ।



## अथ सप्तविंशोऽध्यायः



### शेषाचलपूर्वदिशि अगस्त्यादीनां अद्भुतवस्तुदर्शनम्

वामदेवः—

- अथ पूर्वा समासाद्य दिशं तां मुनिभिः सह ।  
नारायणगिरेस्तस्य द्रुममण्डलभूषिताम् ॥ १
- विचचार यथापूर्वं सहितस्तैः महात्मभिः ।  
ज्वलद्भास्करतेजोभिः मुनिभिः भावितात्मभिः ॥ २
- सोऽपश्यद्गिरिशृङ्गाभान् वृक्षान् पुष्पफलान्वितान् ।  
लम्बमानमहाशाखान् मृदुपल्वशोभितान् ॥ ३
- समदान् वारणांश्चापि सुदंष्ट्रान् सम्यगुच्छ्रितान् ।  
नदतश्च महासिंहान् वराहांश्चापि धावतः ॥ ४
- गुह्यकिन्नरगन्धर्वान् यक्षाद्यांश्च सहस्रशः ।  
एवमाद्यैस्तथाऽन्यैश्च शोभितं पर्वतोत्तमम् ॥ ५
- पश्यन् समन्तात् सोऽगस्त्यो विचचार महामुनिः ।  
विचरन् स ददर्शार्थं मुनिप्रवरसेवितम् ॥ ६
- महाभागं महापुण्यं मृगयूथपसेवितम् ।  
नित्यपुष्पफलोपेतैः द्रुमैः नानाविधैर्युतम् ॥ ७
- मत्तद्विपानुचरितं मत्तकोकिलनादितम् ।  
महद्भिरुच्छ्रितैः शृङ्गैः शोभनीयैश्च शोभितम् ॥ ८
- भयङ्करमहानागं महासानुं शुभावहम् ।  
उच्छ्रितामलकैश्चापि फलवद्भिश्च शोभितम् ॥ ९
- एवंभूतं महाश्चर्यं महाभोगं महागिरिम् ।  
अगस्त्यो भगवान् पूर्वा दिशं दृष्ट्वा महागिरेः ॥ १०



दृष्ट्वाऽथ विचचाराशु मुनिभिस्तैः समावृतः ।	
तत्राद्भुतमथापश्यत् अगस्त्यः पर्वतोत्तमे ॥	११
बिलं पातालसङ्काशं पश्यतां भयदायकम् ।	
महान्तं भैरवं दुर्गं अदृष्टं मानुषैर्नृप ! ॥	१२
निपतेयुर्हि पश्यन्तो नरा यस्मिन् विमोहिताः ।	
तद्विलं समुपागम्य मुनीन्द्रो मुनिभिः सह ॥	१३
पुनः पुनर्निरीक्ष्येदं वचः प्रोवाच घर्मवित् ।	

अगस्त्यः—

‘ दृष्ट्वा चैवंविधं सर्वं निपतिष्यन्ति मोहिताः ॥	१४
मानवा द्रष्टुकामा ये समारूढा महीधरम् ।	
तस्मादेतन्न चैवास्मिन् भवेदिति मतिर्मम ॥	१५
बिलन्तु भैरवं घोरं मृत्युवक्तसमं गिरौ ’ ।	

वामदेवः—

इत्युक्तो मुनिना तेन सद्यश्चान्तर्हितं बिलम् ॥	१६
अगस्त्यस्य प्रभावेण तदद्भुतमिवाभवत् ।	
अन्तर्हिते ततस्तस्मिन् विचचार महामुनिः ॥	१७
तस्मिन्नेव महापुण्ये वेङ्कटाख्ये महागिरौ ।	
ददर्शाऽथ चिरं तत्र शतशाखसमुच्छ्रितम् ॥	१८
सालं महाद्भुताकारं मृदुपल्लवशोभितम् ।	
महान्तं महदाश्चर्यं अदृष्टं भुवि मानुषैः ॥	१९
तं दृष्ट्वा शीघ्रमभ्यायात् अगस्त्योऽथ महामुनिः ।	
तत्समीपे महातेजाः विसर्वाविष्टचेतनः ॥	२०

भगवतः साक्षात्काराय तपः कुर्वन्तं इन्द्रं प्रति अगस्त्योक्तिः

- तमुपेत्य महासालं मुनीन्द्रो मुनिभिः सह ।  
ददर्श शक्रमासीनं देवं साक्षात् शचीपतिम् ॥ २१
- सालस्कन्धप्रतीकाशबाहुशाखं शतक्रतुम् ।  
रत्नजालोपसम्पन्नमकुटेन विराजितम् ॥ २२
- वैडूर्यमणिरत्नाढ्यकुण्डलाभ्यामलङ्कृतम् ।  
वज्रपाणिं विशालक्षं नारायणमिवापरम् ॥ २३
- सूर्याग्नियमवस्वश्चिकुबेरवरुणैस्तथा ।  
गन्धर्वकिन्नरेन्द्रैश्च शुभकुण्डलधारिभिः ॥ २४
- दिव्याम्बरधरैरारात् सर्वैः समुपसेवितम् ।  
तं दृष्ट्वा नृपते ! देवं देवजन्मा महामुनिः ॥ २५
- तत्समीपं महातेजाः सहसा व्यगमत्तदा ।  
संवृतं देवदेवेशं त्रैलोक्याधिपतिं द्विजः ॥ २६
- मुनिभिः सहितः सर्वैः अपूजयदरिन्दमम् ।  
देवाश्च सह शक्रेण मुनीन्द्रानागतांस्तथा ॥ २७
- अपूजयन् यथान्यायं स्थिताः सार्धं महात्मना ।  
तानुवाच सशक्रांस्तु ततोऽगस्त्यः सुरोत्तमान् ॥ २८
- ‘श्रूयता’ मिति चाभाष्य प्रहसन्निव विस्मितः ।  
‘किमर्थमागता यूयं किं वा चिन्तयताऽमराः ! ॥ २९
- आश्चर्यञ्चापि किं दृष्टमस्मिन् पुण्ये नगोत्तमे ? ।  
एतत् सत्येन मे सर्वं आख्येयं त्रिदशेश्वराः ! ॥ ३०
- श्रोतुमिच्छाम्यहं त्वेतत् युष्माभिः समुदीरितम् ।

वामदेवः —

अगस्त्येनैवमुक्तास्ते सर्व एव ततः सुराः ॥ ३१

एवमूचुः मुनिश्रेष्ठं नृपश्रेष्ठाऽसुरार्दनाः ।	
‘द्रष्टुक्त्रमा वयं देवं पद्मपत्रनिमेक्षणम् ॥	३२
नारायणं हृषीकेशं शङ्खचक्रगदाधरम् ।	
प्रणतार्तिहरं विष्णुं ब्रह्मभूतं सनातनम् ॥	३३
समागम्य मुनिश्रेष्ठ ! सिंहाख्येऽस्मिन् नगोत्तमे ।	
जयं देवजिदादीनां दैत्येन्द्राणां महौजसाम् ॥	३४
प्रार्थयामो वयं ब्रह्मन् ! देवदेवात् जनार्दनात् ।	
तं द्रष्टुमजरं देवं समासीनं महौजसम् ॥	३५
चिन्तयन्तस्तमेवेशं सृष्टिस्थित्यन्तकारणम् ।	
एवमूचुर्मुनिश्रेष्ठं नृप श्रेष्ठाऽसुरार्दनाः ॥	३६
स एव भगवान् देवो ध्येयोऽस्माभिः सनातनः ।	
नान्यो ध्येयः पुमान् यस्मात् विद्यते न च दृश्यते ॥	३७
दृष्टं चापि महाश्वर्यं पर्वतेऽस्मिन् महामुने ! ।	
शुभे तु दक्षिणे भागे गिरेरस्य महीयसः ॥	३८

इन्द्रोक्त्या अगस्त्यस्य शङ्करदर्शनाय आग्नेयदिग्गमनम्

आश्चर्यभूतो भगवान् वसतीशः सदा हरः ।	
पिनाकपाणिः सर्वात्मा सर्वशक्तिः महेश्वरः ॥	३९
स्वैरेव संवृतो भूतैः किन्नरोरगराक्षसैः ।	
तत्र गत्वा च देवेशं द्रष्टाऽसि भुवनेश्वरम् ॥	४०
ऋषिं दुर्वाससञ्चापि नन्दिकेश्वरमेव च ।	
ये चाप्यनुचरास्तत्र तांश्चापि द्रक्ष्यसे मुने ! ॥	४१
इतो गच्छ हितं देशं यत्राऽऽस्ते भगवान् हरः ।	
एभिर्मुनिवैरैः सार्धं मा विलम्बितुमर्हसि ॥	४२

- वामदेव — एव मुक्तः सुरैः सर्वैः अभ्यनुज्ञाय तान् सुरान् ।  
 पूर्वभागं विहायाथ भूधरस्य महीयसः ॥ ४३
- अभ्यगात् दक्षिणं भागं तैरेव मुनिभिः सह ।  
 स पश्यन् दक्षिणं भागं अगस्त्योऽथ महामुनिः ॥ ४४
- आग्नेय्यां दिशि चाद्राक्षीदिदमाश्चर्यमुत्तमम् ।  
 शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गशक्तिलाङ्गलनन्दकान् ॥ ४५
- स्वैः स्वै रूपैः समासीनान् भ्राजयद्भिः दिशो दश ।  
 दिव्याभरणमालाभिः भ्राजितान् शुभदर्शनान् ॥ ४६
- रक्तचन्दनदिग्धाङ्गान् दिव्यमाल्योपशोभितान् ।  
 शुभनृपुरकेयूरकटकादिविभूषितान् ॥ ४७
- अथ तान् सहसा दृष्ट्वा मुनीन्द्रः पुरुषर्षभान् ।  
 तेषां समीपमागम्य सहर्षो मुनिभिः सह ॥ ४८
- अगस्त्यश्च ततस्तेभ्यः प्रणाममकरोत्तदा ।  
 प्रणम्य प्राञ्जलिर्भूत्वा प्रस्तूय च महाद्युतिः ॥ ४९
- कृत्वा प्रदक्षिणञ्चापि दक्षिणां दिशमभ्यगात् ।  
 अत्यन्तं विस्मयाऽऽविष्टो मुनिभिः सहितो नृप । ॥ ५०
- आदिदेवं महादेवं द्रष्टुकामो जनार्दनम् ।  
 आश्चर्यरूपमारुह्य प्रेक्षमाणो महागिरिम् ॥ ५१
- परीत्य तस्यैव नगोत्तमस्य प्राचीं दिशं देवगणाभिजुष्टाम् ।  
 अवाप्य तस्यैव गिरेर्महात्मा तं दक्षिणं भागमसौ प्रपेदे ॥ ५२
- इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यस्य  
 शेषाचलवासीन्द्रादितपःप्रकारभगवद्दिव्यायुधदर्शनादिवर्णनं  
 नाम सप्तविंशोऽध्यायः ।

अथ अष्ट विंशोऽध्यायः



अगस्त्यकृतशेषाचलदक्षिणभागस्थशङ्करसेवाक्रमः

शमदेवः—

तस्याथ दक्षिणं भागं भूधरस्य महीयसः ।	
अवाप परया प्रीत्या मुनीन्द्रो मेघसन्निभम् ॥	१
शुभगुल्मलतागूढं नानापादपसङ्कुलम् ।	
मार्जारैः वानरैश्चापि गोपुच्छैश्च निषेवितम् ॥	२
फलवद्भूमस्वण्डैश्च पुष्पभारनिपीडितैः ।	
दर्शनीयतमैः दिव्यैः शोभितं शुभशाखिभिः ॥	३
भिन्नाञ्जनचयाकारं शिलाभिरुपशोभितम् ।	
हंससारसगृध्रैश्च शतपत्नैश्च शोभितम् ॥	४
शोभितं रमणीयैश्च चक्रवाकैः महास्वनैः ।	
नानाधातुसमाकीर्णं नानाप्रसवणाकुलम् ॥	५
गुह्यविद्याधराद्यैश्च सभार्यैः शुभदर्शनैः ।	
शोभितं शुभगन्धाढ्यं शुभमारुतसेवितम् ॥	६
गायद्भिः किन्नरैश्चापि गन्धर्वैश्च निषेवितम् ।	
प्रसादयद्भिः देवेशं कृष्णमङ्घ्रिष्टकारिणम् ॥	७
एवमत्यद्भुतं दिव्यं दक्षिणं भागमात्मवान् ।	
ददर्श मुनिशार्दूलः पर्वतस्य महीयसः ॥	८
तत्रापि नृपतेऽद्राक्षीत् पुष्पितं बहुशाखिनम् ।	
अत्युच्छ्रितं महाश्चर्यं दर्शनीयतमं नृप ! ॥	९
अतीव शुभगन्धाढ्यं मृदुपल्लवशोभितम् ।	
वृक्षं महाद्भुतं दिव्यं यो न दृष्टः पुरातनैः ॥	१०

तं दृष्ट्वा सहसाऽगस्त्यो ययौ शीघ्रतरं मुनिः ।	
मुनीन्द्रैः सहितः सर्वैः नरेन्द्रः सोऽतिविस्मितः ॥	११
तत्समीपं समागम्य कौतूहलसमन्वितः ।	
उदैक्षत महातेजाः तं वृक्षं बहुशाखिनम् ॥	१२
तत्राऽऽसीनं ततोऽपश्यत् भगवन्तमुमापतिम् ।	
नेतैः रक्तैः समायुक्तं त्रिभिस्त्रिभिरिवाम्निभिः ॥	१३
उदङ्मुखं महाश्चर्यजटामण्डलधारिणम् ।	
चतुर्भुजं महादेवं नीलकण्ठं पिनाकिनम् ॥	१४
तरुणादित्यसङ्काशं ज्वलन्तं स्वेन तेजसा ।	
स्वेनैवं तेजसा देवं भासयन्तं दिशो दश ॥	१५
कपिलाक्षं विशालाक्षं चार्वोष्ठं चारुवक्षसम् ।	
समुन्नततनुं सौम्यं सर्वलोकनमस्कृतम् ॥	१६
नानामणिगणच्छन्नज्वलत्कुण्डलधारिणम् ।	
तैस्तैरनुचरैश्चापि नानारूपधरैस्तथा ॥	१७
अनेकबाहुसाहस्रैः बलवद्भिः निषेवितम् ।	
नन्दिकेश्वरदुर्वासो - बाणाद्यैश्च निषेवितम् ॥	१८
यक्षकिन्नरगन्धर्वैः दैवैश्चापि निषेवितम् ।	
हाहाहूहूभ्याञ्च तथा गन्धर्वाभ्यां निषेवितम् ॥	१९
तैस्तैरभिष्टुतञ्चैव महादेवं महाद्युतिम् ।	
दृष्ट्वा शम्भुं तदाऽगस्त्यो ननाम शिरसा भुवि ॥	२०
प्रणेमुः मुनयश्चापि भगवन्तं महेश्वरम् ।	
ब्रुवन्तो देवदेवेश 'प्रसीदे'ति पुनःपुनः ॥	२१
प्रस्तूय तं महादेवं भगवन्तं महेश्वरम् ।	
उवाच च तदाऽगस्त्यः समासीनं महौजसम् ॥	२२

नानारत्नविचित्रैश्च वलयैश्च विभूषितम् ।

जाम्बूनदमयैश्चापि केयूरैः समलङ्कृतम् ।

वरदं सर्वभूतानां सर्वदेवनमस्कृतम् ॥

२३

‘किं न मां भाषसे देव ! त्वत्समीपमिहागतम् ।

को वा ध्येयस्त्वया देवः कोऽस्मिन् वा निवसत्यहो !’ ॥ २४

सेवाकांक्षिणमगस्त्यं प्रति शङ्करोक्तिः

वामदेवः—

एवमुक्तो महातेजा महादेवो महामुनिम् ।

जलदस्वनगम्भीरवचसा वाक्यमब्रवीत् ॥

२५

शङ्करः—

‘परावरपतिर्देवो विश्वयोनिः जनार्दनः ।

मया चान्यैश्च सर्वाऽत्मा ध्येयो नारायणो हरिः ॥

२६

नान्यो ध्येयः पुमाल्लोके दृश्यते न च विद्यते ।

तस्मृते जगतां नाथं सर्वव्यापिनमीश्वरम् ॥

२७

नारायणगिरिवस्मिन् वसत्येष सनातनः ।

नारायणो जगद्योनिः भगवान् पुरुषोत्तमः ॥

२८

अस्मिन् न्यस्तं मनो यस्मात् मया सर्वेश्वरे हरौ ।

तस्मात् समागतं त्वाऽहं नाभिभाषे न चान्यथा ॥

२९

त्वञ्चापि तं विशालाक्षं जनानामीश्वरेश्वरम् ।

शरण्यं सर्वभूतानां अनादिनिधनं हरिम् ॥

३०

ज्वलन्मुकुटकेयूरकटकादिविभूषितम् ।

माल्या दिव्यया चापि वैजयन्त्या विराजितम् ॥

३१

पतत्रिराजमारूढं द्रक्ष्यसे विश्वरूपिणम् ।	
ब्रह्मणाऽपि मया चात्र प्रोक्तमेतत् तवानघ ! ॥	३२
द्रष्टाऽसीति जगन्नाथं भवत्येतत् न संशयः ।	
अचिरेणैव कालेन भगवान् पुरुषोत्तमः ॥	३३
करिष्यति स विश्वात्मा सान्निध्यं तव केशवः ।	
विचरस्व यथापूर्वं पर्वतेऽस्मिन् महामुने ! ॥	३४
मा विषादं कृथा ब्रह्मन् ! तस्मिन् न्यस्तमना भव' ।	
एवमुक्तस्तु देवेन शम्भुना परमेष्ठिना ॥	३५
पुनः पुनः प्रणम्येशं तस्मान्नैवाभ्ययान्मुनिः ।	
स्नेहान्वितो मुनिश्रेष्ठः तस्मिन् देवे पिनाकिनि ॥	३६
पश्यतान्तु मुनीन्द्राणां अगस्त्यस्य तु पश्यतः ।	
सानुगः सहसा शम्भुः तत्त्वैवान्तरधीयत ॥	३७
मुनयश्चापि तं देवं संस्तूय परमेश्वरम् ।	
प्रणम्य च मुनीन्द्रेण सह तेऽभ्यगमस्तदा ॥	३८
एवमेतन्महाश्वर्यं संवादं शम्भुना सह ।	
ऋषिभिर्विस्तृतं लोके ह्यगस्त्यस्य महात्मनः ॥	३९
आख्यातं ते मया चापि मिथिलेश ! महाद्भुतम् ।	
सर्वपापप्रशमनं किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ॥	४०
जनक — 'आश्चर्यमिदमाख्यानं कथितं मे महामुने ! ।	
श्रुतञ्चापि मया सम्यक् ग्रह्णेतान्तरात्मना ॥	४१
ततः परं मुनीन्द्रोऽसौ अकरोत् किं महाद्भुतिः ।	
एतदाचक्ष्व मे ब्रह्मन् ! श्रोतुमिच्छा प्रवर्तते' ॥	४२
वामदेवः— अगस्त्योऽथ महातेजाः प्रणिपत्य महेश्वरम् ।	
त्यक्त्वाऽथ दक्षिणं भागं नैर्ऋतीं दिशमास्थितः ॥	४३



तं दक्षिणं भागमतीत्य भूपते !

नारायणाद्रेः सह तैः मुनीश्वरैः ।

अथोत्तमां दक्षिणपश्चिमां दिशं

द्रष्टुं परेशं प्रययौ प्रतापवान् ॥

४४

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यकृत-

शेषाचलदक्षिणभागवासिशङ्करदर्शनादिवर्णनं नाम

अष्टाविंशोऽध्यायः ।

अथ एकोनत्रिंशोऽध्यायः

शेषाचलनैर्ऋतदिशि अगस्त्यादीनां विष्वक्सेनदर्शनम्

वामदेवः—

तां दिशं समनुप्राप्य नैर्ऋतीं भगवान् अथ ।

मन्दराद्रिप्रतीकाशं शतशाखं महोच्छ्रितम् ॥

१

वटं महान्तमाश्चर्यं ददर्श स महामुनिः ।

तस्य मूले समासीनं भगवन्तं सुरेश्वरम् ॥

२

शिलायामद्भुतायान्तु महत्यां दीप्ततेजसम् ।

विष्वक्सेनं सुराध्यक्षं भगवन्न्यस्तमानसम् ॥

३

सर्वैरनुचरैश्चापि महेन्द्रसमविक्रमैः ।

संवृतं बलिभिर्देवैः शतक्रतुमिवापरम् ॥

४

ग्रसन्तमिव चाकाशं भक्षयन्तमिव प्रजाः ।

दैत्येन्द्रा बलवन्तस्तं परिवार्योपतस्थिरे ॥

५

शतशो दृष्टकर्मणो राक्षसाश्च भयावहाः ।

गन्धर्वपतयश्चापि यक्षाश्चापि सहस्रशः ॥

६

तमासीनं महावीर्यं विष्वक्सेनं नराधिप ! ।	—
उपातिष्ठन्त ते सर्वे गृहीतविविधायुधाः ॥	७
भूतयूथानि चोग्राणि वैष्णवानि सहस्रशः ।	
मेरुमन्दरसङ्काशरूपवन्ति महान्ति च ॥	८
क्रुद्धानि यानि भूतानि निर्दहेयुरिमाः प्रजाः ।	
पिबेयुः सहसा सर्वान् उदर्धींश्चापि सर्वशः ॥	९
तानि चाऽऽवार्यं तं देवं उपातिष्ठन्त सर्वशः ।	
एवमेतैस्तथान्यैश्च समेतैः तत्र भूधरे ॥	१०
उपास्यमानं तं देवं प्रासतोमरपाणिभिः ।	
सुस्वरैः गायमानश्च गन्धर्वाः तस्य सन्निधौ ॥	११
जग्मुर्नारायणं देवं किन्नरेन्द्रास्तु सर्वशः ।	
गायन्त्यः सुस्वनाश्चापि नृत्यन्त्येऽप्सरसस्तथा ॥	१२
विष्वक्सेनस्य देवस्य सन्निधौ तस्य धीमतः ।	
देवा ब्रह्मर्षयश्चापि सिद्धाश्चापि सहस्रशः ॥	१३
उपतस्थुर्हि तं देवं नारायणमिवापरम् ।	
तं दृष्ट्वा विस्मयाऽऽविष्टो रोमाञ्चिततनुस्तदा ॥	१४
अगस्त्यो मुनिशार्दूलः तत्समीपमुपेयिवान् ।	
तत्समीपमुपागम्य प्रणाममकरोद्भुवि ॥	१५
व्याहरन् श्लक्ष्णया वाचा “प्रसीदे ” ति पुनः पुनः ।	
प्रणेमुः मुनयश्चापि तमासीनं महाबलम् ॥	१६
सुखासीनं महेष्वासं नारायणमिवापरम् ।	
शङ्खचक्रगदापाणिं अभयोद्यतपाणिकम् ॥	१७
तानब्रवीन्महावीर्यो विष्वक्सेनो नराधिप ! ।	
अगस्त्यप्रमुखान् सर्वान् ऋषीन् परपुरञ्जय ! ॥	१८

## अगस्त्यादीन् प्रति विष्णुक्सेनोक्त भगवद्दर्शनोपायः

विष्णुक्सेनः—

‘युष्माभिर्भगवान् देवो विश्वरूपधरो हरिः ।	
अस्मिन्गिरौ महातेजा द्रष्टुं शक्यो हि सोऽव्ययः ॥	१९
सर्ववेदोदितस्यास्य देवस्यानुचरा वयम् ।	
दृष्टवन्तोऽजितं पूर्वं समासीनं महौजसम् ॥	२०
नारायणं सुराध्यक्षं शङ्खचक्रासिधारिणम् ।	
वसत्यस्मिन् स विश्वात्मा नारायणगिरौ द्विजाः ! ॥	२१
विचरध्वं यथापूर्वमस्मिन् पर्वतसत्तमे ।	
एतस्मिन् पर्वते दिव्ये प्रसादात् तस्य शार्ङ्गिणः ॥	२२
अदृष्टरूपमाश्चर्यं दृष्टवन्तः पुरा वयम् ।	
तपस्तप्यन्ति ये चास्मिन् द्रष्टुकामास्तमीश्वरम् ॥	२३
ददाति भगवांस्तेषां दर्शनं पुरुषोत्तमः ।	
यूयमप्यत्र चास्माभिः विमले पर्वतोत्तमे ॥	२४
परमं तप आस्थाय भक्त्या परमया युताः ।	
चरताऽशेषभूतानामीश्वरे न्यस्तमानसाः ।	
विष्णौ ब्रह्मणि गोविन्दे जगद्धातरि केशवे ’ ॥	२५

वामदेवः—

एवमुक्त्वाऽथ भगवान् विष्णुक्सेनः स वीर्यवान् ।	
अन्तर्दधे तदा देवः तत्रैव नृपते ! प्रभुः ॥	२६
सर्वैरनुचरैः सार्धं सर्वदेवनमस्कृतः ।	
पश्यतामेव सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् ॥	२७
मुनयश्चापि ते सर्वे सहस्रैव महाद्युतिम् ।	
प्रणम्य तं महात्मानं विष्णुक्सेनं मुदा युताः ॥	२८

अगस्त्यादीनां शेषाचलस्थविष्वक्सेनानुचरावलोकनम्

पुनश्चापि यथापूर्वं विचेरुरवनीपते ! ।	
वेङ्कटाख्ये गिरौ तस्मिन् वृक्षखण्डविभूषिते ॥	२९
गिरिर्मुर्ध्नि चरन्तस्ते मुनयः सर्व एव तु ।	
ददृशुस्तत्र रम्याणि शिखराणि महान्ति च ॥	३०
पुष्पितद्रुमखण्डैश्च मण्डितानि सहस्रशः ।	
नीलजीमूतवर्णानि पाण्डुराभ्रनिभानि च ॥	३१
देवदानवगन्धर्वयक्षकिंपुरुषैस्तथा ।	
गुह्यविद्याधराद्यैश्च सेवितानि महात्मभिः ॥	३२
शिखरात् शिखरं गत्वा चरन्तस्ते महीपते ! ।	
ददृशुः शिखरे रम्ये कस्मिंश्चिन्मुनयोऽमलाः ॥	३३
समासीनान् महावीर्यान् महाबलनिभांस्तथा ।	
कामरूपधरान् घोरान् वायुवेगसमान् जवे ॥	३४
मेरुमन्दरसङ्काशान् समवेगान् सहस्रशः ।	
किन्नरांश्चापि गन्धर्वान् यक्षांश्चापि महासुरान् ॥	३५
तान् दृष्ट्वा स मुनीन्द्रस्तु मुनीन्द्रान्निदमब्रवीत् ।	
विस्मयोत्फुल्लनयनो विस्मयोत्फुल्ललोचनान् ॥	३६

अगस्त्यः—

‘नूनमेतैः पुरा शक्रो बलवीर्यसमन्वितैः ।	
देवासुरमहायुद्धे दैतेयानजयद् द्विजाः ! ॥	३७
एते हि बलिनः सर्वे विचित्राद्भुतवाससः ।	
नानाप्रहरणोपेता दृश्यन्तेऽद्भुतरूपिणः ॥	३८
एतान् दृष्ट्वाऽथ गच्छामो द्रष्टुमेतं महागिरिम् ।	
आलयं सर्वभूतानां ईश्वरस्याऽव्ययात्मनः’ ॥	३९

वामदेवः—

इति निश्चित्य मनसा नरेन्द्र ! मुनिभिर्वृतः ।  
 तेषां समीपमभ्यायात् गन्धर्वाणां तरस्विनाम् ॥ ४०  
 तमायान्तं ततो दृष्ट्वा मुनीन्द्रं मिथिलेश्वर ! ।  
 उपतस्थुर्हि ते सर्वे ब्रह्माणं त्रिदशा इव ॥ ४१  
 प्रणेमुश्च महात्मानं तत्समीपमुपागमन् ।  
 तानुवाच ततोऽगस्त्यो ब्रह्मर्षिः श्लक्ष्णया गिरा ॥ ४२

अगस्त्यः—

‘श्रूयता’ मिति चाभाष्य मधुरं वदतां वरः ।  
 ‘यूयं सर्वे महावीर्याः श्रुणुध्वं मधुरं वचः ॥ ४३  
 कस्य यूयं किमर्थं वा चरन्त इह पर्वते ।  
 आश्चर्यं वा महात्मानो द्रष्टव्यं दृष्टमेव वा ? ॥ ४४  
 एतद्यूयं समासेन सर्वमाख्यात तत्त्वतः ।  
 पृच्छामि श्रोतुकामोऽहं युष्मान् सर्वान् समागतान् ’ ॥ ४५

अगस्त्यादीन् प्रति विष्वक्सेनपरिजनकृतस्वोदन्तज्ञापनम्

गन्धर्वाद्याः—

एवं ब्रुवाणं ब्रह्मर्षिं प्रोचुस्तं ‘श्रूयता’ मिति ।  
 ‘देवस्यानुचरास्तस्य वयं ब्रह्मन् ! महात्मनः ॥ ४६  
 बलवीर्याभिजुष्टस्य विष्वक्सेनस्य धीमतः ।  
 यः सर्वलोकनाथस्य मधुकैटभघातिनः ॥ ४७  
 हरेरनुचरस्तस्य वयं ब्रह्मन् ! निदेशगाः ।  
 उपतिष्ठन्ति यं सर्वे विष्वक्सेनं समाहिताः ॥ ४८  
 यद्वशे वर्तते विप्र ! जगदेतच्चराचरम् ।  
 ससुरासुरगन्धर्व सयक्षोरगराक्षसम् ॥ ४९

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकोनविंशोऽध्यायः ४७१

मुनयो देवगन्धर्वा दैत्याः सिद्धाः तथोरगाः ।	
प्रणेषुः यं महावीर्यं नारायणमिवापरम् ॥	५०
देवदेवेन चाऽज्ञतो ऋषभं योऽवधीत् पुरा ।	
दैत्येन्द्रं सुमहावीर्यं शक्रतुल्यपराक्रमम् ॥	५१
देवासुरे महायुद्धे दारुणे रोमहर्षणे ।	
सूदिता येन दैत्येन्द्राः शतशोऽथ सहस्रशः ॥	५२
सदा हि यो जगद्धातुः निदेशे परिवर्तते ।	
अचिन्त्यबलवीर्यैजाः विष्णुपादाब्जसंश्रयः ॥	५३
संक्रुद्धः सहसा लोकान् हन्तुं शक्तः सवासवान् ।	
सयक्षनागगन्धर्वगुह्यकिन्नरराक्षसान् ॥	५४
एवंप्रभावो यो देवो हरेरनुचरो बली ।	
विश्रुतः सर्वलोकेषु तस्यैवानुचरा वयम्' ॥	५५
ब्रह्मदेवः— एवमुक्तस्तदा तैस्तु गन्धर्वाद्यैः नरेश्वर ! ।	
प्रशंसंस्तदा देवं विष्वक्सेनं महामुनिः ॥	५६
प्रणम्य च तदा देवं हरिं भक्त्या च तैः सह ।	
तपोबलसमायुक्तैः मुनिभिः भावितात्मभिः ॥	५७
ताननुज्ञाय संहृष्टो गन्धर्वाद्यांस्तपस्विनः ।	
विचचार यथापूर्वं नारायणदिदक्षया ॥	५८

अगस्त्यादिकृत्तशेषाचलस्थानेकपुण्यतीर्था लोकनम्

तस्मिन् गिरिवरे रम्ये वृषभाख्ये महीयसि ।	
गिरिमूर्धनि राजेन्द्र ! विचरन् वै ततस्ततः ॥	५९
ददर्श शतशो वृक्षान् पुष्पितान् पर्वतोपमान् ।	
शुभोदकवहाः शुद्धाः सरितश्चातिशोभनाः ॥	६०

गुहाश्च विविधास्तत्र द्रुमषण्डविभूषिताः ।	
कन्दराणि च दिव्यानि दरीश्च प्रियदर्शनाः ॥	६१
शिखराणि च मुख्यानि नीलमेघनिभानि च ।	
तटाकांश्च तथा दिव्यान् शोभितांश्च शुभैर्जलैः ॥	६२
हंसकारण्डवाकीर्णान् सारसैश्चानुनादितान् ।	
जीवञ्जीवैश्च सारङ्गैश्च वारणैश्च सदामदैः ॥	६३
राजद्विश्चक्रवाकैश्च शकुन्तैरनुनादितान् ।	
एवमाद्यैस्तथान्यैश्च शोभितान् विमलोदकान् ॥	६४
सरसीश्च तथा दिव्या नारायणमहागिरौ ।	
कुन्दैर्नीपैस्तथा सालैः अर्जुनैस्तिलकैस्तथा ॥	६५
चम्पकाशोकपुन्नागकोविदारासनादिभिः ।	
तीरजैः द्रुमषण्डैश्च शोभितेषु सरःसु च ॥	६६
प्रीत्या स्नात्वा तथा चक्रुः देवपूजां यथाविधि ।	
स गच्छन्नथ विप्रेन्द्रो नरेन्द्र ! मुनिभिर्वृतः ॥	६७
ददर्श पर्वते भूयो दर्शनीयतमान् मुनीन् ।	
शष्पाङ्कुरकृताहारान् हरिणान् वनचारिणः ॥	६८
चरतः सर्वतो भूप ! स्थलेषु मृगपोतकान् ।	
कुञ्जरान् मेघसङ्काशान् शुभदन्तविभूषितान् ॥	६९
शिखराच्छिखरं शीघ्रं पततश्चापि वानरान् ।	
एवमाद्यैस्तथान्यैश्च शोभितो गिरिमूर्धनि ॥	७०
विचचार तथाऽगस्त्यः चिरकालं नृपेश्वर ! ।	
ऋषिभिः सहितः सर्वैः पितामहवचः स्मरन् ॥	७१
दिदृक्षुर्देव देवेशं भगवन्तं सनातनम् ।	
अन्यानपश्यत् सोऽगस्त्यं तस्मिन्नद्रौ जलाशयान् ॥	७२

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकोनत्रिंशोऽध्यायः

४७३

सरितश्च महापुण्यवैडूर्यविमलोदकाः ।

पुष्करिण्यः शुभाश्चापि सरांसि विमलानि च ॥

७३

सर्वेषु तेषु पुण्येषु तीर्थेषु मुनिसत्तमः ।

स्नात्वा स्नात्वा जगन्नाथं अर्चयामास भक्तिमान् ॥

७४

अगस्त्यादीनां कुमारधारस्नानम्

एकदा तु स धर्मात्मा विचरन् गिरिमूर्धनि ।

कौमारीं महतीं धारां पतन्तीं ददृशे मुनिः ॥

७५

अत्युच्चगिरिपृष्ठात् कार्तिकेयेन सेविताम् ।

तां दृष्ट्वा विस्मयाऽऽविष्टः सर्वपापहरां शुभाम् ॥

७६

देवर्षिसिद्धमनुजैः सेवितां पुण्यकाङ्क्षिभिः ।

यत्र सा निपतत्युच्चात् शिखराद्विमलोदका ॥

७७

तटाके विमले दिव्ये पवित्रे पापनाशने ।

यस्मिन् वसति राजेन्द्र ! शम्भुपुत्रः प्रतापवान् ॥

७८

दारुणं तप आस्थाय प्रीतये मधुघातिनः ।

देवसेनापतिः श्रीमान् सुब्रह्मण्योऽसुरार्दनः ॥

७९

त्रिकालमर्चयन् विष्णुं श्रीनिवासं जगत्पतिम् ।

तस्मिन् गत्वा मुनीन्द्रस्तु नरेन्द्र ! मुनिभिः सह ॥

८०

आचम्य प्रयतो भूत्वा ममज्ज सुसमाहितः ।

सर्वपापहरे शुद्धे तीर्थे तस्मिन् सदाऽमले ॥

८१

चिन्तयन् देवदेवेशं नारायणमनामयम् ।

स्नात्वा मुनिवरस्तस्मिन् आचम्य च यथाविधि ॥

८२

देवदेवं जगद्योनिं वासुदेवमधोक्षजम् ।

अर्चयामास गोविन्दं दिव्यैः पुष्पैः सुगन्धिभिः ॥

८३



ऋषयश्च महात्मानः स्नात्वा तस्मिन् महोदके ।	
अर्चयामासुरव्यग्रं देवदेवं जनार्दनम् ॥	८४
समाधाय मनस्तस्मिन् ब्रह्मण्यमिततेजसि ।	
मनो निवेश्य जगतामीश्वरे पुरुषोत्तमे ॥	८५
नारायणे जगद्धाम्नि सर्वपापहरे हरौ ।	
अथ तं वरदं विष्णुं सर्वलोकनमस्कृतम् ॥	८६
प्रणेमुर्मुनिशार्दूलः वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ।	
प्रणतार्तिहरं देवं कृष्णं सर्वेश्वरं हरिम् ॥	८७
रमन्तं मायया सार्धं अर्चयित्वा सुरोत्तमम् ।	
यथापूर्वं मुनिश्रेष्ठः चचार गिरिमूर्धनि ॥	८८
विचरंश्च ततस्तत्र तीर्थौघान् पापनाशनान् ।	
देवदानवगन्धर्वैः सिद्धचारणपन्नगैः ॥	८९
ऋषिभिर्वालखिल्यैश्च सेवितं पर्वतोत्तमम् ।	
अगस्त्यो मुनिभिस्तत्र ददर्श विमलं गिरिम् ॥	९०

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये अगस्त्यादिमहर्षि-  
कृतविष्वक्सेन-तत्पारिषदादिदर्शनं नाम  
एकोनत्रिंशोऽध्यायः



## अथ त्रिंशोऽध्यायः



### अथ श्रीवेङ्कटाचलस्थपुण्यतीर्थवर्णनम्

जनकः—

- ‘मुनिना तेन दृष्टानां अगस्त्येन महात्मना ।  
नामानि तेषां तीर्थानां पर्वतेन्द्रनिवासिनाम् ॥ १
- माहात्म्यं चापि सर्वेषां पापहानिं वदस्व मे ।  
यद्वा सम्प्राप्यते मर्त्यैः स्नात्वा तेषु फलं मुने ! ॥ २
- विस्तरेणैतदाश्चर्यं वक्तुमर्हस्यशेषतः ।  
श्रोतुकामो ब्रह्मं ब्रह्मन् ! पृच्छामि त्वां तपोधन !’ ॥ ३
- वामदेवः— श्रूयतां नृपते ! वक्ष्ये यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ।  
तीर्थानां नामधेयानि माहात्म्यञ्च तथाऽद्भुतम् ॥ ४
- विस्तरात् नैतदाख्यातुं शक्यं वर्षशतैरपि ।  
सङ्क्षेपेण मया त्वेतत्कथ्यमानं निशामय ॥ ५
- “वाराहं वामनं सौम्यं दिव्यं पञ्चनदं तथा ।  
शिलातोयं महातीर्थं पाद्मं सौरं तथाऽपरम् ॥ ६
- पापनाशनमैन्द्रञ्च वायव्यं वारुणं तथा ।  
ब्रह्मतीर्थं तथाऽघघ्नम् आग्नेयं सर्वकामदम् ॥ ७
- पञ्चतीर्थं महापुण्यं सर्वलोकेषु पूजितम् ।  
गौरीतीर्थञ्च विख्यातम् आश्विनं पारमेश्वरम् ॥ ८
- चक्रतीर्थं महापुण्यं शङ्खतीर्थमतः परम् ।  
विजयं विमलञ्चापि शोकनाशनमेव च ॥ ९
- मात्स्यं कौर्मं तथा दिव्यं गारुडं पाण्डवं तथा ।  
मायामयं महातीर्थं काण्डवं काहलं तथा ॥ १०

दाडिमं मधुरञ्चापि सर्वपापप्रणाशनम् । ”

तीर्थान्येतानि पुण्यानि विद्यन्ते वेङ्कटाचले ॥

११

अथ कपिलतीर्थपश्चिमभागस्थपञ्चतीर्थमाहात्म्यम्

जनकः—

‘पञ्चतीर्थमिति प्रोक्तं यत्त्वया मुनिसत्तम ! ।

तन्मे ब्रूहि महाभाग ! श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ’ ॥

१२

नामदेवः—

कापिलं नाम यत्तीर्थं तस्य पश्चिमभागतः ।

“पञ्चतीर्थं ” मिति ख्यातं पावनं पुण्यवर्धनम् ॥

१३

विप्रक्षत्रियविद्वद्गूढा ये चान्त्याः पापयोनयः ।

तेषां क्रमेण तीर्थानि पञ्चैतानि नरोत्तम ! ॥

१४

देवास्तत्र तपस्यन्ति पञ्चजात्यभिमानिनः ।

वसन्ति कापिलं लिङ्गं पश्यन्तः परया मुदा ॥

१५

बराहरूपिणं देवमञ्जनाद्रिनिवासिनम् ।

अर्चयन्तः स्तुवन्तश्च सदा तद्भावभाविताः ॥

१६

“उपरि प्रथमं तीर्थं ब्राह्मणानां शुभोदकम् ।

सद्यः सिद्धिकरं तेषां स्नानपानजपादिभिः ॥

१७

तस्याधस्तान्महातीर्थं क्षत्रियाणामभीष्टदम् ।

अनन्तरञ्च वैश्यानां तीर्थमाशु फलप्रदम् ॥

१८

तस्य त्वनन्तरं तीर्थं शूद्राणामघनाशनम् ।

चतुर्णामप्यधस्तात् चण्डालानां च पापिनाम् ॥

१९

तीर्थं पर्वतमूले तु सद्यः पापनिबर्हणम् ।

बराहरूपी भगवन् विष्णुर्भक्तानुकम्पया ॥

२०

तेषु पञ्चसु तीर्थेषु सान्निध्यं कुरुते सदा ।	
वर्णाश्रमाणामाचारवैकल्यं नाशयत्यहो ! ॥	२१
तेषामन्यतमं तीर्थं सेवमानो नरो नृप ! ।	
तांस्तांश्च समवाप्नोति कामांस्तीर्थप्रभावतः ॥	२२
प्रसादात्तस्य देवस्य प्राप्नोति शुभमुत्तमम् ।	
तीर्थान्येतानि सम्भूय वर्तन्ते पर्वतोत्तमे ॥	२३
नद्यः समस्ताः पापघ्न्यः तासां सङ्ख्या न विद्यते ।	
तथाऽपि शृणु वक्ष्यामि षट्षष्टिः कोटयस्तथा ॥	२४
नारायणाऽचले तस्मिन् अञ्जनाख्ये नगोत्तमे ।	
देवर्षिसिद्धगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगैः ॥	२५
गुह्यविद्याधरैश्चापि ह्यप्सरोभिः समन्ततः ।	
किन्नरैर्गरुडैश्चापि देवैर्देवाधिपैरपि ॥	२६
एवमाद्यैस्तथाऽन्यैश्च सेविताः पुण्यकाङ्क्षिभिः ।	
तीर्थानि तेषां माहात्म्यं गदितुं नैव शक्यते ॥	२७
यस्मिन् यस्मिन् गिरेः शृङ्गे वारि संदृश्यते शुभम् ।	
तदद्भुतं महापुण्यं तीर्थेभ्यः सम्भवं नृप ! ॥	२८
तेषु तेषु च तीर्थेषु स्नात्वा स्नात्वा बुधो जनः ।	
आभ्यन्तरविशुद्धयर्थं विचरेत् सुसमाहितः ॥	२९
वामदेवः — पुनरत्र प्रवक्ष्यामि तीर्थानि मुनिसत्तम ! ।	
यानि तानि तु सर्वाणि शृणुष्वैकमना विभो ! ॥	३०

अथ स्वामिपुष्करिण्यादिसर्वतीर्थमाहात्म्यवर्णनम्

पर्वतस्योत्तरे भागे पुण्यतीर्थानि मे शृणु ।

सर्वदोषप्रशमनं गिरिरूपमतः परम् ॥

३१

शालिवाहं तथा चान्यत् रोगघ्नं शान्तमेव च ।	
सर्वदुःखप्रशमनं कृष्णनिध्यानमेव च ॥	३२
स्वामितीर्थं महापुण्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।	
यस्य तीरे जगन्नाथो रमते रमया सह ॥	३३
विश्रुतं सर्वलोकेषु विशेषेण नृपात्मज ! ।	
पाण्डुराभ्रघनप्रख्यैः राजहंसैर्निषेवितम् ॥	३४
कोकिलैश्च तथा मत्तैः चक्रवाकैश्च शोभनैः ।	
द्रुमैर्नानाविधैश्चापि पुष्पभारनिपीडितैः ॥	३५
तोयार्थमापतद्भिश्च शैलेन्द्रसदृशैर्गजैः ।	
ऋक्षैः सिंहैर्वराहैश्च वृकैश्च हरिणैः शिवैः ॥	३६
एवमाद्यैस्तथान्यैश्च लोलितं विमलोदकम् ।	
धनुःशतेन विस्तीर्णं चन्द्रकान्तामलोदकम् ॥	३७
मुख्यान्येतानि राजेन्द्र ! तीर्थानि कथितानि ते ।	
सर्वतीर्थानि कथितुं न शक्यं नृपसत्तम ! ॥	३८
उद्देशतस्तवोक्तानि नारायणमहीधरे ।	
या मया भवतः प्रोक्ता “स्वामिपुष्करिणी” शुभा ॥	३९
तस्याः प्रभावमतुलं ससुरैरपि मानुषैः ।	
वक्तुं न शक्यते चापि यस्यास्तीरे हरिः स्वयम् ॥	४०
रमते ह्यधिकं तस्मिन् नारायणगिरावपि ।	
यां गत्वा सर्वपापघ्नीं देवर्षिगणसेविताम् ॥	४१
विश्रुतां सर्वलोकेषु पूजितां त्रिदशैरपि ।	
अनेकबहुसाहस्रैः पातकैरपि संबृतः ॥	४२
नरस्तेभ्यः समस्तेभ्यः पापेभ्योऽपि प्रमुच्यते ।	
साक्षान्नारायणस्याद्रेः सर्वलोकविमोहिनी ॥	४३

सर्वदोषप्रशमनी मायैषा परमेश्वरी ।	
वरिष्ठा सर्वतीर्थेभ्यः स्वामिपुष्करिणी नृप ! ॥	४४
ये नराः प्रातरुत्थाय “ स्वामिपुष्करिणी ” ति वै ।	
कीर्तयन्ति महात्मानः ते यान्ति परमां गतिम् ॥	४५
तस्यां स्नात्वा च तद्वारि दृष्ट्वा च महद्भुतम् ।	
सर्वपापविनिर्मुक्ताः सर्वशोकविवर्जिताः ॥	४६
विमानं दिव्यमारुह्य व्रजन्ति विदशालयम् ।	
ये चाप्यस्यास्तथा वारि पिबन्ति मिथिलाधिप ! ॥	४७
अनेकबहुसाहस्रैः पातकैश्चापि संयुताः ।	
नरास्तेभ्यो विमुच्यन्ते पापेभ्यः पापकृत्तमाः ॥	४८
मुच्यन्ते रोगिणो रोगात् मुच्यन्तेऽसुखिनोऽसुखात् ।	
मुच्यन्ते मोहमापन्नाः नरा मोहान्नराधिप ! ॥	४९
शोकसागरमापन्नाः मुच्यन्ते शोकसागरात् ।	
संसारदुःखतापार्ताः पुरुषा ध्वस्तमानसाः ॥	५०
यां समाश्रित्य तद्ब्रह्म प्राप्नुवन्ति सदाऽमलम् ।	
या पुरा देवदेवेन विष्णुना प्रभविष्णुना ॥	५१
ब्रह्मणा लोकनाथेन प्रभुणाऽव्यक्तरूपिणा ।	
“ गङ्गाद्यैः सकलैस्तीर्थैः सर्वपापप्रणाशनैः ॥	५२
प्रोक्ता समे ” ति देवेन मेघगम्भीरया गिरा ।	
शृण्वतां सर्वदेवानां ऋषीणाञ्च तथा नृप ! ॥	५३
जनकः— कथं प्रोक्ता पुरा ब्रह्मन् ! स्वामिपुष्करिणी शुभा ।	
गङ्गाद्यैः सकलैस्तीर्थैः समेति हरिणा पुरा ॥	५४
एतद्ब्रह्मन् महाभाग ! याथार्थ्येनाद्य शंस मे ।	
एतच्छ्रोतुमिहेच्छामि त्वत्तोऽहं मुनिपुङ्गव ! ॥	५५

शतानन्दः—

एवं पृष्टस्तदा तेन जनकेन महात्मना ।

मुनिः प्राह नरेन्द्रं तं 'वक्ष्येऽहं श्रूयता' मिति ॥ ५६

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमहात्म्ये स्वामिपुष्करिण्यादि-

सर्वतीर्थमहात्म्यवर्णनं नाम

त्रिंशोऽध्यायः

अथैकत्रिंशोऽध्यायः

— : \* : —

अथ शङ्खाख्यनृपवृत्तान्तः

वामदेवः—

शङ्खो नाम पुरा राजा राजन्! आसीन्महाद्युतिः ।

द्वैहयानां कुले जातः कर्मणा विश्रुतो भुवि ॥ १

श्रुतस्य बलिनो राज्ञः पुत्रः परपुरञ्जयः ।

सोऽन्वशासन् महीं कृत्स्नां सशैलवनकाननाम् ॥ २

सोऽभवत् भगवद्भक्तः प्रह्लादेन समो भुवि ।

गुणैः सर्वैः समायुक्तः श्रीमान् परमधार्मिकः ॥ ३

सोऽयजत् सर्वभूतेशं अश्वमेथादिभिर्मखैः ।

नारायणं जगन्नाथं प्रणतार्तिहरं हरिम् ॥ ४

अददाद् भक्तिमान् देवे दक्षिणाश्च सहस्रशः ।

सर्वेषु तेषु यज्ञेषु प्रीतये मधुघातिनः ॥ ५

न चाद्राक्षीत्स तैर्यज्ञैः भगवन्तं सनातनम् ।

नारायणं नृपाचिन्त्यं पुण्डरीकनिमेक्षणम् ॥ ६

द्रष्टुं तमजरं देवं कृतवानपि तान् मखान् ।

श्रद्धया परया युक्तो विविधैः भूरिदक्षिणैः ॥ ७

सोऽभवद् दुःखसन्तप्तः ततोऽपश्यज्जनार्दनम् ।

भक्तिभावेन मनसा चेष्टा सर्वमखैरपि ॥

८

स्वामिपुष्करिण्या भगवदुक्तगङ्गायशेषपुण्यतीर्थसाम्यम्

एकदा तु महात्मानं भूपते ! भूपतिं विभुः ।

अन्तर्हितो जगादैवं भगवान् पुरुषोत्तमः ॥

९

तस्य दुःखं समालोक्य वासुदेवो महीपते ! ।

शृण्वतां सर्वभूतानां मेघगम्भीरया गिरा ॥

१०

“नारायणगिरौ मां त्वं द्रक्ष्यसे हे महीपते ! ।

भक्तिभावेन मनसा तपस्ताप्त्वा सुदुश्चरम् ॥

११

तत्र पुष्करिणी दिव्या विमला पापहारिणी ।

धनुःशतपरीणाहा वैडूर्यविमलोदका ॥

१२

त्रैलोक्यविंश्रुता पुण्या “स्वामिपुष्करिणी” ति वै ।

गङ्गाद्यैः सकलैस्तीर्थैः सा समा विमलोदका ॥

१३

तस्यां स्नात्वा भविष्यन्ति नराः पापविवर्जिताः ।

तस्यास्तीरे महापुण्ये पुष्करिण्यां नृपात्मज ! ॥

१४

महता तपसा युक्तः तिष्ठ त्वं सुसमाहितः ।

वत्सराणां सहस्रे तु समतीते महामुनिः ॥

१५

आयास्यति महातेजाः अगस्त्यो मुनिभिः सह ।

अनेकशतसाहस्रैः परीतस्तं महीधरम् ॥

१६

द्रष्टुकामश्च मां विप्रो विचरन् गिरिमूर्धनि ।

बहन् मयि परां भक्तिं सर्वब्रह्मविदां वरः ॥

१७

आगतेऽथ मुनौ तस्मिन् अचिरेणैव मां नृप ! ।

द्रष्टुंऽसि मत्प्रसादेन तेन सार्धं महात्मना ॥

१८



त्वया न शोकः कर्तव्यो दास्ये तव यथेप्सितम् ।

मा विषादं कृथा वीर ! गच्छ त्वं तं महीधरम्” ॥ १९

नामदेवः— एवं पुरा हि भगवान् गङ्गाद्यैः साम्यमादिशत् ।

देवदेवो जगन्नाथः स्वामिपुष्करिणीं प्रति ॥ २०

भगवदुक्तं चा शंखनृपकृतस्यामितीर्थतपःप्रकारः

शङ्खोऽपि नृपतिर्धीमान् गदितं तस्य शार्ङ्गिणः ।

नारायणस्य देवस्य विष्णोरन्तर्हितस्य सः ॥ २१

निशम्य मधुरं वाक्यं नरेन्द्रोऽथ नरेश्वर ! ।

अभिषिच्य सुतं वीरं महेन्द्रसमविक्रमम् ॥ २२

सौम्यं पुरुषशार्दूलं वज्रपाणिमिवापरम् ।

नारायणालयं दिव्यं नारायणगिरिं तदा ॥ २३

अभ्यगात् द्रष्टुकामः स वासुदेवं नराधिप ! ।

तत्र गत्वा महीपालः स तेपे परमं तपः ॥ २४

स्वामिपुष्करिणीतीरे यथोक्तं परमेष्ठिना ।

विषयेभ्यः समस्तेभ्यः समाहृतमनोरथः ॥ २५

निवेक्ष्य च मनस्तस्मिन् परे ब्रह्मणि केशवे ।

तपश्चरंश्च विश्वेशं अर्चयंश्च यथाविधि ॥ २६

वत्सराणां सहस्रन्तु सोऽभवन्नियतात्मवान् ।

एवमेषा महापुण्या स्वामिपुष्करिणी शुभा ॥ २७

एनां पुरातनीं पुण्यां सेवमानो न सीदिति ।

नरः समस्तपौषैस्तु संयुक्तोऽपि नरेश्वर ! ॥ २८

यस्त्वेनां सेवते भक्त्या स गच्छेत्परमां गतिम् ।

देवदेवप्रसादेन कृष्णस्य परमात्मनः ॥ २९

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकत्रिंशोऽध्यायः ४८३

सकामाश्चापि सेवन्ते ये नरा नियतेन्द्रियाः ।

स्वामिपुष्करिणीमेनां तान् कामानाप्नुवन्ति हि ॥ ३०

ऋषयो बालखिल्याश्च सिद्धाश्चापि सहस्रशः ।

अस्यां स्नात्वा जगन्नाथं अर्चयन्ति दिनेदिने ॥ ३१

अस्यास्तीरं समागम्य गन्धर्वाश्च सहस्रशः ।

प्रसादयन्तो देवेशं सुस्वरं बहु विन्नराः ॥ ३२

गायन्ति विविधैर्दिव्यैः कर्मभिस्तमहर्निशम् ।

नृत्यन्त्यप्सरसश्चापि गायन्ति शुभलोचनाः ।

प्रसादयन्त्यो देवेशं दिवारात्रमतन्द्रिताः ॥ ३३

एषा महाश्चर्यतमा महीपते !

महीतले देवगणैरभिष्टुता ।

नारायणाद्रिप्रवरं समाश्रिता

नारायणेनाप्युदिता प्रियेति सा ॥ ३४

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये स्वामिपुष्करिणी-

माहात्म्यवर्णनं नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ।



अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः



स्वामिपुष्करिणीतीर्थे भगवन्तमुद्दिश्य अगस्त्यादिकृततपश्चिन्ता

वामदेवः—

अगस्त्योऽथ मुनीन्द्रस्तु नरेन्द्र ! मुनिभिः सह ।

एतानि तीर्थानि मुनिः स्वामिपुष्करिणीं विना ॥ १

मनःप्रहादजननीं दृष्ट्वा हर्षमुपागमत् ।	
तेषु तेषु च सर्वेषु तीर्थेषु शुभवारिषु ॥	२
स्नात्वा स्नात्वा प्रणम्येशं अर्चयामास केशवम् ।	
मुनयश्चापि ते सर्वे परां प्रीतिमुपागताः ॥	३
दृष्ट्वा तीर्थानि पुण्यानि शतशोऽथ सहस्रशः ।	
ते चापि तेषु तेष्वेवं स्नात्वा स्नात्वा द्वजोत्तमाः ॥	४
अर्चयामासुरव्यग्रा भगवन्तं सनातनम् ।	
अथ तैः सहितैः सर्वैः अगस्त्यो नियतात्मवान् ॥	५
अर्चयित्वा जगन्नाथं अभ्यगा पुरुषोत्तमम् ।	
द्रष्टुकामो महीपाल! भूतभव्यभवत्प्रभुम् ॥	६
आदिदेवं विशालाक्षं कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ।	
मुनीन्द्रः परमायतो विचरन् गिरिमूर्धनि ॥	७
कालेन महता चापि नाद्राक्षीत् पुरुषोत्तमम् ।	
सद्यारमीश्वरं देवं सर्वलोकपरायणम् ॥	८
दुःखेन महताऽऽविष्टो मुनीन्द्रो मुनिभिः सह ।	
निषसाद ततो भूप! कस्मिंश्चित् गिरिगह्वरे ॥	९
भूधरं सर्वतः पश्यन् “किमेत” दिति चिन्तयन् ।	
यत्पुरा ब्रह्मणा प्रोक्तं “द्रष्टाऽसी” ति सुरेश्वरम् ॥	१०
तच्चापि संस्मरन् वाक्यं निषसाद सुदुःखितः ।	
ऋषयश्चापि दुःखार्ता ह्यपश्यन्तः सुरेश्वरम् ॥	११
परिचार्य मुनीन्द्रं तं निषेदुरवनीपते ! ।	
राजंस्तेषां मुनीन्द्राणां चरतां तत्र भूधरे ॥	१२
वेङ्कटाख्येऽभ्यगात्पुण्ये वर्षाणामधिकं शतम् ।	
ततस्तेषूपविष्टेषु मुनीन्द्रेषु महीधरे ॥	१३

## भगवत्सेवार्थं वेङ्कटाचलं प्रति गुरुशुक्राद्यागमनम्

भाजग्मुः शिखरे तस्मिन् द्रुमखण्डविभूषिते ।	
बृहस्पतिश्च भगवान् शुक्रश्चापि तथाऽत्मवान् ॥	१४
तथा च भगवद्भक्तो राजोपरिचरो वसुः ।	
सान्निध्यं कुरुते यस्य सदा कृष्णो महीपते ! ॥	१५
यः पुरा विप्रशापेन पातालतलपातितः ।	
उद्धृतो हरिणा तस्मात् संसारगहनादिव ॥	१६

जनकः—

‘कथं स विप्रशापेन पातालतलपातितः ? ।	
उद्धृतो हरिणा कस्मात् संसारगहनादिव ? ॥	१७
एतन्मुने ! महाश्वर्यं श्रोतुमिच्छाम्यशेषतः ।	
नारायणाश्रितत्वेन प्रसादसुमुखो वद ’ ॥	१८

शतानन्दः—

इत्थं निशम्य वचनं जनकस्य मुनिस्तदा ।	
वामदेवो ‘महीपाल ! श्रूयता’ मिति चाब्रवीत् ॥	१९

वामदेवः—

‘इदं चोवाच भगवान् सर्वशाल्वविशारदः ।	
पुण्यमेतन्महाश्वर्यं श्रुत्वा चैवावधारय ॥	२०
वासुदेवाश्रयं पुण्यं इतिहासं पुरातनम् ।	
ऋषयश्च पुरा राजन् सेन्द्राश्च त्रिदिवौकसः ॥	२१
तं देशं प्रस्थिताः सर्वे यत्रोपरिचरो वसुः ।	
धर्मसंशयमापन्ना द्रष्टुं तं वसुधाधिपम् ॥	२२

## उपरिचरवसुवृत्तान्तः

- अत्रान्तरे समायातः सोऽयं मार्गवशाद्वसुः ।  
 अभिजग्मुश्च तं देवा ऋषयश्च तदा वसुम् ॥ २३
- तानागतांस्ततो दृष्ट्वा देवान् ब्रह्मर्षिभिः सह ।  
 पूजयामास धर्मात्मा समुत्थाय वरासनात् ॥ २४
- सम्पूज्य तान् यथान्यायं प्रणम्य च कृताञ्जलिः ।  
 सकौतुकं समाविष्टः प्राह चेदं वचो नृप ! ॥ २५
- ‘कृतार्थोऽस्मि महाभागा यद्ययं मम चान्तिकम् ।  
 आगतास्त्रिषु लोकेषु पूजिता वेदपारगाः ॥ २६
- एण्वासनेषु सर्वेषु विशन्तु च यथाविधि ।  
 प्रसीदन्तु भवन्तोऽत्र देवा ब्रह्मर्षयोऽमलः ! ’ ॥ २७
- इत्युक्त्वा प्रददौ तेषां आसनानि महान्ति वै ।  
 मणिकाञ्चनचित्राणि दीप्यमानान्यनेकशः ॥ २८
- मुनीन्द्राणाञ्च सर्वेषां त्रिदशानाञ्च धर्मवित् ।  
 तेषु तेषूपविष्टेषु देवेषु मुनिभिः सह ॥ २९
- कृताञ्जलिर्मुदा युक्तः पप्रच्छाथ स चेदिराट् ।  
 ‘किमर्थमागता यूयं किं कार्यं भवतां मया ? ।  
 एतत्सर्वं समासेन त्वाख्यात मुनिसत्तमाः ! ’ ॥ ३०

## उपरिचरवसुं प्रति महर्षिकृतप्रश्नप्रकारः

वामदेवः—

- इत्युक्त्वा वसुना दृष्ट्वा मुनीन्द्रास्ते सुरैः सह ।  
 धर्मसंशयमापन्ना आचरन्त्युस्तस्य भूपते ॥ ३१

- ‘ धर्मसंशयमापन्ना वयं सर्वे समागताः ।  
 धर्मतत्त्वं परिप्रष्टुं छिन्धि नो धर्मसंशयम् ॥ ३२
- भो राजन्! केन यष्टव्यं सद्भिः किं पशुनाऽथवा ।  
 औषधैरेव यष्टव्यं? तदेतद्वद तत्त्वतः ॥ ३३
- एनं नः संशयं छिन्धि प्रमाणं नो भवान् मतः ।  
 इत्येवमुक्तः स वसु कृताञ्जलिरभाषत ॥ ३४
- ‘ कस्य वै को मतः पक्षो ब्रूत सत्यं द्विजोत्तमा ।  
 इत्युक्ता ऋषयः प्रोचुः पक्षौ द्वौ च पृथक् पृथक् ॥ ३५
- धान्यैर्यष्टव्यमित्येष पक्षोऽस्माकं नराधिप ।  
 पशुपक्षस्तु देवानां मतो राजन्! वदस्व नः । ॥ ३६
- निशम्य वचनं तेषां नृपेन्द्रो वसुरात्मवान् ।  
 प्रश्नमेतं समाधित्सुः मनस्येवमचिन्तयत् ॥ ३७
- ‘ महर्षिदेवतामध्ये पूर्वं पूज्या हि देवताः ।  
 ततो मयाऽद्य सङ्ग्राह्यः पक्षोऽत्र मरुता’ मिति ॥ ३८
- देवानान्तु मतं ज्ञात्वा वसुस्तत्पक्षसंश्रयात् ।  
 ‘ ‘ छागेनैव तु यष्टव्यम् ” इत्युचुरमरास्तु यत् ।  
 एवमेवैतत् इत्याह नान्यथे’ति नरोत्तम ! ॥ ३९

महर्षिशापेन उपरिचरवसोः पातालकुहरप्राप्तिः

- तेनोक्तं वचनं श्रुत्वा वसुना रक्तवीक्षणाः ।  
 मुनीन्द्रास्ते तु सङ्क्रुद्धाः प्रोचुरेवं वचो नृपम् ॥ ४०
- ‘ यदि त्वयोक्तः परमो धर्मो न स्यात्परन्तप ।  
 रसातलतलं घोरं विविशेथा ह्यक्रमतः ॥ ४१

यदि स्यात्परमो धर्मः त्वयोद्दिष्टो नरेश्वर ! ।	
वयमेवाद्य तद्गौरं प्रविशेम रसातलम् ॥	४२
विधाता भगवान् देवः सर्वात्मा परमेश्वरः ।	
नारायणः स भगवान् कृष्णः कमललोचनः ॥	४३
स एतदेव देवेशो वेत्त्येष मधुसूदनः ।	
न वेदान्यः पुमाँल्लोके वैदैतद्वा पितामहः ॥	४४
वेद देववरः साक्षात् शङ्करो वा पुरान्तकः ।	
यं विदुः सर्वभूतानां संहर्तेति पुराविदः' ॥	४५
एवमुक्ते ततस्तैस्तु निपपात स चेदिराट् ।	
अनिच्छन्नेव भूपाल ! घोरदुर्गे रसातले ॥	४६
भावयन् हृदि देवेशं त्वातारं मधुघातिनम् ।	
भक्त्या परमया युक्तः कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ॥	४७
पतमानं ततो वायुः विचरन् वै तदा बिले ।	
दधौ परमया प्रीत्या भक्तोऽयमिति शार्ङ्गिणः ॥	४८
बहन्नेव शनैर्देवो वायुस्तं चेदिपुङ्गवम् ।	
प्रवेशयामास तदा पातालं दैत्यसेवितम् ॥	४९
प्रविष्टः स नरेन्द्रोऽथ चेदिराट् विश्रुतो भुवि ।	
मनस्यच्युतमीशेशं कृत्वा सर्वेश्वरं हरिम् ॥	५०
बालुदेवं सुराध्यक्षं शङ्खचक्रगदाधरम् ।	
स्थितिसंयमकर्तारं कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ॥	५१
नारायणं समस्तानां लोकानां प्रभुमीश्वरम् ।	
द्वादशाक्षरमैवेकं परं मन्त्रं जज्ञाप ह ॥	५२
सर्वेन्द्रियाणि संयम्य भक्त्या परमया युतः ।	
विषादं नागमद्गौरं प्रविष्टोऽपि रसातलम् ॥	५३

भगवत्प्रेरितचक्रकृतवसुह्ननोद्युक्तासुरवधप्रकारः

शोकं मोहं भयञ्चापि नागमत् पृथिवीपतिः ।	
प्रविष्टमथ तं दृष्ट्वा चेदिराजं जिघांसवः ॥	५४
पूर्ववैरं स्मरन्तस्तु दैतेयाः शस्त्रपाणयः ।	
आजम्मुः सङ्घशस्तत्र शतशोऽथ सहस्रशः ॥	५५
महाबल्य महावीर्या महादंष्ट्रा महौजसः ।	
ते समेत्य महात्मानं चेदिराजं महाभुजम् ॥	५६
निजघ्नुः सहसा तैस्तैरस्त्रैः शस्त्रैस्तरस्विनः ।	
न शेकुस्तं महात्मानं हन्तुं दैतेयदानवाः ॥	५७
ब्राह्माद्यैरस्त्रजालैश्च शस्त्रैश्चापि सुदारुणैः ।	
चक्रं भगवताऽऽज्ञप्तं रक्षार्थं तस्य धीमतः ॥	५८
आगतं तत्र पाताले दुर्दर्शं तद्दूरासदम् ।	
चक्रामौ दैत्यनिर्मुक्तशस्त्राप्यस्त्राणि भूपते ! ॥	५९
ल्यं यातानि सर्वाणि पतङ्गा इव पावके ।	
अथ ते पापकर्माणो दैतेया दानवास्तदा ॥	६०
जम्मुयथागतं सर्वे स्वाल्यात् मिथिलेश्वर ! ।	
वसुश्चापि स राजर्षिः चिन्तयन् मधुसूदनम् ॥	६१
इष्टाभिर्बाष्मिरीशेशं तुष्टाव पुरुषोत्तमम् ।	
भगवानपि विशाय चेदिराजं रसातले ॥	६२

वस्त्रानयनाय पातालबिलं प्रति भगवत्कृतगरुडप्रेषणम्

पतितं विप्रशापेन सर्वेशः सर्वभावनः ।	
परः परात्मा पुरुषः परमात्मा सनातनः ॥	६३



अव्यक्तरूपो विश्वात्मा विष्णुर्नारायणः स्वयम् ।	
नागेन्द्रशयने रम्ये शयानो मधुसूदनः ॥	६४
भक्तानुकम्पी देवेशः क्षीरार्णवनिकेतनः ।	
वैनतेयं जगन्नाथः सस्मार शुभलोचनः ॥	६५
संस्मृतो गरुडस्तेन विनतानन्दनस्ततः ।	
शीघ्रमेव हरेस्तस्य पार्श्वमभ्यागमत्तदा ॥	६६
आगतं तं गरुत्मन्तं समीक्ष्य वसुधाधिप !	
मेघगम्भीरया वाचा प्रोवाचेदं प्रजापतिः ॥	६७

श्रीभगवान्—

‘वैनतेय ! स राजर्षिर्वसुर्नित्यं मम प्रियः ।	
विप्रशापभयाद्धोरे पाताले पतितः विल ॥	६८
पतितोऽपि स पाताले भक्त्या परमया युतः ।	
मामेव भजते नित्यं मय्यावेश्य मनोगतिम् ॥	६९
तमानयस्व भूपालं गरुत्मन् ! वचनान्मम ।	
तस्मादुद्धृत्य पातालात् स्वदेशं प्रापयाव्ययम् ॥	७०
क्षिप्रं त्वं गच्छ राजर्षिः मद्भक्तो यत्र हि स्थितः ।	
नैवमर्हति भूपालः स वसुः गरुडामलः ’ ॥	७१

वामदेवः—

इत्युक्तो गरुडस्तेन हरिणा परमेष्ठिना ।	
‘तथे’त्युक्त्वा ततः शीघ्रं अभ्यगाद्वै रसातलम् ॥	७२
भूप ! प्रविशतस्तस्य पातालन्तु तरस्विनः ।	
गरुडस्योग्रवेगस्य पक्षवातेन वेगतः ॥	७३
आहताः शतशो नेशुः पन्नगेन्द्रा रसातले ।	
पातालवासिनश्चापि दैतेयाः शतशस्तथा ॥	७४

तद्वयाच्च महावीर्या निपेतुः शतशस्ततः ।	
चुक्षुभुः सागराश्चापि पर्वताश्च चकम्पिरे ॥	७५
समूला न्यपतन् वृक्षा भग्नस्कन्धाः समुछिताः ।	
परित्यज्य तदाऽऽकाशं खेचराः प्रययुर्दिवम् ॥	७६
अन्तर्गत्वाऽथ पाताले गरुत्मान् विनतासुतः ।	
ददर्श तं समासीनं चेदिराजं महीपतिम् ॥	७७
भगवन्तं जगन्नाथं स्तुवन्तं पुरुषोत्तमम् ।	
गरुत्मन्तं ततो दृष्ट्वा सहसा वसुरुत्थितः ॥	७८
धृताञ्जलिर्महातेजाः पूजयामास भक्तिमान् ।	
गरुडश्चापि भूपालं सम्पूजयेदमथाब्रवीत् ।	
स्मयन्निव महावीर्यो हर्षयन्निव तं वसुम् ॥	७९
‘श्रूयतां भूपते! वाक्यं कृष्णस्याक्लिष्टकारिणः ।	
सृष्टिसंयमनेशस्य विष्णोरमिततेजसः ॥	८०
“आनयस्व वसुं भक्तं रसातलतलं गतम् ।	
स्तुवन्तं मां समावेक्ष्य मय्येव मतिमुत्तमाम्” ॥	८१
इत्युक्तो लोकनाथेन तवानयनकर्मणि ।	
आगतोऽहं महीपाल ! समारोह ममोपरि’ ॥	८२

वामदेवः—

वैनतेयेन तेनैव प्रोक्तः स पृथिवीपतिः ।	
उवाच परया प्रीत्या गरुत्मन्तं वसुर्नृपः ॥	८३
‘तव पृष्ठं समारोढुं न चेच्छामि शुभेक्षण ! ।	
यत्रारोहति गोविन्दः कृष्णः शुभविलोचनः ॥	८४
नाथश्च जगतां धाता यस्मिंश्चक्रगदाधरः ।	
आरोहति मया तस्मिन् आस्थातुं नैव चोचितम्’ ॥	८५

बामदेवः— इत्युक्तो गरुडस्तेन चेदिराजेन धीमता ।	
‘तवानुरूपं वचनमुक्त’ मित्यब्रवीत्ततः ॥	८६
इत्युक्त्वा तं तथाभूतं गरुत्मान् पन्नगाशनः ।	
बाहुभ्यां सम्परिष्वज्य प्राह चैनं पुन पुनः ॥	८७
‘उत्पपाताशु वेगेन बाहुभ्यां परिगृह्यताम्’ ।	
महाजवो महावीर्यो महादंष्ट्रो महामनाः ॥	८८
तत उत्पततस्तस्य गरुडस्य तरस्विनः ।	
पक्षवातेन सन्नस्ताः पातालतलवासिनः ॥	८९
महोरगा महावीर्याः प्रययुः सर्वतो दिशम् ।	
दैतेया दानवाश्चापि राक्षसाश्च सहस्रशः ॥	९०
दिशो दश समाजग्मुः कृष्णागमनशङ्कया ।	
पातालं समतीत्याथ वैनतेयः प्रतापवान् ॥	९१
स्वदेशं प्रापयामास तं वसुं चेदिपुङ्गवम् ।	
हस्ताभ्यां भुवि निक्षिप्य तं वसुं गरुडस्तदा ॥	९२
‘अत्रैव स्वीयतां राजन् !’ इत्युक्त्वा प्रययौ बली ।	
वसुश्चापि स राजर्षिः स्वराज्यं प्राप्य भूपतिः ॥	९३
बुभुजे सकलान् कामान् शशास च वसुन्धराम् ।	
विष्णोरेव प्रसादेन सर्वभूतनिवासिनः ॥	९४
जगद्धातुरनन्तस्य पश्चात् मुक्तिमवाप्तवान् ।	
एवमेतत्पुरावृत्तं कथितं ते नृपोत्तम ॥	९५
नारायणाश्रितं पुण्यं यः पठेत् भक्तिमान् नरः ।	
प्रणम्याच्युतमीशेशं स याति परमां गतिम् ॥	९६
नारायणेतिहासं यः शृणोति श्रावयिष्यति ।	
श्रद्धया भगवद्भक्तिं प्राप्नोति स नराधिप ! ॥	९७

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे अथत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ४९३

मुच्यन्ते ते नराः सद्यो दुष्कृतैः सकलैर्नृप । ।

उद्ध्रियन्ते च संसारात् पातालाच्चेदिराडिव ॥ ९८

विभुना बासुदेवेन कृष्णेनैव दयालुना ।

हरिणा लोकनाथेन सर्वकामप्रदायिना ॥ ९९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये उपरिचरवसु-  
उपाख्यानं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ।

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

शंखादीनां भगवद्विव्यमङ्गलविग्रहसेवा

वामदेवः—

ततस्ते त्रय आश्चर्यं गिरेस्तत्र समाययुः ।

शिखरं मेरुसङ्काशं नानाधातुविभूषितम् ॥ १

श्रिया परमया युक्तं भासयन्तः स्वतेजसा ।

शिखरेण च येनैव पर्वतः स विराजितः ।

यस्मिंश्चापि समासीना मुनयः शतशो नृप ! ॥ २

अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे भास्करोपमतेजसः ।

आगत्य सहसा भूप ! दीप्यमाना इवाम्रयः ॥ ३

भासयन्तो दिशः सर्वाः तेजोभिर्भास्करोपमाः ।

अगस्त्यप्रमुखान् विप्रान् सर्वास्तान् ददृशुस्तदा ॥ ४

निषण्णास्तस्य शिखरे विषण्णान् भृशदु खितान् ।

तानागतांस्ततो दृष्ट्वा ह्यदित्यानपरानिव ॥ ५

- समुत्तस्थुर्द्विजास्तत्र निषण्णा ये नगोत्तमे ।  
 पूजयन्ति स्म तान् सर्वान् अगस्त्यप्रमुखांस्तथा ॥ ६
- सङ्गत्य मुनिभिः सर्वैः त्रयस्तेऽथ महौजसः ।  
 प्रोचुः परमसंहृष्टा नादयन्तो दिशो दश ॥ ७
- ‘शुभा व्युष्टा निशाऽस्माकं शुभाश्च तिथयोऽमलाः ।  
 युष्माभिः सङ्गता यस्मात् वयं ब्रह्मर्षिसत्तमाः ! ॥ ८
- किमर्थमागता यूयं पर्वतेऽस्मिन् महीयसि ।  
 विषण्णाश्च किमर्थं वा कं वा द्रष्टुमिहागताः ? ॥ ९
- एतन्मुनिवरा यूयं अस्माकं पृच्छतां द्विजाः ।  
 सर्वमाख्यात तत्त्वेन श्रोतुमिच्छामहे वयम् ’ ॥ १०
- एवं मुनिवरास्तैस्तु सम्यक् पृष्टा महात्मभिः ।  
 ‘श्रूयता’ मिति चाभाष्य प्रोचुस्ते मिथिलेश्वर ! ॥ ११

श्रुषयः—

- शङ्खचक्रधरं देवं पीतवाससमच्युतम् ।  
 नारायणगिरावस्मिन् वसन्तं पुरुषोत्तमम् । १२
- ईशितारं समस्तस्य स्रष्टारं जगतोऽव्ययम् ।  
 तं वयं शुभदातारं द्रष्टुकामाः समागताः ॥ १३
- न च दृष्टो जगन्नाथो विचरद्भिः समन्ततः ।  
 कालेन महता चापि विषण्णास्तेन ते वयम् ॥ १४
- अदृश्यमाने गोविन्दे हरावव्यक्तजन्मनि ।  
 शोकेन महताऽऽविष्टा भृशमुद्विग्नमानसाः ॥ १५
- विषण्णाश्च शुभे ह्यस्मिन् शिखरे धातुमण्डिते ।  
 एवमुक्ते मुनीन्द्रैस्तु ततस्तैः जनकामराः ।  
 मुनीन्द्राः तान् समाभाष्य प्रोचुस्ते ‘श्रूयता’ मिति ॥ १६

वस्त्रादयः—

- ‘शङ्खो नाम महीपालो हैहयाधिपतिः प्रभुः ।  
 आसीत् श्रुतस्य तनयः सत्पथे निष्ठितः शुभे ॥ १७
- स्वामिपुष्करिणीतीरे स च राजाऽर्चयन् हरिम् ।  
 तपश्चरति राजेन्द्र ! तस्य राशो जनार्दनः ॥ १८
- सान्निध्यं कुरुते देवो भगवानिति विश्रुतम् ।  
 सोऽयं समागतः कालो यस्मिन् काले जनार्दनः ॥ १९
- शङ्खेन दृश्यते राजन् ! विश्वरूपधरो हरिः ।  
 तान्तु गच्छामहे पुण्यां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ॥ २०
- सर्वकामप्रदां शुद्धां सेवितां त्रिदशैरपि ।  
 तत्र गत्वा वयञ्चापि द्रक्ष्यामः पुरुषोत्तमम् ॥ २१
- सर्वकामप्रदातारं सर्वेशं सर्वभावनम् ।  
 तस्माद्ययं वयं चापि गच्छाम द्विजसत्तमा ! ॥ २२
- नात्र स्थेयं क्षणमपि त्वर्यतां त्वर्यतामिति ।  
 इत्युक्तेऽथ तदा भूप ! वस्वाद्यैस्तैः महात्मभिः ॥ २३
- संहृष्टमनसः सर्वे बभूवुः द्विजसत्तमाः ।  
 प्रोचुश्च ‘शीघ्रमेवास्मात् गम्यतां गम्यता’ मिति ॥ २४
- गतमोहा महात्मानो गतशोका गतज्वराः ।  
 मुनयोऽथ ययुः सर्वे वस्वाद्यैः सहिता नृप ! ॥ २५
- स्वामिपुष्करिणीतीर्थं मुनीनां गणसेविताम् ।  
 गच्छन्तस्तेऽथ संहृष्टाः प्रोचुरेवं परस्परम् ।  
 नरेन्द्र ! मुनिशार्दूल वीक्षमाणा महीधरम् ॥ २६
- ‘अयं किल जगद्धातुः वासुदेवस्य शार्ङ्गिणः ।  
 भूधरो बहुवृक्षाढ्यः सदा प्रियतमो भुवि ॥ २७

एनं समाश्रिताः पुण्यं मुनयश्च पुरातनाः ।	
पुरातनं सुराध्यक्षं दृष्टवन्तः किलाव्ययम् ॥	२८
भक्ताश्चापि जगद्धातुः स्तुवन्तः पुरुषोत्तमम् ।	
एनमारुह्य शैलेन्द्रं द्रक्ष्यन्ति पुरुषाः किल ॥	२९
स्थानेभ्यश्च समस्तेभ्यः तस्येशस्य महात्मनः ।	
अयं गिरिः महान् दिव्यः सम्यक् प्रियतरः किल ॥	३०
“नारायणाद्रि” रित्येतत् नामैव वदति स्वयम् ।	
नारायणस्य स्थानेषु नैतस्मात् विद्यते परम् ॥	३१
एवंविधानि वाक्यानि ब्रुवन्तस्ते द्विजोत्तमाः ।	
ययुस्ते सर्वतस्तत्र शतशो मिथिलेश्वर ! ॥	३२
एतस्मिन्नन्तरे तत्र समाजग्मुः सहस्रशः ।	
तद्विज्ञाय ततः सिद्धाः श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥	३३
यैः प्राप्तं देवसारूप्यं प्रसादात् तस्य शार्ङ्गिणः ।	
नारायणस्य देवस्य हरेः क्षीरोदशायिनः ॥	३४
सर्वदाऽनुगता ये वै प्रीणयन्ति जनार्दनम् ।	
क्षीरोदशायिनं देवं विश्वकर्तारमीश्वरम् ॥	३५
ते सङ्गतास्तु तैः सर्वैः अगस्त्यप्रमुखैर्द्विजैः ।	
तपसा महता युक्तैः विचरद्भिर्महीधरम् ॥	३६
अगस्त्यप्रमुखान् सर्वान् श्वेतद्वीपनिवासिनः ।	
हर्षेण महता युक्ता यथान्यायमपूजयन् ॥	३७
ते चापि मुनयः सर्वे प्रहर्षोत्फुल्ललोचनाः ।	
तानागतांस्ततो दृष्ट्वा भास्करोपमतेजसः ॥	३८
अपूजयन्महात्मानो यथान्यायमरिन्दमम् ।	
सर्वे ते सङ्गतास्तत्र तैः सर्वैर्भुनिपुङ्गवैः ॥	३९

ययुः परमया प्रीत्या श्वेतद्वीपनिवासिनः ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरं देवासुरनिषेवितम् ॥	४०
सर्वे मुनिवराश्चापि सिद्धाश्चापि सहस्रशः ।	
बृहस्पतिश्च भगवान् शुक्रश्चापि तथा वसुः ॥	४१
स्वामिपुष्करिणीतीरं अवापुरवनीपते ! ।	
सान्निध्यं कुरुते यत्नं भगवान् भूतभावनः ॥	४२
तत्र गत्वाऽथ ते सर्वे नापश्यन् पुरुषोत्तमम् ।	
नीलमेघप्रतीकाशं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ॥	४३
तत्रापश्यंस्ततो राजन् ! तप्यन्तं सुमहत्तपः ।	
विष्णोराराधनार्थाय शङ्खञ्च नियतेन्द्रियम् ॥	४४
तानागतांस्ततो दृष्ट्वा शङ्खोऽथ नृपतेः सुतः ।	
रोमाञ्चिताङ्गः सहसा परां प्रीतिमुपागमत् ॥	४५
कृतकृत्यं तदात्मानं मेने नरवरात्मजः ।	
संस्मरन् पूर्वमेवोक्तं हरिणा हरिमेधसा ॥	४६
‘अथ तेषु मुनीन्द्रेषु द्रष्टाऽसी ’ ति वचः स्मरन् ।	
सहस्रोत्थाय तान् सर्वान् प्रणनाम नृपस्तदा ॥	४७
व्याकुलीकृतसर्वाङ्गः ततः सम्भ्रान्तमानसः ।	
सिद्धाश्चापि तथा सर्वान् श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥	४८
वागीशञ्च तथा शुक्रं वसुञ्चापि महामतिम् ।	
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रणनाम च तान् नृप ! ॥	४९
अगस्त्यप्रमुखाश्चापि सिद्धाश्चापि सहस्रशः ।	
बृहस्पतिश्च भगवान् शुक्रश्चापि महामुनिः ॥	५०
तथा च भगवद्भक्तो राजोपरिचरो वसुः ।	
श्रुतस्य तनयश्चापि शङ्खः परपुरञ्जयः ॥	५१



एते सर्वे महात्मानः समवेता ह्यकल्मषाः ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरे द्रष्टुकामा जनार्दनम् ॥	५२
अपश्यन्तस्तु ते सर्वे गोविन्दं विभुमच्युतम् ।	
अनादिमध्यनिधनं सर्वभूतनिवासिनम् ॥	५३
तपः परममास्थाय प्रयता नियतेन्द्रियाः ।	
चिन्तयन्तस्तु देवेशं तत्रातिष्ठंस्ततो नृप ! ॥	५४
तस्यामेव तदा सर्वे स्नात्वा पीत्वा मुदा म्वताः ।	
पुष्करिण्यां शुभयान्तु विमलायां दिने दिने ॥	५५
अर्चयन्तो हृषीकेशं दिव्यैः पुष्पैः सुगन्धिभिः ।	
अकुर्वन्ते तपो घोरं द्रष्टुमव्यक्तरूपिणम् ॥	५६
त्रिरात्रमेवं भूपाल ! व्यतिष्ठन्ते दिवानिशम् ।	
ततो विमल आदित्ये चतुर्थेऽह्नि शुभे दिने ॥	५७
तपसोऽन्ते च पुण्यक्षे विमले चाम्बरे शुभे ।	
तदा प्रसन्नः सर्वात्मा साक्षात् नारायणः स्वयम् ॥	५८
आविर्बभूव भगवान् नृपते ! पुरुषोत्तमः ।	
आजयन् सर्वलोकेशः सर्वान् लोकान् स्वतेजसा ॥	५९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये शङ्खादीनां

भगवत्सेवाप्राप्तिवर्णनं नाम

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः



अथ चतुर्विंशोऽध्यायः

आविर्भूतमगदिव्यमङ्गलविग्रहवर्णनम्

जनकः—

- ‘कीदृशं वै हरेस्तस्य रूपमव्यक्तरूपिणः ।  
 कियन्तो वा भुजास्तस्य कियन्ति वदनानि च ॥ १  
 कियन्तो वा धृतास्तेन तीक्ष्णाः प्रहरणास्तथा ? ।  
 ब्रूहि तद्रूपसंस्थानं विश्वमूर्तेर्हरेर्मुने ! ।  
 दृष्टवन्तो यथा सिद्धा मुनयश्च पुराजनाः ॥ २

शतानन्दः—

- जनकेनैवमुक्तस्तु वामदेवो महामुनिः ।  
 ‘श्रूयतामि’ त्यथाऽभाष्य जनकं तं वचोऽब्रवीत् ॥ ३  
 वक्ष्येऽहं नृपते ! सम्यक् श्रूयतामिदमादरात् ।  
 यथाश्रुतं मयाऽगस्त्यात् मुनीन्द्रात् कुम्भजन्मनः ॥ ४

वामदेवः—

- तद्रूपं वासुदेवस्य हरेरव्यक्तरूपिणः ।  
 उद्यतादित्यसङ्काशैः नयनैः शोभितं शुभैः ।  
 नानारत्नचित्तैश्चित्रैः किरीटैरुपशोभितम् ॥ ५  
 प्रसन्नैर्वहुभिश्चापि वदनैरुपशोभितम् ।  
 प्रवालमणिहेमाद्यैः चित्तितैः हेमकुण्डलैः ॥ ६  
 नानावर्णैरनेकैश्च रुचिरैः समलङ्कृतम् ।  
 दिव्याभरणजालैश्च नानारत्नविचित्रितैः ॥ ७  
 अनेकशतसाहस्रैः शोभितं शुभलोचनैः ।  
 कम्बुग्रीवं महोरस्कं महाबाहुं महाद्युतिम् ॥ ८

सहस्रबाहुकं दिव्यं रत्नजालविभूषितम् ।	
आयताश्च सुपीनाश्च सुवृत्ताश्च भुजाः शुभाः ॥	९
नानाप्रहरणोपेताः नानाभूषणभूषिताः ।	
सालस्कन्धोपमाश्चापि भूषिता भूषणोत्तमैः ॥	१०
श्यामाः पृथुतरा दिव्याः तरुणादित्यतेजसः ।	
तरुणाः स्निग्धवर्णाश्च सुस्वस्पर्शनस्वाङ्कुराः ॥	११
शुभरेखाः सुरनाश्च समा मृदुतरास्तथा ।	
दृश्यन्ते शतशस्तत्र राजन् ! करिकरोपमाः ॥	१२
यैरण्डमेतत् भूपाल ! ससागरमहीधरम् ।	
सपातालतलं सर्वं सदेवासुरमानुषम् ॥	१३
ससप्तलोकं सद्वीपं सर्वभूतसमाकुलम् ।	
रक्षितं बहुशो दिव्यैः निहता यैश्च दानवाः ॥	१४
ये दुःखहानिदा नित्यं वैष्णवानां विशेषतः ।	
वसन्ति यान् समाश्रित्य दैत्येभ्यो निर्भयाः सुराः ॥	१५
ते कराः सुरनाथस्य दृश्यमानाः चक्रशिरे ।	
उदयादुद्यतस्तस्य भास्करस्य करा इव ।	१६
सद्रत्नजालक्रीक्रीणहारेणापि सुशोभितम् ।	
मेघकाले तडिन्मालाशोभितस्य महत्मानः ॥	१७
मेघजालस्य वर्णेन सदृशं रुचिरं वपुः ।	
चारुरक्तलोष्ठं तत् चारुरक्ततरेक्षणम् ॥	१८
मृदुचारुकपोलैश्च कुण्डलैरुपशोभितम् ।	
शोभमानं ज्वलद्भिश्च ललाटफलकैरपि ॥	१९
शोभमानैस्तथा चारुभ्रूचापैरुपशोभितम् ।	
ऐरावतकराकारचारुपीनशुभोरुकम् ॥	२०

द्युतिमन्मणिरत्नाढ्यचलन्नूपुरशोभितम् ।	
काञ्चनेन विचितेण ब्रह्मसूत्रेण शोभितम् ॥	२१
सहस्रादित्यसङ्काशमचिन्त्यं महद्भुतम् ।	
मेरुमन्दरसङ्काशं नीलपर्वतसन्निभम् ॥	२२
समुच्छ्रितोरसं सौम्यं समायतविलोचनम् ।	
दिव्यपीताम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ॥	२३
दिव्यया वैजयन्त्या च सुस्कन्धगतया तथा ।	
चक्राशे तद्यथा मेघो विद्युन्मालाविराजितः ॥	२४
जाम्बूनदमयैर्दिव्यैः निःवनद्विरनेकशः ।	
किङ्किणीजालसङ्घैश्च शोभनैःरुचिरप्रभैः ॥	२५
स्वनद्विर्मणिजालैश्च शोभयद्विर्दिशो दश ।	
सुरक्तैर्बहुसाहस्रैः ज्वलद्विभस्करोपमैः ॥	२६
उद्यदिन्दुप्रतीकाशैः दिव्यैश्च नखमण्डलैः ।	
रक्तान्नैरुन्नतैश्चापि शोभमानं सदाम्बुजैः ॥	२७
अङ्कुशध्वजचक्राब्जशङ्खवज्राङ्कितैस्तथा ।	
सुपादतलपद्मैश्च शोभितं वसुधाधिप ! ॥	२८
मुक्तादामभिरन्यैश्च वज्रसूर्याशुसन्निभैः ।	
प्रभया द्योतमानैश्च शोभमानपदाम्बुजम् ॥	२९
अनेकशतसाहस्रैः अङ्गुलीयकभूषणैः ।	
नानारत्नचितैश्चापि संशोभिकरशाखिभिः ॥	३०
मूर्धजैः कुञ्चितैश्चापि नीलैः मृदुतरैस्तथा ।	
लम्बमानैर्विनिष्क्रान्तैः किरीटात् शुभदर्शनात् ॥	३१
प्रच्छाद्यमानवदनं मेघैरिव निशाकरम् ।	
रत्नस्यूतेन सूत्रेण काञ्चनेन विराजितम् ॥	३२

नानामणिनिबद्धेन शोभमानेन शोभितम् ।	
शोभितं दिव्यमालभिः भूषितं पृथुलोचनम् ॥	३३
नानाश्चर्यसमायुक्तं नानामणिगणान्वितम् ।	
समन्ताद्दीप्यमानं तत् भूरिणा स्वेन तेजसा ॥	३४
आदित्य इव तेजोभिः उद्यतं तूदयाद्रितः ।	
तेजोभिः काञ्चनाभैश्च समन्तान्निर्गतैस्तथा ॥	३५
जाज्वल्यमानं तद्रूपं चकाशेऽद्भुतदर्शनम् ।	
स्वभासा दुर्निरीक्ष्यं तत् मुनिभिश्च सुरैरपि ॥	३६
तप्यते तेजसा तस्मात् निर्गतेन स्म भूरिणा ।	
ससुरासुरगन्धर्वं जगदेतत् चराचरम् ॥	३७
ज्वलद्भिरर्कवर्णैश्च जाम्बूनदमयैस्तथा ।	
अनेकशतसाहस्रैः संयुक्तं हेमभूषणैः ॥	३८
करेषु तेषु संयुक्ताः तीक्ष्णाः प्रहरणास्तथा ।	
ज्वलन्तश्च स्फुरन्तश्च मिथिलेश ! चकाशिरे ॥	३९
अर्चिषि तेभ्यो निष्पेतुः यैर्दिशो विमलीकृताः ।	
उदयाद्रिसमारुढात् सूर्यात् दीप्तांशवो यथा ॥	४०
व्यालोला लोकनाथस्य प्रसन्नाः शुभदर्शनाः ।	
आयताः कृष्णरक्ताश्च भ्रूचापा दृष्टिमार्गणाः ॥	४१
रक्तपद्मदलप्रख्याः कान्तिमन्तः सुवर्चसः ।	
श्रिया परमया युक्ताः पक्ष्मराजिविराजिताः ॥	४२
येषां निपातैः दैतेयाः नेदुः भीताः सहस्रशः ।	
रक्षांसि दानवाश्चपि जम्मुः वैवस्वतक्षयम् ॥	४३
दुर्लभञ्चापि देवत्वं प्राप्नुवन्ति नरा अपि ।	
अन्याश्च दुर्लभान् कामान् मुक्तिञ्चापि सुदुर्लभाम् ॥	४४

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चतुर्विंशोऽध्यायः ५०३

यान् द्रष्टुकामाः तद्भक्ताः शोचन्ति हि दिवानिशम् ।  
ते भूप ! शतशो दिव्या राजन्ते रुचिरप्रभाः ॥ ४५

अनेकशतसाहस्राः कालाग्निसदृशप्रभाः ।  
नानाप्रहरणा घोराः संयुक्तास्तत्र बाहुषु ॥ ४६

भयदाः सुरशत्रूणां दैत्येन्द्राणां महौजसाम् ।  
सर्वगाः सर्वदेशेषु भक्तानामभयप्रदाः ॥ ४७

जाज्वल्यमानास्तेजोभि रूक्षकैः सौम्यकैरपि ।  
अकुर्वन्निष्प्रनौ सद्यः चन्द्रसूर्यौ स्वरश्मिभिः ॥ ४८

तद्रूपमाश्चर्यमनेकवर्णं  
विस्तीर्यमालाभिरशेषभूतैः ।

व्यराजताऽदित्य इवान्तकाले  
स्वरश्मिमालाभिरनेकरश्मिः ॥ ४९

तद्दीप्तवक्त्रं विमलं विशोकं  
जाज्वल्यमानं महता स्वतेजसा ।

अशोभताऽद्यं वपुरद्भुतेक्षणं  
युगान्तकालाग्निरिव प्रदीप्तम् ॥ ५०

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवद्दिव्य-

मङ्गलविग्रहवर्णनं नाम

चतुर्विंशोऽध्यायः ।



अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

— : \* : —

आविर्भूतं भगवन्तं प्रति महर्षिकृतप्रणामादिक्रमः

वामदेवः—

- एवंविधं हरिस्तेभ्योऽदर्शयद्भगवान् वपुः ।  
 यन्न देवा न मुनयो नापि सिद्धा न चारणाः ॥ १
- न योगिनो न गन्धर्वा नापि विद्याधरा अपि ।  
 न च यक्षा न चाप्यन्ये वालखिल्याश्च तापसाः ॥ २
- नोरगा नापि दैतेया नापि किम्पुरुषास्तथा ।  
 दृष्टवन्तः पुरा राजन् ! कृष्णस्य वपुरद्भुतम् ॥ ३
- ततस्तु मुनयो दिव्यं रूपं तद्विधृतोमुखम् ।  
 अनेकरत्नसञ्चिन्नकिरीटोज्ज्वलिताननम् ॥ ४
- व्यालोलमानैर्बहुभिः कुण्डलैः समलङ्कृतम् ।  
 पिबन्त इव नेत्रैस्ते सङ्क्षोभस्तिमितैस्तदा ॥ ५
- ददृशुर्मुदिताः सर्वे नरेन्द्रानिमिषेक्षणाः ।  
 'भृशमार्ताः स्म देवे' ति सहसा भुवि भूपते ! ॥ ६
- निपेतुरथ ते सर्वे सम्भ्रान्तमनसोऽमलाः ।  
 अथ दृष्ट्वा जगन्नाथं वेङ्कटाद्रिनिवासिनम् ॥ ७
- सहस्रशः समागम्य भक्तिभारावनामितैः ।  
 शिरोभिरवनीपाल ! प्रणेमुः सहसा भुवि ॥ ८
- बृहस्पतिरगस्त्यश्च शुक्रश्चापि वसुस्तथा ।  
 भगवन्तं ततो दृष्ट्वा गरुडोपरि संस्थितम् ॥ ९
- जाम्बूनदाद्रिशिखरे नीलमेघमिवोत्थितम् ।  
 भक्त्या प्रणेमुस्तं देवं वीक्षमाणा इतस्ततः ॥ १०

उत्थायोत्थाय ते सर्वे भूयोभूयो नीरीक्षितम् ।  
'प्रसीदे' ति ब्रुवन्तस्तं प्रणमुः बहुशो नृप ! ॥ ११

**भगवदाविर्भावकाले देवताद्यापूरितशङ्खादिमङ्गलवाद्यक्रमः**

एतस्मिन्नन्तरे स्वस्थैः शतशोऽथ सहस्रशः ।  
पाञ्चजन्योपमाः शङ्खाः दध्मिरे हेमभूषणाः ॥ १२  
अवाद्यन्त च दिव्यानि वाद्यानि बहुशोऽम्बरे ।  
मृदङ्गादीनि सर्वाणि हेमरत्नचितानि वै ॥ १३  
महता शङ्खनादेन वादित्राणां स्वनेन च ।  
जगदापूरितं सर्वं क्षुभिताश्चापि दानवाः ॥ १४  
निवसन्ति च ये तत्र नारायणगिरौ नृप ! ।  
ते सर्वे सहसा हृष्टाः समुत्तस्थुश्च सङ्घशः ॥ १५  
तस्मिंश्छब्दे श्रुते सर्वे सिंहपक्षिमृगास्तथा ।  
प्रसन्नतां ययुः सर्वे वेङ्कटाद्रिनिवासिनः ॥ १६

**भगवत्सेवार्थं वेङ्कटाचलं प्रति ब्रह्मरुद्राद्यागमनम्**

श्रुत्वा तं शब्दमतुलं ब्रह्मा लोकपितामहः ।  
ज्ञात्वाऽथ वासुदेवं तं हरिं प्रत्यक्षतां गतम् ।  
आजगामाथ तत्पार्श्वं कृष्णस्याक्लिष्टकारिणः ॥ १७  
मुनीन्द्रैर्देवसङ्घैश्च गन्धर्वैश्च समावृतः ।  
भगवान् शङ्करश्चापि त्र्यम्बकस्त्रिपुरान्तकः ॥ १८  
ज्वलद्वास्करसङ्काशजटामण्डलशोभितः ।  
तेन शब्देन विज्ञाय सान्निध्यं हरिमेधसः ॥ १९  
अभ्यगादाशु तत्पार्श्वं द्रष्टुं तं वसुधाधिप ! ।  
दुर्वाससा मुनीन्द्रेण नन्दिना च समं विभुः ॥ २०



शक्रश्च त्रिदशश्रेष्ठः श्रुत्वा तं शब्दमद्भुतम् ।	
हरिं प्रत्यक्षतां यान्तं ज्ञात्वा देवं जनार्दनम् ॥	२१
देवैः परिवृतः पार्श्वं ययावव्यक्तजन्मनः ।	
ततः शङ्खध्वनिं श्रुत्वा विष्वक्सेनः प्रतापवान् ॥	२२
ज्ञात्वा प्रत्यक्षतां यान्तं नारायणमनामयम् ।	
सहसोत्थाय भूपाल! शीघ्रमेवाभ्यगात्तदा ॥	२३
सप्तभिः सचिवैः सार्धं सकाशं शार्ङ्गधन्वनः ।	
अनुरक्तैर्महावीर्यैः प्रयतैः सुसमाहितैः ॥	२४
सनन्दनादयश्चापि योगिनस्तेऽथ चक्रिणः ।	
पार्श्वमभ्याययुः श्रुत्वा तं शब्दं मिथिलेश्वर ! ॥	२५
सत्सर्षयश्च ये पूर्वं मयोक्ता मुनिसत्तमाः ।	
तेऽपि श्रुत्वा च तं शब्दं हरेः पार्श्वं ययुस्तदा ॥	२६
यश्चापि मुनिर्भिदृष्टो वायव्यां दिशि भूमृतः ।	
शिलातले समासीनः पुरुषोऽद्भुतदर्शनः ॥	२७
सोऽपि शङ्खध्वनिं श्रुत्वा भगवत्पार्श्वमाययौ ।	
ब्रह्मा प्रजापतिश्चापि भगवान् शम्भुरेव च ॥	२८
विष्वक्सेनश्च भगवान् शक्रश्च त्रिदशाधिपः ।	
सत्सर्षयश्च मुनयः सनकाद्याश्च योगिनः ॥	२९
वायव्यां दिशि यो दृष्टो मुनिभिः सोऽपि भूपते ! ।	
एते सर्वे समागम्य सकाशं शार्ङ्गधन्वनः ॥	३०
भक्त्या परमया युक्ताः राजन्! संहृष्टमानसाः ।	
ददृशुस्ते समारूढं वैनतेयं महाबलम् ॥	३१
हरिं हेमाद्रिशिखरे नीलमेघमिव स्थितम् ।	
शिरोभिस्ते प्रणेमुस्तं विश्वेशं विश्वरूपिणम् ॥	३२

“जय देव ! जयेशे” ति वदन्तः सहसा भुवि । सर्वे देवगणाश्चापि प्रणमुः पृथुलोचनम् ॥	३३
“प्रसीद देवदेवे” ति वदन्तस्ते पुनः पुनः । ब्रह्माद्या देवताश्चापि मुनयश्च तपोधनाः ॥	३४
सिद्धाश्चापि तथा सर्वे श्वेतद्वीपनिवासिनः । एते सर्वे हरेस्तस्य रूपं परपुरञ्जय ! ॥	३५
द्रष्टुं नाशक्नुवन् नेतैः तेजसा तस्य तापिताः । प्रतपन्तमिवादित्यं संहारसमये नराः । न्यमीलयन्त नेत्राणि ब्रह्माद्यास्ते ततो नृप ! ॥	३६

ब्रह्मकृतभगवत्स्तुतिः

तेजसा पीडितास्तस्य देवदेवस्य शार्ङ्गिणः । तुष्टावाथ तदा ब्रह्मा देवाधिपतिमव्ययम् । पतत्रिराजमारूढं शिरोभिः प्रणिपत्य तम् ॥	३७
--	----

ब्रह्मोवाच—

“नामामि त्वां जगन्नाथ ! सहस्रवदनेक्षण ! । ज्वलत्किरीटसाहस्रधारिणं पुरुषोत्तमम् ॥	३८
रुचिरैर्बहुभिर्दिव्यैः बाहुभिः परिघोपमैः । संयुक्तं त्वां नमाम्याद्यं विश्वेशं विश्वतोमुखम् ॥	३९
अणीयसामशेषाणां अणीयांसं सनातनम् । भूतादीनां समस्तानां गरिष्ठञ्च गरीयसाम् ॥	४०
नारायण ! त्वां वरदं नमामि परमेश्वरम् । योगिभिर्गम्यमान त्वां जनलोकगतं विभुम् ॥	४१

परं पुराणं पुरुषं नमामि सुरनायकम् ।	
प्रसीदतु भवान् विष्णो ! रहितः प्राकृतैर्गुणैः ॥	४२
शुद्धः पुमान् समस्तेभ्यो भूतेभ्यः सर्वसम्भवः ।	
साक्षिभूतः समस्तस्य जगतोऽस्य जगत्पते ! ॥	४३
नमामि त्वामहं नित्यं व्यालोलायतलोचनम् ।	
यः प्रोच्यते विशुद्धो हि सर्वेश इति केशव ! ॥	४४
तं त्वां नमाम्यशेषाणां आत्मानं सर्वदेहिनाम् ।	
समस्तकारणानां त्वं कारणं प्रभुरव्ययः ॥	४५
ब्रह्मवित् योगिनाञ्चासि प्रजानाञ्च प्रजापतिः ।	
यं न जानन्ति मुनयो नापि देवा न दानवाः ॥	४६
नाहं न शम्भुर्विष्णवाख्यं तत्पदं परमं भवान् ।	
इन्द्राद्याः शतशो यस्य देवाः त्रिभुवनेश्वराः ॥	४७
द्रष्टुकामा न जानन्ति रूपमव्यक्तरूपिणः ।	
तदहं विमलं देव ! शाश्वतं पदमव्ययम् ॥	४८
न स्तोतुमीशो न च देव वक्तुं	
गुणांस्तवेशाच्युत ! लोकनाथ ! ।	
प्रसीद वेदाधिपते ! समस्तान्	
आलोकयास्मान् विमलैः सुनेत्रैः ” ॥	४९

### शम्भुकृतभगवत्स्तुतिः

इत्युक्ते ब्रह्मणा तेन शम्भुरव्यक्तरूपिणम् ।	
अस्तौषीद्भगवन्तं तं अच्युतं पुरुषोत्तमम् ॥	५०

शम्भुः—

“परावरेणं पुरुषं दुष्टदैत्येन्द्रघातिनम् ।	
जगत्यालनकर्तारं जगदुत्पत्तिकारणम् ॥	५१

प्रजापतीनां सर्वेषां स्रष्टारममलेक्षणम् ।	
भक्तार्तिहानिदातारं भक्तानां प्रियकामदम् ॥	५२
त्वां नमामि हरे ! दिव्यं परब्रह्मस्वरूपिणम् ।	
प्रधानपुंसोरजयोः जगत्कारणभूतयोः ॥	५३
नित्ययोर्व्यापिनोश्चापि प्रभुं त्वां कारणं परम् ।	
तं त्वां नमामि भूतेशं भूतानामपि कारणम् ॥	५४
सूरयो यच्च पश्यन्ति परमं धाम शाश्वतम् ।	
तत्त्वमेतत्परं धाम परं ब्रह्म सनातनम् ॥	५५
तं त्वां नमामि गोविन्दं सहस्रादित्यसन्निभम् ।	
मुनयस्त्वां समभ्यर्च्य बहुवर्षशतानि वै ॥	५६
त्वत्प्रसादाच्च देवेश ! त्वय्येव लयमागताः ।	
पुरन्दरोऽपि देवेश ! त्वामेव पुरुषोत्तम ! ॥	५७
अश्वमेधशतैरिष्ट्वा देवेन्द्रत्वमवाप्तवान् ।	
ब्रह्माऽश्वमेधसाहस्रैः त्वामिष्ट्वा जगदीश्वरम् ॥	५८
प्राप ब्रह्मपदं दिव्यं दुःखशोकविवर्जितम् ।	
अहमाराध्य देव ! त्वां सर्वमेधे महाक्रतौ ॥	५९
प्राप्तवान् देवदेवत्वं दुर्लभं सर्वदैवतैः ।	
त्वमेवेश ! जगद्धाता त्वमेव जगतो गतिः ॥	६०
स्रष्टा त्वमेव जगतः संहर्ता च त्वमेव हि ।	
तं त्वां नमामि शोकार्तिमोहहानिप्रदायिनम् ॥	६१
प्रसीदेश ! महामाय ! सहस्रवदनेक्षण ! ।	
सर्वलोकपते ! नाथ ! सर्वलोकपरायण ! ॥	६२
विष्णो ! तवैतद्बहुबाहुशाखं	
तमालवर्णं बहुवक्त्रनेत्रम् ।	

ज्वलत्किरीटैः बहुरत्नवद्भिः

जाज्वल्यमानं प्रणमामि रूपम् ॥

६३

महर्षिकृतभगवत्स्तुतिः

धामदेवः—

एवं स्तुते जगन्नाथे शम्भुना परमेष्ठिना ।

तुष्टुवुर्मुनयो भूप ! प्रणम्यामलचेतसः ॥

६४

मुनयः—

“नमः कृष्णाय हरये परस्मै ब्रह्मरूपिणे ।

नमो भगवते तस्मै विष्णवे परमात्मने ॥

६५

सर्वभूतशरण्याय सर्वज्ञाय नमो नमः ।

वासुदेवाय भक्तानां सर्वकामप्रदायिने ॥

६६

नमः पङ्कजनेत्राय जगद्धात्रेऽच्युताय च ।

हृषीकेशाय सर्वाय नमः कमलमालिने ॥

६७

अनन्तनागपर्यङ्के सहस्रफणशोभिते ।

दीप्यमानेऽमले दिव्ये सहस्रार्कसमप्रभे ॥

६८

योगनिद्रामुपेताय तस्मै भगवते नमः ।

यद्रूपं न च पश्यन्ति सूरयो न च योगिनः ॥

६९

तं नताः स्म जगन्नाथं क्षीरोदार्णवशायिनम् ।

त्वामेवार्ताः प्रपन्नाः स्म शरण्यं वयमीश्वरम् ॥

७०

अस्मान् पाहि शरण्येश ! प्रणतार्तिहराव्यय ! ।

त्वद्रूपमेतद्गोविन्द ! सहस्रार्कसमद्युते ! ॥

७१

जाज्वल्यमानं तेजोभिः नोक्षितुं शक्नुमो वयम् ।

कुरु प्रसादमस्माकं प्रसन्नवदनेक्षण ! ।

त्वमेव गतिरस्माकं सर्वेषामेव केशव ! ॥

७२

नताः स्म दिव्यं पुरुषं पुराणं त्वामेव सर्वेश्वरमीश्वराणाम् ।  
युगान्तकालाग्निसमप्रतापं प्रदीप्तवक्त्रेक्षणमप्रमेयम् ॥ ७३

### सप्तर्ष्यादिकृतभगवत्स्तुतिः

वामदेवः—

इति तेषां मुनीन्द्राणां वचः श्रुत्वा ततो नृप ।  
सप्तर्षयो महात्मानो वागीशश्च महाद्युतिः ॥ ७४  
वसुश्च भगवद्भक्तो महेन्द्रश्च प्रतापवान् ।  
तुष्टुवुर्देवदेवेशं शिरोभिः प्रणिपत्य तम् ॥ ७५

सप्तर्ष्यादयः—

“नमोनमोऽस्तु विश्वात्मन् । त्वं ब्रह्मा त्वं पिनाकधृत् ।  
चन्द्रेन्द्रार्काश्विमरुतः त्वमेव जगतः पते ! ॥ ७६  
सहस्रादित्यसङ्काशचक्रहस्ताय ते नमः ।  
शङ्खहस्ताय ते नित्यं नमो विष्णो ! महात्मने ॥ ७७  
नमः किरीटिने नित्यं नमः कौस्तुभधारिणे ।  
नीलमेघप्रतीकाशवपुषे ब्रह्मणे नमः ॥ ७८  
असिरत्नगदाचापशक्तितोमरपाणये ।  
प्रदीप्तायुधजालय प्रदीप्तवपुषे नमः ॥ ७९  
यज्ञेशाय नमस्तुभ्यं ज्वलत्कुण्डलधारिणे ।  
नमोऽस्तु पद्मनाभाय नमस्ते विश्वयोनये ॥ ८०  
परावराणां पतये कराख्यवपुषे नमः ।  
कालनेमिहिरण्याक्षहिरण्यादिविधातिने ॥ ८१  
उग्ररूपाय ते नित्यं नृसिंहायाप्यनादये ।  
नमोऽस्तु पद्मनाभाय नमोऽस्तु वरदाय च ।  
भूयोभूयो नमो नित्यं व्यापिने शार्ङ्गपाणये ॥ ८२

नताः स्म चैतत्तव विश्वरूपं  
 सर्वायुधोपेतमपास्तदोषम् ।  
 विद्मो न चाद्यं परमं तवाद्य  
 रूपं परं वेद न चाब्जयोनिः ॥

८३

सनकादिपरमयोगिकृतभगवत्स्तुतिः

वामदेवः—

एवमुक्ते ततस्ते तु सनकाद्याश्च योगिनः ।  
 प्रणम्य तुष्टुवुर्देवं वैनतेयोपरि स्थितम् ॥

८४

सनकाद्याः—

“जय यज्ञपते देव ! जय नाथ ! जयाक्षर ! ।  
 जय शंखधराचिन्त्य ! जय चक्रधराव्यय ! ॥ ८५  
 विभो ! जय विशालाक्ष ! परमात्मन् ! जयाच्युत ! ।  
 जय दंष्ट्राग्रविन्यस्तमहीपद्म ! जयेश्वर ! ॥ ८६  
 जय सर्वद ! सर्वेश ! जय सर्वहृदि स्थित ! ।  
 पद्मनाभ ! जयाजय ! जय पूरुष ! मानद ! ॥ ८७  
 मायया तव मोहिन्या देवाश्चापि विमोहिताः ।  
 अनेकरत्नसञ्छन्नसुवर्णमुकुटाय ते ॥ ८८  
 नताः स्मोऽचिन्त्यरूपाय योगिध्येयाय ते नमः ।  
 नताः स्मोऽत्यन्तशुद्धाय सर्वज्ञायादिवेधसे ॥ ८९  
 परब्रह्मस्वरूपाय नताः स्मो वरदायिने ।  
 अव्यक्तायाप्रमेयाय श्रीधराय सुवर्चसे ॥ ९०  
 श्रियःकान्ताय दान्ताय भक्तानां मुक्तिदायिने ।  
 शक्रादिलोकपालानां पालयित्रे नमोऽस्तु ते ।  
 पीताम्बराय ते नित्यं नताः स्म पुरुषोत्तम ! ॥ ९१

व्याप्तं त्वया नाथ ! नमः सुदीप्तं विश्वात्मनाऽशेषनिवासिना विभो ! ।	
त्वामद्य सर्वे वयमीशितारं नताः स्म पद्मामविलोललोचनम् ॥	९२
तच्चास्ति किञ्चित् रहितं त्वया हरे ! समस्तलोकेष्वपि जातु यत्स्यात् ।	
वन्दामहे त्वां विमलार्कवर्णं किरीटहारोज्ज्वलितं शुभोरुक्मम् ॥	९३
एतत्परं रूपमपेतजन्मजरादि- दोषं विमलं विशोकम् ।	
अदृष्टपूर्वं मनुजामराद्यैः नताः स्म विद्युज्ज्वलितोरुशोभम् ” ॥	९४

### इन्द्रादिदिक्पालकृतभगवत्स्तुतिः

वामदेवः—

एवं स्तुते जगन्नाथे सनकादिमहात्मभिः ।	
शक्राद्या लोकपालास्तं तुष्टुवुर्मधुसूदनम् ॥	९५
वन्दमानाः शिरोभिस्तं भूतभावनभावनम् ।	
अञ्जलिं मूर्ध्नि सन्धाय विस्मयोत्फुल्ललोचनाः ॥	९६

इन्द्रादयः—

“नमोऽस्तु विश्वरूपाय पीताम्बरधराय ते ।	
नमस्तेऽस्तु जगद्धात्रे शार्ङ्गचापासिधारिणे ॥	९७
मधुहन्त्रे नमो नित्यं नमः कैटभघातिने ।	
कालाग्निसमचक्रेण निहन्त्रे सुरवैरिणाम् ॥	९८



सर्वकल्याणभूताय वरदाय वरार्थिनाम् ।	
नमो नित्यमदृश्याय दृश्यरूपाय ते नमः ॥	९९
परस्मै ब्रह्मणे तुभ्यं नमो यज्ञस्वरूपिणे ।	
नमो भव्याय ते नित्यं श्रीवत्साङ्कितवक्षसे ॥	१००
भयदाय नमो नित्यं दैत्येन्द्राणां बलीयसाम् ।	
भोगदाय नमो नित्यं अस्माकं स्वर्गदायिनाम् ॥	१०१
वरेण्याय नमो नित्यं अचलायाव्ययाय च ।	
शरण्याय नमो नित्यं नमः क्षीरोदशायिने ॥	१०२
योगात्मने नमो नित्यं नमो दामोदराय च ।	
क्षयवृद्धिविहीनाय निर्गुणाय नमोनमः ॥	१०३
यत्तत्परमनिर्देश्यं अचिन्त्यमजमक्षरम् ।	
अव्यक्तमजरं नित्यं अव्ययं धाम शाश्वतम् ॥	१०४
अरूपममलं ब्रह्म सर्वेशमचलं विभुम् ।	
यद्ब्रह्म तत्परं धाम भवानेव न चापरः ॥	१०५
तन्न विद्मः परं रूपं तव यत्तु पुरातनम् ।	
एतच्चापि न जानीमो यदेतद्दर्शितं त्वया ॥	१०६
प्रसीद विश्वेश्वर ! विश्वतोमुख !	
प्रसीद विश्वक्षयपालनेश ! ।	
प्रसीद विश्वालय ! विश्वमूर्ते !	
विश्वस्य योने भगवन् प्रसीद ! ॥	१०७

श्वेतद्वीपवासिसिद्धकृतभगवत्स्तुतिः

वामदेवः—

एवं स्तुतेऽथ देवेशे शक्राद्यैः त्रिदशेश्वरैः ।	
तुष्टुवुस्तं प्रणम्येशं श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥	१०८

सिद्धाः—

यं विष्णुमाद्यं पुरुषं पुराणं

देवा नमस्यन्ति शुभोरुबाहुम् ।

नताः स्म तं देवमजं सुरेशं

विश्वस्य कर्तारमनादिमूर्तिम् ॥

१०९

येनैव दंष्ट्राग्रसमुद्धृता धरा

बिभर्ति विश्वं ससुरासुरेन्द्रम् ।

नताः स्म तस्मै वरदाय पुंसे

सर्वात्मने शेषविभूतिदायिने ॥

११०

येनेदमण्डं सकलं महीयसा

व्याप्तं त्वयैकेन सुरारिघातिना ।

तं त्वां नताः स्माऽच्युतमीडितारो

वयं विभुं लोकविभूतिहेतुम् ॥

१११

येनान्तकाले जगदेतदादिना

ग्रस्तं त्वया ह्यक्षयशक्तिरूपिणा ।

ज्ञानैकदृश्यं परमार्थतत्त्वं तं

बालरूपं प्रणमाम नित्यम् ॥

११२

येनादिकाले विभुना महीयसा

स्वनाभिपद्मान्तरुपेतमण्डलम् ।

विसृष्टमप्यु स्वपताऽऽत्मलीलया

तं त्वां नताः स्मामरलोकनाथ ॥

११३

येनेदमण्डं बहुशो विभूतं

दुरात्मभिर्दैत्यवरैः सुघोरैः ।

निहत्य दैत्यान् सहसा महारणे

संरक्षितं तं प्रणमाम नित्यम् ॥

११४

जानन्ति यन्नैव पितामहाद्याः

परं पदं नैव वयं च नान्ये ।

त्वं तत्पदं वृद्धिविनाशहीनं

रक्षस्व चास्मान् भगवन् ! प्रसीद ॥

११५

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये ब्रह्मादिकृत-

भगवत्स्तुतिपरम्परा नाम

पञ्चविंशोऽध्यायः ।

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः

वामदेवः —

एवं स्तुत्वाऽथ ते सर्वे ब्रह्माद्या देवतागणाः ।

अगस्त्यप्रमुखाश्चापि मुनयोऽमलचेतसः ॥

१

सिद्धाश्चापि तथा सर्वे श्वेतद्वीपनिवासिनः ।

वागीशवसुशुक्राश्च दुर्वासाश्च महामुनिः ॥

२

सप्तर्षयश्च राजेन्द्र ! सनकाद्याश्च योगिनः ।

सर्व एते महीपाल ! ये चाप्यन्ये समागताः ॥

३

द्रष्टुं तमीश्वरं देवं तत्प्रसादानुवर्तिनः ।

भूयोभूयः प्रणम्येशं नारायणमरिन्दमम् ॥

४

कृताञ्जलिपुटास्तन्तु परिवार्योपतस्थिरे ।

ततस्तेषां स भगवान् मध्ये राजीवलोचनः ॥

५

स्मयन्निव महाबाहुः विनतानन्दनास्थितः ।

अतिष्ठदेवदेवेशः स तान् सर्वान् विलोकयन् ॥

६

दीप्यमानः स्वतेजोभिः अंशुमानिव रश्मिभिः ।

एतस्मिन्नन्तरे देवं वाग्वाहाराङ्गना नृप ! ॥

७

अगायन् कर्मभिर्दिव्यैः दिव्यभूषणभूषिताः ।	
रावणादिवधं केचित् गन्धर्वपतयो जगुः ॥	८
कंसकेशिजरासन्धशाल्वादीनां वधं तथा ।	
बाणदुर्योधनादीनां वधञ्चापि महाद्भुतम् ॥	९
अगायन्नपरे तत्र गन्धर्वपतयोऽमलाः ।	
हिरण्यकशिपोस्तत्र वधञ्चापि जगुः परे ॥	१०
अवतारेषु चान्येषु यानि यानि कृतानि वै ।	
केचित् जगुः जगत्सृष्टिं ब्रह्मादिस्थावरान्तिकाम् ॥	११
गन्धर्वपतयस्तत्र सुस्वरा हरिसन्निधौ ।	
नृत्यन्त्योऽप्सरसस्तत्रादृश्यन्त शतशो नृप ! ॥	१२
गायन्त्यो देवदेवेशं नादयन्त्यो दिशो दश ।	

### ब्रह्मादीनां भगवद्विश्वरूपदर्शनम्

अथ ते प्रेक्षमाणास्तं नारायणमनामयम् ॥	१३
विस्मयाविष्टहृदया ब्रह्माद्या देवतागणाः ।	
अगस्त्यप्रमुखाश्चापि मुनीन्द्राश्च सहस्रशः ॥	१४
ददृशुर्देवदेवस्य दिव्ये रूपे महाद्भुते ।	
तस्मिन् महति भूषाल ! पद्मपत्रनिभेक्षणे ॥	१५
अण्डमेतदशेषं वै साद्रिग्रामनदीवनम् ।	
सपर्वतं सपातालं सदेवासुरमानुषम् ॥	१६
सप्तलोकं सद्भूपं सयक्षोरगराक्षसम् ।	
सासुरं सामरपुरं जङ्गमाजङ्गमाकुलम् ॥	१७
सतिर्यक्तरूपाषाणं सकाननमहोरगम् ।	
एवमाद्यैस्तथान्यैश्च संयुक्तं महद्भुतम् ॥	१८

अदृष्टपूर्वमाश्चर्यं दृष्ट्वा हर्षमुपागमन् ।	
विस्मिताश्चाभवस्तेऽथ मुदिताश्चाभवन् नृप ! ॥	१९
व्याकुलीकृतनेत्रास्ते व्याकुलीकृतमानसाः ।	
व्याकुलीकृतसर्वाङ्गा आसन् सर्वे भयाकुलाः ॥	२०
अथ तान् भगवान् भूष ! प्रसन्नैः विमलैः शुभैः ।	
पद्मोत्पलदलानैस्तैः नेत्रैस्तान् समलोकयत् ॥	२१
अथ ते भूपते ! सर्वे ब्रह्माद्यास्तेन शार्ङ्गिणा ।	
प्रसन्नैर्नयनैर्दिव्यैः आयतैरवलोकिताः ॥	२२
प्रसन्नतां ययुः सर्वे त्यक्तमोहभयाः स्थिताः ।	
मुनीन्द्रानवलोक्याथ भगवानिदमब्रवीत् ॥	२३
नृपते ! सर्वलोकेशो विश्वरूपधरो हरिः ।	
शृण्वतां सर्वदेवानां ब्रह्मादीनां सनातनः ॥	२४
मेघगम्भीरया वाचा श्राव्यया श्लक्ष्णरूपया ।	
जगदापूरयत्सर्वं सुतरां प्रीतया तदा ॥	२५

### महर्षीन् प्रति भगवदुक्तिः

श्रीभगवान्—

युष्माभिर्भूरितेजोभिः मत्तो यत्प्रार्थ्यते द्विजाः ! ॥	२६
त्रियतां तदशेषेण नात्र कार्या विचारणा ।	
मां दृष्ट्वा प्रार्थितान् कामान् प्राप्नुवन्ति नरा भुवि ॥	२७
अचिरेणैव कालेन मुक्तिञ्चापि सुदुर्लभाम् ।	
अप्राप्य प्रार्थितान् कामान् न यास्यन्ति द्विजोत्तमाः ॥	२८
मयि दृष्टेऽचिरात्तस्मात् ब्रूत प्रार्थितमुत्तमम् ।	
मुनयः— कृतार्थाः स वयं देव ! त्वयि दृष्टे सनातने ॥	२९

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे षट्विंशोऽध्यायः

५१९

त्वत्प्रसादं विना नाथ ! न त्वं द्रष्टुं हि शक्यसे ।  
त्वां द्रष्टुं क्त्वा गोविन्द विचरन्तो वयं विभो ! ॥ ३०  
नारायणगिरावस्मिन् त्वत्पादतलवासिते ।  
त्वां दृष्ट्वा भृशमुद्विग्ना भगवन् पुरुषोत्तम ! ॥ ३१  
संसारात् मोक्षमिच्छन्तो देव ! त्वत्पादमाश्रिताः ।  
मुक्तिं प्रयच्छ देवेश संसारात् भीतिवर्धनात् ॥ ३२

वामदेवः —

एवमुक्त्वाऽथ गोविन्दो वरेण्यः पुरुषोत्तमः ।  
भगवान् भूतभव्येशः प्रोवाचेदं वचो नृप ॥ ३३  
येन यत्प्रार्थितं मत्तो दत्तं तद्धि न संशयः ।  
मुक्तिर्न चैषा भवतां प्रसन्ने मयि दुर्लभा ॥ ३४  
कल्पान्ते मत्प्रसादेन मुक्तिं प्राप्स्यथ सत्तमाः ।  
तावत्कालं जगत्यस्मिन् तपसे कृतनिश्चयाः ॥ ३५  
शृण्वन्तः श्रावयन्तश्च मत्कथां मुनिसत्तमाः ।  
तिष्ठन्तु तप आस्थाय महत्परमदारुणम् ॥ ३६

वामदेवः —

एतस्मिन्नन्तरे राजन् ! ब्रह्मा लोकपितामहः ।  
शिरस्यञ्जलिमाधाय प्रणम्य जगतां पतिम् ॥ ३७

मुनीनाश्चासयन्तं भगवन्तं प्रति ब्रह्मकृतविज्ञप्तिः

ब्रह्माः —

इदं विज्ञापयामास देवायामिततेजसे ।  
भगवन् सर्वलोकेश ! सर्वयज्ञमयाच्युत ! ॥ ३८  
दैत्यैः निराकृता ह्येते देवाः सर्वे सवासवाः ।  
यज्ञभागांश्च दैतेया भुञ्जन्ते न दिवौकसः ॥ ३९

तान् हन्तुं समरे ह्येते न शक्ता देवतागणाः ।  
विवृद्धान् घातयधेश ! तान् सर्वानसुरोत्तमान् ॥

४०

वामदेवः—

इत्युक्ते ब्रह्मणा राजन् ! प्रहसन्निदमब्रवीत् ।

### भगवत्कृतब्रह्माद्यभीष्टवरप्रदानम्

श्रीभगवान्—

एते च दानवा घोरा बाधन्ते देवतागणान् ॥

४१

महावीर्या महामाया महाकाया महौजसः ।

रणकर्मणि संयुक्ता दुर्जया दुर्निवारणाः ॥

४२

एतांस्त्वमद्य दैत्येन्द्रान् हन्याः सर्वान् सबान्धवान् ।

एवमुक्त्वा हृषीकेशो विष्वक्सेनं प्रतापिनम् ॥

४३

विलोक्य सर्वभूतात्मा वसुं नारायणोऽब्रवीत् ।

तव दत्तं महावीर्य ! चेदिराज ! नृपोत्तम ! ॥

४४

संसारबन्धनान्मोक्षमचिरेणाऽथ गच्छसि ।

मद्भक्तस्त्वत्समो नैव त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥

४५

हिरण्यकशिपोः पुत्रं ऋते दैत्येन्द्रसत्तम ! ।

प्रह्लादः सर्वभूतेभ्यो यः पुरा रक्षितो मया ॥

४६

वामदेवः—

एवमुक्त्वा महीपाल ! चेदिराजं प्रजापतिः ।

भगस्त्यमवलोक्याथ बाष्पपर्याकुलेक्षणम् ॥

४७

भक्त्या परमया युक्तं जगादेदं वचो विभुः ।

प्रसन्नोऽहं द्विजश्रेष्ठ ! त्रियतां यत्तवेप्सितम् ॥

४८

मत्तः सुदुर्लभं चापि तत्ते दास्याम्यसंशयम् ।

वामदेवः—

एवमुक्तस्तु देवेन हर्षात् किञ्चिदिदं वचः ॥

४९

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे षट्त्रिंशोऽध्यायः ५२१

विज्ञापयामास मुनिः परस्मै हरिमेधसे ।  
मूर्धन्यञ्जलिमाधाय प्रोत्फुल्लपुलकोद्गमः ॥ ५०

अगस्त्यः—

नारायणगिरिवस्मिन् चरतो मम केशव ! ।  
समतीतं महाबाहो ! वर्षाणामधिकं शतम् ॥ ५१  
सुचिरं कालमत्रैव विचरन् वै ततस्ततः ।  
न चापश्यं विशालाक्षं त्वामाद्यमजमक्षरम् ॥ ५२  
ततोऽहं भृशमुद्विग्नो विषादं चाप्यवाप्तवान् ।  
दिष्ट्या दृष्टो जगत्त्वामी त्वमद्य पुरुषोत्तम ! ॥ ५३  
वृणे तत्त्वप्रसादेन प्राप्तुं यद्वाञ्छितं मया ।  
भूते भव्ये तथा काले वर्तमाने तथा प्रभो ! ॥ ५४  
सर्वेषामेव भूतानां दुर्ज्ञेया गतिरुत्तमा ।  
दुर्ज्ञेयामपि तां सम्यग् ज्ञातुमिच्छाम्यहं हरे ! ॥ ५५  
सहस्रशस्तु या श्रुत्वा दुर्ज्ञेया च सूरैरपि ।  
त्वत्प्रसादेन भगवन् ! भवेत् सा विदिता मम ॥ ५६  
त्वयि भक्तिः परा चापि निश्चला स्यात् ममामला ।

वामदेवः—

इत्युक्ते मुनिना भूप ! प्रहसन्निव लोकधृत् ॥ ५७  
उवाच श्लक्ष्णया वाचा मेघगम्भीरया तदा ।

श्रीभगवान्—

अगस्त्य ! यत्त्वया प्रोक्तमेतद्दत्तं मया तव ॥ ५८  
प्रसन्नेनात्र भवता पूजितेन महीधरे ! ।

अगस्त्यः—

त्वञ्च दृश्यो वसेद्देश ! सर्वेषां प्राणिनामपि ॥ ५९



श्रीभगवान्—

अहं दृश्यो वसामीह श्रीभूमिसहितोऽनघ ! ।	
विमानं मम दिव्यं तु गूढं मुक्तिपरं भवेत् ॥	६०
आकाशगमचिन्त्यञ्च नानारत्नसमन्वितम् ।	
अन्येऽपि ये मुनीन्द्रास्मिन्नारायणगिरौ नराः ॥	६१
समारुह्यामलञ्चेमां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ।	
दृष्ट्वा स्नात्वाऽथ पीत्वा तु तस्याः पुण्यजलं शुभम् ॥	६२
अस्यास्तीरे महत्यस्मिन् विमाने मदधिष्ठिते ।	
मम प्रीतिकरे पुण्ये सर्वपापहरे शुभे ॥	६३
भक्ता मामर्चयिष्यन्ति मयि सन्न्यस्तमानसाः ।	
ददामीष्टतमान् कामांस्तेषामपि सुदुर्लभान् ॥	६४
ये नराः कुर्वते विप्र ! योजनानां शतेष्वपि ।	
प्रणामं दिशमुद्दिश्य भक्त्या मत्पर्वतोत्तमे ॥	६५
ते नरा मत्प्रसादेन पापराशिं व्यपोह्य वै ।	
प्राप्नुवन्ति पदं पुण्यं प्रविष्टं दुरात्मभिः ॥	६६
य एनां सेवते नित्यं स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ।	
सोऽपि मुक्तिमवाप्नोति मुक्तिञ्चापि न संशयः ॥	६७

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवत्कृत-

अगस्त्यामीष्टवरप्रदानवर्णनं नाम

षट्त्रिंशोऽध्यायः ।



## अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः



## महर्षीणां भगवद्विषयविमानदशनम्

वामदेवः—

मुनयस्तेऽथ भूपाल ! तद्वाक्यसमनन्तरम् ॥	१
ददृशुर्विमलं दिव्यं विमानं भास्करोपमम् ।	
स्वामिपुष्करिणीतीरे दक्षिणे लोकविश्रुते ॥	२
नारायणाश्रितं दिव्यं नित्यञ्च महद्भुतम् ।	
पाण्डुराभ्रघनप्रख्यं नानाशृङ्गैरलङ्कृतम् ॥	३
अनेकरत्नसञ्छन्नं मुक्तादामविभूषितम् ।	
भासयत्तेजसा सर्वा दिशो दश नराधिप ! ॥	४
दीप्यमानं स्वतेजोभिः नानारत्नविभूषितम् ।	
अत्युच्छ्रितं सुदुष्प्रेक्षं पश्यतां हर्षवर्धनम् ॥	५
यत्र दृष्टं मुनीन्द्रैस्तैः देवैरपि सवासवैः ।	
तस्मिन् महीधरे दिव्ये विचरद्भिरितस्ततः ॥	६
मुनीन्द्रास्ते तु तद् दृष्ट्वा विमानं परमाद्भुतम् ।	
अदृष्टपूर्वमन्यस्मिन् काले नरवरात्मज ! ॥	७
इतस्ततो विचिन्वद्भिः तस्मिन्नेव महीधरे ।	
विस्मयं परमं जग्मुः ततो मुनिगणास्तदा ॥	८
किमिदं नैव चास्माभिः दृष्टमासीत् पुरातनम् ।	
पुरा विमानमाश्चर्यं विचरद्भिरितस्ततः ॥	९
विमानमद्भुताकारं तच्चापि पुरुषोत्तमम् ।	
दृष्ट्वा तत्प्रोचुराश्चर्यं ते हर्षोत्फुल्ललोचनाः ॥	१०

अहो बत ! महाश्चर्यं नूनमेतन्महात्मना ।	
अनेनान्तर्हितं यस्मात् पूर्वं तत् न ह्यदृश्यत ॥	११
विमानं पुण्यमाश्चर्यं ज्वलद्भास्करसन्निभम् ।	
अस्या एव शुभे तीरे पुष्करिण्याः स्थितैरपि ॥	१२
अस्माभिः सहितैः सर्वैः सद्भिरत्रैव चादरात् ।	
हरिणा ध्रुवमेतत्स्यात् अनेनैव स्वमायया ॥	१३
अन्तर्हितं कृतं दिव्यं विमानं सिद्धसेवितम् ।	
एवंविधानि वाक्यानि मुनयस्ते परस्परम् ।	
प्रोचुर्देवाधिदेवस्य सन्निधौ तस्य शार्ङ्गिणः ॥	१४

### शङ्खनृपस्य वरं प्रदाय भगवत्तिरोधानम्

एतस्मिन्नन्तरे देवः शङ्खं प्रोवाच केशवः ।	
हेहयाधिपतेः पुत्रं श्रुतस्य सुमहात्मनः ॥	१५

श्रीभगवान्—

वरं वरय भूपाल ! यत्ते मनसि वर्तते ।	
तद्दास्ये तव तुष्टोऽहं वरदः समुपस्थितः ॥	१६

नामदेवः—

इदं निशम्य वचनं गदितं तस्य शार्ङ्गिणः ।	
जगद्गतुरनन्तस्य विश्वयोनेर्महात्मनः ॥	१७
शङ्खः परमसंहृष्टो रोमाञ्चिततनुस्तदा ।	
इत्थं विज्ञापयामास ब्रह्मणेऽव्यक्तजन्मने ॥	१८
एतस्मै देवदेवाय परस्मै हरिमेघसे ।	

शङ्खः—

त्वल्लोकं प्राप्तुमिच्छामि त्वत्प्रसादादधोक्षज ! ॥	१९
--	----

त्वत्पदे वस्तुकामोऽहं तपस्तीव्रं समास्थितः ।  
 त्वं ममैतत्प्रयच्छाऽऽशु विष्णो ! राजीवलोचन ! ॥ २०  
 नान्यदिच्छामि देवेश ! त्वत्तः प्राप्तुं सुरेश्वर ! ।

वामदेवः —

इत्युक्तस्तु प्रहस्यैनं शङ्खं प्राह जनार्दनः ॥ २१  
 हर्षयन्निव भूतानि स्वया गधुरया गिरा ।

श्रीभगवानुवाच —

यावत्कल्पं महाभाग ! स्वर्लोके निवसिष्यसि ॥ २२  
 सदा सम्पूजितः सर्वैः इन्द्रलोकनिवासिभिः ।

वामदेवः —

इत्युक्त्वा भगवान् देवः तत्रैवान्तरधीयत ॥ २३  
 पश्यतामेव सर्वेषां ब्रह्मादीनां सुरेश्वरः ।  
 नारायणः परो नित्यः परमात्मा प्रजापतिः ॥ २४  
 सर्वस्वभूतो भक्तानां सर्वलोकपरायणः ।  
 अन्तर्हिते ततस्तस्मिन् जगद्धातरि केशवे ॥ २५

भगवदन्तर्धानानन्तरं देवाद्यनुभूतानुतापवर्णनम्

विष्णो समस्तजगतां आधारे पुरुषोत्तमे ।  
 सर्वस्वभूते देवानां सर्वेशे परमात्मानि ॥ २६  
 तेजोराशियुते कृष्णे राजीवायतलोचने ।  
 देवा ब्रह्मर्षयश्चापि मुनीन्द्राश्च तपोधनाः ॥ २७  
 सिद्धाश्चापि तथा सर्वे मुनीन्द्रा विमलशयाः ।  
 वागीशवसुमुख्याश्च सनकाद्याश्च योगिनः ॥ २८  
 सर्वे सप्तर्षयश्चापि श्वेतद्वीपनिवासिनः ।  
 एते चान्ये च ये तत्र समेता द्रष्टुमीश्वरम् ॥ २९

सर्व एते महीपाल भूयोभूयः सनातनम् ।	
अन्तर्धानं गतं देवं प्रणेमुः विस्मितेक्षणाः ॥	३०
दीनचित्तास्ततः सर्वे पश्यन्ति स्म दिशो दश ।	
एते सर्वे मुनिश्रेष्ठा रुरुदुस्तेऽथ तत्र वै ॥	३१
प्रणम्य हरये तस्मै देवायान्तर्हिताय ते ।	
ब्रह्माद्यास्तेऽथ भूपाल ! सर्व एवेदमब्रुवन् ॥	३२
अहो भगवतस्तस्य माहात्म्यममितौजसः ।	
ब्रह्माण्डकमशेषन्तु तेन व्याप्तं स्वतेजसा ॥	३३
आयुधानि ज्वलन्ति स्म चक्रादीनि धृतानि वै ।	
दहन्तीव जगत्सर्वं शोषयन्तीव चोदधीन् ॥	३४
प्रसन्नास्ते कटाक्षाश्च दीपयन्तो दिशो दश ।	
चक्राशिरे स्वतेजोभिः शतशस्तस्य शार्ङ्गिणः ॥	३५
शतशो बाहवश्चापि हरेः करिकरोपमाः ।	
स्पर्धन्त इव चान्योन्यं रेजिरे रुचिरप्रभाः ॥	३६
वदनानि ज्वलन्ति स्म पूर्णेन्दुसदृशानि वै ।	
शोभितान्यमलैर्दिव्यैः सरलैः कुण्डलैस्तथा ॥	३७
इन्दुमण्डलसङ्काशनखमण्डलशोभिते ।	
पादपद्मे हरेस्तस्य शोभिते विमलप्रभे ॥	३८
अहो हि भूधरेन्द्रस्य माहात्म्यममितौजसः ।	
यस्मिन्नेवंविधो देवो निवसत्यच्युतो हरिः ॥	३९
न शक्यमस्य माहात्म्यं वक्तुं वर्षशतैरपि ।	
अस्माभिः सहितैः सर्वैः विमलेनापि तेजसा ॥	४०
वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन ।	
वेङ्कटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति ॥	४१

नास्ति पुण्यतमं तीर्थं स्वामिपुष्करिणीसमम् ।

सममस्तीति यो ब्रूयात्तत्समो नास्ति पातकी ॥

४२

याश्च सप्त महापुरुषः कीर्त्यन्ते मुक्तिदायिकाः ।

ता वेङ्कटाद्रिपर्यन्तग्रामकोट्यंशशक्तयः ॥

४३

वामदेव — एवं विधानि वाक्यानि वदन्तः सुबहूनि वै ।

सर्वे संहृष्टमनसो ब्रह्माद्यास्ते सुरोत्तमाः ॥

४४

भगवद्विमानादि दृष्ट्वा ब्रह्मादिनिर्गमनम्

स्वामिपुष्करिणीतीर्थे स्नात्वा पीत्वा द्विजोत्तमाः ।

ददृशुस्ते महाश्रेयं विमानं पुनरद्भुतम् ॥

४५

अप्यदृष्टं पुरा सर्वैः ब्रह्माद्यैरपि सत्तमैः ।

प्रहृष्टास्ते महात्मानो विमाने हरिमेधसः ॥

४६

ददृशुर्देवदेवेशं विमलार्कसमप्रभम् ।

चतुर्बाहुमशेषेशं दिव्यकुण्डकधारिणम् ॥

४७

तिष्ठन्तमच्युतं देवं नानाभूषणभूषितम् ।

शोभमानं किरीटेन नानारत्नचितेन वै ॥

४८

सुधृतायुधजातं तं वरदं सर्वदेहिनाम् ।

दिव्यरत्नचितैश्चित्रैः क्लृप्तैरुपशोभितम् ॥

४९

दिव्याम्बरधरं सौम्यं दिव्यरत्नविभूषितम् ।

प्रणतार्तिहरं विष्णुं तैलैक्यतिलकं विभुम् ॥

५०

स्फुरन्मणिगणच्छन्नचारुहारविराजितम् ।

स्फुरन्नुपुरसंशोभिपादं पद्मनिभेक्षणम् ॥

५१

सेव्यमानं श्रिया चापि स्वपार्श्वगतया तथा ।

चारुमत्या पृथिव्या च सेव्यमानं स्वकान्तया ॥

५२

एवंभूतं तदा दृष्ट्वा ब्रह्माद्या विस्मितेक्षणाः ।	
प्रणेमुर्मुदिताः सर्वे शिरोभिर्भुवि केशवम् ॥	५३
प्रस्तूय च जगद्योनिं स्तुतिभिः शुभलोचनाः ।	
निश्चक्रमुस्तदा तस्मात् विमानात् दीप्तचक्रिणः ॥	५४
निष्क्रम्य सहिता नेमुः शिरोभिर्भुवि केशवम् ।	
कृत्वा प्रदक्षिणञ्चापि तद्विमानमनुत्तमम् ॥	५५
यथागतं ययुः सर्वे प्रशंसन्तो महीधरम् ।	
पितामहश्च भगवान् खेचरैः परिवारितः ॥	५६
संस्तूयमानस्त्रिदशैः निजलोकमथाभ्ययात् ।	
पिनाकपाणिर्भगवान् शङ्करस्त्रिपुरान्तकः ॥	५७
जगाम विश्रुतं दिव्यं कैलासं रजताचलम् ।	
नानारत्नैर्विराजन्तं पारिजातैरलङ्कितम् ॥	५८
नानातपस्विभिर्युक्तं नानासिद्धनिषेवितम् ।	
ऋषयश्च तथा सर्वे कैलासं प्रति निर्ययुः ॥	५९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये भगवद्विमान-

दर्शनपूर्वकब्रह्मादिनिर्गमनादिवर्णनं नाम

सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।

अथ अष्टत्रिंशोऽध्यायः

— : \* : —

श्रीवेङ्कटाचलकैलासं प्रति शङ्करगमनम्

जनक उवाच—

कथं स भगवान् ! शम्भुः शङ्करश्चन्द्रशेखरः ।

प्रयातः पर्वतादिव्यं कैलासं स्वालयं शिवः ॥

	एतन्मुनिवराशेषं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ।	
	कथयैतन्महाश्वर्यं शृण्वतां हर्षवर्धनम् ॥	२
वामदेवः -	श्रूयतामिदमाश्वर्यं वक्ष्यामि नृपते ! तव ।	
	यदा हि भगवान् देवः प्रयातः स्वालयं प्रति ॥	३
	वृषभं तं महावीर्यं मेरुमन्दरसन्निभम् ।	
	नानामणिगणैश्चित्रैः स्वनवद्विरनेकशः ॥	४
	अलङ्कृतं महावीर्यं महाकायं महाबलम् ।	
	मेघाभं मेघसन्नादं द्विषतां शोकवर्धनम् ॥	५
	विश्रुतं सर्वलोकेषु सर्वरत्नविभूषितम् ।	
	उदग्रककुदं दिव्यं वायुवेगसमं जवे ॥	६
	रज्जुमिश्रं तदा दिव्यैः जाम्बूनदमयैः शुभैः ।	
	स्फुरन्मणिगणाकीर्णैः समन्तात्परिवेष्टितम् ॥	७
	आकाशगं महाशृङ्गं हेममालापरिष्कृतम् ।	
	जाज्वल्यमानं वपुषा दर्शनीयतमं शुभम् ॥	८
	अनेकशतसाहस्रैः जाम्बूनदमयैस्तथा ।	
	किङ्किणीजालसङ्घैश्च समन्तात् परिवेष्टितम् ॥	९
	मुक्तादामभिरालोलैः आजमानैः सुरश्मिभिः ।	
	अलङ्कृतमहाकर्णं महाकायं महोक्षकम् ॥	१०
	आरुह्य भगवान् देवः सर्वपापहरो हरः ।	
	बलिभिर्भूतसङ्घैश्च वेतालैश्च महाबलैः ॥	११
	अनेकबाहुमिश्रैव संवृतः परमेश्वरः ।	
	संस्तूयमानः सदृशैः खेचैरप्यभिष्टुतः ॥	१२
	स्वभासा भासयन् दिव्यं जगदेतच्चराचरम् ।	
	शृण्वंश्च वदतां तेषां नारायणगिरेः कथाः ॥	१३



शनैर्जगाम भूपाल ! कैलासनिलयं शिवः ।	
समस्ताः परिवार्येन भूतसङ्घाः सहस्रशः ॥	१४
तन्निदेशकरा जग्मुः नानारूपभयावहाः ।	
केचिन्नीलाचलप्रख्याः केचिद्विसनिभास्तथा ॥	१५
सन्ध्यमेघनिभाः केचित् केचिद्वै सूर्यवर्चसः ।	
केचित् कालागरुनिभाः केचित् अग्निशिखोपमाः ॥	१६
केचित् दशभुजा राजन् ! केचित् एकभुजास्तथा ।	
जानुदेशशिराः कश्चित् ऊरुदेशशिरास्तथा ॥	१७
पाणिदेशशिराः कश्चित् तत्रासीन्मिथिलेश्वर ! ।	
तेषां वर्णञ्च रूपञ्च वक्तुं नाम न शक्यते ॥	१८
केचित् द्विपमुखास्तत्र केचित् अध्रमुखास्तथा ।	
केचित् खरामवदनाः केचित् व्याघ्रमुखास्तदा ॥	१९
शक्यं देवैः न कालेन महता चापि तानि वै ।	
रूपाणि तेषां भूतानां वक्तुं नानाकृतीनि वै ॥	२०
एवं विधैरनेकैस्तु भूतसङ्घैः समावृतः ।	
त्रिपुरान्तकरो देवो जगाम रजताचलम् ॥	२१
हरस्य तद्रूपमपास्तदोषं	
सिताचलाभं शितिकण्ठकायम् ।	
व्यराजताशेषजगत्प्रभोस्तत्	
नारायणस्येव वपुस्त्रिविक्रमे ॥	२२
नृपेन्द्र संशान्तमपेतदोषं	
समीक्ष्य देव त्रिपुरारिमीशम् ।	
सर्वाणि भूतानि समेत्य पार्श्वं	
भक्त्या प्रणमुः प्रणतैः शिरोभिः ॥	२३

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे अष्टाविंशोऽध्यायः ५३१

अथ तं भीमकर्माणं भगवन्तमुमापतिम् ।  
बहन् वृषेन्द्रः प्रययौ लील्यैवान्तरिक्षगः ॥ २४  
रराज सोऽत्यद्भुतचारुशृङ्गः  
संतप्तचामीकरचारुभूषणः ।  
हंसेन्दुकुन्दस्फटिकाचलाभो  
गच्छन् महामेघ इवान्तरिक्षे ॥ २५  
तं यान्तमनुजगमुस्ते देवा ब्रह्मर्षयस्तदा ।  
कृताञ्जलिपुटा देवं स्तुवन्तः त्रिपुरान्तकम् ॥ २६

जनकः—

स्तुवन्ति स कथं देवं देवा ब्रह्मर्षयस्तदा ।  
शूलपाणिं प्रयास्यन्तं कैलासनिलयं प्रति ॥ २७

शतानन्दः—

जनकेनैवमुक्तस्तु वामदेवो महातपाः ।  
वक्ष्येऽहमेतद्भूपाल ! श्रूयतामित्यथाब्रवीत् ॥ २८

देवाद्याः—

पिनाकपाणिं देवेशं नताः स गिरिजेश्वरम् ।  
गरुत्मति तथा विष्णुं तद्रूपमिव संस्थितम् ॥ २९  
त्रिपुरस्य नियन्तारं त्रिनेत्रं शूलधारिणम् ।  
विष्णुभक्तं विरूपाक्षं विष्णुप्रियकरं शुभम् ॥ ३०  
दुष्टदैत्यनिहन्तारं कैलासनिलयं हरम् ।  
सर्वं भवन्तमीशानं शङ्करं कामरूपिणम् ॥ ३१  
उग्ररूपं महादेवं अप्रधृष्यं दुरासदम् ।  
नीलकण्ठं विरूपाक्षं सर्वसंहारमूर्तिकम् ॥ ३२

कपिलाक्षं विशालाक्षं जटामुकुटधारिणम् ।	
नताः स्म चर्मवसनं वयं त्वां वृषभध्वजम् ॥	३३
त्राह्यस्मान् सर्वलोकेश ! त्वामद्य शरणं गतान् ।	
त्वमेव गतिरस्माकं सर्वेषामेव शङ्कर ! ॥	३४
एवं स्तुक्नो देवेश देवा ब्रह्मर्षयस्तदा ।	
अनुजमुर्महात्मानं नारायणमिवापरम् ॥	३५
एवं संस्तूयमानोऽसौ तदा पशुपतिर्नृप ! ।	
प्रपेदे तं महापुण्यं कैलासं पर्वजोत्तमम् ॥	३६
तत्रापि स्वालयं दिव्यं सर्वभूतनिषेवितम् ।	
देवर्षिसिद्धमनुजैः गन्धर्वैश्चापि सेवितम् ।	
अतीव शुभगन्धाढ्यं प्रपेदे त्रिदशेश्वरः ॥	३७
तेषां मुनीनामथ पश्यतां तदा	
गौरीश्वरो देववरः प्रतापवान् ।	
अन्तर्दधे सानुचरप्रभावः	
तत्रैव राजंस्तदभून्महाद्भुतम् ॥	३८
अन्यदिच्छसि किं भूयस्तत्तच्छ्रोतुं महीपते ! ।	
वासुदेवाश्रितं पुण्यं तत्पृच्छ कथये तव ॥	३९

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रस्त्रण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

श्रीवेङ्कटाचलच्छङ्करस्य कैलासगमनादिवर्णनं नाम

अष्टतिंशोऽध्यायः ।



अथ एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

— : \* : —

### भगवद्विमानान्तर्धानहेतुनिरूपणम्

- ज.क. — अन्तर्हितं कथं तेषां मुनीनामञ्जनाचले ।  
 आसीद्विमानमाश्चर्यं श्रोतुमिच्छाम्यशेषतः ॥ १
- आख्याहि मे महाश्चर्यं एतत्पुण्यमनुत्तमम् ।  
 लीलया देवदेवेन विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ २
- तदाऽऽसीदद्भुतं दिव्यं विमानं मुनिसेवितम् ।  
 अन्तर्हितं कृतं राजन् मायया दिव्यया स्वया ॥ ३
- सर्व एते मुनिश्रेष्ठाः सुचिरं गिरिमूर्धनि ।  
 चरेयुरिति देवेन ह्यादावन्तर्हितं कृतम् ॥ ४
- स्वनैव तेषां सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् ।  
 मायामपास्य स्वं दिव्यं विमानं दर्शितं पुनः ॥ ५
- तस्मान्मुनिवराः पूर्वं नापश्यन् दिव्यमुत्तमम् ।  
 विमानं सर्वपापघ्नं सर्वलोकेषु विश्रुतम् ॥ ६
- अप्राकृतमनाद्यन्तं वैकुण्ठादागतं महत् ।  
 श्रीसहायस्य तद्विष्णोः विहारायतनं सदा ॥ ७
- दृष्टवन्तश्च तद्विव्यं प्रसादात् जगदीशितुः ।  
 हरेर्भगवतस्तस्य तदद्भुतमिवाभवत् ॥ ८
- एतच्चापि समाख्यातं यत्पृष्टोऽहं त्वया नृप ।  
 श्रोतव्यं यत्त्वया चान्यत् तत्पृच्छ कथयामि ते ॥ ९
- जनकः — अगास्त्यप्रमुखास्तत्र किमकुर्वस्ततः परम् ।  
 मुनयो मुनिशार्दूल ! तन्मे कथय सुवत ! ॥ १०

## स्वामिपुष्करिण्यां अगस्त्यादिकृतभगवन्मन्त्रोपासनाप्रकारः

वामदेवः—	अगस्त्याद्यास्ततस्तस्मिन् भगवत्यच्युतेऽमले ।	
	अन्तर्हिते जगद्धाम्नि परे ब्रह्मणि केशवे ॥	११
	कृतवन्तो महात्मानो यत्तत्र कथयामि तत् ।	
	चिरकालं विमानेऽस्मिन् पुण्ये पुण्यप्रदायिनि ॥	१२
	वसाम तत्परं ब्रह्म चिन्तयामो जनार्दनम् ।	
	पुष्करिण्या विशालयाः तस्या एव शुभे जले ॥	१३
	सर्वपापहरे शुद्धे स्नात्वा स्नात्वा दिनेदिने ।	
	सर्वे सम्पूज्य तपसा तमासाद्य दिवानिशम् ॥	१४
	एवमुक्त्वा ततः सर्वे मुनयोऽमलचेतसः ।	
	ऊषुस्तस्मिन् विमाने ते द्वादशाब्दं नराधिप ! ॥	१५
	तपस्तीव्रं समास्थाय विष्णोराराधनोद्यताः ।	
	स्वामिपुष्करिणीं दिव्यां सेवमाना अहर्निशम् ॥	१६
	जेपुरष्टाक्षरं मन्त्रं मुक्तिबीजमनुत्तमम् ।	
	विद्वद्भिः प्रेक्ष्यते पूर्वैः यो मन्त्रो मुक्तिकाङ्क्षिभिः ॥	१७
	अर्थार्थिभिस्तथान्यैश्च कामसंसिद्धये नृप ! ।	
	जजाप यं परं मन्त्रं पुरा ब्रह्मा सनातनम् ॥	१८
	कल्पादौ सर्वदेवेशः सिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः ।	
	तथा संहारसमये सम्प्राप्ते चन्द्रशेखरः ॥	१९
	यमभ्यस्य महामन्त्रं शक्तिं प्राप्नोति दुर्लभाम् ।	
	यत्समं चाधिकं वा न त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥	२०
	तथा सर्वेषु मन्त्रेषु वैदिकेषु शुभेषु च ।	
	यं ज्ञात्वा सर्वपापेभ्यो विमुच्यन्तेऽस्य मानवाः ॥	२१

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ५३५

सर्वान् कर्मांश्च विन्दन्ति यं जप्त्वा मन्त्रमुत्तमम् ।  
तं मन्त्रं सर्वपापघ्नं सर्वशोकप्रणाशनम् ॥ २२  
जेपुस्ते मुनयः सर्वे द्वादशाब्दमहर्निशम् ।  
समाप्ते द्वादशे वर्षे मुनयस्ते तपोधनाः ॥ २३

अगस्त्यादिकृतो भगवत्सेवापूर्वकः स्वावासगमनोद्योगः

अगस्त्यप्रमुखाः सर्वे समाराध्य जगत्पतिम् ।  
शङ्खचक्रधरं देवं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥ २४  
श्रीभूमिसहितं देवं उदयादित्यसन्निभम् ।  
सहस्रशो विमानं तत् कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ॥ २५  
प्रणम्य च जगन्नाथं सर्वलोकेश्वरं हरिम् ।  
गन्तुं प्रचक्रमुस्तस्मात् वेङ्कटाख्यात् नगोत्तमात् ॥ २६

भगवद्विमानमन्तर्हितं दृष्ट्वा अगस्त्यादिकृता चिन्ता

एतस्मिन्नन्तरे तत्र विमानं मुनिसेवितम् ।  
पश्यतामेव सर्वेषां मुनीन्द्राणां महात्मनाम् ॥ २७  
पुनश्चापि जगद्बाहुः मायया दिव्यया स्वया ।  
अन्तर्हितं कृतश्चासीत् तदद्भुतमिवाभवत् ॥ २८  
ततस्तु मुनयः सर्वे परं विस्मयमागताः ।  
मुनयः— अहोऽतीव महाश्चर्यं कृतमेतन्महात्मना ॥ २९  
पुनश्च देवदेवेन हरिणाऽद्भुतकारिणा ।  
यदेतन्महदाश्चर्यं विमानं पुण्यसेवितम् ॥ ३०  
अन्तर्हितं कृतं पूर्वं दर्शितञ्च पुनस्तथा ।  
इदानीञ्च पुनस्तेन माययाऽन्तर्हितं कृतम् ॥ ३१

अहो बत ! महाश्रयं अहो बत ! महाद्भुतम् ।

दृष्टमेतत्तदध्यक्षे सेविते माधवे शुभे ॥

३२

एवंविधानि वाक्यानि प्रोच्य प्रोच्य पुनःपुनः ।

विस्मयाग्निहृदयाः तस्थुस्तत्रैव ते द्विजाः ॥

३३

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

भगवद्विमानान्तर्धानहेत्वादिनिरूपणं नाम

एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

— — —

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः

~~~~~

शेषाद्रिः।यव्यभागस्थितमहाभूतस्य नारायणाद्रित्ववर्णनम्

जनकः—

वायव्यां दिशि यो देवो गिरेस्तस्य महीयसः ।

दृष्टो मुनिवरैः पूर्वं कोऽसौ ब्रह्मन् ! वदस्व मे ॥

१

वामदेवः—

स राजन् नगराजस्तु नारायणगिरिः स्वयम् ।

आसीनो वपुरास्थाय स्वकं दिव्यं महाद्भुतम् ॥

२

वसोर्भगवन्मन्त्रोपासनापूर्वकं स्वामितीर्थस्थितिवर्णनम्

जनकः—

अन्तर्हिते जगन्नाथे वसुः परमधार्मिकः ।

तपः परं स राजर्षिः अकरोत्किं महामुने ! ॥

३

वामदेवः—

स राजाऽन्तर्हिते देवे देवदेवे सनातने ।

कृतवान् यन्महीपाल ! तदास्यास्ये निशामय ॥

४

|                                                  |   |
|--------------------------------------------------|---|
| तस्मिन्नेव विमानेऽसौ राजोपरिचरो वसुः ।           |   |
| आराधयन् हृषीकेशं वासुदेवं सनातनम् ॥              | ५ |
| द्वादशाक्षरमेवैकं परं मन्त्रं जजाप ह ।           |   |
| सेवमानश्च तां दिव्यां स्वामिपुष्करिणीं शुभाम् ॥  | ६ |
| उवास परया भक्त्या द्वादशाब्दं महामतिः ।          |   |
| नृपेन्द्र कथयिष्येऽन्यत् श्रूयतामित्यथाब्रवीत् ॥ | ७ |

श्वेतद्वीपवासिसिद्धादीनां श्रीवेङ्कटाचलात् स्वावासगमनम्

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| ते सर्वे सङ्गतास्तत्र नारायणगिरौ नृप ।        |    |
| शङ्खचक्रधराः सर्वे श्वेतद्वीपनिवासिनः ॥       | ८  |
| “ नमो भगवते वासुदेवा ” येत्यजपेस्तदा ।        |    |
| तस्मिन् विमाने न्यवसन् चिरकालमथो नृप ! ॥      | ९  |
| अर्चयन्तश्च गोविन्दं भक्त्या परमया तदा ।      |    |
| अनुज्ञाताश्च देवेन श्वेतद्वीपमथागमन् ॥        | १० |
| एतच्चापि समाख्यातं यत्पृष्टोऽहं त्वया नृप । । |    |
| यदन्यत्तव वक्तव्यं तत्पृच्छ कथयामि ते ॥       | ११ |

जनकः —

|                                           |    |
|-------------------------------------------|----|
| सनकाद्या महात्मानो येऽन्ये तत्र समागताः । |    |
| अन्तर्हिते जगन्नाथे किमकुर्वन्ततः परम् ॥  | १२ |

नामदेवः—

|                                           |    |
|-------------------------------------------|----|
| सप्तर्षयश्च देवाश्च शुक्रश्चापि महामतिः । |    |
| बृहस्पतिश्च भगवान् सनकाद्याश्च योगिनः ॥   | १३ |
| सर्वे एते महाभागा नमस्कृत्य जनार्दनम् ।   |    |
| महीधरं प्रशंसन्तः स्वालयान् प्रतिपेदिरे ॥ | १४ |



|                                           |    |
|-------------------------------------------|----|
| शङ्खश्चापि जगद्धातुः प्रसादादेव भूपते ! । |    |
| विमानमद्भुताकारं अप्सरोगणसेवितम् ॥        | १५ |
| आरुह्य गीयमानस्तु शक्रलोकमवाप्तवान् ।     |    |
| विष्वक्सेनश्च भगवान् सचिवैः बलिभिर्वृतः ॥ | १६ |
| सप्तभिः भूरितेजोभिः महेन्द्रसमविक्रमैः ।  |    |
| असुराणां वधं चक्रे यथोक्तं परमेष्ठिना ॥   | १७ |

जनकः—

|                                                    |    |
|----------------------------------------------------|----|
| अन्तर्हिते ततस्तस्मिन् विमाने मुनिसेविते ।         |    |
| अगस्त्यो भगवान् ब्रह्मन् ! अकरोत् किं महामुनिः ? ॥ | १८ |

### अगस्त्यकृतभाविविमानाविर्भावहेतुनिरूपणम्

वामदेवः—

|                                               |    |
|-----------------------------------------------|----|
| अगस्त्यो भगवान् भूप ! मुनीन्द्रानिदमब्रवीत् । |    |
| यदेतद्दर्शितं दिव्यं विमानं लोकपावनम् ॥       | १९ |
| पूर्वं भगवता तेन विष्णुना प्रभविष्णुना ।      |    |
| तदत्रैव महाशैले सदा तिष्ठति पूजितम् ॥         | २० |
| अन्तर्हितं न केनापि शक्यते द्रष्टुमञ्जसा ।    |    |
| युगे युगे तु यः कश्चित् तपसा भावयेद्धरिम् ॥   | २१ |
| स तस्य कृपया दिव्यं विमानं पश्यति ध्रुवम् ।   |    |
| आगामिनि कलौ चापि सम्प्राप्ते पुण्यमुत्तमम् ॥  | २२ |
| विमानं सर्वपापघ्नं विष्णुनाऽधिष्ठितं सदा ।    |    |
| पश्यतां सर्वभूतानां आह्लादजनकं शुभम् ॥        | २३ |
| देवर्षिदैत्यगन्धर्वदेवसिद्धनिषेवितम् ।        |    |
| मनुजैरेव तद्भक्तैः कारितं लक्षणान्वितम् ॥     | २४ |

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे चत्वारिंशोऽध्यायः

५३९

भविष्यति महाश्वर्यं मुनीन्द्रा नाल संशयः ।  
तलैव भगवान् विष्णुः स्थास्यत्यक्षयशक्तिधृक् ॥  
विमाने तु जगन्नाथः पूर्वं दृष्टो हरिः स्वयम् ।  
शङ्खचक्रधरः श्रीमान् चतुर्बाहुस्वरूपवान् ॥  
अस्मिन् जगति विप्रेन्द्रा ! विश्रुतश्च भविष्यति ।  
विमानं तदघौघघ्नं त्रैलोक्यतिलकोपमम् ॥

२५

२६

२७

वामदेव. —

एवमुक्त्वा मुनीन्द्रांस्तान् अगस्त्यो भगवांस्तदा ।  
गन्तुं चक्रे मनस्तस्मात् प्रणिपत्य जनार्दनम् ॥  
अगस्त्योऽथ महातेजाः वरान् प्राप्य सुदुर्लभान् ।  
मुनिभिः संवृतो राजन् ! महेन्द्रमगमद्भिरिम् ॥  
एवमेषा पुरा वृत्ता कथा ते कथिता मया ।  
विश्रुता सर्वलोकेषु किमन्यत् श्रातुमिच्छसि ? ॥  
इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
भविष्यद्विमानप्रादुर्भाववर्णनं नाम  
चत्वारिंशोऽध्यायः ।

२८

२९

३०

अथ एकचत्वारिंशोऽध्यायः

~~~~~

देवजिदाद्यसुरकृतलोकोपद्रववर्णनम्

जनकः —

ब्रह्मन् ! नित्युक्तो देवेन विष्वक्सेनः स वीर्यवान् ।  
तेषां वधं कथं चक्रे दैत्येन्द्राणां तरस्विनाम् ॥  
एतन्मे महदाश्वर्यं चरितं तस्य धीमतः ।  
विष्वक्सेनस्य देवस्य तत्त्वेनाख्यातुमर्हसि ॥

१

२

वामदेवः—	एतत्ते कथयिष्यामि शृणुष्व श्रद्धयाऽन्वितः ।	
	पुराऽवधीत् यथा दैत्यान् विष्वक्सेनो महाबलः ॥	३
	पुराऽभवन्महावीर्याः हिरण्याक्षस्य वंशजाः ।	
	“देवजिन्मृत्युजिच्चापि शत्रुजि” चेति ते त्रयः ॥	४
	आतरः सुमहासत्त्वाः महामाया महौजसः ।	
	ब्रह्माणं ते समाराध्य स्रष्टारं भुवनेश्वरम् ॥	५
	सर्वदेवैरवध्यत्वमवापुर्मनुजेश्वर ! ।	
	ततः सकलदैतेयैर्महामात्यैर्महाबलैः ॥	६
	अनेकशतसाहस्रैः संवृतास्ते महीमिमाम् ।	
	विचेरुरवनीपाल ! नाशयन्त इमाः प्रजाः ॥	७
	क्षोभितास्तैस्तु सहसा शोषिता वरुणालयाः ।	
	तेषां वीर्येण महता पर्वताश्च चकम्पिरे ॥	८
	ययुर्विनाशं सहसा प्रजाः सर्वाः प्रजेश्वर ।	
	यज्ञभागभुजो देवा यज्ञभागं न लेभिरे ॥	९
	त एव बुभुजुर्दैत्या यज्ञभागान् सुदुर्मदाः ।	
	न यज्ञाः समवर्तन्त तपश्चक्रुर्न तापसाः ॥	१०
	न तताप तदा सूर्यो न जज्वाल च पावकः ।	
	निर्जिताश्चाभवन्देवा युद्धे परमदारुणे ॥	११
	दैतेयैर्विजिता देवाः शरणं प्रतिपेदिरे ।	
	नारायणाचले दिव्ये वसन्तं पुरुषोत्तमम् ॥	१२

देवजिदाद्यसुरवधार्थं सपरिकरस्य विष्वक्सेनस्य गमनम्

एवं प्रवृत्ते लोकेऽस्मिन् दैतेयैस्तैर्मदोत्कटैः ।

विष्वक्सेनः समाज्ञप्तो विमुना हरिणा बली ॥

१३

तेषां वधार्थं सर्वेषां दैत्येन्द्राणां बलीयसाम् ।	
अभ्यगात्सचिवैः सार्धं सप्तभिर्बलशालिभिः ॥	१४
अनेकशतसाहसैर्भूतसङ्घैः समावृतः ।	
महाबलैर्महावीर्यैः भूभारहरणक्षमैः ॥	१५
संवृतस्तैर्महातेजाः सोऽगच्छद्विमलेऽम्बरे ।	
व्यराजत यथा शक्रः संवृतस्त्रिदशेश्वरैः ॥	१६
आकाशं तदनाकाशं कृतमासीदभास्करम् ।	
आयान्तमथ चाकर्ण्य विष्वक्सेनं च तद्वलम् ॥	१७
तेऽपि दैत्या महावीर्या बलवन्तो यशस्विनः ।	
आहूय सर्वानसुरान् पातालतलवासिनः ॥	१८
सागरेषु च शैलेषु नदीषु च वनेषु च ।	
ये वसन्ति महावीर्या दारुणा दानवेश्वराः ॥	१९
तान्सर्वास्ते समाहूय समरेष्वनिवर्तिनः ।	
युद्धाभिमानिनस्तेऽथ सह दैतेयदानवैः ॥	२०
देवजित्प्रमुखा जग्मुः योद्धुं तेन महात्मना ।	
विष्वक्सेनेन ते तेन गिरिशेनेव राक्षसाः ॥	२१

### विष्वक्सेनासुरसैनिकयोर्युद्धक्रमः

देवस्य सैनिकाश्चापि दैत्येन्द्राणाञ्च सैनिकाः ।	
ततो युद्धं महारौद्रं समवर्तत दारुणम् ॥	२२
सेनयोरुभयोश्चापि दैवासुरमिवापरम् ।	
नानाप्रहरणैरुग्रैः निजघ्नस्ते परस्परम् ॥	२३
विष्वक्सेनानुगाश्चापि दैत्येन्द्राश्च बलीयसः ।	
तैर्मुक्तैरस्त्रजालैश्च शस्त्रौघैश्चापि संयुगे ॥	२४

- दह्यमानमिवाकाशं आसीत्सर्वग्रहाकुलम् ।  
 जाज्वल्यमानं तं दृष्ट्वा गगनं गगनेचराः ॥ २५
- परित्यज्य नृपाकाशं भयाज्जस्मुर्दिशो दश ।  
 ततो देवजिता मुक्ताः घोरा माया महौजसा ॥ २६
- तान् सर्वान् मोहयामासुः विष्वक्सेनस्य सैनिकान् ।  
 विष्वक्सेनस्य सचिवस्ततः क्रुद्धो महामतिः ॥ २७
- “मेधावी ” नाम बलवान् सर्वमायाविशारदः ।  
 मायाबलेन तां मायां अजयत्सर्वमोहिनीम् ॥ २८
- ततो धनुर्महद्दिव्यं आदाय विमलप्रभम् ।  
 अच्छेद्यं सर्वशत्रूणां दत्तमव्यक्तरूपिणा ॥ २९
- अनेकरत्नसंछन्नं जाम्बूनदपरिष्कृतम् ।  
 मुमोच निशितान् बाणान् दैत्येन्द्राणां महौजसाम् ॥ ३०
- निहतास्तेन दैतेयाः शतशोऽथ सहस्रशः ।  
 मुक्ता प्रियतरान् प्राणान् निपेतुर्धरणीतले ॥ ३१
- नियतांस्तान्तालोक्य मृत्युजित् क्रोधमूर्च्छितः ।  
 मोहयामास सर्वास्तान् मायया देवसैनिकान् ॥ ३२
- “शत्रुघ्नो ” नाम शत्रुघ्नः क्रोधेन महतान्वितः ।  
 असिरत्नं समादाय विमलार्कसमप्रभम् ॥ ३३
- चिच्छेद तस्य दैत्यस्य शिरोज्ज्वलितकुण्डलम् ।  
 तस्यासीद्भूय एवाशु शिरस्तुङ्गकिरीटवत् ॥ ३४
- शत्रुजित्तस्य तत्कर्म शत्रुघ्नस्य बलीयसः ।  
 सम्प्लस्यन् घोरसङ्काशो मायामुग्रामथाददे ॥ ३५
- विजेतुं दुर्मदः सर्वान् विष्वक्सेनमुखान् मृधे ।  
 तथा ते निष्प्रभा आसन् विष्वक्सेनस्य सैनिकाः ॥ ३६

- तां दृष्ट्वा सहसा क्रुद्धः सचिवस्तस्य धीमतः ।  
मायामुग्रां महातेजाः “कालाग्नि”नाम वीर्यवान् ॥ ३७
- आसुरीं नाशयामास तदद्भुतमिवाभवत् ।  
आददे महतीं शक्तिं शत्रुजिद्वधकारणात् ॥ ३८
- मुमोचाथ सतां दीप्तां “कालाग्नि” स्तरसा बली ।  
शक्त्या विदारितो दैत्यः पपाताथ महीतले ॥ ३९
- गतासुरिव निश्चेष्टः पुनश्चापि समुत्थितः ।  
देवजिन्मृत्युजिच्चापि शत्रुजिच्चाप्यथात्मवान् ॥ ४०
- क्रोधेन महताविष्टाः त्रयस्त्रय इवाग्नयः ।  
धनूंष्याकृष्य दिव्यानि दत्तान्यव्यक्तजन्मना ॥ ४१
- ब्रह्मणा देवदेवेन कल्पादौ परमेष्ठिना ।  
महास्त्रञ्च तथा दिव्यं भीमं पाशुपतं तथा ॥ ४२
- वायव्यं वारुणञ्चापि सौरमाग्नेयमेव च ।  
ऐन्द्रञ्चापि तथा रौद्रं याम्यञ्चापि सुदुस्तरम् ॥ ४३
- विमोहनकरं घोरं गान्धर्वञ्च सुदुर्जयम् ।  
जृम्भणास्त्रं तथा घोरं कौबेरं वारुणं तथा ॥ ४४
- एवमादीनि चान्यानि दिव्यान्यस्त्राणि संयुगे ।  
मुमुचुः शतशो राजन् ! सेनायां तस्य धीमतः ॥ ४५
- ब्रह्मास्त्राद्यैस्तथा दीप्तैः अस्त्रैः शत्रुभयङ्करैः ।  
ज्वालार्चिष्मत्तदाकाशं अपेतग्रहभास्करम् ॥ ४६
- अपेतचन्द्रतारौघं निपतच्छुक्सारिकम् ।  
दृश्यते सङ्कुलं तत्र संहारसमये यथा ॥ ४७

### विष्वक्सेनकृतनारायणास्त्रप्रयोगपूर्वकासुरवधप्रकारः

ततो देवः स भगवान् विष्वक्सेनः प्रतापवान् ।	
दृष्ट्वा विस्मयमापन्नो दैतेयांस्तानलोकयत् ॥	४८
“साधु साध्वि” ति चाभाष्य जहर्ष च ननाद च ।	
स्वकं धनुर्महद्दिव्यं तप्तजाम्बूनदप्रभम् ॥	४९
विस्फार्य स महातेजाः शार्ङ्गञ्चापमिवापरम् ।	
नारायणीयं सहसा सन्दधेऽस्त्रं शरासने ॥	५०
तदस्त्रं मृत्युसङ्काशं अनिवार्यं सुरासुरैः ।	
कालाग्निरिव जज्वाल कल्पान्ते सर्वनाशनः ॥	५१
ततः सङ्क्षोभमायातं जगदेतच्चराचरम् ।	
चुक्षुभुः सागराः सर्वे पर्वताश्च चकम्पिरे ॥	५२
तदस्त्रं तेन निर्मुक्तं ज्वालामालि महात्मना ।	
समीक्ष्य सर्वभूतानि राजन्! नेदुः सुदारुणम् ॥	५३
आगतास्तेऽपि ये तत्र शुद्धदर्शनललासाः ।	
ते सर्वे गगनं त्यक्त्वा दुद्रुवुः सर्वतो दिशम् ॥	५४
देवाश्चापि तदा सर्वे मुनयश्च तपोधनाः ।	
दृष्ट्वा तदस्त्रमत्युग्रं प्रोचुरेवं परस्परम् ॥	५५
संहारसमयः प्राप्तो विस्मयः क्रियतेऽत्र किम् ? ।	
नारायणेन भूतानां आदिभूतेन शार्ङ्गिणा ॥	५६
संहारः क्रियते नूनं लोकानामद्य विष्णुना ।	
विष्वक्सेनेन सर्वात्मा जगत्संहारमीश्वरः ॥	५७
करोति नूनं भगवान् संहारकुतुकी हरिः ।	
किमयं क्रियते तेन व्यापारः परमेष्ठिना ॥	५८

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे एकचत्वारिंशोऽध्यायः ५४५

अकाले जातमस्माकं निष्फलं दर्शनं विभोः ।  
एवंविधान्यनेकानि वाक्यानि त्रिदशालयाः ॥ ५९

वदन्तो भृशमुद्विग्ना जग्मुस्ते सर्वतो दिशम् ।  
अथ देवः स भगवन् विष्वक्सेनस्तदा नृप ! ॥ ६०

नारायणीयमस्त्रं तत् मुमोचादित्यसन्निभम् ।  
मुक्तं तदस्त्रमत्युग्रं सर्वसंहारकारणम् ॥ ६१

अदहद्वाहिनीं तां तु दैत्येन्द्राणां दुरात्मनाम् ।  
देवजित्प्रमुखैः सार्धं वृत्रकल्पैर्महाबलैः ॥ ६२

सा तु सेना प्रज्ज्वाल दह्यमानास्त्रपावकैः ।  
शम्भुना दह्यमानानि त्रिपुराणि यथा पुरा ॥ ६३

अस्त्राग्निदग्धदेहास्ते साश्वाः सरथकुञ्जराः ।  
देवजित्प्रमुखाः सर्वे सानुग्नाःसहबान्धवाः ।

निपेतुर्धरणीपृष्ठे दग्धपक्षा इव द्विजाः ॥ ६४  
गतासक्स्ते न्यपतन् सहस्रशो

नरेन्द्र भूमौ दितिजेश्वरात्मजाः ।

प्रच्छादयन्तः सकलां महीमिमां  
प्रदग्धकेशाम्बरभूषणोत्तमाः ॥ ६५

सा चोग्रवेगा दितिजेश्वराणां  
सेनाऽतिभीमा समरेष्वजेया ।

अस्त्राग्निदग्धा न च भूतसङ्घैः  
अदृश्यताऽक्वशमैर्न देवैः ॥ ६६

देवादि कृतविजयोपचारस्तुत्यादिः

ततस्तु देवाश्च निष्साचराश्च गन्धर्वयक्षोरगपन्नगाश्च ।  
महर्षयश्चाप्रतिमप्रभावा निपातितांस्तानवलोक्य दैत्यान् ॥ ६७



अपूजयंस्ते समुपेत्य सर्वे

देवं महावीर्यमुपस्थितं तम् ।

प्रणम्य देवाधिपतेरमात्यं

शिरोभिरुत्फुल्लविलोललोचनैः ॥

६८

तमूचुरेन वचनैर्नरेन्द्र !

सर्वे सुराद्याः परमं प्रहृष्टाः ।

समं ततस्तं परिवार्य देवं

गृहीतचापं निहतेन्द्रशत्रुम् ॥

६९

इन्द्रादयः— कृतं त्वयैतद्भगवन् ! सुराणां

सुदुष्करं कर्म तवानुरूपम् ।

अन्येन नैते समरे निहन्तुं शक्या

विना त्वां समुदग्रवीर्यम् ॥

७०

तैरेवमुक्तः सहसा महात्मा

सम्पूजितस्तान् प्रतिपूज्य सर्वान् ।

अन्तर्दधे सानुचरः सवाहनः

तत्रैव तेषामथ पश्यतां तथा ॥

७१

मया नृपेन्द्राखिलमेतदुक्तं

तवाद्भुतं देवजिदादिनाशनम् ।

एवंविधं नैव पुरा प्रवृत्तं

ऋते दशग्रीववधान् सुघोरात् ॥

७२

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये

विष्वक्सेनकृतदेवजिदादिवधवर्णनं नाम

एकचत्वारिंशोऽध्यायः ।



अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः.

### भविष्यच्छ्रीभगवद्दिव्यविमानवर्णनम्

वामेदेवः—

- ‘एवं दैत्यवधं देवो विष्वक्सेनस्तु वीर्यवान् ।  
चक्रे पुरा महीपाल ! देवदेवाज्ञया बली ॥ १
- एतन्मया समाख्यातं पुरावृत्तमनुत्तमम् ।  
इतिहासं महापुण्यं सर्वलोकेषु विश्रुतम् ॥ २
- वेङ्कटाख्ये गिरौ तस्मिन् अत्यर्थं तेन धीमता ।  
अगस्त्येन मुनीन्द्राणां भविष्यत्कथितं नृप ! ॥ ३
- आगामिनि युगे चापि सम्प्राप्ते तु कलौ युगे ।  
अदृश्यत्वाद्विमानस्य नित्यस्यामिततेजसः ॥ ४
- तस्या एव शुभे तीरे पुष्करिण्या महाद्भुतम् ।  
अतुलं कारितं भक्तैः विमानं सूर्यसन्निभम् ॥ ५
- भविष्यतीति तस्यापि माहात्म्यं कथये तव ।  
तच्चापि महदाश्चर्यं विमानं सुरपूजितम् ॥ ६
- शोभितं देवदेवेन भविष्यति न संशयः ।  
बहुवर्षशतैः राजन् ! न च शक्यं सुरैरपि ॥ ७
- वक्तुं तस्य विमानस्य माहात्म्यं विस्तरेण तु ।  
यत्र देवाधिदेवोऽसौ सान्निध्यं कुरुते हरिः ॥ ८
- स्वभक्तानां हितार्थाय त्रैलोक्यानुग्रहाय च ।  
शोभितं देवदेवेन श्रीभूमिसहितेन तत् ॥ ९
- विमानं मनुजैः राजन् ! यैर्दृष्टं पापनाशनम् ।  
विष्णोस्तस्य प्रसादेन ते नरा ध्वस्तबन्धनाः ॥ १०

प्राप्नुवन्ति परं धाम ब्रह्म यत्तत्सनातनम् ।	
तत्रापि तु युगे राजन्! तद्विमानदिदृक्षवः ॥	११
देवाः सर्वेऽपि गच्छन्ति सिद्धाश्च सहचारणैः ।	
ऋषयश्च सगन्धर्वा यक्षाश्च सहपन्नगैः ॥	१२
आदित्या बसवो रुद्रा दिक्पाला मरुतस्तथा ।	
ब्रह्मा चतुर्मुखो देवो भगवान्छम्भुरेव च ॥	१३
एवमाद्यास्तथाऽन्ये च भक्त्या परमया युताः ।	
उपतिष्ठन्ति तं देवं देवदेवेशमीश्वरम् ॥	१४
स्नात्वा च मनुजास्तस्मिन् स्वामिपुष्करिणीजले ।	
प्रणम्य देवदेवेशं नारायणमनामयम् ॥	१५
तस्मिन् विमाने गोविन्दं वसन्तं पुरुषोत्तमम् ।	
स्तुवन्ति दिव्यैः स्तोत्रैश्च नमन्तश्चाप्यहर्निशम् ॥	१६
सर्वे प्रातर्किनश्चापि तद्दृष्ट्वा पुण्यमुत्तमम् ।	
विमानं सर्वशोकघ्नं सर्वरोगप्रणाशनम् ॥	१७
विमुक्ताः सर्वपापेभ्यो भविष्यन्ति न संशयः ।	
यत्र कापि वसन् देशे विमानाभिमुखं नरः ॥	१८
वेङ्कटाद्रिं नमस्कृत्य सद्यः पापैर्विमुच्यते ।	
सङ्क्षेपेण मयाऽप्येतन्माहात्म्यं कथितं तव ॥	१९
तस्य पुण्यस्य भूषणं विमानस्य महीयसः ।	
अतः परं तु स्नेहेन स्वयमेव वदाम्यहम् ॥	२०
त्वया च पृष्टं राजेन्द्र! गुह्याद् गुह्यतरं महत् ।	
अत्यद्भुतमिदं भूष! शृणुष्व गदतो मम ॥	२१
नारायणमिदं तस्मिन् आस्ते नारायणः स्वयम् ।	
गुहासु चापि सर्वासु सर्वेषु स्थितेषु च ॥	२२

कन्दरेषु च सर्वेषु निर्दरेषु शुभेषु च ।	
भगवान् देवदेवेशः सर्वस्मिन् गिरिमूर्धनि ॥	२३
नान्तविधानि रूपाणि विभ्रद्विहरति स्वयम् ।	
कचिच्च देवरूपेण कचिन्मानुषरूपतः ॥	२४
कचिच्च मृगरूपेण कचिद्रक्षादिरूपतः ।	
यत्र कुलचिदासीनः तस्मिन् दिव्ये महागिरौ ॥	२५
देवदेवं समाराध्य य उपास्ते जनार्दनम् ।	
करोति तस्य सान्निध्यं भगवानादिकृद्धरिः ॥	२६
वृषभाचलभूभागे घटिकामपि यो वसेत् ।	
सप्तजन्मकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥	२७
ये तत्र कुर्वते पापं अज्ञानाद्वेङ्कटाचले ।	
हन्युस्तान् सर्वे एवैते गन्धर्वाः शस्त्रपाणयः ॥	२८
आज्ञया तस्य देवस्य विष्वक्सेनस्य धीमतः ।	
तस्मान्न कुर्यात्पापन्तु नरस्तस्मिन् महीधरे ॥	२९
न हि तत्र गिरौ कश्चिद् वृक्षः पक्षी मृगोऽथ वा ।	
प्राकृतो जायते देवाः सर्वे तद्रूपिणस्तथा ॥	३०
तस्य देवस्य सेवार्थं सान्निध्यं कुर्वते सदा ।	
एवं प्राह पुराऽगस्त्यो भगवान् मुनिसत्तमाः ॥	३१
मया पृष्टः समाचख्यौ गन्धर्वादनपर्वते ।	
नारायणगिरेस्तस्य माहात्म्यं परमाद्भुतम् ॥	३२
विस्तरेण समाख्यातं	
मयाऽपि तव भूपते ! ।	
अन्यच्चापि समाख्यास्ये	
त्वयाऽपृष्टं नराधिप ! ॥	३३

तस्मिन्नदौ तु यत्पुण्यं दानानि ददतां नृप ! ।  
 इत्युक्तो जनकस्तेन पप्रच्छाऽथ मुनिं पुनः ॥ ३४  
 इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 भविष्यद्विमानवर्णनं नाम  
 द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।

अथ त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः

स्वामिपुष्करिणीतीरकृतान्नदानादिप्रशंसा

जनकः—

‘श्रुतमेतन्मयाऽऽख्यानं वामदेव ! त्वयोदितम् ।  
 सर्वज्ञं परमं ब्रह्म जानीमो मुनिसत्तम ! ॥ १  
 क्षेत्रखण्डे त्वया सर्वाण्युक्तानि तपतां वर ! ।  
 क्षेत्राणि यानि पुण्यानि तीर्थानि विमलानि च ॥ २  
 तेषु तेषु च दानानि प्रशस्तानि त्वया मुने ! ।  
 नारायणगिरावस्मिन् कृत्वा दानमनुत्तमम् ॥ ३  
 यत्फलं प्राप्नुयाद्देही पापराशिं विधूय वै ।  
 तद्वदस्व मुनिश्रेष्ठ ! श्रोतुं कौतूहलं हि मे ’ ॥ ४

शतानन्दः—

इति पृष्टस्तदा तेन जनकेन महात्मना ।  
 यत्पुण्यं ददतां तत्र दानानाञ्च यथाफलम् ॥ ५  
 तत्सर्वं मुनिशार्दूलो वक्तुं समुपचक्रमे ।

वामदेवः—

‘शृणुष्ववाहितो राजन् ! यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ॥ ६  
 नारायणगिरावस्मिन् स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
 भन्नदानं प्रशस्तं हि दानानां दानमुत्तमम् ॥ ७

नित्यमस्मिन्निवमतां अन्नपानादिकन्तु यः ।	
प्रयच्छेत् स इहैवाशु सर्वरोगैर्विमुच्यते ॥	८
भूमेर्गोश्च हिरण्यस्य वस्त्रगन्धादिकस्य च ।	
कन्यायाश्च चरेद्दानं तिलानामपि यो नरः ॥	९
प्रेत्य सोऽनुत्तमालोकान् प्राप्नुयात् पुण्यकर्मणाम् ।	
तेषां वसति लोकेषु यावत्कल्पमरिन्दम ! ॥	१०
ततो भक्तिं परां प्राप्य विष्णुलोके महीयते ।	
निष्कामो यो ददात्यन्नं स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	११
स पुष्कलः प्रशस्तात्मा विष्णुभक्तिं प्रयास्यति ।	
तद्भक्तभावमापन्नः कालेनाल्पेन भूयते ! ॥	१२
प्राप्य योगं मुनिप्रोक्तं परमां गतिमामुयात् ।	
स्वामिपुष्करिणीं प्राप्य स्नात्वा पीत्वा च तज्जलम् ॥	१३
विधूय सर्वपापेभ्यो विष्णुलोके महीयते ।	
यावच्छक्त्यनुसारं वै सुवर्णं गामथापि वा ॥	१४
वस्त्राणि वसुधां वापि तिलान् गन्धाननुत्तमान् ।	
यो ददाति स दीर्घायुः आरोग्यञ्चापि विन्दति ॥	१५
प्राप्नुयात्सर्वकामांश्च भोगान् भुङ्क्ते च पुष्कलान् ।	
मुक्तश्च सर्वपापेभ्यः प्राप्नुयात् परमां गतिम् ॥	१६

वामदेवं प्रति ब्रह्मोपदिष्टस्वामिपुष्करिणीमाहात्म्यम्

शृणु चास्मिन् पुरावृत्तं आख्यानं पर्वतोत्तमे ।	
यथा मे कथितं पूर्वं ब्रह्मणा परमेष्ठिना ॥	१७
पूर्वं भूमिधरेन्द्रेऽस्मिन् ब्रह्माणं कमलासनम् ।	
उपासीनः समासीनो पर्वाणामधिकं शतम् ॥	१८

अहं तीव्रं तपोऽकार्षं ब्रह्माणं प्रति भूमिप ! ।	
कालेन महता तात ! भगवान् कमलासनः ॥	१९
आविर्बभूव पुरतः तपसा तोषितो मया ।	
स्वयमेव चतुर्वक्त्रो मां प्रबोध्य जनाधिप ! ॥	२०
मेघगम्भीरया वाचा प्रसन्नो वाक्यमब्रवीत् ।	
“परितुष्टोऽस्मि ते ब्रह्मन् ! वामदेव द्विजोत्तम ! ॥	२१
यदिच्छसीह तद्वातुं वरदोऽहमिहागतः ।	
वरं वरय भद्रं ते यदिच्छसि महामुने ! ” ॥	२२
इत्युक्तो ब्रह्मणा तेन प्रसन्नेन महात्मना ।	
अहमेवं नृपश्रेष्ठ ! वृणे वरमनुत्तमम् ॥	२३
स्वामिपुष्करिणी येयं अत्रास्ते पर्वतोत्तमे ।	
तस्या एव तु महात्म्यं ज्ञातुमिच्छामि तत्त्वतः ॥	२४
माहात्म्यञ्च फलञ्चापि दर्शने स्नानपानयोः ।	
अस्यास्तीरे च दानानां यत्फलं तद्ब्रूदस्व मे ॥	२५
ब्रह्मोवाच— ‘अस्यास्तीरे पुरा ब्रह्मन् ! चन्द्रः क्षीरोदसंभवः ।	
सौवर्ण्यं भूषणं दत्त्वा लावण्यं परमं ययौ ॥	२६
कन्यां दत्त्वा पुरा ब्रह्मन् ! कामः कामत्वमाप्तवान् ।	
धनदोऽपि धनेशत्वं स्वर्णदानादवाप्तवान् ॥	२७
इन्द्रः षोडशदानानि स्वामिपुष्करिणीतटे ।	
कृत्वा बलदीनसुरान् दुर्जयानजयत् पुरा ॥	२८
अस्मिन् गिरौ पुरा कश्चित् आगत्य ब्राह्मणोत्तमः ।	
जिज्ञासुः कत्रव्यविन्नाम ब्रह्मज्ञानस्य मानद ! ॥	२९
स्वयमाहूय विप्रेन्द्रं ब्रह्मज्ञानमनुत्तमम् ।	
ददत् परमधर्मात्मा वाचस्पतिरभून्मुने ॥	३०

श्रीवामनपुराणे क्षेत्रखण्डे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ५५३

धरण्यां नित्यसान्निध्यं वेङ्कटाद्रौ विशेषतः ।  
तस्मात्तत्रैव कार्याणि महादानानि पार्थिवैः ॥ ३१  
यत्किञ्चिच्च मुने ! तस्मिन् स्वामिपुष्करिणीतटे ।  
दद्यादनुत्तमालोकान् आम्नयात्पुण्यकर्मणाम् ॥ ३२

ब्रह्मकारितश्रीवेङ्कटाचलाधीशमहोत्सवप्रशंसा

मासि भाद्रपदे पुण्ये शुक्लपक्षे तु चैत्रमे ।  
स्वामिपुष्करिणीतीरे देवस्य परमात्मनः ॥ ३३  
उत्सवः कारितः पूर्वं मयैव प्रीतये हरेः ।  
तत्र तत्र युगे चास्य विष्णोः स्वामिसरस्तटे ॥ ३४  
उत्सवान् कारयिष्यन्ति नराः पुण्यकृतोऽमलाः ।  
किञ्चिदाराधनेनैव विष्णुर्भाद्रपदोत्सवे ॥ ३५  
ददाति सर्वलोकानां वरानत्यन्तदुर्लभान् ।  
उत्सवेषु च देवस्य नारायणगिरिं प्रति ।  
गच्छन्ति ये नराः पुण्यास्तेषामपि फलं शृणु ॥ ३६  
यानि त्वादधते पदानि च मुने ! नारायणाद्रिं प्रति  
स्तोकं स्तोकमपि द्विजा अपि जनास्तेषां फलं यच्छृणु ।  
यावद्वेङ्कटशैलमात्मगृहतस्तावत्पदानां क्रमात्  
प्रायश्चैव पदेपदे क्रतुफलं भूयाद्भुवि प्राणिनाम् ॥ ३७

महोत्सवसेवार्थमागतजनाराधकपुण्यफलवर्णनम्

ये सेवार्थमुपागतान् वृषगिरौ देवस्य दिव्योत्सवे  
यावच्छतश्रुपल्लव्यन्ति भगवांस्तेषामभीष्टप्रदः ।  
यस्तेषामुपकारमीषदपि वा कुर्यान्न लोभादिना  
तस्याकल्पमवस्थितिः शृणु मुने ! घोरे महारौरवे ॥ ३८



यः स्वामिसरसस्तीरे पुष्पोद्यानानि कारयेत् ।  
 नन्दनोपवने तस्य यावत्कल्पमवस्थितिः ॥ ३९  
 किम्नेन बहूक्तेन यः स्वामिसरसस्तटे ।  
 यत्किञ्चित्कुरुते पुण्यं तस्यान्तो नैव विद्यते ' ॥ ४०

वामदेवः —

इत्युक्त्वा भगवान् ब्रह्मा लोककृल्लोकपूजितः ।  
 अन्तर्दधे तदा तस्मात् श्रुतमेतन्मया पुरा ' ॥ ४१

शतानन्दः —

इतीरितं तन्मुनिना समस्तं  
 श्रुत्वा महौजा जनको महात्मा ।  
 प्रफुल्लनेत्रः पुलकाञ्चिताङ्गो  
 नारायणाद्रिं प्रययौ प्रहृष्टः ॥ ४२  
 समाप्य यज्ञं जनको महात्मा  
 धुरं धरिःत्र्याः सचिवे नियोज्य ।  
 द्रष्टुं परं ब्रह्म वृषाद्रिमूर्ध्नि  
 स्वयं ययौ मैथिलराजराजः ॥ ४३

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्तखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये  
 श्रीस्वामिपुष्करणीतीरकृतदानफलवर्णनं नाम  
 त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ।



अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

—: ❀ :—

स्वामिपुष्करिणीं प्रति मार्धत्रिकोटितीर्थागमनकालनिर्णयः

व्यासः—

श्रुत्वैतदथ माहात्म्यं स्वामिपुष्करिणीं प्रति ।  
जनकस्तु शतानन्दं पप्रच्छेदं मुदाऽन्वितः ॥ १

जैनकः—

‘लोकेषु सर्वतीर्थानि कथमायान्ति तज्जले ।  
किमर्थं वा तदेतन्मे कथयस्व महामुने!’ ॥ २

शतानन्द —

पुरा भागीरथीतीरे मार्कण्डेयो महामुनिः ।  
तपः परममास्थाय स तेपे परमं तपः ॥ ३  
ध्यायन् विश्वस्य जगतः स्रष्टारं भुवनेश्वरम् ।  
ततः कालेन महता ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ ४  
सान्निध्यमकरोत्प्रीत्या मार्कण्डेयस्य धीमतः ।  
वचनं व्याजहारेदं मार्कण्डेयं पितामहः ॥ ५  
‘वरं वरय दास्यामि यमिच्छसि महामुने!’ ।

मार्कण्डेयः—

‘वरं देहि मम ब्रह्मन्! यांचे श्रद्धासमन्वितः ॥ ६  
त्रैलोक्ये यानि पुण्यानि सन्ति तीर्थानि वै प्रभो! ।  
तेषु सर्वेषु तीर्थेषु यात्रायां शक्तिरस्त्विति’ ॥ ७  
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा भगवांश्चतुराननः ।  
प्रहसन् व्याजहारेदं मार्कण्डेयं तपस्विनम् ॥ ८

ब्रह्मोदाच— 'लोके सर्वेषु तीर्थेषु खानं वर्षशतैरपि ।

कर्तुं न शक्यते ब्रह्मन् ! न मया न च शम्भुना ॥ ९

अन्यं वक्ष्यामि ते ब्रह्मन् ! उपायं मुनिसत्तम ! ।

इतो दक्षिणदिग्भागे मुने ! द्विशतयोजने ॥ १०

अस्ति श्रीवेङ्कटो नाम प्रथितः पर्वतोत्तमः ।

द्रविडेषु महापुण्यः सेवितस्त्रिदशैर्गिरिः ॥ ११

तस्य शृङ्गे सुमहति पुण्या पापविनाशिनी ।

“स्वामिपुष्करिणी” नाम सरसी सर्वकामदा ॥ १२

त्रैलोक्यवर्तिनां ब्रह्मन् ! तीर्थानां स्वामिनी हि सा ।

मासे तु मार्गशीर्षाख्ये द्वादश्यां पूर्वपक्षके ॥ १३

अरुणोदयवेलायां त्रिषु लोकेषु विश्रुताः ।

तिस्रः कोट्योऽर्धकोटीश्च तीर्थानां सुमहामते ! ॥ १४

सान्निध्यं तत्र कुर्वन्ति स्वामिपुष्करिणीजले ।

पापं स्वेषु विनिर्मुक्तं लोकैरघसमन्वितैः ॥ १५

निर्हरन्तीह तीर्थानि तस्यास्तीर्थसमन्वयात् ।

मार्कण्डेय ! महाभाग ! भुवनत्रयवासिनाम् ॥ १६

तीर्थानां तत्र गत्वा त्वं सेवाफलमवाप्नुहि ।

स्वामिपुष्करिणीत्येतत् नामधेयञ्च तत्कृतम् ॥ १७

मार्कण्डेय ! समस्तानां तीर्थानां स्वामिनी यतः ।

अन्यच्च तव वक्ष्यामि रहस्यं धर्मगोचरम् ॥ १८

यज्ज्ञात्वा मुनिशार्दूल ! ज्ञातव्यं नावशिष्यते ।

गङ्गादिपुष्पतीर्थानि यावन्तीह महीतले ॥ १९

यानि वा मेरुशृङ्गाग्रे कैलासे मन्दरोपरि ।

पाताले सिन्धुतीरेषु तथा द्वीपान्तरेष्वपि ॥ २०

तेषु तेषु च दानानां व्रतानां जपहोमयोः । श्रुतिस्मृतिपुराणेषु विविधं श्रूयते फलम् ॥	२१
तत्सर्वं युगफल्माप्तं य इच्छेन्मुनिसत्तम ! । समार्गशीर्षद्वादश्यां शुक्लायां नियतात्मकः ॥	२२
वेङ्कटाद्रौ महापुण्ये स्वामिपुष्करिणीतटे । कुर्यादेकतमं दानं विप्राय श्रुतशालिने ॥	२३
विष्णुभक्ताय शान्ताय दरिद्रायाऽनसूयवे । तेन सर्वेषु तीर्थेषु तद्दत्तं नात्र संशयः ॥	२४
यानि षोडश दानानि महान्त्याहुर्मुनीश्वराः । तेषामेकं तु यः कुर्यात् स्वामिपुष्करिणीतटे ॥	२५
मार्गशीर्षे सिते पक्षे द्वादश्यां विजितेन्द्रियः । तेन षोडश दानानि तीर्थेषु सकलेष्वपि । मार्कण्डेय ! कृतानि स्युः युग्यत्तत् महाद्भुतम् ॥	२६
“ धनुर्मासे सिते पक्षे द्वादश्यामरुणोदये । आयान्ति सर्वतीर्थानि स्वामिपुष्करिणीजले ” ॥	२७
इमं मंत्रं समुच्चार्य स्नातस्तत्फलमाप्नुयात् । एतद् गुह्यं पुरा विष्णुः प्रोवाच भगवान् मम ’ ॥	२८

स्तानन्दः—

इत्युक्त्वाऽन्तर्दधे ब्रह्मा मार्कण्डेयस्य पश्यतः । मार्कण्डेयस्तु नृपते ! विस्मयाविष्टमानसः ॥	२९
नारायणगिरिं प्राप्त्वा तथैव प्रीतमानसः । गत्वा तस्मिन्गिरौ पुण्ये स्वामिपुष्करिणीं शुभाग्र ॥	३०
दृष्ट्वा स्नात्वाऽथ तस्या वै विपुले विमले जले । तस्यास्तीरे महीपाल ! भगवन्तं जन्मर्दनम् ॥	३१

समभ्यर्च्य हृषीकेशं प्रसन्नेनान्तरात्मना ।  
 वत्सराणां त्वयं राजन् ! उवास स महीधरे ॥ ३२  
 प्रतिवर्षञ्च तीर्थानामागमं प्रेक्ष्य तत्तिथौ ।  
 मार्कण्डेयो महीपाल ! प्रसादात् शार्ङ्गधन्वनः ।  
 अवाप परमानन्दं अनन्तं शाश्वतं मुनिः ॥ ३३

वामदेवः—

‘य इदं श्रावयेन्नित्यं स्वामितीर्थस्य वैभवम् ।  
 शृणोति परया भक्त्या द्वादश्यां मार्गशीर्षके ॥ ३४  
 तस्य प्रसन्नो भगवान् सर्वमिष्टं प्रयच्छति ।  
 एकादश्यामुपोष्यास्मिन् पर्वते वेङ्कटाह्वये ॥ ३५  
 द्वादश्यां मार्गशीर्षे तु पूर्वपक्षे च ये नराः ।  
 स्नानं कृत्वा यथान्यायं स्वामितीर्थे समागताः ॥ ३६  
 प्रणमन्ति जगन्नाथं तत्तीरतलवासिनम् ।  
 ते नरास्तत्प्रसादेन पापराशिं विधूय वै ।  
 तत्प्रयान्ति परं धाम शाश्वतं ब्रह्मसंज्ञितम् ॥ ३७

स्वामिपुष्करिणीतीर्थस्नानार्थं श्रीवेङ्कटाचलं प्रति जनकनृपागमनम्

शास्त्राणां परमो वेदो देवानां परमो हरिः ।  
 तीर्थानां परमं तीर्थं स्वामिपुष्करिणी नृप ! ॥ ३८  
 तस्मात्त्वमपि राजेन्द्र ! गत्वा नारायणचलम् ।  
 स्वामिपुष्करिणीतोये स्नात्वा नियतमानसः ॥ ३९  
 तत्तीरवासिनं देवं शरण्यं सर्वदेहिनाम् ।  
 नारायणं समाराध्य सर्वान् कृत्वा नृपाप्स्यसि ॥ ४०

श्रीवेदव्यासः —

एतच्छ्रुत्वा तु जनकः शतानन्दोदितं तदा ।  
 प्रहर्षमतुलं लब्ध्वा मन्त्रिमिः सहितो नृपः ॥ ४१  
 गत्वा वृषाचलं तीव्रं स्वामिपुष्करिणीजले ।  
 स्नात्वा दृष्ट्वाऽथ देवेशं श्रीभूमिसहितं ततः ॥ ४२  
 तत्र स्थित्वा चिरं कालं सर्वान् कामानवाप्य च ।  
 आगत्य मिथिलां राजा शशास पृथिवीमिमाम् ॥ ४३

इति श्रीवामनपुराणे क्षेत्रकाण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये स्वामिपुष्करिणीं  
 प्रति सार्धत्रिकोटितीर्थागमन - तत्कालकृतदानफलादिवर्णनं नाम  
 चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

इत्थं श्रीवामनपुराणे विंशप्रभृतिचतुश्चत्वारिंशपर्यन्तं पञ्चविंश-  
 अध्यायात्मकः श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्य परोभागः  
 समाप्तिमगमत् ।

श्रीवेङ्कटाद्रिनिलयः कमलाकामुकः पुमान् ।  
 अभङ्गुरविभूतिर्नः तरङ्गयतु मङ्गलम् ॥





इत्थं श्रीवामनपुराणे  
विंशप्रभृतिचतुश्चत्वा-  
विंशपर्यन्तं  
पञ्चविंश अध्यायात्मकः  
श्रीवेङ्कटाचलवाहकम्यपरो  
भागः समाप्तमगमत्







